बोरिस वसील्येव
जहाँ उषा
नगरों के बादल
नहीं सनकते...
वसील बीकोव
सौत्निकोव

बारिस वसील्येव

जहाँ ऊषा नागरी के पायल नहीं खनकते...

वसील बीकोव

सीत्निकोव

(दो लघु उपन्यास)

प्रगति प्रकाशन, ताश्क़न्द – १९८२

जहाँ ऊषा नागरी के पायल नहीं खनकते...

बारिस वसील्येव (जन्म १९२४) इंजीनियरी काम करने के बाद लेखक बने। उनका पहला लघु-उपन्यास "**जहाँ ऊषा नागरी के पायल नहीं खनकते...**" "यूनोस्त" (तरुणाई) पत्रिका में प्रकाशित हुआ था। यह पुस्तक युवा लोगों के लिए उस वर्ष की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक के रूप में पुरस्कृत की गयी थी। उसके बाद उनके लघु उपन्यास "इवान की नौका," "आख़िरी दिन," "श्वेत हँसों को गोली न मारो," तथा "अलिखित नाम" प्रकाशित हो चुके हैं।

१

फ़ौजी छावनी नम्बर १७१ के बारह मकान, एक दमकलख़ाना और शताब्दी के शुरू में सावधानी से तराशे पत्थरों का बना लम्बा, नीचा-सा मालगोदाम ही बरक़रार थे। पिछले हवाई हमले में वहाँ का वाटर-टॉवर धराशायी हो चुका था और रेलगाड़ियाँ भी अब यहाँ नहीं रुकती थीं। हालांकि जर्मन अब बमबारी नहीं कर रहे थे, छावनी के ऊपर उनके हवाई जहाज़ रोज़ ही चक्कर लगाते रहते। सावधानीवश सोवियत फ़ौजी कमान की चार मुँहवाली दो हवामार तोपें हमेशा तैयार रखनी पड़ती थीं।

सन् १९४२ की मई के दिन थे। पश्चिम की ओर (नम रातों में आप भारी तोपों की रुँधी आवाज़ सुन सकते थे) दोनों पक्ष दो मीटर गहरे ख़न्दक़ों में डटकर मोर्चेबन्दी कर रहे थे। पूरब की ओर जर्मन दिन-रात नहर और मूर्मन्स्क रेलवे स्टेशन पर बमबारी कर रहे थे। उत्तर में समुद्री मार्गों के लिए भीषण लड़ाई छिड़ी थी। दक्षिण में, घेरेबन्दी में पड़ा लेनिनग्राद दुर्धर्ष प्रतिरोध में लगा था।

लेकिन यहाँ का नज़ारा कुछ अवकाश-स्थल-सा था। शांतिपूर्ण परिवेश

और निकम्मेपन के कारण सैनिक अलस भाव से पड़े रहते जैसे स्टीम स्नान के बाद उनमें शिथिलता आ गयी हो। और बच रहे बारह मकानों में अभी भी बड़ी संख्या में जवान औरतें और विधवाएँ थीं जो शराब बनाने में इतनी माहिर थीं कि मच्छरों की भनभनाहट से भी शराब तैयार कर लें। हवामार तोपों के नये सैनिक पहले तीन दिनों तक ख़ूब सोते, स्थिति का जायज़ा लेते, चौथे दिन किसी का जन्मदिन समारोह शुरू हो जाता और उसके बाद तो छावनी के ऊपर शराब की सदा बनी रहनेवाली बू छा जाती।

छावनी का कमाण्डेण्ट मायूस चेहरेवाला सार्जेण्ट-मेजर फ़ेदोत वास्कोव था। वह हर बदचलनी की रिपोर्ट ऊँचे अधिकारियों को भेज देता। जब रिपोर्टों की संख्या दस तक पहुँच जाती, वरिष्ठ अधिकारी की ओर से वास्कोव को लिखित औपचारिक चेतावनी मिलती और असंयमित जीवन के कारण आँखों के पास की सूजी चमड़ीवाले अर्द्धप्लाटून की जगह नया दल भेज दिया जाता। बिना मदद माँगे कमांडेंट हफ़्ते-भर या यूँ ही कुछ दिनों तक काम चलाता, फिर सब कुछ हूबहू पुराने ढंग से घटित होता और आख़िरकार वह सिर्फ़ तारीख़ और नाम बदलकर पुरानी रिपोर्टों की नयी प्रति तैयार करके भेज देता।

"समय की बरबादी!" हाल की रिपोर्टों की जाँच करने आया मेजर चिंघाड़ा। "समय और काग़ज़ की बरबादी! तुम हो क्या, कमांडेंट या कोई लेखक?"

"पूरी तरह शराब न पीनेवाले भेजिये!" वास्कोव ने फिर हठपूर्वक दुहराया। हालांकि ज़ोर आवाज़ में चीख़नेवाले सभी अफ़सरों से वह डरता था, अपनी बात पर डटा रहा। "पूर्णतया मद्यनिषेधवादी और... हाँ... ऐसे जो स्कर्ट के पीछे भागते न हों।"

"तुम्हारा मतलब हिजड़ों से है?"

"आप बेहतर जानते हैं," सार्जेंट-मेजर ने चौकसी से जवाब दिया।

"बहुत ख़ूब, वास्कोव," अपनी ही कठोरता से ओतप्रोत मेजर ने ख़तरनाक आवाज़ में कहा। "तुम्हें बिलकुल शराब न पीनेवाले सैनिक मिल जायेंगे, वे औरतबाज़ी भी नहीं करेंगे। लेकिन देखो, सार्जेंट-मेजर, कहीं तुम उनके साथ निभा नहीं सके तो..."

"जो," कमांडेंट ने निरुत्साह उत्तर दिया।

अपने साथ पुराने हवामारों को लेकर मेजर लौट गया। जाते-जाते

दुबारा अपना वायदा दुहरा गया कि वह ऐसे आदमी भेजेगा जो ख़ुद सार्जेंट-मेजर से भी कम शराब व औरतों के शौक़ीन होंगे। लेकिन शायद अपना वायदा निभा पाना मेजर के लिए मुश्किल साबित हुआ था क्योंकि तीन दिन बीत जाने पर भी कोई नहीं फटका था।

"जानती हो, यह बड़ा मुश्किल काम है," सार्जेंट-मेजर ने अपनी मकान मालकिन से कहा। "दो सेक्शन का मतलब है लगभग बीस ग़ैर-शराबख़ोर। अगर पूरे मोर्चे को भी छान मारें तो उन्हें इतने सारे नहीं मिल पायेंगे..."

लेकिन दूसरे ही दिन उसकी आशंकाएँ निराधार साबित हो गयीं। सवेरे-सवेरे उसकी मकान-मालकिन ने हवामारों के आगमन की घोषणा कर दी। उसके स्वर में कुछ जुगुप्सा-सी थी लेकिन अधसोया होने के कारण सार्जेंट-मेजर भाँप न सका। उसने बस वही सवाल पूछा जो उसे सबसे ज़्यादा चिंतित किये था।:

"क्या उनके साथ कोई अफ़सर भी है?"

"शायद नहीं।"

"ख़ुदा का शुक्र है!" सार्जेंट-मेजर अपने कमांडेंट के ओहदे के प्रति पूर्णतया सजग था। "अधिकार बँट जाना सबसे बुरी बात है।"

"ख़ुशी मनाने की जल्दी न करो," उसकी मकान मालकिन ने रहस्यमय मुस्कान के साथ कहा।

"लड़ाई ख़त्म होने पर ही हम ख़ुशियाँ मनायेंगे," विचारपूर्ण मुद्रा में वास्कोव ने कहा। फिर टोपी सिर पर डाल वह बाहर चला आया।

बाहर आते ही वह जहाँ का तहाँ गड़-सा गया। उनींदी लड़कियों की दो क़तारें उसके सामने खड़ी थीं। सार्जेंट-मेजर ने सोचा, वह ज़रूर ही अभी भी सपना देख रहा है। आँखें साफ़ करने के लिए उसने पलकें मिचमिचायीं। लेकिन हवामारों ने जो ट्यूनिक पहन रखे थे, वे सेना के नियमों में अविनिर्दिष्ट ख़ास जगहों पर उभर-उभरकर अपनी चुगली खा रहे थे और उनकी टोपियों के नीचे से हर रंग-रूप की ज़ुल्फ़ें बल खा रही थीं।

"कॉमरेड सार्जेंट-मेजर, पहला और दूसरा सेक्शन, तीसरी प्लाटून, वियुक्त विमानवेधी बटालियन की पाँचवीं कम्पनी लक्ष्य-रक्षा के लिए आपकी सेवा में प्रस्तुत है," वरिष्ठ लड़की ने सपाट आवाज़ में रिपोर्ट की। "सहायक प्लाटून कमांडर सार्जेंट किर्यानोवा सेवा में रिपोर्ट कर रही है।"

"अच्छा," कमांडर ने कहा लेकिन ऐसा कहना सेना के नियमों में कहीं भी उल्लिखित न था। "तो उन्होंने मद्यनिषेधवादी ढूँढ़ निकाले हैं..."

चूँकि लड़कियों ने स्थानीय लोगों के साथ ठहरने से इनकार कर दिया था, वह दिन भर दमकलख़ाने में उनके लिए एक कुल्हाड़ी लेकर स्थानापन्न शय्या तैयार करने में जुटा रहा। लड़कियाँ किसी तरह खींचतान करके तख़्तियाँ ला देतीं और वह जो कुछ कहता कर देतीं। इसके साथ-साथ मैगपाई चिड़ियों के बड़े झुण्ड की तरह बकबक भी करती जातीं। कहीं आत्मसम्मान न खो बैठे, इस डर से सार्जेंट-मेजर ने मनहूस ख़ामोशी बरक़रार रखी थी।

"मेरी इजाज़त के बिना तुम लोग कैंप से एक क़दम भी बाहर न रखोगी," सब कुछ तैयार हो जाने के बाद उसने घोषणा की।

"बेरी चुनने भी?" लाल बालोंवाली एक लड़की ने गुस्ताख़ी से पूछा। वास्कोव ने उसे पहले से ध्यान में रख लिया था।

"अभी यहाँ बेरियाँ लगी ही नहीं हैं," उसने कहा।

"और लोनी? क्या हम लोनी भी नहीं चुन सकतीं?" कियनिोवा ने सवाल किया। "थोड़ा अतिरिक्त भोजन हमें मिल जायेगा, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर, नहीं तो हम दुबली ही हो जायेंगी।"

सार्जेंट-मेजर वास्कोव ने कसे ट्यूनिकों पर संदेह भरी नज़र दौड़ायी लेकिन फिर वह पसीज गया:

"लेकिन नदी से आगे नहीं। घाटी में बेशुमार लोनी है।"

कमांडेंट को छोड़कर पूरी छावनी पर पूर्ण शांति छा चुकी थी। हवामार लड़कियाँ शोरगुल करनेवाली और कष्टदायक साबित हुई थीं और सार्जेंट-मेजर जल्दी ही ख़ुद अपने घर में स्वयं को मेहमान महसूस करने लगा। वह कोई ग़लत बात बोल जाने या कर डालने से भयभीत रहता और दरवाज़ा खटखटाये बिना कमरे में घुस जाने का जहाँ तक सवाल था तो अगर भूल से कभी ऐसा हो गया तो ज़बर्दस्त किलकारियों के कारण उसे उल्टे पाँव वापस लौट आना पड़ता। सबसे बुरा भय इस बात का था कि कहीं कोई फ़ब्ती कस दे या इस ओर संकेत दे दे कि उसकी आँख किसी पर टिकी थी। चुनाँचे, वह ज़मीन पर आँख गड़ाये चलता मानो वह महीने भर की तनख़्वाह गँवा बैठा हो।

"ज़रा हँसो-बोलो, मनहूस-सा दिखाई न दो," अपने मातहतों के साथ वह किस तरह पेश आता है, यह देखने के बाद उस की मकान मालकिन ने उससे कहा। "पीठ पीछे तुम्हें वे बुड्ढा कहती हैं। ज़रा इस तरह पेश आओ कि वे देख लें।"

उसी वसंत में सार्जेंट-मेजर ने अपनी बत्तीसवीं वर्षगाँठ मनायी थी। वह ख़ुद को बुढ़ऊ मानने को तैयार न था। सोच-विचार के बाद उसने फ़ैसला किया कि जो बात उससे अभी-अभी कही गयी थी, वह सिर्फ़ इसलिए कि मकान-मालकिन ख़ुद अपनी स्थिति मज़बूत करना चाहती थी। आख़िर वसंत की एक रात वह सार्जेंट-मेजर के दिल पर जमी बर्फ़ को पिघलाने में सफल रही थी और अब स्वाभाविक रूप से अपने पाँव जमाये रखने की कोशिश में थी।

रात में हवामार लड़कियाँ तोप के आठों मुँह खोले जर्मन हवाई जहाज़ों का स्वागत करतीं और दिन में बेहिसाब धुलाई करके दमकलख़ाने के चारों ओर अपनी कच्छियाँ व चोलियाँ सूखने को टाँग देतीं। सार्जेंट-मेजर को ऐसी सज्जा क़तई पसन्द न थी और यह बताते हुए कि इससे सारा छद्मावरण जाता रहेगा, उसने बड़े रूखेपन से सार्जेंट कियनिोवा से यह बात कह भी दी।

"लेकिन ऐसा तो आदेश मिला हुआ है," पलक झपकाये बिना उसने जवाब दिया।

"किस तरह का आदेश?"

"इसी सवाल पर। इस में कहा गया है कि महिला सैनिकों को सभी मोर्चों पर जाँघियाँ व चोलियाँ सुखाने की इजाज़त है।"

कमांडेंट ने कोई बहस नहीं की—भला इन लड़कियों से बहस की जा सकती थी! अगर एक बार उनसे बहस में कोई उलझ पड़े तो बस न जाने कब तक वे मिनमिनाती रहें...

दिन में गर्मी रहती, हवा भी नहीं चलती होती और मच्छरों की इतनी भरमार थी कि उन्हें मार उड़ाने के लिए किसी टहनी के बिना एक क़दम रखना भी कठिन था। सैनिक के हाथ में टहनी का दिखाई देना तो फिर भी चल सकता था लेकिन तब बात ही दूसरी हो गयी जब कमांडेंट को सचमुच किसी बूढ़े आदमी की तरह हर कोने में खाँसते और खखारते सुना जाने लगा।

यह सब उस दिन से शुरू हुआ जब एक दिन वह मालगोदाम की ओर मुड़ा तो ठगा-सा खड़ा रह गया। आठ नंगी नारी आकृतियाँ देखकर वह चौंधिया गया, उसे बुखार-सा चढ़ता महसूस हुआ; पूरा का पूरा पहला सेक्शन अपनी कमांडर जूनियर सार्जेंट ओस्यानिना के साथ धूप-स्नान कर रहा था। सेना के तिरपाल पर वे सब की सब उसी तरह नंगी पड़ी थीं जिस तरह अपने जन्मवाले दिन रही होंगी। कम से कम दिखाने के लिए ही सही, वे कुछ किलक या चीख़ तो सकती थीं लेकिन नहीं, वे तो बस तिरपाल से नाक चिपकाये शांतिपूर्वक लेटी रहीं और सार्जेंट-मेजर को झांकते हुए रंगे हाथ पकड़ लिये जानेवाले किसी लड़के की तरह मजबूरन उलटे पाँव लौट जाना पड़ा। तब से वह हर कोने, हर मोड़ पर खाँसने लगा मानो काली खाँसी से पीड़ित हो।

वह रुक्ष दृष्टिवाली ओस्यानिना को पहले भी देख चुका था। उसके होंठ बहुत हलके से फड़कते लेकिन आँखें हमेशा गंभीर रहतीं। ओस्यानिना एक बड़ी विचित्र लड़की थी और वास्कोव ने बड़ा फूँक-फूँक कर क़दम रखते हुए अपनी मकान मालकिन के ज़रिये उसके बारे में ज्यादा जानकारी हासिल करने की कोशिश की हालांकि वह जानता था, मकान मालकिन को यह काम करने पर अधिक ख़ुशी न होगी।

"विधवा है," एक दिन बाद बड़ी बेरुख़ी से यह बताते हुए मरिया निकिफ़ोरोव्ना ने अपने होंठ भींचे। वह कोई भोली-भाली नहीं, आप अपनी लीलाएँ रचा सकते हैं।"

सार्जेंट-मेजर चुप था–महज़ औरत के सामने शब्द बेकार होते हैं। अपनी कुल्हाड़ी उठाकर वह बाहर चला गया। जब सोचने का काम करना हो तो ईंधन के लिए लकड़ी काटने से ज्यादा उपयोगी कुछ भी नहीं और उसके पास सोचने को काफ़ी मसाला था। वह अपने विचारों को तरतीब देना चाहता था।

हाँ, तो सबसे पहली बात, अनुशासन ज़रूरी था। ठीक है, पीना-पिलाना, स्थानीय औरतों के पीछे भागना सब ख़त्म हो गया था – ज़ाहिरी तौर पर सब कुछ ठीक-ठाक दिखाई दे रहा था। लेकिन ध्यान से देखें तो अभी भी काफ़ी अनियमितताएँ मौजूद थीं।

"ल्यूदा, वेरा और कात्या – पहरेदारी का समय हो गया! कात्या, प्यारी, तुम चार्ज संभालो।"

अब आप ही बताइये, संतरी तैनात करने का भला यह भी कोई तरीक़ा था? यह काम सेना के नियमों के एकदम अनुरूप होना चाहिये। नियमों के इस मखौल के ख़िलाफ़ उसे कुछ जरूर करना चाहिये, लेकिन क्या? उनके सीनियर से उसने इस पर बात करने की कोशिश की थी लेकिन जवाब में किर्यानोवा ने बस इतना ही कहा:

"हमें इसकी इजाज़त मिली हुई है... **जी ओ सी** से, व्यक्तिगत रूप से।"

तिस पर हँसती भी हैं, शैतान कहीं की।

"भारी पड़ रहा है, सार्जेंट-मेजर?"

वह पलट पड़ा। सामनेवाले दरवाज़े पर पोलिना येगोरोवा थी – दुनिया की सबसे बदचलन औरत। पिछले महीने अपना नामकरण दिवस उसने चार बार मनाया था।"

"ध्यान रहे, अपने को थका न डालो! मत भूलो कि साँड़ की तरह अब एकमात्र तुम ही रह गये हो।"

ठहाके लगाकर वह हँस पड़ी और बाड़े का सहारा लेकर यूँ झुक गयी कि अँगीठी से ताज़ा निकली डबलरोटियों की तरह उसकी छातियाँ बाहर झाँकने लगीं।

"अब किसी चरवाहे की तरह तुम्हारी बारी लगेगी: एक हफ़्ता एक घर में, दूसरा हफ़्ता किसी दूसरे के साथ। हम लड़कियों ने तुम्हारे बारे में यही फ़ैसला किया है।"

"देखो, पोलिना येगोरोवा, मेहरबानी करके क़ायदे से रहा करो ज़रा। तुम किसी सिपाही की बीवी हो या गुलछर्रे उड़ानेवाली लड़की? अपने को क़ाबू में रखा करो।"

"बुरा मत मानो, सार्जेंट-मेजर, सारा दोष लड़ाई के सिर जायेगा। सिपाही या उनकी बीवियाँ चाहे जो भी करती हैं – सब का।"

ऐसी औरत के साथ भला वह क्या कर सकता था? उसे तो लात मार कर इस जगह से खदेड़ देना चाहिये था। लेकिन कैसे? नागरिक प्रशासन था ही कहाँ? वह उसके अधिकार क्षेत्र से बाहर थी – गर्जन-तर्जन करनेवाले मेजर के मुँह से वह इतना जान चुका था।

हाँ, उसके पास सोचने को काफ़ी मसाला था – इतना कि उतने समय में पूरे दो घन मीटर लकड़ी वह आराम से काट डालेगा। और हर विचार

पर ख़ास तौर से गौर करने की ज़रूरत थी, बेशक, एकदम खास तौर से।

पर ऐसे मामलों में उसकी शिक्षा की कमी बड़ी बाधा थी। हाँ, उसने पढ़ना-लिखना ज़रूर सीखा था गणित के सवाल भी हल किये थे लेकिन उसकी स्कूली पढ़ाई सिर्फ़ चार जमात की थी क्यों कि चौथे साल के अन्त में एक भालू ने उसके बाप को मार डाला था। कहीं लड़कियों के कान में यह बात पड़ जाये तो उस भालू के कारण जो हँसी उड़ेगी कि बस! ज़रा सोचिये, पहले विश्वयुद्ध में गैस विषाक्तता से नहीं, गृहयुद्ध में कटार के वार से नहीं, कुलक की गोली से नहीं, यहाँ तक कि अपने बिस्तरे पर भी नहीं, उसका बाप एक भालू के पंजों का शिकार बना था। इन लड़कियों ने भालू तो शायद चिड़ियाघर में ही देखा होगा...

जी हाँ, फ़ेदोत वास्कोव साहब, आप एक अंधेरे कोने से रेंगते-रेंगते कमांडेंट तक पहुँच आये हैं जब कि वे मामूली सैनिक होने के बावजूद ज्ञान विज्ञान के बारे में कुछ जानकारी रखतीं हैं – वृत्तपादों और अपसरण कोणों की जानकारी रखती हैं, क्या नहीं जानती हैं। जिस ढँग से वे बातें करती हैं, लगता है ज़रूर ही उन्होंने सात या नौ साल की स्कूली शिक्षा पायी है। नौ में चार घटाया तो बचे पाँच। इसका मतलब है, वह जितने साल स्कूल में रहा, उनसे उसके मुक़ाबले कहीं ज़्यादा साल पीछे है।

इन उदासीन विचारों के कारण वह उन्मत्त-सा लकड़ी काटने पर पिल पड़ा। लेकिन आख़िर दोष किस का था? यक़ीनन उस टाँगघसीट भालू का तो नहीं ही था।

बात तो यह विचित्र थी लेकिन जीवन में अब तक वह ख़ुद को ख़ुशक़िस्मत ही समझता आया था। हाँ, बहुत तो नहीं, लेकिन उसे शिकायत भी न थी। चार साल की स्कूली शिक्षा की बदौलत ही वह सैनिक स्कूल की पढ़ाई पूरी करने में समर्थ रहा था और दस वर्ष की सेवा के बाद सार्जेंट-मेजर के ओहदे तक पहुँच गया था। वहाँ सब कुछ ठीक-ठाक ढँग से चलता रहा था लेकिन दूसरे क्षेत्रों में वह जब तब मात खा जाता और कई बार उसे क़िस्मत की मार सहनी पड़ी थी। हाँ, फिर भी वह अडिग रहा था। अडिग।

फ़िन लड़ाई के कुछ ही पहले उसने फ़ौजी अस्पताल की एक नर्स से शादी की थी। बड़ी ज़िन्दादिल, कोमल हृदय की लड़की साबित हुई थी वह, ख़ूब गाने, नाचनेवाली। थोड़ा-बहुत पीने से भी बाज़ नहीं आती। उससे एक लड़का हुआ। लड़के का नाम ईगर रखा गया। ईगर फ़ेदोतिच वास्कोव। फिर फ़िन लड़ाई छिड़ गयी और वास्कोव मोर्चे की ओर रवाना हो गया। दो पदक जीतकर जब वह वापस लौटा, भाग्य ने उस पर पहला प्रहार किया था। जब वह बर्फ़ में अपनी जान की बाज़ी लगा रहा था, उसकी बीवी सेना के पशुचिकित्सक के साथ दक्षिण की ओर भाग गयी थी। वास्कोव ने फ़ौरन ही उसे तलाक़ दे अदालत के ज़रिये उससे अपने बेटे की माँग की थी। लड़के को उसने गांव में अपनी बूढ़ी माँ के पास भेज दिया। एक साल बाद लड़का चल बसा और तब से वास्कोव सिर्फ़ तीन बार मुस्करा पाया था: जब जनरल उसे पदक से विभूषित कर रहा था, सर्जन के सामने जब वह उसके कन्धे से बम की किरच निकाल रहा था और अपनी मकान मालकिन मरिया निकिफ़ोरोवना के सामने उसकी बुद्धिमत्ता के कारण।

बम के उसी टुकड़े के कारण उसे अपना वर्तमान ओहदा प्राप्त हुआ था। मालगोदाम में अभी भी थोड़ा-बहुत सामान था लेकिन उसकी हिफ़ाज़त करनेवाले सन्तरी न थे। इसलिए एक कमांडेंट को नियुक्त करके मालगोदाम की ज़िम्मेदारी उस पर सौंप दी गयी। दिन में तीन बार वास्कोव राउंड लगाता, तालों की जाँच करता और इसी उद्देश्य से बनायी गयी पंजीयिका में एक ही बात हर बार दर्ज करता: "जाँच की गयी। सब कुछ ठीक-ठाक।" जाँच का समय भी ज़रूर दर्ज करता।

यह एक शांत जीवन था। शांत – आज से पहले तक। लेकिन अब...

सार्जेंट-मेजर ने ठण्डी आह भरी।

२

युद्ध-पूर्व घटनाओं में मर्गारीता मुश्ताकोवा (छोटे में रीता) को सबसे अच्छी तरह वह शाम याद थी जब उसके स्कूल में वीर सीमा रक्षकों के एक दल का स्वागत किया गया था। रीता को उस शाम की याद बिलकुल ताज़ा थी मानो वह संकोची लेफ़्टिनेंट ओस्यानिन के साथ छोटे-से सीमावर्ती शहर की लकड़ी की पटरियों की बनी सड़क को ठक-ठक करती चली जा

रही हो। लेफ़्टिनेंट पदक-प्राप्त वीर सैनिक योद्धाओं में न था। बस यूँ ही संयोगवश उसे उनकी मँडली में शामिल कर लिया गया था और वह इस बात पर बेहद सकुचाया हुआ था।

रीता ख़ुद भी काफ़ी संकोची थी। वह हॉल में बस यूँ ही बैठी रही थी – उसने न तो औपचारिक अभिनन्दन कार्यक्रम में और न ही शौक़िया कलाकारों के कंसर्ट में भाग लिया था। तीस की उम्र से कम के किसी मेहमान से बातचीत शुरू करने की पहल की जगह वह इस बहुमंज़िली इमारत के चूहों से भरे पड़े तहख़ाने में जा गिरना ज्यादा बेहतर समझती। संयोगवश यह हुआ कि लेफ़्टिनेंट ओस्यानिन और वह, दोनों अग़ल-बग़ल में बैठे थे। हिलने-डुलने या एक दूसरे की ओर देखने की हिम्मत किये बिना वे आँखें आगे गड़ाये बैठे थे। और बाद में जब किसी ने जुर्माने का खेल शुरू किया तो फिर दोनों ने एक-दूसरे को अग़ल-बग़ल पाया। उन्हें जुर्माने के तौर पर वाल्ज़ नृत्य करना था। जुर्माना दोनों पर एक साथ लगा था, सो वे दोनों साथ-साथ नाचे। उसके बाद वे एक खिड़की के पास जा खड़े हुए। और बाद में... तो हाँ, बाद में वह उसे घर छोड़ने गया।

और तब कहीं जाकर रीता ने बड़ी चालाकी दिखायी। वह उसे अपने घर एक घुमावदार रास्ते से ले गयी। लेकिन इसके बावजूद वह ज़बान पर ताला लगाये रहा। बस वह सिगरेट पीता रहा और हर बार सिगरेट जलाने से पहले बड़ी दबी ज़बान में उससे इजाज़त माँगता। उसके इस संकोच के कारण, रीता के दिल की धड़कन पल भर को रुक-सी जाती।

विदा लेते समय भी दोनों ने हाथ नहीं मिलाये बस एक-दूसरे की ओर देखकर सिर हिला दिये। फिर लेफ़्टिनेंट मोर्चे पर अपनी सीमा चौकी के लिए रवाना हो गया। हर शनिवार को वह उसे एक बहुत संक्षिप्त ख़त लिखा करता। हर रविवार को जवाब में वह एक बड़ा-सा लंबा ख़त लिख देती। यह ग्रीष्म आने तक चलता रहा और जून में वह उस छोटे-से शहर में तीन दिनों के लिए आ पहुँचा। साथ में वह सीमा पर गड़बड़ी फैलने और अब किसी को भी छुट्टी नहीं मिलेगी, यह ख़बर लाया था। इस लिए विवाह-सूत्र में बँधने के लिए दोनों को सीधे रजिस्ट्री ऑफ़िस चल देना चाहिये। रीता को इस बात पर कोई हैरानी नहीं हुई थी लेकिन रजिस्ट्रार नौकरशाह साबित हुआ। चूंकि अठारह साल पूरे करने में रीता के अभी

साढ़े पाँच माह बाक़ी थे, उसने दोनों का विवाह कराने से इनकार कर दिया। बहरहाल, उन्होंने शहर के कमांडेंट से मुलाक़ात की, फिर रीता के माँ-बाप के पास गये और सफलता पा ली।

रीता विवाहिता होनेवाली अपनी कक्षा में पहली थी। और किसी ऐरे ग़ैरे से नहीं बल्कि लाल सेना के कमांडेंट से – और तिस पर वह एक सीमा प्रहरी भी था। धरती पर उससे बढ़कर सुखी कोई लड़की नहीं हो सकती थी।

सीमा चौकी पर उसे फौरन ही महिला परिषद के लिए चुन लिया गया और वह कक्षाओं में जाने लगी। रीता ने घायलों को पट्टी बाँधना, गोली चलाना, घुड़सवारी करना, हथगोला फेंकना और विषाक्त गैस गोलों से अपना बचाव करना सीख लिया। एक साल बाद उसने एक लड़के को जन्म दिया (वे उसे अलबर्ट कह कर पुकारते – संक्षेप में आलिक!) और एक साल बाद ही लड़ाई छिड़ गयी।

लड़ाई जिस दिन छिड़ी, वह उन थोड़े लोगों में थी जिन्हें लड़ाई छिड़ने से किसी तरह की घबड़ाहट नहीं हुई थी। ऐसे भी वह स्वभाव से शान्त, चिन्तनशील थी लेकिन इस बार वह अशांत इस लिए न थी क्योंकि पिछली मई में उसने आलिक को अपने माँ-बाप के पास भेज दिया था और इस तरह दूसरों के बच्चों की जीवन-रक्षा में व्यस्त हो गयी थी।

सत्रह दिनों तक सीमा चौकी के सैनिकों ने डटकर मुक़ाबला किया। रात-दिन दूर से रीता को गोलियों की आवाज सुनाई देती। चौकी अभी तक सही-सलामत थी और इसके साथ ही यह उम्मीद भी बची थी कि उसका पति जीवित है, कि सीमा-प्रहरी सेना की टुकड़ियों के आने तक डटे रहेंगे और सेना इकाइयों के आ जाने के बाद ईंट का जवाब पत्थर से दिया जायेगा। लेकिन दिन बीतते गये, कुमक आयी नहीं और सत्रहवें दिन चौकी ख़ामोश हो गयी।

दूसरे परिवारों को वहाँ से ख़ाली कराते समय वे रीता को भी साथ ले जाना चाहते थे लेकिन उसने अग्रिम मोर्चों पर जाने की अनुमति माँगी। वे उसे एक मालवाही गाड़ी पर धकेल कर चढ़ा देते लेकिन चौकी के उपप्रधान, सीनियर लेफ़्टिनेंट ओस्यानिन की ज़िद्दी बीवी दो दिनों बाद फिर मोर्चेबन्दीवाले इलाक़े के मुख्यालय में आ पहुँचती। आख़िरकार उन्होंने उसे रोगियों की सेवा-सुश्रुषा करने के लिए बहाल कर लिया और छह महीनों

के अन्दर ही अन्दर उसे हवामार कर्मियों के सैनिक प्रशिक्षण स्कूल में भेज दिया गया।

प्रातःकालीन प्रत्याक्रमण के दौरान सीनियर लेफ्टिनेंट ओस्यानिन लड़ाई के दूसरे ही दिन मारा गया था। रीता को इस संबंध में जुलाई में मालूम हुआ जब, इसे कोई चमत्कार ही कहा जा सकता है, सीमा-प्रहरियों का एक सार्जेंट दुश्मनों के हाथ में पड़ चुकी चौकी से किसी तरह निकल आया।

अब तक बहादुर लेफ्टिनेंट की इस मुस्कानविहीन विधवा के प्रति कमान की बड़ी ऊँची राय बन चुकी थी। शासकीय पत्रव्यवहारों में उसकी चर्चा की जाती, उसका उदाहरण दिया जाता – और उसका व्यक्तिगत अनुरोध स्वीकार कर लिया गया। हवामार की पढ़ाई ख़त्म करने के बाद उसने उस क्षेत्र में भेजे जाने की इच्छा प्रकट की थी जहाँ सीमा-चौकी थी, जहाँ निराशापूर्ण संगीनों की लड़ाई में उसका पति मारा गया था। मोर्चा अब थोड़ा पीछे की ओर खिसक आया था – पहले की सीमा-चौकी और उस छोटे-से शहर के बीच में जहां लेफ्टिनेंट ओस्यानिन और नौवीं "ब" कक्षा की स्कूली लड़की की मुलाक़ात हुई थी।

अब रीता सन्तुष्ट थी – उसकी मुराद पूरी हो गयी थी। पति की मृत्यु की बात भी स्मृतियों की गहन विस्मृतियों में खो चुकी थी। उसे काम करना था, दायित्व निभाने थे और घृणा के उस के कुछ नितान्त विशिष्ट पात्र थे। उसने चुपके-चुपके और निर्ममतापूर्वक घृणा करना सीख लिया था और हालांकि हवामारों की उसकी टोली अब तक दुश्मनों के एक भी जहाज़ को गिरा नहीं पायी थी, वह टोह लेनेवाले एक जर्मन गुब्बारे को मार गिराने में सफल रही थी। गुब्बारा धधककर जल उठा था और बीच आकाश में झुलस गया। टोह लेनेवाला जर्मन टोकरे से कूद पड़ा और किसी पत्थर की तरह ज़मीन पर आ रहा।

"गोली दागो, रीता, गोली दागो!" हवामार टोली की दूसरी लड़कियाँ चीख़ पड़ीं।

गिरते धब्बे पर से नज़र हटाये बिना रीता इन्तज़ार करती रही। ज़मीन के क़रीब पहुँचकर जर्मन ने जैसे ही अपने पैराशूट को झटका दिया और निस्संदेह अपने जर्मन ख़ुदा का शुक्रिया अदा किया होगा, रीता ने बड़ी शान्ति से ट्रिगर की मुठिया दबा दी। तोप के चारों मुँह से आग की लपट उठी और उस काली आकृति में धसती चली गयी और विजयोल्लास से

चीख़ती लड़कियों ने उस पर चुम्बनों की बौछार कर दी। रीता के होंठों पर बस एक निष्प्रभ-सी मुस्कान छा गयी। रात भर वह काँपती रही और सहायक प्लाटून कमांडर किर्यानोवा ने उसे चाय दी और सांत्वना देते हुए कहा:

"चिन्ता मत करो, रीता! जब पहली बार मैं ने एक आदमी को मारा, मैं तो समझ लो क़रीब-क़रीब मर ही गयी थी, सच में। मुझे पूरे एक महीने तक वह सपने में दिखाई देता रहा था, नीच जर्मन..."

किर्यानोवा एक युद्ध कीर्तिमानवाली लड़की थी। फ़िन युद्ध के दौरान उसे पर्याप्त अनुभव प्राप्त हो चुका था, अग्रिम मोर्चे पर प्रथम उपचार का डिब्बा लिये वह रेंगती रही थी और इसके लिए उसे सम्मानित भी किया जा चुका था। दृढ़ चरित्रवाली लड़की के रूप में रीता उसका आदर तो करती थी लेकिन वह उसकी ओर कोई विशेष आकृष्ट न हो पायी थी।

किसी न किसी तरह रीता ख़ुद को अपने आप में सीमित रखती। सेक्शन की सारी लड़कियाँ कोम्सोमोल-सदस्या थीं और दिक़्क़त यह न थी कि वे सब की सब उससे उम्र में कम थीं – वे सब महज़ बच्चियाँ थीं। उन्हें न तो मातृत्व की, न तो प्रेम की, न ही पीड़ा और ख़ुशी की कोई अनुभूति थी। व लेफ्टिनेंटों और चुम्बनों आदि के बारे में बेकार की बकबक करती रहतीं और रीता को यह सब बड़ा नागवार गुज़रता।

"सोओ जाकर!" किसी लड़की से एक और प्रेम स्वीकृति की चर्चा सुनने के बाद वह रुखाई से आवाज़ लगाती। "अगर ऐसी और कोई बकवास की तो पहरेदारी की ड्यूटी बढ़ा दी जायेगी।"

"क्यों, रीता," किर्यानोवा अलस भाव से चबा-चबाकर बोली। "उन्हें गप क्यों नहीं करने देती। इससे उनका दिल बहला रहता है।"

"मुझे उनका इश्क़ में पड़ना बुरा नहीं लगता। लेकिन यह लुकाछिपी की चुम्मा-चाटी मेरी समझ में नहीं आती।"

"बेहतर हो, कोई उदाहरण पेश करके दिखाओ," मुस्कराते हुए किर्यानोवा कहती।

अचानक ही रीता ख़ामोश हो जाती। ऐसी चीज़ हो सकती है, वह इसकी कल्पना भी नहीं कर सकती थी। अब उसके लिए मर्द का अस्तित्व रह ही नहीं गया था। उसके लिए बस एक ही मर्द दुनिया में कभी रहा

था – वह मर्द जो लड़ाई की दूसरी सुबह ही संकट में पड़ी सीमा-चौकी के लिए मुठभेड़ में मारा गया था। वह सिर ऊँचा किये और पूरी तरह कमर कसे ज़िन्दा थी।

मई दिवस के ठीक पहले तोपख़ाने को कठिन समय से गुज़रना पड़ा था। दो घंटों तक उसने पारा दिमाग़वाले मेसरश्मिद्तों से लड़ाई लड़ी। जर्मन आसमान से बिमानवेधी चौकी पर टूट पड़े और भयानक गोलीबारी शुरू कर दी। उनका सब से पहला शिकार गोला-बारूद ले जानेवाली एक लड़की बनी जो मोटी, सीधी चपटी नाकवाली थी और जो हमेशा चुपके से कुछ न कुछ चबाती रहती थी। दूसरी दो लड़कियाँ भी मामूली तौर पर घायल हो गयी थीं। जनाज़े में टुकड़ी का कमिसार शामिल हुआ था। लड़कियाँ ज़ोर-ज़ोर से रो रही थीं। क़ब्र पर सलामी दाग़ी गयी। फिर कमिसार रीता को एक ओर बुला कर ले गया।

"हमें टुकड़ी की कमी पूरी करनी होगी।"

रीता कुछ भी न बोली।

"तुम्हारे पास अच्छी टुकड़ी है। जैसा कि तुम ख़ुद भी जानती हो, मोर्चे की महिलाएँ सबसे ज्यादा ध्यान आकृष्ट करती हैं। और ऐसे भी मामले हैं जब लोग इसके सामने टिक नहीं पाते।"

फिर भी रीता ने कुछ नहीं कहा। कमिसार पहलू बदलकर एक पैर से दूसरे पैर के सहारे खड़ा हुआ और सिगरेट सुलगा कर दबी आवाज़ में बोला:

"प्रसंगवश यूँ ही तुम्हें बता रहा हूँ कि स्टाफ़ अफ़सरों में एक करनल जो पारिवारिक आदमी है – बिना श्रेणी-विभाजन वाली एक महिला दोस्त के चक्कर में पड़ गया है। जब हमारे ऊपरवालों को इस का पता चला, उन्होंने इस कर्नल की अच्छी ख़बर ली और मुझे इस महिला दोस्त को काम में लगाने का या यूँ कहो, किसी अच्छी टोली के साथ काम में लगाने का आदेश दिया है।"

"अच्छी बात है," रीता ने जवाब दिया।

दूसरे दिन सुबह में वह लड़की से मिली और प्रशंसा-भाव से भर उठी– वह लम्बी, लाल बालोंवाली थी, उसकी चमड़ी का रंग दूध-सा सफ़ेद था। उसकी आँखें बच्चों-सी थीं भोली-भाली और गोल-गोल-सी।

"प्राइवेट येवगेनिया कोमेल्कोवा हाज़िर है..."

वह स्नान दिवस था और जब लड़कियों ने अपने कपड़े उतारे, सब की निगाहें उस नवागन्तुका पर टिक गयीं मानो वह कोई चमत्कार हो।

"झेन्या, तुम तो सचमुच जलपरी हो!"

"झेन्या, तुम्हारी त्वचा तो पारदर्शी है।"

"झेन्या, तुमसे तो कोई शिल्प-प्रतिमा तैयार की जा सकती है?।"

"झेन्या, तुम्हें तो चोली की ज़रूरत ही नहीं!"

"ओह, झेन्या, तुम्हें तो संग्रहालय में होना चाहिये! काले मखमल पर, शीशे के डिब्बे में!"

"क्या बात है!" किर्यानोवा ने आह भरी। "ऐसे रंग-रूप को वर्दी में जकड़ देने की सोची–मैं तो मरना पसन्द करती।"

"ख़ूबसूरत है," रीता ने सावधानी से कहा। "ख़ूबसूरत शायद ही ख़ुशक़िस्मत होती है।"

"अपनी बात सोचती हो?" मुस्कराते हुए किर्यानोवा ने पूछा।

रीता ख़ामोश रही। नहीं, वह बस यूँ ही न जाने क्यों सहायक प्लाटून कमांडर किर्यानोवा के साथ दोस्ताना नहीं रह सकती।

लेकिन झेन्या के साथ संभव था। यह बस कुछ यूँ ही अपने-आप हो भी गया, बिना किसी तैयारी के, बिना कोई भूमिका बाँधे। रीता ने फ़ौरन ही उसे अपने जीवन के बारे में सब कुछ बता दिया। उस का मतलब इसके पीछे कुछ-कुछ उसकी मलामत करना, कुछ अपना एक उदाहरण उसके सामने प्रस्तुत करना और कुछ शेख़ी बघारना भी था। उत्तर में झेन्या ने न तो सहानुभूति जतायी न किसी तरह का अफ़सोस ज़ाहिर किया। उसने बस इतना ही कहा:

"तो तुम्हें भी अपना एक निजी हिसाब चुकाना है।"

उसने यह बात कुछ ऐसे अन्दाज़ में कहा कि रीता, हालांकि कर्नल के बारे में वह सब कुछ जानती थी, उससे पूछ बैठी:

"और तुम्हें भी?"

"अब मैं तो नितांत अकेली हूँ। मेरी माँ, मेरी बहन और मेरे छोटे भाई, सब को मशीनगन से भून दिया गया।"

"गोलीबारी में पड़ गये थे?"

"उन्हें प्राणदंड दिया गया था। अफसरों के परिवारों को जर्मन पकड़ ले गये और मशीनगन के सामने उन्हें खड़ा कर दिया। एक एस्तोनियाई

औरत थी जिसने मुझे बगलवाले मकान में छुपा दिया था। सब कुछ मैंने अपनी आँखों से देखा था। सब कुछ! सब से आखिर में मेरी छोटी बहन मरी – उन्हें उस पर दूसरी बार गोली चलानी पड़ी थी ···"

"झेन्या, मुझे बताओ, कर्नल की क्या बात है?" रीता ने फुसफुसाती आवाज़ में पूछा। "तुम उसके चक्कर में कैसे आ गयी, झेन्या?"

"बस आ गयी।" चेहरे पर चुनौती के भाव लाते हुए उसने अपने लाल बालों को थपथपाया। "तुम मुझे सुधारने की कोशिश अभी करोगी या ख़तरा टल जाने के बाद?"

झेन्या के अनुभव के सामने रीता को अपने असाधारण होने का भाव पानी भरता प्रतीत हुआ और – यह बात विचित्र तो काफ़ी थी लेकिन, चाहे कुछ भी हो, रीता कुछ द्रवित-सी होने लगी, उसके अन्दर का कसाव कुछ कम-सा होने लगा। वह कभी-कभी हँस भी पड़ती थी, लड़कियों के साथ गाना भी गा लेती थी लेकिन पूर्ण सहजता का आचरण वह तभी करती जब झेन्या के साथ अकेली होती।

व्यक्तिगत जीवन की त्रासदी के बावजूद लाल बालोंवाली झेन्या अत्यन्त मिलनसार और नटखटपन से भरी थी। कभी-कभी लेफ़्टिनेंट को गधा बनाकर वह पूरे सेक्शन का मनोरंजन करती या किसी पेशेवर की तरह जिप्सी नृत्य करती और लड़कियाँ ताल देतीं या अचानक ही वह किसी उपन्यास की कहानी सुनाना शुरू कर देती – और लड़कियाँ मंत्रमुग्ध-सी सुनने लगतीं।

"तुम्हें तो रंग-मंच पर होना चाहिये था, झेन्या!" आह भरकर किर्यानोवा बोल उठती। "तुम अपनी प्रतिभा बर्बाद कर रही हो!"

और इस तरह बड़ी सावधानी से क़ायम रखी रीता की निःसंगता समाप्त हो गयी थी। झेन्या ने सब कुछ उलट-पलटकर रख दिया था। उनकी टुकड़ी में एक बौना-सी लड़की थी – गयी-गुज़री-सी दिखाई देनेवाली गाल्या चेतवेर्ताक। वह दुबली-पतली-सी थी, उसकी नाक लम्बी, नुकीली, चोटियाँ मानो सन की बनी थीं और छाती लड़कों की तरह सपाट। नहाने के समय झेन्या ने उसकी अच्छी रगड़-पोंछ की, उसके बाल सँवार दिये, ट्यूनिक को उसके शरीर के मुताबिक़ ठीक कर दिया और गाल्या खिल उठी। सहसा उसकी आँखें चमकने लगीं, होंठों पर मुस्कान आ गयी और अचानक ही लड़कियों ने देखा – उस की छातियाँ भी हैं। तब

से गाल्या झेन्या के बिना एक भी क़दम नहीं चलती – अब वे तीन हो गयी थीं: रीता, झेन्या और गाल्या।

हवामार लड़कियों का तबादला मोर्चे से किसी रेलवे स्टेशन पर किया जा रहा है, इस ख़बर का ज़बर्दस्त विरोध किया गया। सिर्फ़ रीता चुप रही। वह मुख्यालय में गयी और मानचित्र देखने के बाद बोली:

"मेरे सेक्शन को भेज दीजिये।"

लड़कियाँ हैरान थीं, झेन्या ने बग़ावत का झण्डा बुलन्द कर दिया था लेकिन दूसरी सुबह अचानक ही शान्त पड़ गयी – अब वह चलने के लिए शोर मचा रही थी। क्यों और कैसे, किसी की समझ में नहीं आया लेकिन आपत्ति किसी को नहीं रह गयी थी। इसका मतलब था, उन्हें झेन्या पर पूर्ण विश्वास था। इस संबंध में बातचीत या चर्चा बन्द करके उन्होंने प्रस्थान की तैयारी शुरू कर दी। नये मोर्चे पर पहुँचकर रीता, झेन्या और गाल्या ने अचानक ही बिना चीनी की चाय पीनी शुरू कर दी थी।

तीन रात बाद रीता कैम्प से ग़ायब हो गयी। वह रेंगकर दमकलख़ाने से बाहर आयी, छाया की तरह उनींदी छावनी के पार चली गयी और ओससिक्त ऑल्डर कुँजों में गुम हो गयी। झाड़-झंखाड़ से अटी पड़ी जंगल की पगडण्डी पर चलती वह मुख्य सड़क पर जा पहुँची। वहाँ उसने पहली लॉरी रोकी।

"दूर जा रही हो, हसीना?" मुच्छे सिपाही ने पूछा। रात में लॉरियाँ पृष्ठभाग से गोला-बारूद लाने जाया करती थीं। उन को चलानेवाले नियम-क़ानून की कोई परवाह नहीं रखते थे।

"मुझे शहर तक लिफ़्ट दे सकते हो?"

लॉरी के पीछे से सहारे के लिए हाथ बढ़ आये। इजाज़त की प्रतीक्षा किये बिना रीता पहिये पर चढ़ गयी और पल भर में अन्दर जा पहुँची। उन्होंने उसे किसी कैन्वस पर बैठा दिया और कंधों पर गद्देदार कमीज़ डाल दी।

"चाहो तो घंटे भर झपकी ले लो···"

दूसरी सुबह वह अपनी जगह वापस आ चुकी थी।

"लीदा, राया – ड्यूटी पर!"

किसी ने उसे नहीं देखा था या कम-से-कम ऐसा ही प्रतीत होता

था लेकिन किर्यानोवा को इसका पता चल चुका था – किसी ने उसे बता दिया था। किर्यानोवा बोली तो कुछ नहीं लेकिन मन ही मन हँसी ज़रूर।

"तो शायद उसे कोई मिल गया है, कुमारी गंभीरा जी को। ठीक है, कुछ ढीली तो पड़ जायेगी ..."

उसने वास्कोव से इस संबंध में कुछ भी नहीं कहा। इसके अलावा, उससे लड़कियाँ डरती भी नहीं थीं – रीता तो सबसे कम। छावनी के इर्द-गिर्द चक्कर काटते रहनेवाला वह कोई पुरातन पंथी भर था। उसे बस बीस रटे-रटाये शब्द आते थे और वे सब के सब सेना के नियमों से थे। उसकी बात गंभीरता से धरती पर कौन सुननेवाला था?

लेकिन अनुशासन तो आख़िर अनुशासन ही है और इस अनुशासन के लिए यह जरूरी था कि रीता के रात्रि-दौरों के बारे में झेन्या और गाल्या चेतवेर्ताक के अलावा किसी को कुछ भी न मालूम हो।

अपने साथ शहर जाते हुए वह चीनी, बिस्कुट, बाजरे की इंस्टैंट दलिया और कभी-कभी उबले हुए गोश्त के डब्बे ले जाती। अपनी सफलता पर मग़रूर रीता हफ़्ते में दो या तीन-तीन रात शहर ग़ायब हो जाती। वह थकी-हारी-सी दिखाई देने लगी। झेन्या मलामत के साथ उसके कान में फुत्कारी :

"तुमने हद कर दी है, छोकरी! गश्ती दल द्वारा पकड़ी जाओगी या किसी अफ़सर को भनक मिल जायेगी तो भुगतती रहोगी।"

"चुप रहो, झेन्या, मेरे साथ कभी ऐसा नहीं हो सकता!"

उसकी आँखें ख़ुशी से चमक रहीं थीं। ऐसी हालत में भला किसी से कोई क्या बात कर सकता था? झेन्या चिन्तित हो उठी।

"सावधान रहो, रीता!"

रीता ने जल्दी ही भाँप लिया कि किर्यानोवा उसके शहर जाने की बात जानती है। अपनी नज़रों और बेहूदी हँसी से उसने यह ज़ाहिर भी कर दिया था। उसकी खीं-खीं रीता के कलेजे में चुभ जाती मानो उसने सचमुच अपने मृत पति को धोखा दिया हो। वह ग़ुस्से से लाल-पीला हो किर्यानोवा को पाठ पढ़ाना चाहती थी लेकिन झेन्या ने उसे मना कर दिया। वह उसे पकड़कर एक ओर ले गयी।

"रीता, जो उसके जी में आये, उसे सोचने दो!"

रीता ने ख़ुद पर नियंत्रण कर लिया क्योंकि झेन्या का कहना ठीक ही था। जब तक किर्यानोवा कुछ कहती नहीं या टाँग नहीं अड़ाती या वास्कोव से कुछ नहीं कहती, जो कुछ नीच बातें सोचनी हों, सोचती रहे। वह तो जाती रहेगी – वह जाना कभी बन्द नहीं करेगी। एक मामला पहले भी हो चुका था – नदी-पार दो लड़कियों को सार्जेंट-मेजर ने पकड़ लिया था। वह सुबह से शाम तक, चार घंटों तक उन लड़कियों को नैतिकता पर भाषण पिलाता रहा था। अपने आदेशों और उपदेशों के साथ उसने पूरी किताब ही लड़कियों पर उँडेल दी थी। कम से कम लड़कियाँ रो पड़ी थीं और उन्होंने नदी-पार न जाने का, यहाँ तक कि कैंप से बाहर तक न निकलने का वायदा किया था।

लेकिन किर्यानोवा आगे भी ख़ामोश रही।

सफ़ेद रातें वायुहीन और निस्पन्द थीं। सूर्यास्त से सूर्योदय के बीच लम्बे झुटपुटे के दौरान कुसुमित घास की मादक ख़ुशबू के झोंके चलते और हवामार लड़कियाँ दमकलखाने के बाहर पौ फटने तक गीत गाती रहतीं। अब रीता केवल वास्कोव से बचा करती। तीन की जगह अब केवल एक बार कैंप से बाहर जाती और वह भी रात के भोजन के तुरंत बाद। फिर ठीक समय पर लौट भी आती – उस समय जब जागने के लिए बिगुल बजाया जाता।

सुबह के समय लौटना रीता को सबसे ज्यादा पसन्द था। गश्ती दल के हाथों में पड़ने का कोई ख़तरा तब नहीं रहता और वह नंगे पाँव घास के बीच शांतिपूर्वक सरसराती चली जाती। ओस के कारण घास कष्टदायक रूप से ठण्डी होती। अपने बूट बाँधकर वह कँधों पर डाले रहती। वह लम्बे-लम्बे डग भरती घास के बीच चली जाती होती और अपने आगमन के बारे में, माँ की शिकायतों के बारे में सोचती रहती। और इस बात से रीता को बड़ी ख़ुशी महसूस होती कि किसी की इच्छा – अनिच्छा की परवाह किये बिना वह ख़ुद अगली बार कैंप से यूँ ही निकल आने की योजना बना सकती थी।

लेकिन लड़ाई चलती रही और मानव जीवन की आहुतियाँ लेती रही और वे मानव-जीवन विचित्र रूप से, असीम रूप से एक-दूसरे से जुड़े थे। जब वह निहायत छोटी-सी छावनी नम्बर १७१ के कमांडेंट को धोखा दे रही थी, उस समय जूनियर सार्जेंट मरगारीता ओस्यानिना को

यह मालूम नहीं हो पाया था कि "सिर्फ़ कमान के लिए" टिप्पणी से अंकित इम्पीरियल सर्विस एस-डी नम्बर सी २१६/७०२ के निर्देश पर हस्ताक्षर हो चुके थे और उसके कार्यान्वियन की स्वीकृति हो चुकी थी।

३

यहाँ ऊषा नागरी के पायल नहीं खनकते थे, यहाँ सुबह बड़ी ख़ामोश होती थी।

नंगे पाँव घास से होकर रीता सर-सर चली जा रही थी, बूट उसने पीठ पर लटका रखे थे। दलदलों से उठता घना कुहरा उसकी टाँगों को सुन्न करता, कपड़ों पर जमा हो रहा था। रीता की आँखें छावनी के पास आगे की ओर चिर-परिचित वृक्ष के ठूँठ पर टिकी थीं जिस पर बैठकर वह अपने सूखे मोज़े और बूट पहनती थी। चूँकि लॉरी से लिफ़्ट मिलने में आज काफ़ी देर हो गयी थी, रीता जल्दी-जल्दी क़दम बढ़ाये चल रही थी। वास्कोव बहुत सवेरे, एकदम भिनसरे ही उठता था और मालगोदाम के तालों की जाँच करने चल देता था। यही वह जगह थी जहाँ रीता को पहुँचना था—झाड़ियों के पीछे—लकड़ी की दीवार से कुछ ही क़दम पर वह ठूँठ था।

पगडण्डी से दो मोड़ और पार करके, फिर ऑल्डर के कुँजों के बीच से सीधे चलने पर वह ठूँठ के पास पहुँच जाएगी। रीता ने पहला मोड़ पार किया और वहीं की वहीं जमी-सी रह गयी। सड़क पर कोई खड़ा था।

वहाँ खड़ा होकर वह कन्धे के पीछे से झाँक रहा था। वह लम्बा-सा था और उसने वाटरप्रूफ़ छद्म लबादा डाल रखा था जो पीठ के पास ऊपर की ओर उभरा हुआ था। दायें हाथ में उसने फ़ीतों से बँधा एक लम्बा-सा पैकेट पकड़ रखा था; सीने पर उसने सबमशीनगन लटका रखी थी।

रीता झाड़ियों में रेंग गयी। ओस कणों ने उसे सराबोर कर दिया लेकिन उसे इसका पता भी न चला था। साँस रोके, उसने थोड़े-थोड़े छितराये पत्तों के बीच से उस अजनबी की ओर देखा जो उसका रास्ता रोके, दुःस्वपन से आ टपके किसी प्राणी की तरह बिना हिले-डुले खड़ा था।

जंगल से एक दूसरा आदमी भी आ पहुँचा। वह थोड़ा नाटा-सा था। सीने से लटकती उसके पास भी एक सबमशीनगन थी। उसके हाथों में भी उसी तरह का एक पैकेट था। अपने ऊँचे, फ़ीताबन्द बूट पहने ओस-सिक्त घास से निःशब्द क़दम रखते हुए वे ख़ामोशी से, सीधे उसी की ओर बढ़े आ रहे थे।

रीता ने अपनी मुट्ठी मुँह के अन्दर घुसेड़ ली और उसे दाँतों से इस तरह कसकर दबा लिया कि उसे पीड़ा महसूस होने लगी। चाहे कुछ भी हो, उसे हिलना-डुलना न था, चीख़ना नहीं था और झाड़ियों में दुबके रहना था। वे लोग ठीक उसके पास से गुज़रे और जिन शाखाओं के पीछे वह खड़ी थी, उनमें से निकटवर्ती एक व्यक्ति का कन्धा उनसे रगड़ाया भी था। परछाइयों की तरह ख़ामोश, निःशब्द वे उसके पास से गुज़रकर नज़रों से ओझल हो गये।

कुछ देर रीता प्रतीक्षा करती रही लेकिन और कोई नहीं आया। बड़ी चौकसी से वह झाड़ियों से खिसककर सरपट दौड़ती हुई सड़क पार कर गयी, फिर एक झाड़ी में दुबककर खड़ी हो उसने अपने कान खड़े कर लिए।

सब कहीं ख़ामोशी थी।

हाँफ-हाँफकर साँस लेते हुए, उन्मत्त-सी अवस्था में वह आगे की ओर दौड़ पड़ी। बूट उसकी पीठ से टकरा रहे थे। अपने रहस्य को बरक़रार रखने की कोई कोशिश किये बिना वह उनींदे गाँव को दौड़ते हुए पार कर गयी और बन्द दरवाज़े को पीटने लगी।

"कॉमरेड कमांडेंट! सार्जेंट-मेजर!"

आख़िर दरवाज़ा खुल गया। दरवाज़े पर वास्कोव खड़ा था—उसने सैनिक बिरजिस और सूती बण्डी पहन रखी थी। उसके नंगे पाँवों में चप्पल थी। उसने तन्द्रा से आँखें मिचमिचायीं।

"क्या है?"

"जंगल में जर्मन हैं!"

"हूँ ऽऽऽ" वास्कोव ने सन्देहपूर्वक आँखें सिकोड़ीं। पट्टी पढ़ाना चाहती हैं। "तुम्हें कैसे मालूम?"

"मैंने अपनी आँखों से उन्हें देखा है। दो थे। उनके पास सबमशीनगनें थीं। उन्होंने छद्म लबादे डाल रखे थे..."

उसके चेहरे से लगा, वह सच बोल रही थी। उस की आँखों में भय झाँक रहा था।

"यहीं ठहरो!"

सार्जेंट-मेजर दौड़कर घर के अन्दर चला गया, बूट चढ़ाकर उसने अपना ट्यूनिक कन्धों पर डाल लिया। सिर्फ़ रात की पोशाक पहने मरिया निकिफ़ोरोवना बिस्तरे पर चकरायी-सी बैठी थी।

'क्या बात है?"

"कुछ भी नहीं। तुमसे कोई मतलब नहीं।"

पिस्तौल की पेटी कमर में कसते हुए वह सड़क पर निकल आया। रीता बिना हिले-डुले ठीक पहलेवाली जगह पर खड़ी थी। उसके बूट अभी भी कन्धे से लटक रहे थे। सार्जेंट-मेजर की नजर स्वत: उसके पैरों की ओर चली गयी। वे लाल हो गये थे और गीले थे। एक ओर के अँगूठे से एक पत्ता चिपका हुआ था। तो जंगलों में नंगे पाँव आवारागर्दी कर रही थी—बूट पीठ पर लटकाकर। तो आज कल इस तरह लड़ाई लड़ी जा रही थी!

"सब की सब! अपनी बन्दूकें लेकर पंक्ति में खड़ी हो जायें। कियोनोवा को बुलाओ! दौड़कर!"

लड़कियाँ दमकलखाने की ओर दौड़ पड़ीं और सार्जेंट-मेजर सिग्नल बॉक्स की ओर, जहाँ टेलीफ़ोन रखा था। सफलता की उसे बस उम्मीद ही भर थी!

"पाइन, पाइन··· हे भगवान! या तो वे सब सो रहे हैं या ब्रेक डाउन हो गया है··· पाइन··· पाइन···"

"पाइन बोल रहा हूँ।"

"मैं सत्रह बोल रहा हूँ। तीसरे से लाइन मिला दो। बहुत जरूरी है, आपात स्थिति!"

"लाइन मिला रहा हूँ, चीखो मत··· जरूर ही आपात स्थिति होगी!"

कुछ देर तक वह सनसन और भुनभुनाने की आवाज सुनता रहा फिर दूर से आती एक आवाज़ ने, पूछा:

"यह तुम हो, वास्कोव? क्या बात है?"

"वास्कोव बोल रहा हूँ, कॉमरेड तृतीय, हमारे पास के जंगल में जर्मन देखे गये हैं। आज हमें उनमें से दो का पता चला है···"

"उनका पता किसने लगाया?"

"जूनियर सार्जेंट ओस्यानिना···"

अचानक ही कियोनोवा वहाँ आ पहुँची—उसने अपनी टोपी नहीं पहन रखी थी। उसने सिर हिलाकर उसका यूँ अभिवादन किया मानो अभी-अभी किसी पार्टी में आयी हो।

"हमने सब को चौकस कर दिया है, कॉमरेड तृतीय। मैं जंगल में तलाश करने की सोच रहा हूँ···"

"जरा रुको, वास्कोव। उस पर ग़ौर करने की जरूरत है। अगर हम मोर्चे को असुरक्षित छोड़ देंगे तो कोई हमारी पीठ नहीं ठोकेगा। वे देखने में कैसे लग रहे थे—तुम्हारे जर्मन?"

"उसका कहना है, उन्होंने छद्म लबादे पहन रखे थे और उनके पास सबमशीनगनें थीं। शायद जासूसी···"

"जासूसी? वहाँ तुम्हारे पास है क्या जो वे दिलचस्पी लेंगे? जिस तरह तुम अपनी मकानमालकिन के साथ सोते हो, शायद उसका टोह तो नहीं लेना चाहते?"

वही ढाक के तीन पात, हमेशा वास्कोव की ही ग़लती रहती। हर मामले में वही बलि का बकरा बनता।

"बोलो तो वास्कोव! तुम सोच क्या रहे हो?"

"मैं सोच रहा हूँ, हमें उन्हें पकड़ना चाहिये, कॉमरेड तृतीय—वे बहुत दूर चले जायें, उससे पहले ही।"

"बिलकुल ठीक। सुराग़ गुम होने से पहले ही अपने पाँच मातहतों को साथ लेकर ढूँढ़ने निकल पड़ो। क्या कियोनोवा वहीं पर है?"

"यहीं पर है, कॉमरेड···"

"उसे टेलीफ़ोन दे दो।"

कियोनोवा ने मुख्तसर बातचीत की। दो बार उसने कहा, "समझ गयी" और कोई पाँच बार हामी जमायी। टेलीफ़ोन रखकर उसने कहा:

"पाँच सैनिक आपके साथ भेज देने का आदेश है···"

"एक तो उसको साथ कर दो जिसने उन्हें देखा था।"

"ओस्यानिना ही इनचार्ज रहेगी।"

"ठीक है। अपनी सैनिकों को पंक्तिबद्ध करो।"

"वे पंक्तिबद्ध हैं।"

उन्हें भला सैनिक कहा जा सकता था! एक ने अयाल की तरह पीठ पर बाल बिखेर रखे थे, कमर तक, दूसरे के बाल में काग़ज़ के टुकड़े फँसे थे। योद्धा! ज़रा कल्पना कीजिये, ऐसे लोगों के साथ जंगल को छानने की, स्टेनगनों से लैस जर्मनों को पकड़ने की! और उनके पास क्या था–१८६१ मॉडेल की बस कुछ पुरानी विश्वसनीय रूसी बन्दूकें जिन्हें चौथे दशक में सुधार कर आधुनिक बनाया गया था...

"आराम लो!"

"झेन्या, गाल्या, लीज़ा..."

सार्जेंट-मेजर की भृकुटि तन गयी।

"ठहरो एक मिनट, ओस्यानिना! हम जर्मनों को पकड़ने जा रहे हैं, मछली नहीं। हमें अपने साथ ऐसी लड़कियों को ले चलना चाहिये जिन्हें गोली तो चलानी आती हो..."

"वे गोली चला सकती हैं।"

वास्कोव अविश्वास से कंधे उचकाने जा रहा था लेकिन उसने सिर्फ़ इतना ही कहा;

"एक बात और। किसी को जर्मन भाषा आती है?"

"मुझे।"

आवाज़ किसी किलकारी-सी धीमी थी और बोलने वाली आगे भी नहीं बढ़ आयी थी। इससे सार्जेंट-मेजर सचमुच ही बौखला उठा।

"कौन बोली थी? नियमानुसार रिपोर्ट करो।"

"प्राइवेट गुरविच।"

"अच्छा, अच्छा...' हाथ ऊपर उठाओ' "जर्मन में कैसे करेंगे?"

"हेंडे होख़!"

"ठीक!" इस बार सार्जेंट मेजर कंधे उचकाये बिना न रह सका। "अच्छा, तुम आ जाओ, गुरविच..."

उनमें से पाँच एक क़तार में खड़ी हो गयीं। उनके चेहरों पर बच्चों--सी गंभीरता छायी थी लेकिन भय की कोई परछाँई अब तक न थी।

"हम दो दिनों के लिए रवाना हो रहे हैं, हमें ऐसा मान लेना चाहिये। हमें अपने साथ खाने-पीने का सामान ले जाना है और हर एक को कारतूसों की पाँच पेटियाँ। अभी कुछ दाना-पानी कर लो। पेट भरे होने चाहिये। पैरों को अच्छी तरह लपेट लो। बाक़ी सब कुछ ठीक-ठाक हो।

दूसरे शब्दों में तैयार हो जाओ। तैयारी के लिए चालीस मिनट दिये जाते हैं। बर्ख़ा-स्त! कियानोवा और ओस्यानिना मेरे पास रुकेंगी।"

जब तक पाँचों प्राइवेट नाश्ता करने और सफ़र की तैयारी में लग गयीं, सार्जेंट-मेजर दोनों एन सी ओ को विचार-विमर्श के लिए अपने ठिकाने पर ले गया। सौभाग्य से मकान मालकिन ग़ायब हो चुकी थी लेकिन बिस्तरे को ज्यों का त्यों छोड़ गयी थी: दो तकिये बड़े प्यार से अग़ल-बग़ल रखे हुए थे। सार्जेंट-मेजर ने दोनों एन सी ओ को पतला-सा सूप पेश किया, फिर पुराने, बड़े पैमाने के मुड़े मानचित्र की ओर दृष्टि डाली।

"क्या इस सड़क पर उनसे तुम्हारी मुलाक़ात हुई थी?"

"ठीक यहीं पर," ओस्यानिना ने हलके से मानचित्र को छूकर बताया। "मुख्य सड़क की ओर जाते हुए, वे मेरे क़रीब से यहाँ पर से गुज़रे थे।"

"मुख्य सड़क की ओर? और चार बजे सुबह में जंगल में तुम क्या कर रही थीं?"

ओस्यानिना ने कोई जवाब नहीं दिया।

"उसे नित्य कर्म से निबटना रहा होगा," आँखें उठाये बिना कियानोवा ने कहा।

"नित्य कर्म?" वास्कोव ग़ुस्से से बोला। झूठ, सरा-सर। "तुम्हारे नित्य कर्म के लिए मैंने ख़ुद शौचालय बना दिया है। या उसमें काफ़ी जगह नहीं है?"

दोनों ने आँखें तरेर लीं।

"आप जानते हैं, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर, कुछ ऐसे सवाल होते हैं जिनका जवाब देने के लिए औरतों को बाध्य नहीं किया जा सकता," फिर कियानोवा ने ही जवाब दिया था।

"यहाँ कोई भी औरत नहीं।" सार्जेंट-मेजर गरज उठा और उसने मेज़ पर हथेली पटकी, "कोई भी नहीं! हम सैनिक और अफ़सर हैं, बस। समझीं? लड़ाई छिड़ी है और जब तक यह ख़त्म नहीं हो जाती, हम सब न पुरुष हैं, न स्त्री!"

"शायद यही कारण है कि आपका बिस्तर अभी तक ठीक नहीं हो पाया है, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर–न पुरुष हैं, न स्त्री?"

क्या व्याल थी यह कियानोवा! विषधर!

"तो वे मुख्य सड़क की ओर जा रहे थे?"

"उस दिशा में..."

"आदमी थे कि घनचक्कर। मुख्य सड़क उनके लिए कोई उपयुक्त जगह नहीं। फ़िर युद्ध में ही दोनों ओर के जंगल नष्ट हो चुके थे, जल्दी ही उनकी गर्दन नाप ली जायेगी। नहीं, नहीं, कॉमरेड एन सी ओ, मुख्य सड़क उनके आकर्षण का केंद्र नहीं... अच्छा • खाओ तो • खाते भी जाओ।"

"वहाँ झाड़ियाँ हैं और कुहरा भी," ओस्यानिना बोली। "मेरे ख्याल से, मैंने देखा..."

"अगर तुम सब कुछ ख़्यालों में देखने लगी तो ख़ुद को तमग़ों से ही सुसज्जित कर लोगी," कमांडेंट भुनभुनाया। "उनके हाथों में पैकेट थे, तुमने कहा था न?"

"हाँ। और वे भारी दिख रहे थे। पैकेटों को उन्होंने दायें हाथ में ले रखा था। उन्हें बड़ी सफ़ाई से बाँधा गया था।"

सार्जेंट-मेजर ने अपने लिए एक बड़ी-सी सिगरेट तैयार की फिर सुलगाकर, थोड़ी-सी चहलक़दमी की। उसके दिमाग़ में सहसा ही एक विचार कौंध उठा जिससे वह काफ़ी बेचैन लगने लगा।

"मेरा अनुमान है, व विस्फोटक ले जा रहे थे, अगर मेरा अनुमान सही है, वे मुख्य सड़क की ओर नहीं बल्कि रेलवे लाइन की ओर जायेंगे। किरोव लाइन की ओर, यही बात है।"

"किरोव लाइन तक तो लम्बा रास्ता तय करना होगा," किर्यानोवा ने संशय से कहा।

"लेकिन पूरे रास्ते में जंगल पड़ता है। और जंगल भी खूब है। दो आदमियों की तो बात ही क्या है, पूरी की पूरी सेना वहाँ छुप सकती है।"

"अगर ऐसी बात है," ओस्यानिना चिन्तातुर हो बोल उठी, "तो रेलवे के सुरक्षा सैनिकों को ख़बर कर देनी चाहिये।"

"यह काम किर्यानोवा करेगी," वास्कोव ने बताया। "वह इसे मेरी दैनिक रिपोर्ट में शामिल कर सकती है—ढाई बजे की, कॉल संकेत १७। खाओ, खाती जाओ, ओस्यानिना। दिन भर तुम्हें सफ़र करते रहना है..."

खोजी दल चालीस मिनट में पंक्तिबद्ध हो चुका था लेकिन डेढ़ घंटे से पहले रवाना नहीं हो पाया—सार्जेंट-मेजर बेहद झमेलिया जो था।

"सब अपने-अपने बूट उतार डालो!"

जैसी कि उसे आशा थी, उनमें से आधे ने महीन मोज़ों के ऊपर से बूट पहन रखे थे और बाक़ी आधे ने एकदम पुराने पड़ चुके कपड़े पैरों के ऊपर लपेट रखे थे। पैरों पर इस तरह कपड़े लपेटकर वे अधिक लड़ाई शायद ही कर पायें। तीन किलोमीटर चलने के बाद उनके पैरों में फफोले पड़ जायेंगे और ख़ून छल-छला उठेगा। हाँ कम से कम जूनियर-सार्जेंट ओस्यानिना ने जो उनकी इनचार्ज थी, यह काम ठीक से किया था। लेकिन उसने औरों को क्यों नहीं सिखाया?

चालीस मिनट वह उन्हें यही सिखाता रहा और चालीस मिनट उनसे बन्दूक साफ़ कराता रहा। उन्हें बन्दूक की क्या परवाह थी—जब तक इसमें जंगली कीड़े न लग जायें! लेकिन मान लो, अगर उन्हें गोली चलानी पड़ी तो?

बाक़ी समय सार्जेंट-मेजर ने एक छोटा-सा भाषण देने में लगाया जो, उसके ख़्याल से, लड़कियों का आत्मबल बढ़ाने के लिए, उन्हें अवसर के अनुकूल बनाने के लिए जरूरी था।

"दुश्मन से डरो मत। याद रखो, वे अग्रिम मोर्चे पर नहीं बल्कि पृष्ठभाग में हैं। इसका मतलब है, वे ख़ुद भयभीत हैं, लेकिन उनके साथ आमने-सामने की लड़ाई से बच के रहना। उनसे निबटना कठिन होगा और आमने-सामने की लड़ाई के लिए वे ख़ास तौर से हथियारबन्द होंगे। अगर वे एकदम तुम्हारे निकट ही आ धमकें, बस ख़ामोश रहो। चाहे कुछ भी करो लेकिन दौड़ो मत, दौड़ते लोगों पर सबमशीनगन से निशाना लेना सबसे अच्छा और आसान होता है। एक साथ दो-दो रहा करो। साथ-साथ बने रहना, पिछड़ना मत और बातचीत एकदम बन्द रखना। अच्छा, अब बताओ तो, अगर तुम सड़क पर पहुँच जाओ, तुम्हें क्या करना चाहिये?"

"हम जानते हैं," प्रोत्साहित लड़की ने कहा। "एक को दायें और दूसरे को बायें जाना चाहिये।"

"आड़ में," सार्जेंट मेजर ने सुधार किया। "आगे बढ़ने का क्रम इस प्रकार रहेगा: जूनियर सार्जेंट और एक सैनिक बतौर अग्रिम टोहकर्त्ता आगे जायेंगे। सौ मीटर पीछे टुकड़ी का मुख्य भाग रहेगा: मैं..." उसने दूसरों पर नज़र डाली, "दुभाषिये के साथ आगे बढ़ूंगा। हमसे सौ मीटर पर आख़िरी जोड़ा रहेगा। निस्सन्देह वे साथ-साथ नहीं बल्कि इतनी दूरी

पर चलेंगी कि एक-दूसरे को देखती रहें। दुश्मन को या कोई सन्देहास्पद चीज़ देखने पर··· कौन है जो मुँह से जानवर या चिड़िया की आवाज़ निकाल सकती है?"

वे खीं-खीं कर उठीं, पागल कहीं की!

"मैं तुम लोगों से एक गंभीर सवाल कर रहा हूँ जंगल में अपनी आवाज़ में संकेत नहीं दिये जाते, दुश्मन के भी कान होते हैं, मालम है न।"

लड़कियों के पास इसका कोई जवाब न था!

"मैं कर सकती हूँ," आख़िर गुरविच सकुचाती हुई बोली। "मैं गधे की नक़ल कर सकती हूँ: हेंचू-हेंचू!"

"इधर गधे नहीं होते," सार्जेंट-मेजर नाख़ुश होते हुए बोला। "ठीक है, हम बत्तख़ की बोली सीख लें।"

उसने बोलकर दिखाया तो वे सब की सब ठठाकर हँस पड़ीं। वह सोच नहीं सका, आख़िर किस बात पर वे सब अचानक ही इतनी उल्लसित हो उठी थीं लेकिन हाँ, वह ख़ुद भी मुस्करा पड़ा।

"इसी तरह बत्तख़ बत्तख़ी को बुलाता है," उसने समझाया।

"हाँ, तो अब बोलकर देखो।"

बड़ी ख़ुशी-ख़ुशी वे कैं-कैं बोल उठीं। ख़ास ज़ोर लगाके जो लड़की बोली, वह थी लाल बालों वाली झेन्या (ओह, क्या ग़ज़ब की लड़की थी, भगवान ही बचाये, कहीं इससे प्यार न हो जाये—इतनी ही ग़ज़ब थी वह!) लेकिन सबसे अच्छी तरह सीखकर नक़ल उतारनेवाली निस्सन्देह ओस्यानिना ही थी—वह वास्तव में योग्य थी। दूसरी भी बुरी न थी—लीज़ा, हाँ, बुरी तो न थी? मोटी, हट्टी-कट्टी—और यह कहना कठिन था कि उसके कन्धे ज्यादा चौड़े थे या नितम्ब। बड़ी सुन्दर नक़ल की थी उसने। हाँ, वह थोड़ी ठीक-ठाक थी—कहीं भी ठीक-ठाक जा पायेगी; स्वस्थ और घोड़े-सी मज़बूत।

उन दोनों की तरह —गाल्या चेतव्रेर्ताक और दुभाषिया गुरविच की तरह चुपकी, ग़ैर-सैनिक-सी नहीं थी वह।

"हम वोप झील जायेंगे। इस पर एक नज़र डाल लो।" वे नक्शे के पास आ जुटीं, उनकी साँस सार्जेंट-मेजर की गर्दन और कानों में पड़ रही थी। बिलकुल सैनिक, हँसी आ जाये!" "अगर जर्मन रेलवे लाइन

की ओर बढ़ रहे हैं तो उन्हें झील से होकर गुज़रना पड़ेगा। उन्हें छोटा रास्ता तो मालूम है नहीं। इसका मतलब है, वहाँ हम उनसे पहले पहुँच जायेंगे। यह यहाँ से कोई बीस वर्स्ट की दूरी पर है —यह दूरी हम दिन के भोजन के समय तक तय कर लेंगे। और हमारे पास उनके लिए तैयार होने का समय रहेगा। लम्बे रास्ते से उन्हें पचास वर्स्ट की दूरी तय करनी पड़ेगी और उन्हें झाड़ में भी रहना होगा। क्या सब कुछ स्पष्ट है, कॉमरेड सैनिको?"

अब वे थोड़ा गंभीर हो गयी थीं। जवाब में उन्होंने कहा:

"एकदम स्पष्ट···"

उनके लिए धूप स्नान करना और हवाई जहाज़ों का निशाना साधना—ऐसी ही लड़ाई उपयुक्त थी···

"जूनियर सार्जेंट ओस्यानिना, राशन-पानी व दूसरी तैयारियों की जाँच कर लो। हम पन्द्रह मिनट में रवाना हो जायेंगे।"

अपने ठिकाने पर थोड़ी देर के लिए उसे जाना था! बुग़चा तैयार करने वह मरिया निकिफ़ोरोवना से कह चुका था और उसे कई दूसरी चीज़ें भी लेनी थीं। जर्मन बड़े झगड़ालू योद्धा होते हैं। सिर्फ़ कार्टूनों में ही उन्हें आसानी से मार डाला जा सकता था। वास्तव में, इसके लिए तैयारी की ज़रूरत थी।

मरिया निकिफ़ोरोवना ने न सिर्फ़ उसके कहे मुताबिक़ बल्कि उससे भी अधिक सामान जमा कर दिया था: नमक लगाकर सुखाया हुआ सूअर का गोश्त और कुछ सूखी मछलियाँ। वह उन चीज़ों को हटा देने के लिए कहना चाहता था लेकिन फिर इरादा बदल दिया: आख़िर उसके साथ इतने सारे लोग होंगे। बन्दूक व पिस्तौल के लिए पर्याप्त संख्या में उसने कारतूस झोले में ठूस-ठूसकर डाल लिये, फिर थोड़े-से हथगोले भी रख लिये। क्या हो, कौन जानता था?

मरिया निकिफोरोवना ने उसे कोमल, भयभीत दृष्टि से निहारा: वह लगभग रो ही रही थी। उसके अन्तर्मन का कोना-कोना, उसका सब कुछ उसे स्पर्श करना चाहता था, आलिंगन में बाँध लेना चाहता था लेकिन वह अपनी जगह से हिल-डुल भी नहीं पा रही थी। वास्कोव उस स्थिति का सामना न कर सका। एक हाथ उस पर रखते हुए वह बोला: "परसों तक मैं वापस लौट आऊँगा। या बहुत हुआ तो बुधवार तक।"

उसके आँसू फूट पड़े। वही बात, औरतें कभी ख़ुश नहीं हो सकती थीं! मर्द के लिए युद्ध हँसी-खेल तो नहीं था लेकिन औरतों के लिए...

वह बाहर निकल आया। फिर उसने अपनी "सांघातिक सैन्य टुकड़ी" की जाँच की; बन्दूकें उन्होंने सैर की छड़ी की तरह उठा रखी थीं।

वास्कोव ने ठण्डी आह भरी।

"तैयार?"

"तैयार," रीता ने जवाब दिया।

"अब मैं जूनियर सार्जेंट ओस्यानिना को पूरी टोह-गतिविधि के दौरान अपना उप-प्रधान नियुक्त करता हूँ। मैं तुम्हें संकेत एक बार फिर से याद दिला देता हूँ: दो बार बत्तख़ की बोली का मतलब होगा– सावधान, दुश्मन दिखा। तीन बार कैं-कैं–सब मेरे पास आ जाओ!"

लड़कियाँ ठठाकर हँस पड़ीं। लेकिन इस बार उसका मक़सद भी यही था: दो बार कैं-कैं, तीन बार कैं-कैं। उसने ऐसा उन्हें हँसाने के लिए, उनका उत्साह बढ़ाने के लिए किया था।

"अग्रिम टोली, आगे बढ़!"

वे बढ़ चलीं।

आगे बढ़नेवाली ओस्यानिना और वह गदरायी-सी लड़की थी। जब तक वे झाड़ियों के पास पहुँचकर आँखों से ओझल नहीं हो गयीं, वास्कोव इन्तज़ार करता रहा, फिर मन ही मन में सौ तक गिनने के बाद उनके पीछे रवाना हो गया। उसके साथ भी, छोटी-सी दुभाषिया–अपनी बन्दूक, कारतूस की पेटी, मुड़े ओवरकोट और बुग़चे के बोझ से नरकुल की डाल की तरह झुकी। पार्श्व टोली के रूप में पीछे-पीछे आ रही थीं झेन्या कोमेलकोवा और गाल्या चेतवेर्ताक।

४

वोप झील तक जबरन रवाना होने से वास्कोव को कोई परेशानी न थी। जर्मनों को संभवत: सीधे रास्ते का पता नहीं हो सकता था क्योंकि इस रास्ते का पता उसे फ़िन युद्ध के समय ही चला था।

जितने भी उपलब्ध मानचित्र थे, सब में इस जगह पर

ख़तरनाक दलदलें दिखाई गयी थीं और जर्मनों के पास केवल एक ही संभावित मार्ग था–घुमावदार–जंगलों से होकर, फिर वोप झील की ओर और तब सिन्यूख़िना पहाड़ियों पर; पहाड़ियों के आस-पास कोई रास्ता न था। उसके सैनिक चाहे जैसे भी आगे बढ़ें, चाहे जितना भी पिछड़ जायें, जर्मनों को उन से आगे, दूर तक रास्ता तय करना पड़ेगा। वे शाम से पहले वहाँ तक नहीं पहुँच सकेंगे और तब तक वह भागनेवाले रास्ते की घेरेबन्दी कर देगा। वह अपनी सैनिक लड़कियों को गोलाश्मों के पीछे छुपा देगा–आड़ के लिए सब से अच्छी जगहों पर। जब जर्मन दिखाई देंगे, थोड़ी गोलीबारी उन्हें बात मानने पर मजबूर करने के लिए काफ़ी होगी। और अगर बात बिगड़ती ही दिखी तो वह उनमें से एक को गोली मार सकता था, फिर एक के साथ आमने-सामने द्वन्द्व में तो वह किसी भी जर्मन का सामना करने को तैयार था।

उसके सैनिक चुस्ती से आगे बढ़ रहे थे, उनका आचरण भी संजीदा था। उसे कोई भी हँसती या बातचीत करती सुनाई नहीं दे रही थी। वे कितनी चौकस थीं, यह मालूम करना तो उसके लिए संभव न था लेकिन उसने अपनी आँखें जमीन पर यूँ गड़ा रखी थीं मानो भालू के पदचिह्नों की उसे तलाश हो और उसने अपरिचित क़िस्म के बूट के तलों के हल्के चिह्न देख भी लिये थे। आकार तो अच्छा-ख़ासा बड़ा था–९ नम्बर का। उससे सार्जेंट-मेजर ने अन्दाज़ लगाया कि उनकी लम्बाई तक़रीबन दो मीटर होगी और उनका वजन कुल मिलाकर दो सौ पाउण्ड होगा। भला इसमें क्या शक था कि उनको लड़कियाँ हथियारबन्द होने के बावजूद ऐसे आसानी से नहीं निबट सकती थीं। लेकिन कुछ ही देर बाद उसे फिर कुछ पदचिह्न दिखाई दे गये जिनसे उसके इस विचार को पुष्टि हो गयी कि जर्मनों ने दलदल को घूमकर जाने वाला रास्ता अपनाया था। सब कुछ उसी तरह चल रहा था जैसी कि उसने आशा की थी।

"जर्मनों को काफ़ी चलना पड़ेगा," उसने अपनी पार्टनर से कहा। "सचमुच काफ़ी लम्बा रास्ता तय करना पड़ेगा–चालीस वर्स्ट या कुछ इतना ही।"

दुभाषिया चुप रही। वह इतना थक गयी थी कि बन्दूक के दस्ते को शायद ही जमीन से उठा रही थी – उसे जमीन पर टेक-टेककर चल रही थी। सार्जेंट-मेजर कई बार उस पर नजर डाल चुका था, उसके

चेहरे का जायज़ा लेना चाहा था—उसके सपाट, नुकीले चेहरे पर अत्यन्त गंभीरता के भाव व्यक्त थे। उसे यह सोचकर तरस आ रहा था कि मर्दों का जैसा अभाव इन दिनों था, वह बेचारी पारिवारिक जीवन के सुख के बारे में शायद ही कभी कुछ जान पायेगी। अचानक ही वह उससे पूछ बैठा :

"क्या तुम्हारे माँ-बाप जिन्दा हैं? या तुम कोई अनाथ हो?"

"मैं अनाथ हूँ?" वह मुस्करा उठी। "हो सकता है, आप जानते हों।"

"तुम्हारा मतलब है, तुम निश्चित रूप से नहीं कह सकतीं?"

इन दिनों भला कौन निश्चित रूप से कह सकता है, कॉमरेड सार्जेंट मेजर?"

"तुम्हारी बात में तथ्य है..."

"मेरे माँ-बाप मिंस्क में हैं," बन्दूक की पेटी ठीक जगह पर बरक़रार रखने के लिए उसने कँधे झटके। "मैं मास्को में थी, अपनी परीक्षा की तैयारियों में लगी थी और तभी..."

"क्या तुम्हें कोई ख़बर उनकी मिली थी?"

"भला मुझे कैसे मिल सकती थी!"

"एकदम सच..."

सार्जेंट-मेजर ने उस पर एक और तिरछी नज़र डाली, पता नहीं उसके अगले सवाल से उसे बुरा लगेगा कि नहीं। "क्या तुम्हारे माँ-बाप यहूदी हैं?"

"ज़ाहिर है।"

वास्कोव गुस्से से फुफकारा। "अगर ज़ाहिर ही होता मैं तुमसे पूछता ही नहीं।"

दुभाषिया ख़ामोश हो गयी। अप्रसन्नतापूर्वक वह अपने गन्दे, नीची एड़ीवाले बूट में गीली घास के बीच से आगे बढ़ती गयी। "शायद वे निकल जाने में सफल हे हैं," किंचित् उच्छ्वास के साथ वह अचानक ही बोल उठी।

वह उच्छ्वास वास्कोव के कलेजे में चुभ गयी। ओह, नन्हीं गौरैयो, यह सब ढोने की ताक़त तुम में कहाँ? काश, वह कोप सकता तो इस युद्ध को कोसते-कोसते आकाश-जमीन एक कर देता। इसके साथ ही उस

मेजर को भी जिसने इन लड़कियों को जर्मनों की टोह लेने भेजा था। ऐसा करके शायद उसकी अनुभूतियों को राहत मिलती लेकिन इसकी जगह वह होंठों पर बलात मुस्कान लाकर रह गया।

"अच्छा, प्राइवेट गुरविच, संकेत दो, तीन बार कैं-कैं!"

"किस लिए?"

"लड़ाई की तैयारी देखने के लिए। या जो मैं ने तुम्हें सिखाया था, वह तुम भूल गयीं?"

वह तुरंत मुस्करा उठी, उसकी आँखों में एक नयी रोशनी आ गयी।

"नहीं, मैं भूली नहीं हूँ।"

"बतख़ की जो बोली उसके मुँह से निकली थी, वह निस्सन्देह तनिक भी स्वाभाविक नहीं प्रतीत होती थी, विदूषकों-सी, बोली का स्वांग भर थी। थियेटर में काम चल सकता था। चाहे कुछ भी हो अग्रिम व पार्श्व टोली ने इशारा समझ लिया। वे क़रीब आ गयीं। बन्दूक ताने ओस्यानिना सरपट दौड़ पड़ी।

"क्या हुआ? बात क्या है?"

"अगर कुछ हो ही गया होता तो तुम अब तक देवदूतों के साथ दूसरे लोक में होती," वास्कोव ने उसकी मलामत की। "किसी बड़ी बछिया-सी पगहा तुड़ाकर दौड़ती चली आयी और अब अपने किये पर आप ही बेहद ख़ुश हो रही हो।"

हाँ, उसने उसे, उसकी भावनाओं को आघात पहुँचाया था और वह मई की सुबह की तरह शर्म से लाल हो उठी थी। वह इसके अलावा और किसी चीज़ की अपेक्षा कर सकती थी? उसे सीखना तो था न।

"थक गयीं?"

"नहीं, ऐसा तो नहीं लगता!"

यह लाल बालोंवाली लड़की थी जो ओस्यानिना के पक्ष में बोल उठी थी। स्पष्ट रूप से वह उस की जगह ख़ुद परेशान थी।

"अच्छा, अच्छा, ठीक है," वास्कोव ने शांतिपूर्वक कहा। "रास्ते में तुमने क्या देखा? एक बार में एक ही लड़की बोलेगी। हाँ, पहले तुम बोलो, जूनियर सार्जेंट ओस्यानिना।"

"कुछ अधिक नहीं..." वह बोलते-बोलते लटपटा गयी। "ओह, हाँ, रास्ते में एक मोड़ पर एक टहनी टूटी हुई थी।"

"बहुत खूब! एकदम ठीक! बहुत खूब, अग्रिम टोली। हाँ, अब प्राइवेट कोमेलकोवा!"

"कुछ भी दिखाई नहीं दिया, सब कुछ सामान्य।"

"झाड़ियों से ओसकण झड़े थे," लीज़ा ब्रिचकिना ने जल्दी से जोड़ा। "रास्ते की दायीं ओर की झाड़ियों पर अभी भी ओसकण विद्यमान हैं जब कि बायीं ओर की झाड़ियों पर ओसकण नहीं है।"

"अच्छी तेज़ आँखें पायी हैं!" सार्जेंट-मेजर प्रशंसापूर्वक बोल उठा। "बहुत खूब, लाल सेना की ब्रिचकिना। फिर रास्ते के साथ-साथ दो जोड़े पदचिह्न भी मौजूद थे। वे पदचिह्न जर्मन बूटों के हैं, रबड़ के तलोंवाले जैसे जर्मन छतरीबाज़ सैनिक पहनते हैं। ऐसा लगता है, वे सचमुच दलदल के पास से गुज़र रहे हैं—घुमावदार रास्ते से। हम उम्मीद करते हैं, वे उसी रास्ते से जायेंगे क्योंकि हम सीधे दलदल का रास्ता पार करेंगे। अब पंद्रह मिनट की छुट्टी, सिगरेट पीने और दूसरी ज़रूरतों से निबटने के लिए।"

वे इस तरह खीं-खीं कर उठीं, मानो उसने कोई बेवक़ूफ़ीवाली बात कह दी हो। लेकिन यह तो सर्वथा उचित आदेश था, नियमों के मुताबिक़। वास्कोव की भृकुटि तन गयी।

"खीं-खीं नहीं! और साथ-साथ रहो। बस!"

उन्हें अपना सामान और ओवरकोट रखने व बन्दूक टिकाने की जगह दिखाकर उसने बर्ख़ास्त कर दिया। पलक झपकते वे सब की सब चुहियों की तरह झाड़ियों में गुम हो गयीं।

अपनी कुल्हाड़ी लेकर सूखे पेड़ों से उसने छह डंडे काट डाले। उसके बाद सामानों के पास बैठकर उसने सिगरेट सुलगायी। बुदबुदाकर बातें करतीं और दृष्टियों का आदान-प्रदान करती हुई वे जल्दी ही वापस लौट आयीं।

"हमें अब बहुत चौकसी बरतनी है," वास्कोव ने कहा। "मैं पहले सबसे आगे जाऊँगा और तुम लोग एक-एक करके, क़रीब-क़रीब रहकर मेरे पीछे आओगी लेकिन ठीक मेरे पदचिह्नों पर। बायें और दायें, दोनों ओर दलदल है। तुम्हें अपनी माताओं की याद करने का भी मौक़ा नहीं मिल पायेगा। तुम सब सहारे के लिए एक-एक डण्डा ले लो और अपने पैर आगे बढ़ाने से पहले डण्डे से जगह को टटोल लेना। कोई सवाल?"

इस बार सब की सब ख़ामोश रहीं। लाल बालोंवाली ने अपना सिर

यूँ थपथपाया मानो कुछ कहना चाहती हो लेकिन इरादा बदलकर चुप रही। सार्जेंट-मेजर उठ खड़ा हुआ और सिगरेट का बचा टुकड़ा उसने दलदल में डाल दिया।

"अच्छा, यह तो बताओ, किस में अब तक काफ़ी ताक़त बची हुई है?"

"किस लिए?" लीज़ा ब्रिचकिना ने हैरानी से पूछा।

"प्राइवेट ब्रिचकिना को दुभाषिया का बुग़चा ले जाना है।"

"क्यों?" गुरविच तेज़ आवाज़ में बोल उठी।

"सवाल नहीं! कोमेलकोवा!"

"जी!"

"प्राइवेट चेतवेर्ताक का बुग़चा ले लो।"

"प्यारी गाल्या, दे भी दो और बन्दूक भी क्यों नहीं दे देती?"

"कोई सवाल-जवाब नहीं! तुमसे जो कहा गया है, वही करो! हर किसी को अपनी बन्दूक ख़ुद ले चलनी है..."

वह चीख़ पड़ा था, व्याकुल-सा हो रहा था। यह ठीक तरीक़ा नहीं। चीख़ कर वह कभी उन्हें समझा नहीं पायेगा। चीख़ने का उसपर दौरा भी पड़ जाये तो कोई फ़ायदा होनेवाला न था। इस बेतकल्लुफ़ी बरतने, बक-बक करने के संबंध में कुछ करना ज़रूरी था। सैनिक के लिए बक-बक करना बन्दूक में जुड़ी संगीन की तरह लाभदायक था। यह तो निश्चित था।

"मैं अपनी बातें एक बार फिर दुहरा दूँगा जिससे कोई भूल तुम लोगों से न हो, तुम्हें मेरे पदचिह्नों पर पीछे-पीछे आना है, मेरे पदचिह्नों पर ही अपने पैर रखना। टेक से दलदल की थाह लेना..."

"क्या मैं एक सवाल कर सकती हूँ?"

"हे भगवान, यह लड़कियाँ। अपनी ज़बान पर क़ाबू रख ही नहीं सकतीं।

"क्या सवाल है, प्राइवेट कोमेलकोवा?"

"टेक क्या है? बैठनेवाली कोई चीज़ है क्या?"

लाल बालोंवाली उसे बेवक़ूफ़ बना रही थी। उस की आँखों से ही यह ज़ाहिर था—ख़तरनाक, अथाह गहराइयोंवाली आँखें।

"हाथ में तुमने क्या पकड़ रखा है?"

"डण्डे जैसी कोई चीज़···"

"तो वही ठेक है। क्या बात साफ़ हुई?"

"अब एकदम साफ़ है। दाहल।"

"यह दाहल क्या है?"

"एक शब्दकोश है, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर। भाषा सुधारने की एक पुस्तक।"

"झेन्या, बकवास बन्द करो," ओस्यानिना ने आवाज़ दी।

"जैसा कि मैं कह रहा हूँ, यह एक ख़तरनाक रास्ता है और मज़ाक का कोई वक़्त नहीं। आगे बढ़ने का आदेश यह होगा: सबसे आगे मैं, फिर गुरविच, ब्रिचकिना, कोमेलकोवा और चेतवेर्ताक, सबसे पीछे, पिछले हिस्से को संभालते हुए सार्जेंट ओस्यानिना। कोई सवाल?"

"बहुत गहरा है क्या?"

इस बात में दिलचस्पी दिखानेवाली चेतवेर्ताक थी। उसे दिखानी भी चाहिए। उस जैसी नाटी नाटी, गोल-मटोल के लिए तो टोकरी भर कीचड़ ही दलदल हो सकता था।

"कहीं-कहीं तो इतना कि···अरे, हाँ··· क्या कहूँ··· तुम्हारी कमर तक। अपनी बन्दूकों का ख़्याल रखो।"

पहला क़दम रखते ही वह दलदल में घुटनों तक धँस चुका था—और कैसी फच्च-फच्च की आवाज़ हुई थी। वह लड़खड़ाता हुआ, जोर लगा-लगाकर पैर ऊपर खींचकर आगे बढ़ा मानो किसी कमानी लगे गद्दे पर चल रहा हो। बिना उनकी ओर नज़र डाले वह कह सकता था, लड़कियों की टोली किस तरह आह-ऊह करती, भयभीत बुदबुदाहटों के साथ चली आ रही थी।

आर्द्र, गतिहीन हवा दलदल के ऊपर दम घोटनेवाली थी। सोते के ऊपर मँडरानेवाले तेज़ डंकमार मच्छर के बादल उनके पसीने से तरबतर शरीर पर भिनभिनाते हुए चिपके जा रहे थे। फफूँद लगी घास, पानीवाले सड़ते नरकुल और कीचड़ की दिमाग उलट देनेवाली तीखी बदबू उठ रही थी। डण्डों पर झुककर बोझ डालते हुए, ठण्डी, चिपकती दलदल से अपने पैर खींचने में उन्हें छट्ठी का दूध याद आ रहा था। गीले स्कर्ट उनके नितंब से चिपक गये थे, बन्दूक के कुन्दे कीचड़ में रगड़ खा रहे थे। एक-एक क़दम आगे बढ़ाने के लिए उन्हें ज़बर्दस्त ताक़त खर्च करनी पड़

रही थी। वास्कोव धीरे-धीरे, नन्ही-सी गाल्या चेतवेर्ताक के साथ अपनी गति बरक़रार रखते हुए आगे बढ़ रहा था।

वह सीधे एक छोटे-से द्वीप की ओर बढ़ रहा था जिस पर दो, अंग-भंग हुए देवदार के वृक्ष खड़े थे। आर्द्रता ने उन्हें अशक्त कर दिया था। पल भर के लिए भी उसने उनसे अपनी आँखें नहीं हटायी थीं। विकृत डालों के बीचवाली जगह पर नज़र जमाये जहाँ सूखी ज़मीन पर एक भूर्ज वृक्ष खड़ा था, वह आगे बढ़ रहा था। पैदल पार करने के लिए इसके अलावा दायें या बायें कोई रास्ता न था।

"कॉमरेड सार्जेंट-मेजर!"

"रसाला, रसातल ही है···" अपना डण्डा दलदल में अधिक दृढ़तापूर्वक घुसेड़ते हुए वास्कोव कठिनाई से मुड़ा। लड़ में पिरोये मनकों की तरह वे खड़ी थीं—बिना हिले-डुले।

"चुपचाप एक जगह खड़ी मत रहो। खड़ी मत रहो, नहीं तो दलदल तुम्हें निगल जायेगी।"

"कॉमरेड सार्जेंट-मेजर, मेरा बूट निकल गया है!"

यह चेतवेर्ताक थी, ठीक पीठ पीछे जो चीख़ रही थी। कमर तक कीचड़ में धँसी वह किसी छोटी-सी टेकरी की तरह खड़ी थी। लड़खड़ाती हुई ओस्यानिना उसकी ओर बढ़ आयी और उसने उसे पकड़ लिया। अब एक डंडे से वे दलदल में खोजबीन कर रही थीं। बूट तलाश रही थीं?

"मिला?"

"नहीं!"

अपना डंडा झुलाते हुए कोमेलकोवा एक ओर क़दम बढ़ाने ही वाली थी। यह तो अच्छा हुआ कि उसने ठीक मौक़े पर देख लिया था। वह इतने ज़ोर से चिल्ला उठा कि उसके ललाट की नसें उभर आयीं:

"कहाँ जा रही हो, घामड़? अपनी जगह पर बनी रहो!"

"मैं मदद करने जा रही हूँ···"

"वहीं रहो, लौटने का कोई रास्ता नहीं!"

हे भगवान, उनके साथ तो वह अच्छे गड़बड़झाले में फँस रहा था। पहले तो उसने उन्हें चलते रहने के लिए कहा और अब चुपचाप खड़े रहने के लिए कह रहा था। मान लो, कहीं वे भयभीत हो उठें, उन्हें ख़ौफ़ घर कर जाये? दलदल में ख़ौफ़ घर करने का मतलब था—मौत।

"शांत, बस शांत रहो! द्वीप अब जरा भी दूर नहीं, वहाँ हम आराम करेंगे। तुम्हें बूट मिला?"

"नहीं! दलदल तो हमें निगले जा रही है, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"तुम्हें चलते रहना है! यहाँ ठोस ज़मीन तो है नहीं, यहाँ ज्यादा देर तक तुम खड़ी नहीं रह सकतीं।"

"फिर बूट का क्या किया जाये?"

"अब वह तुम्हें मिलने को नहीं। आगे बढ़ो।! चलो, मेरे पीछे-पीछे आओ!"

वह मुड़ गया और पीछे की ओर देखे बिना चल पड़ा।

"मेरे पदचिह्नों पर। पिछड़ो मत।"

उसने जानबूझकर यह बात जोर से कही थी, वह उनकी हिम्मत बँधाना चाहता था। वह जानता था, कमान की आवाज़ सुनकर सैनिक हमेशा रोब से तन खड़े होते हैं। उसे यह तथ्यतः मालूम था। आख़िर वे द्वीप पर पहुँच गये। अंतिम कुछ मीटर पहुँचने पर वह विशेष रूप से भयभीत हो उठा था, यहाँ दलदल कहीं ज्यादा गहरी थी। वे वहाँ पर तो अपने पैर खींच ही नहीं सकेंगी। उन्हें किसी तरह घिसटते हुए वह जगह पार कर जानी थी और इसके लिए ताक़त और बुद्धि की जरूरत थी लेकिन किसी तरह सब की सब पार कर ही गयीं।

छोटे-से द्वीप के पास ठोस जमीन पर वास्कोव कुछ देर खड़ा रहा। उसने पूरी टोली को अपने सामने से गुज़र जाने दिया — सब एक-दूसरे की मदद करते हुए सूखी ज़मीन पर आ गयीं।

"बस जल्दी न करो। हड़बड़ाने से नहीं बल्कि आराम से, आहिस्ता-आहिस्ता करने से ठीक रहता है। हम यहाँ विश्राम करेंगे।"

लड़कियाँ द्वीप पर आ गयीं और मोटी, सूखी घास पर धप से बैठ गयीं। व भींगी, कीचड़ से लथपथ, हाँफ़ रही थीं। चेतवेर्ताक दलदल को न केवल अपना बूट बल्कि पैरों में लिपटे कपड़े भी भेंट चढ़ा आयी थी। उसके पैर में सिर्फ़ एक मोजा भर रह गया था। उसका अँगूठा ठण्ड से नीला पड़कर एक छेद से बाहर झाँक रहा था।

"अच्छा, कॉमरेड सैनिको, थक गयी हो?"

सब ख़ामोश रहीं, केवल लीज़ा ने स्वीकृति जतायी:

"हाँ, कचूमर निकल गया..."

"तो थोड़ी देर आराम कर लो। आग इतनी दिक़्क़त नहीं होगी। हम वहाँ, जमीन पर जो भूर्ज वृक्ष दिखाई दे रहा है — वहाँ जायेंगे — बस वहीं तक हमें जाना है।"

"लेकिन हम ख़ुद को धो-पोंछ लेते तो अच्छा रहता," रीता बोली।

"उस ओर एक संकरी-सी धारा बहती है, साफ़ बालुकामय किनारा है। नहाने के लिए भी ठीक है। लेकिन हाँ, अगर नहाओगी तो तुम्हें चलते-चलते ख़ुद को सुखाना पड़ेगा।"

चेतवेर्ताक ने दीर्घ निःश्वास छोड़कर संकोचपूर्वक पूछा:

"बूट के बिना मेरा काम कैसे चलेगा?"

"हम तुम्हारे लिए एक जूता बुन देंगे," मुस्कराते हुए वास्कोव ने कहा। "लेकिन दलदल से बाहर जा पहुँचने के बाद, यहाँ नहीं। उतनी दूर तो चल सकती हो न?"

"हाँ।"

"कैसी मूरख हो तुम, गाल्या," झेन्या कोमेलकोवा चिड़चिड़ेपन से बोल उठी। "जब पैर धसता महसूस किया था तो उस समय तुम्हें अपने अंगूठों को ऊपर की ओर मोड़ लेना चाहिये था।"

"मैंने वैसा ही किया था लेकिन इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ा, बूट उतर ही गया।"

"ठण्ड है, लड़कियो।"

"मैं तो पूरी भींगी हूँ, यहाँ तक..."

"सोचती हो, क्या मैं सूखी हूँ? एक बार तो फिसल कर मैं पीछे के बल धड़ाम से गिर ही पड़ी थी!"

सब हँस पड़ीं। इसका मतलब था, सब ठीक-ठाक थीं, झेल जायेंगी। वे औरतें थीं लेकिन जवान और उन में कुछ ताक़त भी थी। हाँ, बर्फ़-सा ठण्डा पानी उन्हें बीमार न कर दे तब...

सिगरेट की एक और कश लगाकर, बचा टुकड़ा दलदल में फेंक वास्कोव उठ खड़ा हुआ। उसने थोड़े में कहा:

"अब अपने-अपने डण्डे छाँट लो, कॉमरेडो। फिर पहलेवाले क्रम के अनुसार मेरे पीछे-पीछे चली आओ। किनारे पहुँचकर हम साफ़-सुथरा होकर ख़ुद को गरमा लेंगे।"

भूरे गंदे कीचड़ में बड़े फूहड़पन से वह अचानक ही धंस पड़ा।

दलदल के आख़िरी टुकड़े को पार करना भी भयानक काम था। दलिया की तरह कीचड़ गाढ़ा था लेकिन इतना गाढ़ा नहीं कि पैर आसानी से रखकर चला जा सके और इतना पतला भी नहीं कि तैरकर पार किया जा सके। इससे धींगामुश्ती करके गुज़रने का मतलब था, पसीना छूट जाना।

"कैसा चल रहा है, कॉमरेडो?"

बिना मुड़कर पीछे देखे हुए उसने यह बात सिर्फ़ उनके मनोबल को ऊँचा रखने के लिए कही थी।

"इस में जोंक भी है क्या?" हाँफते हुए गुरविच ने पूछा।

वह उसके ठीक पीछे थी और इस तरह उसकी ज़ोर-आज़माइश के सारे फ़ायदे उठा रही थी। उसके लिए दलदल पार करना आसान हो गया था।

"यहाँ कोई भी जीवित प्राणी नहीं, यह मृत जगह है, क़ब्र की तरह।"

बायीं ओर एक बुलबुला उभर आया। इसके फटते ही दीर्घ निःश्वास की तरह जोर की आवाज़ के साथ दलदल से हवा फूट निकली। उसके पीछे कोई अचानक ही भयभीत होकर चीख़ पड़ी थी, सो वास्कोव ने समझाया:

"यह दलदल से उठनेवाली गैस है, इससे डरने की कोई जरूरत नहीं। हमने इसे छोड़ दिया है।" कुछ देर सोचने के बाद उसने आगे कहा: बूढ़े लोगों का कहना है, जंगल का राजा यहीं रहता है, मेरा मतलब है, वही पिशाच जिसे जंगल का मालिक कहते हैं, बस कहानियाँ हैं, और क्या..."

उसकी सैनिक टुकड़ी ख़ामोश रही जोर-जोर से साँस लेतीं, हाँफतीं, आह-ऊह करती लेकिन लड़कियाँ बढ़ी ही जा रही थीं। दुर्दमतापूर्वक, प्रचण्ड रोष के साथ।

अब चलना आसान हो गया था। कीचड़ पतला हो गया था, धरातल भी थोड़ा ठोस था, इधर-उधर छोटी-छोटी टेकरियाँ भी थीं। जानबूझकर सार्जेंट मेजर ने अपनी चाल तेज़ नहीं की और उसके सैनिक क़रीब आ पहुँचे। एक पाँत में वे चुस्ती के साथ चल रही थीं। इसलिए भूर्ज वृक्ष के पास लगभग सब की सब एक साथ ही पहुँचीं। फिर पेड़ों की, टेकरियों की और लचकते दूब-चौरों की संख्या भी बढ़ती गयी। यह बहुत अच्छा था और ख़ास तौर से जमीन का ऊपर की ओर उभरती जाना और आख़िर में, उन्हें इसका पता चले, इससे पहले ही वे देवदार वृक्ष के सूखे जंगल

में जा पहुँची थीं, उनके पैरों तले काई थी। यह महसूस करते ही वे चहककर ख़ुश हो उठीं और अपने-अपने डण्ड फेंकने लगीं। लेकिन वास्कोव ने उन्हें डण्डों को उठा लेने कहा और उन्हें आसानी से पहचान में आ सकनेवाले एक देवदार वृक्ष से टिका कर रख दिया।

"शायद किसी के काम आ जायें।"

उसने उन्हें एक मिनट के लिए भी आराम करने की इजाज़त नहीं दी, नंगे पाँव चल रही गाल्या चेतवेर्ताक को भी नहीं।

"कॉमरेडो, बस थोड़ा-सा और चलना है, थोड़ी मेहनत और कर लो। हम संकरी धारा के तट पर आराम करेंगे।"

वे एक टीले पर पहुँच गयीं और देवदार वृक्षों के बीच से उन्हें सोता दिखाई दे गया। स्वर्णिम बालुकामय तटों के बीच बहता सोता आँसुओं-सा स्वच्छ था। "हुर्रा!" लाल बालोंवाली झेन्या चिल्ला उठी: "सोता!"

उल्लास भरी चीख़-पुकार मचातीं, मुड़े कोटों व बुग़चों को फेंककर वे पानी की ओर दौड़ पड़ीं।

"रुको!" सार्जेंट-मेजर चीख़ा। "सावधान!"

वे जहाँ की तहाँ रुक गयीं, चकित, कुछ-कुछ अपमानित-सी।

"देखती हो, बालू है!" वास्कोव ग़ुस्से से बोला। "और बन्दूकें तुम बालू में रगड़े लिये जा रही हो। किसी पेड़ से टिकाकर उन्हें रख दो, समझीं? बुग़चे, ओवरकोट सब एक जगह। मैं तुम्हें चालीस मिनट देता हूँ अपनी सफ़ाई-धुलाई के लिए। मैं झाड़ियों में रहूँगा, इतनी दूर पर कि तुम लोगों को आवाज़ दे सकूँ। जूनियर सार्जेंट ओस्यानिना, व्यवस्था बनाये रखने की जिम्मेदारी तुम्हारी होगी।"

"जी, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"बस। चालीस मिनट में तैयार। पूरी तरह से कपड़े, बूट पहनकर—और सब कुछ साफ़।"

वह थोड़ा आगे बढ़ गया, सोते के निम्न प्रसार की ओर उसने ऐसी जगह चुनी जहाँ बालू थी और पानी गहरा था। चारों ओर झाड़ियाँ थीं। उसने अपने साज-सामान, बूट और कपड़े उतार दिये। दूर से लड़कियों की मिली-जुली, दबी-दबी-सी आवाज़ें आ रही थीं। उसे उनकी हँसी और कुछ अजीब-अजीब शब्द ही समझ में आ पाये। शायद इसी लिए वह बड़े ध्यान से सुनने की कोशिश करता रहा था।

पहला काम उसने अपने बिरजिस, पैर के कपड़ों और जाँघिये की धुलाई का किया। जितनी अच्छी तरह से हो सकता था, उसने उन्हें रगड़-रगड़कर साफ़ किया और सूखने के लिए उन्हें झाड़ियों पर डाल दिया। फिर उसने अपने शरीर पर साबुन रगड़ा, गहरी साँस ली, चुस्ती लाने के लिए किनारे-किनारे थोड़ा-सा दौड़कर कसरत की और फिर तट पर से गहरे पानी में वह ग़ोता लगा गया। ऊपर आने पर बर्फ़ से ठण्डे पानी ने थोड़ी देर के लिए तो उसकी जान ही निकाल ली। फिर ख़ुशी के मारे उसकी इच्छा ज़ोरों से चीख़ पड़ने की हुई लेकिन अपनी "सैनिक टुकड़ी" के भयभीत हो जाने के डर से वह चुप ही रहा। इच्छा पूरी न कर पाने के कारण बिना किसी ख़ुशी के उसने खखारकर ख़ामोशी से अपना गला साफ़ किया, बचा-खुचा साबुन भी रगड़-रगड़कर ख़त्म कर डाला और बाहर किनारे पर निकल आया। सेना के मोटे तौलिये से जब ख़ुद को रगड़-रगड़कर लाल कर लिया तब कहीं उसकी जान में जान आयी और उसने दुबारा ध्यान से लड़कियों की आवाज़ सुननी शुरू कर दी।

गाँव की बाड़ी-सा प्रतीत हो रहा था—सब एक ही बार बोल रही थीं, सब का अपना-अपना विषय था। हँसती सब एक साथ थीं और अचानक ही चेतवेर्तांक उल्लासपूर्वक चीख़ उठी:

"ओह, झेन्या!"

"पीछे हटने का सवाल ही नहीं उठता!" झेन्या चीख़ी और झाड़ियों के पीछे सार्जेंट-मेजर को साफ़ छप-छप की आवाज़ सुनाई दी।

"अच्छा, तो नहा रही हैं," उसने सोचा।

एक ख़ुशी भरी किलकारी से दूसरी सारी आवाज़ें अचानक ही दब गयीं। जर्मन दूर थे, यह अच्छी बात थी। किलकारी सुनकर पहले तो वह हैरान हो उठा और तभी उसे ओस्यानिना की तीखी आवाज़ सुनाई दी:

"झेन्या, फ़ौरन बाहर निकलो!"

मुस्कराते हुए वास्कोव ने अपने लिए एक सिगरेट तैयार की। उसने पत्थर से आग जलाकर सिगरेट सुलगायी और आनन्द के साथ बिना किसी हड़बड़ी के कश लेने लगा। अपनी नंगी पीठ उसने मई की धूप के सामने कर रखी थी।

चालीस मिनट में, निस्सन्देह, उसका कोई भी कपड़ा न सूखा था

लेकिन रुकने का समय भी तो न था। वास्कोव ने नाक-भौंह सिकोड़ते हुए भीगी जाँघिया और बिरजिस पहन लिया। सौभाग्य से उसके पास पाँव में लपेटने को अतिरिक्त कपड़े थे, मोज़े थे और वह बूट में सूखे पाँव तो कम से कम डाल सकता था। कसकर अपने ट्यूनिक की पेटी बन्द करते हुए उसने बाक़ी सामान उठा लिये। फिर ज़ोर से चिल्लाया:

"तैयार, कॉमरेड सैनिक?"

"एक मिनट!"

वाह, ठीक वैसे ही साबित हुआ जैसा उसने सोचा था! इस बार फ़ेदोत वास्कोव ने विवशता से खीसें निपोर दीं, सिर हिलाते हुए वह उन्हें चलने के लिए कहने ही वाला था कि ओस्यानिना ने दुबारा आवाज़ दी:

"अब आप आ सकते हैं!"

वाह, क्या अच्छी बात थी! "आ सकते हैं" सार्जेंट-मेजर से कहा गया था। अगर सोचा जाये, ध्यान दिया जाये तो यह सेना के नियमों का मज़ाक़ नहीं था तो क्या! अनुशासनहीनता!

यह ख़्याल उसके दिमाग़ में आया तो ज़रूर लेकिन उड़नछू भी हो गया क्योंकि स्नान व विश्राम के बाद वह मई दिवस के मूड में आ गया था और अपनी "टोहकर्ता सैनिक टुकड़ी" की बग़ल में वह साफ़-सुथरा मस्कराता खड़ा था।

"तो, कॉमरेड लाल सैनिको, सब कुछ ठीक-ठाक है?"

"सब कुछ ठीक-ठाक है, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर! झेन्या तो पानी में तैरी भी थी।"

"बहुत ख़ूब, कोमलकोवा। तुम ठण्ड से जमी तो नहीं।?"

"अगर जम भी जाती तो मुझे यहाँ गरमाहट देनेवाला कोई न था।"

"क्या ख़ूब! तो आओ, कॉमरेड सैनिको, हम थोड़ा दाना-पानी करके आगे बढ़ेंगे। हमें ज़्यादा देर बैठना नहीं चाहिये।"

उन्होंने थोड़ी रोटी और हेरिंग मछली खा ली: अधिक पोष्टिक वस्तुएँ फ़िलहाल बचा रखने का फ़ैसला किया गया। फिर उसने क़िस्मत की मारी चेतवेर्तांक के लिए किसी तरह का एक जूता बना दिया। पैर में लगानेवाले अतिरिक्त कपड़े उसने उसके पैरों में लपेट दिये। कपड़ों के ऊपर से उसने उसे दो ऊनी मोज़े पहना दिये एक के ऊपर एक (एक

जोड़ा उसकी मकान मालकिन ने उसके लिए बुना था)। फिर भूर्ज की टहनियों की छाल से उसके पैरों के लिए पालने जैसी चीज़ तैयार कर दी। उसके पैर पर ठीक से रखकर उसने पट्टी से बाँध दिया।

"ठीक है?"

"काफ़ी। धन्यवाद, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"अच्छा तो अब हम रवाना होते हैं। अब हमें डेढ़ घंटे तक और पैदल चलना है, फिर इधर-उधर देख-भाल कर अपने मेहमानों के स्वागत के लिए जगह तैयार करनी है···"

लड़कियों को उसने दुलकी चाल से चला दिया। ऐसा करना उसके लिए ज़रूरी भी था क्योंकि तब चलते-चलते उनके स्कर्ट व दूसरे छोटे कपड़े सूख जायेंगे। लेकिन लड़कियाँ ठीक-ठाक थीं, उन्होंने हार नहीं मानी थी; सिर्फ़ उनके गाल लाल हो उठे थे।

"तो, अब हमें जल्दी करनी है, कॉमरेड सैनिको! मेरे पीछे दौड़ते हुए आओ!"

बेदम होने तक वह दौड़ता चला गया। फिर उसने उन्हें धीरे-धीरे, चहलक़दमी करते हुए चलने की इजाज़त दे दी जिससे वे कुछ स्थिर हो लें। कुछ देर बाद उसने दुबारा आदेश दिया:

"मेरे पीछे-पीछे, दौड़ते हुए!"

जब वे वोप झील पर पहुँचे, सूर्य डूबने को था। पानी गोलाश्मों से चुपचाप छप-छप करता टकरा रहा था। देवदार वृक्षों की सांध्यकालीन मर्मर ध्वनि उन्हें सुनाई दे रही थी। क्षितिज का ज़्यादा से ज़्यादा चौकसी से जायज़ा लेने के बावजूद सार्जेंट-मेजर को किसी नाव का कोई संकेत नहीं मिला। नाक सिकोड़-सिकोड़ कर सन-सन करते हवा के झोंकों को काफ़ी सूँघने के बावजूद कहीं से भी धुएँ का कोई सुराग़ नहीं मिला। युद्ध से पहले भी यह कोई बहुत आबाद इलाक़ा न था और इस समय तो यह एकदम ही सुनसान हो गया था मानो —लकड़हारे, शिकारी, मछुवारे और सड़क बनानेवाले —सब के सब मोर्चे पर चले गये हों।

"यहाँ क्या निस्तब्धता है!"

आम तौर से कूज उठनेवाली झेन्या की आवाज़ धीमी होकर बुदबुदाहट में बदल गयी थी। "किसी सपने जैसी।"

"सिन्यूख़िना पहाड़ियाँ बायीं ओर के उस संकरे भूखण्ड से शुरू होती

है," वास्कोव ने समझाया। "एक दूसरी झील पहाड़ियों की ठीक दूसरी ओर तक फैली चली आती है। उसका नाम लेगोन्तोव है। किसी समय कोई साधु वहाँ रहता था—उसका नाम लेगोन्तोव था। वह शांति की तलाश में था।"

"उसे निश्चित ही यहाँ शांति मिल गयी होगी," गुरविच ने दीर्घ निःश्वास ली।

"यहाँ सिर्फ़ एक ही रास्ता है जिससे जर्मन जा सकते हैं: दोनों झीलों के बीच से, पहाड़ियों के ऊपर से होकर। और तुम्हें मालूम है, वहाँ क्या है—मकान जितना बड़ा-बड़ा गोलाश्म। वहीं पर हम अपना मोर्चा लेंगे: मुख्य और रिज़र्व, जैसा कि सेना के नियमों में बताया गया है। हम जगहों का चुनाव कर लेंगे, कुछ खाये-पीयेंगे, थोड़ा आराम करेंगे और घात लगाये इन्तज़ार करेंगे। यही तरीक़ा है, कॉमरेड लाल सैनिको, क्यों?"

कॉमरेड लाल सैनिक ख़ामोश थीं। उन्हें सोचने को बहुत कुछ था।

५

वास्कोव को हमेशा अपनी आयु वास्तविक से अधिक महसूस हुई थी। चौदह साल की आयु में उसे किसी विवाहित व्यक्ति की तरह काम करना पड़ा था—नहीं तो उसके परिवार को भीख माँगने पर मजबूर होना पड़ता। उन दिनों खाने को पर्याप्त था नहीं और सब कुछ अस्त-व्यस्त-सा था। परिवार में वह अकेला पुरुष था—परिवार के सब लोग उस पर खाने पीने से लेकर हर चीज़ के लिए निर्भर करते थे। गर्मियों में वह खेतीबारी करता और जाड़ों में शिकार। बीस पार करने से पहले तक उसे इस बात का पता ही नहीं चल पाया था कि लोगों को छुट्टियों के दिन भी मिलते हैं। फिर सेना में दाख़िल हुआ। और वहाँ कोई किंडरगार्टन तो था नहीं··· सेना शान्त-परिश्रमी व विश्वस्त व्यक्तियों का सम्मान करती थी और वह सेना का सम्मान करता था। गोकि, यहाँ पहुँचकर भी वह अपनी वास्तविक अवस्था से अधिक का बना रहा और सार्जेंट-मेजर के वरिष्ठ ओहदे तक पहुँच गया। सार्जेंट-मेजर सैनिक टुकड़ियों को हमेशा बड़ा प्रतीत होता है। तो यही स्थिति थी। फ़ेदोत वास्कोव अपनी उम्र के बारे में भूल बैठा। वह सिर्फ़ एक चीज़ जानता था: सारे प्राइवेटों और लेफ़्टिनेंटों से

वह बड़ा था, सभी मेजरों का हमउम्र और किसी भी उम्र के कर्नल से हमेशा छोटा। यह वरिष्ठता या आचार की बात न थी बल्कि दुनिया को देखने का उसका नज़रिया यही था।

चुनाँचे, उसने लड़कियों पर उसी भाँति नज़र डाली, उन्हें अब दूसरी पीढ़ी की ऊँचाइयों से उसे आदेश देना था। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो वह गृह युद्ध का कोई योद्धा हो और व्लिश्चेंस्क के पास ख़ुद चापायेव के साथ बैठकर उसने चाय पी हो। इस संबंध में कोई युक्ति-युक्तिता या साभिप्रायता न थी, यह बस उसका स्वभाव ही था।

उसका आचरण अपनी वास्तविक आयु से अधिक का हो सकता है, यह विचार तो कभी वास्कोव के दिमाग़ में आया ही नहीं था। यह तो आज की ख़ामोश, हलकी रात थी जिसके कारण उसके दिल में सन्देह कुलबुला आया था:

लेकिन शायद इसकी शुरुआत रात होने से पहले हो चुकी थी जब अभी उन्हें अपने-अपने ठिकानों का चुनाव करना ही था। उसकी सैनिक लड़कियाँ गोलाश्मों के इर्द-गिर्द मेमनों की तरह फुदक रही थीं और अचानक ही वह उनके साथ फुदकने लगा। उसे अपनी फुर्ती पर ख़ुद ही हैरानी हो आयी। उसे जैसे ही इसका पता चला, उसकी भौंहों पर बल पड़ गये और वह सुस्थिर गति से चलने लगा। इस कारण एक गोलाश्म के ऊपरी हिस्से पर पहुँचने के लिए उसे तीन बार ज़ोर आज़माई करनी पड़ी।

लेकिन मुख्य बात यह भी न थी। मुख्य बात थी कि मोर्चे के लिए उसे एक शानदार जगह मिल गयी थी। चट्टानों के बीच, जहाँ तक पहुँचने का मार्ग अच्छी तरह छुपा था और जंगल से झील तक जानेवाला रास्ता नज़रों में रखा जा सकता था। यह बहुत से बड़े-बड़े गोलाश्मों के बीच था। गोलाश्मों की यह श्रृंखला ठीक झील के किनारे तक चली जाती थी। सिर्फ़ झील के किनारे एक छोटी-सी पट्टी बची रह जाती थी। अगर जर्मन इस रास्ते आये तो चोटी का चक्कर लगाकर जाने में उन्हें तीन घंटे लग जायेंगे और अगर किसी तरह की गड़बड़ी हुई तो वह अपनी सैनिकों के साथ चट्टानों के बीच से होकर वापस लौट सकता था और दुश्मनों के पहुँचने से बहुत पहले ही रिज़र्व ठिकाने पर पहुँच जायेगा। लेकिन यह तो बस यूँ ही साव-

धानीवश था। उसके अनुमान से दो छतरीबाज़ सैनिकों से तो वह यहीं, मुख्य ठिकाने पर ही निबट सकता था।

ठिकाने का चुनाव करने के बाद सैनिक हिदायतों के मुताबिक़ सार्जेंट-मेजर ने उनके आने के समय का अन्दाज़ लगाया। हिसाब लगाने पर पता चला कि जर्मनों के लिए उन्हें अभी लगभग चार घंटे प्रतीक्षा करनी होगी। इसलिए उसने अपनी टुकड़ी को गरमागरम खाना तैयार करने की इजाज़त दे दी — मिले-जुले भोजन के एक डब्बे में दो आदमी। लीज़ा ब्रिचकिना ने खाना पकाने की स्वेच्छा प्रकट की तो वास्कोव ने और दो लड़कियों को उसका हाथ बाँटने का आदेश दिया। साथ ही इस बात की कठोर हिदायत भी दी कि तनिक भी धुआँ न उठे।

"अगर मैंने धुआँ देखा तो सारा का सारा खाना सीधे आग में उलट दूँगा। बात समझ में आ गयी न?"

"जी, बिलकुल स्पष्ट है," लीज़ा ने विषण्ण स्वर में जवाब दिया।

"नहीं, यह स्पष्ट नहीं है, कॉमरेड प्राइवेट। यह केवल तब स्पष्ट होगा जब तुम मुझसे कुल्हाड़ी लेकर, अपनी सहायकों को सूखी लकड़ियाँ काट लाने कहोगी। और देखो, वे सिर्फ़ ऐसी ही डालों को काटें जिन पर तनिक भी काई न हो, वे चटाख से टूट जाती हैं। तब तनिक भी धुआँ नहीं होगा, सिर्फ़ आग जलेगी।"

आदेश आदेश होता है लेकिन उदाहरण पेश करने की इच्छा से उसने ख़ुद थोड़ी सूखी लकड़ियाँ जमा करके आग सुलगा दी। ओस्यानिना के साथ इलाक़े का जायज़ा लेते हुए, उसकी नज़र आग की ओर ही टिकी हुई थी लेकिन तनिक भी धुआँ नहीं उठ रहा था। चट्टानों के ऊपर हवा झलमला रही थी लेकिन उसे देख पाने के लिए किसी शिकारी की आँखें होनी चाहिये थीं और जर्मनों के पास वैसी आँखों की कोई संभावना न थी।

जब तक तीनों लड़कियाँ इधर खाना तैयार करने में व्यस्त रहीं, जूनियर सार्जेंट ओस्यानिना और प्राइवेट कोमेलकोवा के साथ वास्कोव परिश्रमपूर्वक चोटी पर चढ़-चढ़कर मोर्चों की, गोली चलाने के लिए उपयुक्त जगहों की और हवाल‌ाई ठिकानों का लेखा-जोखा लेने में

लगा रहा। दुहरी चाल से दौड़कर वास्कोस ने ख़ुद हवालाई ठिकानों की दूरी की जाँच की और जैसा कि सैनिक निामों लिखा था, उसने उन्हें एक फाइरिंग मानचित्र पर अंकित कर लिया।

वापस लौटकर भोजन करने के लिए संकेत ध्वनि सुनाई दी। वे दो-दो की पाँत में बैठ गये—ठीक वैसे ही जैसे वे आये थे और कमांडेंट ने डब्बे की साझेदारी प्राइवेट गुरविच के साथ की। निश्चय ही, वह संकोची थी और सिर्फ़ खाली चम्मच ऊपर उठा लेती, अधिकांश उसके लिए छोड़ देती। सार्जेंट-मेजर ने नाराज़गी से कहा:

"इसकी कोई ज़रूरत नहीं, कॉमरेड दुभाषिया। मैं तुम्हारा हृदयेश्वर नहीं, इसलिए स्वादिष्ट भोजन का ग्रास मेरे लिए छोड़ने का कोई कारण नहीं। पेट भरो, सैनिकों की तरह।"

"मैं खा तो रही हूँ," उसने मुस्कराते हुए कहा।

"तुम्हें देखकर ही पता चल जाता है! वसंत के कौवे-सी सुक्खड़।"

"मेरी बनावट ही ऐसी है।"

"बनावट? ब्रिचकिना की भी तो तुम्हारी या दूसरों जैसी ही बनावट है लेकिन तुम्हारे लिए आदर्श है, ऐसी कि अपनी आँखें जुड़ा सकती हो।"

खाने के बाद उन्होंने नीलबदरी की चाय पी। यात्रा के दौरान ही वास्कोव ने उनकी पत्तियाँ चुन ली थीं। फिर जब वे आधा घंटे तक आराम कर चुकीं, सार्जेंट-मेजर ने उन्हें पंक्ति में खड़ा होने का आदेश दिया।

"ध्यान से युद्धादेश सुनो," उसने बड़ी औपचारिकता से कहना शुरू किया हालाँकि उसके अन्तर्मन के किसी कोने में यह शंका उठ रही थी कि वह जो कर रहा है, ठीक भी है या नहीं। "हमारे दुश्मन, सिर से पाँव तक हथियारबन्द दो जर्मन, वोप झील की ओर बढ़े चले आ रहे हैं। उनका उद्देश्य गुप्त रूप से किरोव रेलवे और कॉमरेड स्तालिन के नामवाले सफ़ेद सागर-बाल्टिक बाँध पर हमला करने का है। छह सैनिकोंवाली हमारी टुकड़ी के ऊपर सिन्यूखिना पहाड़ियों की सुरक्षा और दुश्मन को क़ैद में करने का भार है। बायीं ओर हमारी पड़ोसी वोप झील और दायीं ओर लेगोन्तोव झील है।" रुककर सार्जेंट-मेजर खखारा। आदेश काग़ज़ पर पहले से न लिख

लेने के लिए पछताते हुए उसने आगे कहा: "मेरी योजना इस तरह है: मुख्य ठिकाने पर दुश्मन का सामना करने और बिना गोलीबारी किये उनके सामने आत्मसमर्पण का प्रस्ताव रखने की। प्रतिरोध की स्थिति में एक को मार डालना है और दूसरे को हर क़ीमत पर ज़िन्दा गिरफ़्तार करना है। हमारी सारी जमापूँजी रिज़र्व ठिकाने पर होगी और प्राइवेट चेतवेर्ताक उसकी पहरेदारी करेगी। मुझसे आदेश मिलने के बाद ही युद्ध-संक्रिया शुरू होगी। ओस्यानिना को मैं अपना उपप्रधान नियुक्त करता हूँ और उसके बेकार हो जाने की स्थिति में प्राइवेट गुरविच दायित्व संभालेगी। कोई सवाल?"

"मुझे रिज़र्व ठिकाने पर क्यों ठहराया जा रहा है?" चेतवेर्ताक ने बुरा मानते हुए पूछा।

"सवाल बेमतलब है, कॉमरेड प्राइवेट। जो आदेश मिल चुके हैं, उनका पालन करना आपका कर्तव्य है।"

"तुम और गाल्या, हमारी रिज़र्व हो," ओस्यानिना ने कहा।

"कोई सवाल नहीं, हर चीज़ सुन्दर, साफ़ है," कोमेलकोवा ने उल्लासपूर्वक जवाब दिया।

"सुन्दर और साफ़, तो अब तुम लोग मेहरबानी करके अपने-अपने ठिकाने संभाल लो।"

प्राइवेटों को उसने उन जगहों पर तैनात कर दिया जिनके संबंध में ओस्यानिना के साथ उसकी पहले ही सहमति हो चुकी थी। हरेक के दिमाग़ में सोनाविन्ह चोकठों से बैठा दिये गये। फिर उसने ख़ुद ही एक बार उन सब को चेतावनी दे दी कि उन्हें चुहियों की तरह ख़ामोशी से लेटी रहना है।

"किसी को अंगुली तक नहीं उठाना है। सबसे पहले मैं उनसे बात करूँगा।"

"जर्मन भाषा में?" गुरविच ने तीखेपन से पूछा।

"रूसी में!" सार्जेंट-मेजर तेज़ी से बोल उठा। "और अगर वे नहीं समझ पायेंगे तो तुम अनुवाद करोगी। क्या मेरी बात स्पष्ट है?"

चुप्पी छायी रही।

"लड़ाई के समय अगर अपना सिर यूँ ही ऊपर उठाती रही तो

काई भी प्राथमिक चिकित्सा तुम्हें क़रीब में नहीं दिखाई देगी। या तुम्हारी माताएँ ही।"

माँ का उल्लेख करना उसके लिए गलत था, एकदम गलत और वह ख़ुद पर कुपित हो उठा। आख़िर यह सचमुच की लड़ाई होने जा रही थी, गोलीबारी का यह कोई अभ्यास-स्थल नहीं था।

"जर्मन के साथ दूर से लड़ना ठीक है। लेकिन उनके क़रीब होने पर अगर तुम बन्दूक का खटका खड़खड़ाने लगी तो वे तुम्हारा छलनी बना देंगे। इस लिए मैं तुम्हें एकदम चुपचाप पड़ी रहने के लिए दो टूक आदेश दे रहा हूँ। उस समय तक पड़ी रहो जब कि मैं ख़ुद गोली चलाने का आदेश न दूँ। अगर तुम बताये आदेश पर नहीं चलती, मेरे ऊपर इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता कि तुम लोग महिलाएँ हो।"

यह कहकर वास्कोव थोड़ा रुक गया, फिर हवा में हाथ झटक दिया।

"बस। आदेश ख़त्म।"

दो-दो लड़कियों को उसने एक-एक निश्चित प्रेक्षण क्षेत्र दे दिया जिस से प्रत्येक ठिकाने की चौकसी करने के लिए चार-चार आँखें हो जायेंगी। वह ख़ुद ज्यादा ऊँची जगह पर जा पहुँचा। वहाँ से वह दूरबीन से जंगलों को तब तक घूरता रहा जब तक उसकी आँखों से पानी नहीं बहने लगा।

रवि-रश्मियाँ पेड़ों की फुगियों पर विश्राम करने लगी थीं लेकिन गोलाश्म में दिन की उष्मा अभी तक मौजूद थी। दूरबीन रखकर, उसने आँखें बन्द कर लीं जिससे उन्हें आराम मिल सके। ऊँघते-ऊँघते नीन्द के आग़ोश में पहुँच जाने की बात उसे मालूम हो, उससे पहले ही तप्त गोलाश्म तेज़ी से तैरता हुआ कहीं शान्त, निस्तब्ध जगह में जा पहुँचा। वास्कोव धीमी हवा को महसूस कर सकता था, सारी आवाज़ें सुन सकता था लेकिन फिर भी उसे महसूस हो रहा था मानो वह पटरियों पर सो गया है और उस पर नमदा बिछाना भूल गया है। उसे अपनी माँ से नमदा बिछाने के लिए कहना चाहिये। उसे अपनी माँ भी दिखाई देने लगी: तेज़-तेज़ क़दमों से चलती हुई, छोटी-सी, ऐसी औरत जो बर्षों से नीन्द में चौंकती-जागती रही हो मानो अपने खेतिहर जीवन से मियाद माँग रही हो। उसे

उसके हाथ दिखाई दिये जो अविश्वसनीय रूप से पतले थे और जिनकी अंगुलियाँ गठिया व कठिन काम करते-करते कड़ी पड़ गयी थीं। पकाये सेब की तरह झुर्रीदार उसका चेहरा दिखाई दिया। उसके मुरझाये गालों पर उसे आँसू दिखाई दिये और वह समझ गया, वह मृत ईगर के लिए अभी तक रो रही है, अपने को दोष दे रही है, उसकी मौत पर अत्यंत शोक-संतप्त हो ख़ुद को खाये डाल रही है। कोमल शब्दों में वह उससे कुछ कहना चाहता था लेकिन तभी किसी ने अचानक उसका पैर छू दिया। उसे लगा, यह उसके पिता का हाथ होगा और वह अत्यंत भयभीत हो उठा। उसने अपनी आँखें खोल दीं। गोलाश्म पर ओस्यानिना चढ़ आयी थी और वही उसका पैर हिला रही थी।

"जर्मन?"

"कहाँ?" वह खौफ़ से बोल उठी।

"ओह, धत्त तेरे की... मैंने सोचा..."

कुछ देर उसकी ओर ध्यान से देखने के बाद वह मुस्करा उठी।

"थोड़ी आँखें झपका लीजिये, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर। मैं आपका ओवरकोट ले आती हूँ।"

"इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता, ओस्यानिना। बस यूँ ही ज़रा खो गया था। मुझे सिगरेट पीनी चाहिये।"

"जब वह नीचे उतर आया तो उसने चट्टान की आड़ में कोमेल-कोवा को अपने बाल सँवारते पाया। उसके बाल इतने बड़े और घने थे कि उसकी पीठ दिखाई नहीं दे रही थी। बालों में वह कँघी कर रही थी—ऊपर से नीचे, जहाँ तक उसके हाथ पहुँच पा रहे थे। फिर उसने नीचे से पकड़ कर बालों को ऊपर उठा लिया जिससे वह बालों के अन्दर से कँघी कर सके। उसके बाल घने व मुलायम थे और रंग चमकते ताँबा-सा था। वह बड़े मौज में, बिना किसी हड़बड़ी के अपने काम में लगी थी।

"रंग रखा है, मेरे ख़्याल से," सार्जेंट-मेजर बोला और अचानक ही इस बात से भयभीत हो उठा कि कहीं वह उसे काट खाने को दौड़ पड़ी तो सारा मज़ा ही किरकिरा हो जायेगा।

"एकदम प्राकृतिक है। क्या मैं गंदी दिखती हूँ?"

"चिन्ता न करो।"

"और आप भी चिन्ता न करें। लीज़ा ब्रिचकिना वहाँ अपनी आँखें खोले तैनात है। वह बहुत चौकस है।"

"ठीक है। ठीक है। अपना काम करो और जल्दी निबट लो..."

हे भगवान, फिर वही वाक्य! यह सेना के नियमों में था और यही तो दिक़्क़त थी। हमेशा-हमेशा के लिए दिमाग़ में अंकित हो चुका है। तुम और कुछ नहीं भालू हो, वास्कोव, घने जंगलों का!

उसने नाक-भौंह सिकोड़ी, सिगरेट जलाकर धुएँ में अपना मुँह छुपा लिया।

"कॉमरेड सार्जेंट-मेजर, क्या आप विवाहित हैं?"

उसने उस पर नज़र डाली। लाल लपटों के बीच से एक भोली-भाली आँख उस पर टिकी थी। क्या आँख थी! १५२ मि.मि. वाली हाविट्ज़र-सी जानलेवा!

"हाँ, कॉमरेड प्राइवट कोमेलकोवा।"

निस्सन्देह, वह झूठ बोल रहा था। लेकिन ऐसी संगत में इसके अलावा वह कर भी क्या सकता था। इससे आदमी की स्थिति निर्धारित हो जाती थी, कौन कहाँ है, यह स्पष्ट हो जाता था।

"और आपकी बीवी कहाँ है?"

"घर पर, और कहाँ।"

'कोई बच्चा भी है?"

"बच्चे?" वास्कोव ने दीर्घ निःश्वास छोड़ी। "एक छोटा-सा लड़का था। वह मर गया। ठीक लड़ाई से पहले।"

"मर गया?"

अपने बाल पीछे की ओर झटककर उसने उसकी ओर देखा–उसकी नज़रें सीधे उसके दिल में झाँक रही थीं। हाँ, ठीक उसके दिल में। और फिर वह कुछ भी न बोली। उसने न तो सान्त्वना के शब्द कहे, न मज़ाक़ किया, न कोई खोखली उक्ति कही। लेकिन चाहे कुछ भी हो, वास्कोव अपने को नहीं रोक सका और उसने एक ठण्डी आह भरते हुए कहा:

"इसके लिए थोड़ा दोष माँ का था..."

यह कहकर वह फ़ौरन ही पछताने भी लगा। पछताया तो इस

बुरी तरह कि उछलकर उठ खड़ा हुआ और अपना ट्यूनिक यूँ सीधा किया मानो निरीक्षण करना चाहता हो।

"यहाँ क्या हाल है, ओस्यानिना?"

"कोई भी दिखाई नहीं दिया, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"निगरानी जारी रखो!"

वह एक ठिकाने से दूसरे पर गया।

सूर्य कब का डूब चुका था लेकिन अभी भी उजाला था–ठीक पौ फटने से पहले जैसा और अपनी चट्टान के पीछे प्राइवेट गुरविच कोई किताब पढ़ रही थी। किसी प्रार्थना की पंक्तियों की तरह वह दबी आवाज़ में गुनगुनाकर पढ़ रही थी और उसके पास पहुँचकर उसे हड़बड़ा देने से पहले, थोड़ी देर तक रुककर वास्कोव ध्यान से सुनता रहा।

> जन्मे थे जो उन वर्षों में जब गति के पाँवों बड़ी थी,
> बिला गयी हैं स्मृतियाँ अतीत की उनकी,
> लेकिन रूस के महोत्थान वर्षों में जन्मे हम बच्चे,
> नहीं भुला पाते हैं यादें उनकी।
>
> महाविनाश के, लपटों-भस्मों के वर्ष!
> उन्माद या आशा, किसका पूर्वाभास हमें देते हो?
> संग्राम के दिवस, दिवस आज़ादी के,
> चेहरों पर हमारे ख़ूनी परछाँई छोड़े जाते हो...

"किसे पढ़कर सुना रही हो?" उसके पास पहुँचकर उसने पूछा।

दुभाषिया परेशान हो उठी (आख़िर उससे निगरानी रखने के लिए कहा गया था)। वह किताब रख कर उठ खड़ी होना चाहती थी। सार्जेंट-मेजर ने उसे इशारे पूर्ववत से स्थिति में बने रहने कहा।

"मैंने पूछा था, तुम किसे पढ़कर सुना रही हो?"

"किसी को नहीं। ख़ुद को।"

"फिर ज़ोर-ज़ोर से पढ़ने की क्या ज़रूरत थी?"

"बात यह है, यह कविता जो है, है कि नहीं?"

"हाँ, क्या..." वास्कोव समझ नहीं पाया था। उसने किताब उठा

ली–पतली-सी थी, गोले छोड़नेवालों की आदेश-पुस्तिका-सी–और वह उसे उलट-पलटकर देखने लगा। "तुम अपनी आँखें चौपट कर लोगी।"

"अभी तो उजाला है, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"मैंने तुम्हें बस बता दिया ··· और इधर देखो, तुम्हें इन पत्थरों पर नहीं बैठना चाहिये। वे बहुत जल्दी ठण्ड पड़ते जाते हैं और तुम्हारे पता लगने से पहले तुम्हारे शरीर की सारी उष्मा सोख लेते हैं। अपने ओवरकोट पर बैठो।"

"बहुत अच्छा, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर। धन्यवाद।"

"लेकिन देखो, ज़ोर-ज़ोर से मत पढ़ा करो। शाम की हवा आर्द्र है और आवाज़ दूर तक ले जाती है। यहाँ की सुबह इतनी निस्तब्ध होती है कि तुम्हारी आवाज़ पाँच वर्स्ट की दूरी से सुनी जा सकती है। निगरानी जारी रखो। अच्छी तरह निगरानी करो, प्राइवेट गुरविच।"

ब्रिचकिना झील के कहीं क़रीब थी और उसके पास पग पहुँचने से पहले ही वास्कोव सन्तोषपूर्वक मुस्करा उठा। यह थी न सचमुच की चतुर लड़की। उसने फ़र वृक्ष की कुछ डालियाँ तोड़कर, दो गोलाश्मों के बीच उन्हें बिछाकर एक आरामदेह घोंसला-सा बना लिया था। उनके ऊपर से उसने ओवरकोट भी बिछा दिया था। अपना काम चलाना जानती है, बेशक। उसकी उसमें इतनी दिलचस्पी जाग उठी कि वह पूछे बिना न रह सका:

"तुम कहाँ की रहनेवाली हो, ब्रिचकिना?"

"ब्रयांस्क प्रदेश की, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"किसी सामूहिक फ़ार्म में काम करती थी?"

"हाँ। लेकिन अधिकतर मैं अपने पिता जी के काम में हाथ बटाती रहती थी। वह वन-अधिकारी हैं। हम उनके जंगलवाले क्षेत्र में ही रहते थे।"

"तो इसी कारण तुम इतनी अच्छी तरह बत्तख़ की बोली बोल सकी।"

वह हँस पड़ी। इन लड़कियों को हँसने से प्यार था, वे अभी तक अपनी आदत नहीं भुला पायी थीं।

"क्या तुम्हें कुछ दिखाई दिया।"

"नहीं, अब तक तो शान्त है।"

"चौकस निगरानी जारी रखो, ब्रिचकिना। देखती रहो, कोई झाड़ी हिलती-डोलती तो नहीं या पक्षी ख़तरे की सूचना तो नहीं। जंगल की रहनेवाली हो। तुम सब कुछ जानती हो।"

"जानती हूँ।"

"तो फिर ठीक है।"

"उसने अपना भार एक पैर से दूसरे पैर पर बदला। उसे लग रहा था, जो कुछ कहना था, वह कह चुका था, जो आदेश देने थे, दे चुका था और अब उसे वहाँ से चल देना चाहिए था लेकिन उसके पैर ही नहीं बढ़ रहे थे। वह उसी की पसन्द की लड़की थी–जंगलों की लड़की। अपने लिए कैसी आरामदेह जगह बना ली थी और कितनी उष्मा उससे फैल रही थी–ठीक उस रूसी स्टोव की तरह जिसका सपना अभी-अभी कुछ देर पहले वह देख रहा था।

"लीज़ा, लीज़ा, लीज़ावेता, मुझे तुमने कोई ख़त क्यों नहीं भेजा, अपने सच्चे प्यार के बारे में कोई गीत गाओ या तुम्हें वह ख़ब पसन्द न था," एक ही साँस में सार्जेंट-मेजर न जाने क्या-क्या बड़बड़ा गया और फिर बड़ी ही रूखी आवाज़ में उसने बात समझायी:

"हमारे इलाक़े में इस तरह का छोटा-सा गीत गाया जाता है।"

"हमारे इलाक़े में भी!"

"बाद में हम एक साथ मिलकर गीत गायेंगे, मैं और तुम। अपना काम ख़त्म कर लें, फिर हम गीत गायेंगे।"

"क्या आप सच कह रहे हैं?" लीज़ा मुस्करायी।

"मैं कह जो रहा हूँ, नहीं कह रहा?"

अचानक ही सार्जेंट-मेजर ने उसकी ओर देखकर बड़े शोख़ ढंग से आँख मार दी और अपनी इस हरकत पर उससे ज़्यादा ख़ुद ही हैरान हो उठा, फिर टोपी ठीक करते हुए वहाँ से चला गया। ब्रिचकिना ने उसे पीछे से आवाज़ दी:

"तो फिर याद रखियेगा, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर। आपने वायदा किया है!"

उसने कोई जवाब नहीं दिया लेकिन टीले के पार रिज़र्व ठिकाने

तक रास्ते भर वह मुस्कराता रहा। यहाँ पहुँचकर चेहरे से मुस्कान गायब करके वह प्राइवेट चेतवेर्ताक के छुपाव-स्थल की तलाश करने लगा।

आस्तीन में दोनों हाथ घुसेड़े, कसकर ओवरकोट में लिपटी प्राइवेट चेतवेर्ताक एक उभरे टीले की आड़ में उनके बंडलों पर बैठी थी। ओवरकोट का कॉलर उसने ऊपर की ओर उठा रखा था जिसके कारण उसका सिर और पैदल सैनिकोंवाली टोपी छुप गयी थी, सिर्फ़ उसकी म्लान, लोहित, पतली-सी नाक बाहर झाँक रही थी।

"इस तरह सिकुड़ी-सिमटी क्यों बैठी हो, कॉमरेड प्राइवेट?"

"ठण्ड है न!"

उसने अपना हाथ बढ़ाया तो वह पीछे को दुबक गयी। बेवक़ूफ़ लड़की ने सोचा, कहीं वह उसे हाथ तो नहीं लगाना चाहता या कुछ और...

"हिले-डुले बिना नहीं रह सकती, ख़ुदा की क़सम! मुझे अपना ललाट छूकर देखने दो। आओ इधर!"

उसने गर्दन आगे कर दी और सार्जेंट-मेजर ने उसके ललाट पर हाथ रखकर देखा। हाँ, यह तो गर्म था, जलता हुआ। जल रहा है, भाड़ में जाये!

"तुम्हें बुख़ार है, जानती हो!"

वह कुछ भी न बोली। उसकी आँखें उदास थीं, किसी बछिया की आँखों सी; कोई भी उन्हें देखकर भ्रम में पड़ सकता था। यह वही दलदल है, सार्जेंट-मेजर, मुझे उम्मीद है। यह वही बूट है जिसे तुम्हारे सैनिक ने खो दिया, यह तुम्हारी जल्दबाज़ी और मई की ठण्डी हवाओं का परिणाम है। तो एक सैनिक की और कमी हो गयी, उसने मन में कहा। पूरी टोली के लिए एक बोझ और ख़ुद उसकी चेतना के लिए भी एक बोझ।

फ़ेदोत वास्कोव ने अपना बुग़चा निकालकर खोला, फिर हाथ अन्दर डालकर टटोला। उसमें विपत्ति काल के लिए छुपाकर रखा गया उसका अपना अत्यंत महत्वपूर्ण दाना-पानी था—अल्कोहल का एक फ़्लास्क—७५० ग्राम। उसने थोड़ा-सा अल्कोहल एक मग में उँड़ेल लिया।

"तुम इसे यूँ ही पीओगी या पानी मिलाकर?"

"क्या है यह?"

"दवा... अच्छा, बता ही देता हूँ, अल्कोहल। हाँ?"

उसने बड़ा जोरदार विरोध किया।

"नहीं, नहीं!"

"यह आदेश है!"

कुछ सोचकर सार्जेंट-मेजर ने उसमें थोड़ा-सा पानी मिला दिया।

"पी डालो, बाद में थोड़ा पानी पी लेना।"

"न-न ऽऽ नहीं!"

"पी डालो और बहस मत करो।"

"ओह नहीं, आप कैसे कहते हैं! मेरी माँ डॉक्टर हैं..."

"यहाँ कोई माँ-वाँ नहीं। बस लड़ाई, जर्मन और मैं—सार्जेंट-मेजर। कोई माँ-वाँ नहीं। सिर्फ़ बच जानेवालों की माँएँ होंगी। दिमाग़ में घुसी बात?"

उसने एक ही बार में उसे पी डाला, उसका दम घुटने को हो आया। उसकी आँखों में आँसू आ गये और वह थू-थू करके मुँह से लार गिराने लगी। वास्कोव उसकी पीठ पर थपकियाँ देने लगा। वह कुछ स्वस्थ हुई और अपने आँसू पोंछने के लिए निरर्थक प्रयास करने लगी। वह मुस्करायी फिर चिल्लाकर बोल उठी:

"हे भगवान, मेरा सिर तो कहीं उड़ा चला जा रहा है..."

"कल तुम्हारी पकड़ में आ जायेगा।" वह फ़िर वृक्ष की थोड़ी-सी टहनियाँ उठा लाया और उन्हें फैलाकर उसके लिए काम चलाऊ बिस्तर तैयार करके ऊपर से उसने अपना ओवरकोट बिछा दिया। फिर वह बोला:

"आराम करने की कोशिश करो, कॉमरेड सैनिक।"

"लेकिन कोट के बिना आप कैसे काम चलायेंगे?"

"मैं हट्टा-कट्टा और स्वस्थ हूँ, इसलिए तुम्हें चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं। बस कल तक ठीक हो जाओ, यही मेरा तुमसे ख़ास अनुरोध है।"

सब कहीं बड़ी ख़ामोशी छा गयी थी। जंगल, झील, यहाँ तक कि हवा भी रात्रि-विश्राम करने लगी थी—ख़ामोश। आधी रात बीत चुकी थी, नया दिन शुरू हो रहा था लेकिन जर्मनों के आने का कोई

लक्षण दिखाई नहीं दे रहा था। रीता जब-तब सार्जेंट-मेजर की ओर देख लेती और ख़ुद को उसके साथ एकदम अकेली पाकर आख़िर वह पूछ बैठी:

"शायद हम समय बर्बाद कर रहे हैं, यहाँ बैठ कर?"

"हो सकता है," सार्जेंट-मेजर ने दीर्घ-निःश्वास छोड़ी। "लेकिन मैं ऐसा नहीं सोचता। हाँ, अगर वृक्ष के ठूँठ देखकर तुम्हें जर्मनों का भ्रम न हुआ हो तब..."

अब उसने पहरेदारों को छुपे स्थानों से बुलाकर रिज़र्व ठिकाने पर भेज दिया था। उन्हें फ़र की टहनियाँ लाकर, बिस्तर बनाकर उस समय तक सो जाने के लिए उसने कह दिया था जब तक वह उन्हें जगाये नहीं। ख़ुद उसने मुख्य ठिकाने पर रुकने का फ़ैसला किया था और ओस्यानिना ने उसके साथ रहने की ज़िद की थी।

जर्मनों के अब तक नहीं दिखाई देने से वह बहुत परेशान हो रहा था। इतना सब करने के बावजूद लगता है, शायद रेलवे स्टेशन तक पहुँचने के लिए उन्होंने कोई दूसरा रास्ता चुन लिया था; हो सकता है, उन्हें कोई एकदम अलग ही काम करने को सौंपा गया हो—जो उसने सोच रखा था, शायद वह नहीं। शायद उन्होंने बेहिसाब मुसीबतें ढानी शुरू भी कर दी हों, किसी उच्चाधिकारी को मार डाला हो, कोई महत्वपूर्ण चीज़ उड़ा डाली हो। अब जाओ और कोर्टमार्शल को समझाओ कि जंगल में खोजबीन करके जर्मनों को ख़त्म कर देने की जगह वह अपनी टोली को कहाँ ले गया था। क्या वह लड़कियों को बचाने की कोशिश कर रहा था? खुले मुक़ाबले में उन्हें झोंकने से वह भयभीत था? आदेश पालन न करने के लिए यह कोई बहाना न था। दोषमुक्ति का कोई भी बहाना न था।

"आपको थोड़ा सो लेता चाहिये, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर। पौ फटते ही मैं आप को जगा दूँगी।"

नीन्द? नीन्द जाये भाड़ में! अपना ओवरकोट दे देने के बावजूद वह ठण्ड भी नहीं महसूस कर सकता...

"नीन्द की याद दिलाकर परेशान न करो, ओस्यानिना। ठीक है, मान लेता हूँ, मैं थोड़ी नीन्द ले लूँगा... मेरे तो फ़रिश्ते ही कूच कर जायेंगे, अगर मैं जर्मनों को चूक गया।"

"लेकिन क्या यह नहीं हो सकता कि वे भी अभी सो रहे हों"

"सो रहे हों?"

"क्यों नहीं? आख़िर वे भी इनसान ही तो हैं। आपने ख़ुद ही तो कहा था कि रेलवे तक पहुँचने के लिए सिन्यूख़िना पहाड़ियाँ एकमात्र सुविधाजनक रास्ता है। और ज़रा दूरी की बात भी तो सोचिये..."

"रुको, ओस्यानिना, रुको! निस्सन्देह, इसका मतलब है ५० वर्स्ट या उस से भी ज़्यादा। और वह भी अपरिचित भूभाग से होकर; जब कि हर झाड़ी ख़ौफ़ पैदा करती हो... यही बात है क्या? क्या मैं सही कह रहा हूँ?"

"हाँ, आप ठीक कह रहे हैं, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"हूँ, अगर ऐसी बात है तो उन्होंने निश्चित रूप से कहीं गहरे जंगल में सूर्योदय तक आराम करने का फ़ैसला किया होगा। और सूर्योदय होने पर... हूँ तो?..."

रीता मुस्करा उठी और उसने उस पर एक लम्बी-सी नज़र डाली—ठीक वैसे ही जैसे दयालु औरतें छोटे बच्चों पर डालती हैं। तो फिर आप भी सूर्योदय तक आराम कर सकते हैं। मैं आपको जगा दूँगी।"

"मेरी क़िस्मत में नीन्द कहाँ, कॉमरेड ओस्यानिना... मरगारी-ता—तुम्हारा कुलनाम क्या है?"

"मुझे रीता कहिये।"

"सिगरेट पीयोगी, कॉमरेड रीता?

"मैं सिगरेट नहीं पीती।"

"वे इनसान भी हैं—इसे तो मैं नजरअन्दाज़ ही कर गया था। हाँ, तुमने ठीक ही सुझाया, उन्हें आराम भी तो करना पड़ेगा। तुम भी आराम कर सकती हो, रीता। जाओ, थोड़ा सो लो।"

"मैं सोना नहीं चाहती।"

"तो फिर यूँ ही लेट रहो, पैर अकड़ गये होंगे, फैला लो। मैं शर्तिया कह सकता हूँ, तुम्हारे पैर थक गये हैं—तुम्हें इसकी आदत नहीं है।"

"मैं तनिक भी नहीं थकी हूँ—बेशक, मुझे इसकी आदत है," रीता ने मुस्कराते हुए कहा। फिर भी सार्जेंट-मेजर ने उसे राज़ी कर

ही लिया और वह वहीं लेट गयी—उसी जगह जो उनका अग्रिम मोर्चा होने जा रही थी और जहाँ लीज़ा ब्रिचकिना ने ख़ुद अपने लिए फ़र की टहनियों से बिस्तर तैयार किया था। ओवरकोट कन्धों पर डाल-कर, सूर्योदय से पहले तक एकाध झपकी ले लेने की इच्छा से वह लेट गयी और गहरी नीन्द में सो गयी—बिना सपनोंवाली तेज़ गहरी नीन्द में।

वह तब जागी जब सार्जेंट-मेजर ने उसका ओवरकोट पकड़कर थोड़ा-सा खींचा।

"क्या है?" वह बोल उठी।

"चुप! कुछ सुनाई दे रहा है?"

रीता ने कोट उतार फेंका, स्कर्ट ठीक किया और उछल खड़ी हुई। क्षितिज से अभी-अभी सूरज ऊपर आया था, चट्टानें चटक गुलाबी हो उठी थीं। उसने ऊपर की ओर देखा: दूर जंगल में ज़ोर-ज़ोर से चीं-चीं करते पक्षी उड़ रहे थे।

"पक्षी चीख़-पुकार कर रहे हैं..."

"यह मैगपाई हैं!.." वास्कोव धीरे से हँसा। "यह सारा हँगामा मैगपाई मचा रहे हैं, रीता। और इसका मतलब है, कोई आदमी उस रास्ते से गुज़र रहा है, किसी ने उनकी शांति भंग कर दी है। हमारे मेहमानों के अलावा और कौन हो सकते हैं। हूँ, तो ओस्यानिना, जाकर सैनिकों को फौरन यहाँ बुला लाओ! लेकिन बिना किसी आवाज़ के, एक भी आवाज़ नहीं, समझीं?..."

रीता दौड़ पड़ी।

सार्जेंट-मेजर अपने ठिकाने पर जम गया—औरों से कुछ आगे—एक उभरे से टीले पर। उसने अपनी पिस्तौल की जाँच की, बन्दूक भरी और जंगल के किनारे तलाश में दूरबीन टिका दी। जंगल के किनारे-किनारे सूर्य की किरणें पड़ने लगी थीं। एक-दूसरे को तीखी, किलकारी भरी आवाज़ों में पुकार लगाते, मैगपाई अभी भी झाड़ियों के ऊपर चक्कर लगा रहे थे।

एक-एक करके उसकी महिला सैनिक आ पहुँचीं और ख़ामोशी से अपने-अपने निर्धारित ठिकानों पर जम गयीं।

गुरविच फ़ेदोत के पास चली आयी:

"शुभप्रभात, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"हलो, चेतवेर्ताक का क्या हाल है?"

"वह सोयी हुई है, हमने उसे नहीं जगाया।"

"बिलकुल ठीक। तुम मेरे पास ही रहो और संदेशवाहक का काम करो। लेकिन ध्यान रहे, तुम दिखाई न दो।"

"मैं आड़ में एकदम छुपी रहूँगी। कोई नहीं देख पायेगा," गुरविच ने वायदा किया।

उधर मैगपाई क़रीब आते जा रहे थे और अब वास्कोव यहाँ-वहाँ झाड़ियों की फुनगियों को बड़े हल्के-हल्के हिलते देख सकता था; उसके ख़्याल से उसने शायद किसी के भारी क़दमों के तले सूखी टहनी की चरमराहट भी सुनी थी। फिर कुछ देर के लिए सब ख़ामोश हो गया, मैगपाई भी शान्त हो गये-से लग रहे थे। लेकिन सार्जेंट-मेजर जानता था—जंगल के ठीक किनारे, झाड़ियों में वहाँ कोई ज़रूर था। यक़ीन वे वहाँ बैठे थे, झील के तट पर नज़र दौड़ाते हुए, जंगल और पहाड़ियों के बीच से जानेवाले अपने रास्ते पर निगाह टिकाये और जहाँ सार्जेंट-मेजर नींद से गुलाबी हुए गालोंवाली अपनी महिला सैनिकों के साथ छुपा था।

अब वह क्षण आ गया था जब एक घटना अनजाने ही दूसरे से जुड़ जाती है, जब कारण परिणाम को जन्म देता है, जब संयोग उत्पन्न होता है। शांतिकाल में ऐसे क्षण अनदेखे गुज़र जाते हैं लेकिन लड़ाई में जब स्नायविक तनाव अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाता है और अस्तित्व के मूलभूत प्रश्न यानी जीवन-मरण का प्रश्न उठ खड़ा होता है, ऐसे क्षण भयानक रूप से वास्तविक, शारीरिक रूप से मूर्त्त और शाश्वत प्रतीत होने लगते हैं।

"आगे आओ, बढ़ी..." फ़ेदोत ने बेआवाज़ आदेश दिया।

दूर की झाड़ियाँ हिल उठीं और दो आदमी सतर्कतापूर्वक जंगल के किनारे, बाहर निकल आये। उन्होंने धूसर-हरे रंग के छद्म लबादे पहन रखे थे लेकिन धूप सीधी उनके चेहरों पर चमक रही थी और सार्जेंट-मेजर उनकी प्रत्येक गतिविधि देख सकता था। सबमशीनगनों की लबलबी पर अंगुलियाँ जमाये वे आगे, झील की ओर बढ़ रहे थे—नीचे झुके, हल्के-हल्के क़दम रखते हुए, बिल्ली की चाल से।

लेकिन वास्कोव अब उन्हें नहीं देख रहा था क्योंकि उनके पीछे की झाड़ियाँ अभी भी हिल रही थीं और अधिकाधिक धूसर-हरे रंगोंवाली आकृतियाँ झाड़ियों से निकलती जा रही थीं —सब की मशीनगनें आग उगलने को तैयार थीं।

"तीन··· पाँच··· आठ··· दस···" गुरविच बुदबुदाते हुए गिन रही थी। "बारह··· चौदह··· पन्द्रह··· सोलह··· सोलह हैं, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

झाड़ियाँ एक बार फिर निस्पन्द हो गयीं।

दूर में चीं-चीं करते मैनाई उड़े जा रहे थे।

सावधानीपूर्वक, धीरे-धीरे सोलह जर्मन झील के किनारे-किनारे रास्ता तय करते हुए सिन्यूख़िना पहाड़ियों की ओर बढ़ रहे थे···

६

फ़ेदोत वास्कोव जीवन भर आदेशों का पालन करने का आदी रहा था। वह उनका पालन अक्षरशः अविलंब और ख़ुशी के साथ करता था क्योंकि किसी और के आदेश का बारीकी से पालन करने में ही वह अपने जीवन की पूर्ण सार्थकता देखता था। आदेश-पालन में उसकी निष्ठता के कारण ही वरिष्ठ अधिकारी उसे महत्व देते थे, उससे किसी अन्य बात की अपेक्षा भी नहीं थी। वह एक विशाल, सुगठित मशीन का दाँता था: ख़ुद घूमता था और साथ-साथ दूसरे भी घूमते जाते, यह सोचे बिना कि इसका स्रोत क्या है, इसकी दिशा क्या है या इसका परिणाम क्या होगा।

उधर जर्मन वोप झील के किनारे-किनारे आगे बढ़े आ रहे थे। वे धीरे-धीरे, निष्ठुरतापूर्वक उनकी ओर—वास्कोव और गोलाश्मों के पीछे उसके निर्देशानुसार अपनी बन्दूकों के ठण्डे कुन्दों से गाल सटाये लेटी उसकी सैनिकों की ओर बढ़े आ रहे थे।

"सोलह, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर," मुश्किल से सुनायी देनेवाली आवाज़ में गुरविच ने दुहराया।

"मुझे दिखाई देता है," पीछे मुड़े बिना उसने जवाब दिया। "तुम ठिकाने पर जाकर ओस्यानिना से कह दो, वह अपने दस्ते के साथ रिज़र्व ठिकाने पर चली जाये। और यह काम तुम एकदम शोर

मचाये बिना, ख़ामोशी से करोगी, सुन रही हो··· रुको, एक मिनट रुको। ब्रिचकिना को मेरे पास भेज दो। और रेंगकर जाओ, कॉमरेड गुरविच, अब से स्थिति सुधरने तक हम अपने हाथों और घुटनों के बल चला करेंगे।"

गोलाश्मों के बीच सावधानी से सरकते हुए गुरविच रेंगती चली गयी। वास्कोव को कुछ सोचने-विचारने की, कोई फ़ैसला लेने की ज़रूरत महसूस हो रही थी लेकिन उसका दिमाग़ निराशाजनक रूप से ख़ाली था और उसे एकमात्र लालसा महसूस हो रही थी जो प्रशिक्षण के दौरान उसमें कूट-कूटकर भर दी गयी थी—रिपोर्ट करने की, तत्काल, इसी पल किसी वरिष्ठ अधिकारी को रिपोर्ट करने की, उसे बता देने की कि स्थिति बदल गयी है और ऐसी छोटी-सी सैनिक टुकड़ी के साथ किरोव रेलवे या कॉमरेड स्तालिन के नामवाली नहर की हिफ़ाज़त करने में अब वह समर्थ नहीं रहा है।

उसकी टुकड़ी वापस रिज़र्व ठिकाने पर लौट रही थी और उसे किसी चीज़ से बन्दूक के टकराने, पत्थर के अपनी जगह से लुढ़क पड़ने की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। यह आवाज़ें वास्तव में उसके शरीर से टकरा रही थीं और जर्मन हालाँकि अभी भी दूर थे और वे कुछ भी नहीं सुन सकते थे, वास्कोव वास्तविक भय की जकड़ में था। ओह, मशीनगन और कारतूसों का पूरा ड्रम, फिर चलानेवाले फ़ौजी जवाँ मर्द! मशीनगन? अगर उसके पास तीन सबमशीनगन और उन्हें चलानेवाले तीन हाज़िरदिमाग़ मर्द होते तो उसे किसी तरह का असन्तोष न होता लेकिन उसके पास न मशीनगनें थीं, न मर्द थे, बस खी-खी करनेवाली पाँच लड़कियाँ थीं और हर बन्दूक पर पाँच कारतूस-पेटियाँ। मई की उस ओससिक्त सुबह में सार्जेंट-मेजर वास्कोव का ठण्डे पसीने से नहा उठना कोई आश्चर्यजनक न था···

"कॉमरेड सार्जेंट-मेजर ··· कॉमरेड सार्जेंट-मेजर···"

सिर मोड़कर उधर देखने के पहले वास्कोव ने आस्तीन से सावधानी से पसीना पोंछा। उसकी नज़र सीधे एक जोड़ी आँखों से जा टकरायी जो बहुत क़रीब में ही थीं—विस्मय विस्फारित। आँख मारकर वह बोला:

"ऐसी घबड़ायी क्यों हो, ख़ुश होओ, ब्रिचकिना। सच पूछो तो दो के मुक़ाबले सोलह बेहतर हैं। "समझी?"

दो के मुक़ाबले सोलह जर्मन क्यों बेहतर थे – यह सार्जेंट-मेजर ने नहीं बताया लेकिन फिर भी ब्रिचकिना ने सहमति में सिर हिला दिया और एक अन्वीक्षा भरी मुस्कान उसके होठों पर खेलने लगी।

"तुम्हें वापसी का रास्ता याद है?"

"याद है, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर।"

"जर्मनों की बायीं ओर देवदार वृक्षोंवाला जंगल देखती हो? उस रास्ते से जाओ – जंगल व झील के किनारे-किनारे।"

"आपका मतलब उस जगह से है जहाँ आप ने सूखी लकड़ी काटी थी?"

"वही, वही, मेरी प्यारी! उसके बाद उसी उपधारा की ओर मुड़ जाना जहाँ तुम लोगों ने स्नान किया था, सीधी सड़क है – तुम वहाँ भटकोगी नहीं।"

"मैं जानती हूँ, बताने की कोई ज़रूरत नहीं, कॉमरेड..."

"रुको, लीज़ावेता, बेताबी न करो। दलदल को दिमाग़ में रखो – वहाँ तुम्हें बहुत अधिक सावधानी बरतने की ज़रूरत है, समझीं? पैदल पार करने का रास्ता बहुत संकरा है; बायें या दायें पैर पड़ा और तुम्हारा काम तमाम। भूर्जवृक्ष सीमाचिह्न है और भूर्जवृक्ष से सीधे छोटे भूखण्डवाले दोनों देवदार वृक्षों तक जाओ।"

"हूँ ऽऽ !"

"वहाँ थोड़ी देर आराम करो, सरपट दौड़ भागने की ज़रूरत नहीं। उस भूखण्ड से तुम्हारा लक्ष्य बड़े वृक्ष का जला ठूँठ होगा जहाँ से मैं दलदल में उतरा था। बड़ी सावधानी से उसे ध्यान में रखना। यह बहुत ज़रूरी है।"

"हूँ-हूँ ऽऽऽ!"

"यहाँ की स्थिति के बारे में कियानोवा को रिपोर्ट करना। तब तक हम लोग जर्मन को चक्कर में डाले रहेंगे लेकिन ऐसा ज़्यादा देर तक संभव नहीं। तुम्हें यह बताने की ज़रूरत तो है नहीं।"

"हूँ ऽऽऽ !"

"हर चीज़ यहीं छोड़ जाओ: अपनी बन्दूक, बुग़चा, ओवरकोट। जिससे तुम दौड़ सको।"

"तो अब मैं रवाना हो जाऊँ?"

"दलदल में घुसपैठ से पहले उस डण्डे को लेना मत भूलना।"

"हूँ-हूँ ऽऽ ! तो अब मैं चली।"

"जाओ, लीज़ावेता – मेरी लाड़ली।"

ख़ामोशी से सिर हिलाकर लीज़ा वहाँ से चली गयी। एक गोलाश्म से अपनी बन्दूक टिकाकर चमड़े की पेटी से वह कारतूस उतारने लगी – साथ ही साथ उम्मीद भरी निगाहों से वास्कोव की ओर देखती भी जाती, लेकिन वास्कोव जर्मनों को देखने में लगा था, सो वह लीज़ा की व्याकुल दृष्टि नहीं देख सका। हल्की आह भरकर लीज़ा ने अपनी बेल्ट कस ली फिर नीचे झुकते हुए देवदार वृक्षों की ओर वह दुनिया भर की औरतों की तरह पैरों को हल्का-सा झटका देते हुए दौड़ पड़ी।

जर्मन अब बहुत क़रीब आ गये थे – उनके चेहरे साफ़ दिखाई देने लगे थे – और वास्कोव पत्थरों से चिपका रहा। जर्मनों पर नज़र रखने के साथ-साथ वह देवदार वृक्षों की ओर भी देखे जा रहा था जो ठीक पहाड़ियों के सामने से शुरू होकर जंगल के किनारे तक फैले हुए थे। उसे बड़ी हल्की-सी हलचल दिखाई दी – झाड़ियाँ दो बार हिली थीं लेकिन इतने धीमे से मानो कोई चिड़िया पास से उड़ी हो। उसे मन में यह सोचकर सन्तोष हुआ कि इस काम के लिए लीज़ा ब्रिचकिना का चुनाव उसने ठीक ही किया था।

संदेशवाहिका पर जर्मनों की नज़र नहीं पड़ी है, यह निश्चित कर लेने के बाद सेफ़्टी-कैच लगाकर वह गोलाश्म से नीचे उतर आया। लीज़ा की बन्दूक उठाकर वह सीधे पीछे की ओर दौड़ पड़ा, छठी इन्द्री उसे बताने जा रही थी कि वह कहाँ पैर रखे जिससे उसके दौड़ने की आवाज़ सुनाई न दे।

"कॉमरेड सार्जेंट-मेजर..." भाँग के बीज पर टूट पड़नेवाले गोरैयों के झुण्ड की तरह वे उसकी ओर दौड़ पड़ीं। यहाँ तक कि चेतवेर्ताक भी ओवरकोट के अन्दर से झपटकर बाहर निकल आयीं।

सैनिकों को ऐसा आचरण नहीं करना चाहिये था और इस अनुशासनहीनता के लिए वह चीख़ भी पड़ता, पहरेदार तैनात नहीं करने के लिए वह ओस्यानिना को फटकार भी बताता और इसके लिए बड़े प्रभावशाली ढंग से उसने भौंहें भी चढ़ा लीं लेकिन आदेश देने के

लिए जब वह मुँह खोलने ही वाला था कि उसे उनकी आँखों में झाँकता तनाव दिखाई दे गया। सो, अपना इरादा बदलकर किसी सामूहिक फ़ार्म के टोली-नायक की-सी आवाज़ में वह बोला:

"इस तरह नहीं दौड़ना चाहिये, बुरी बात है, लड़कियो।"

वह एक गोलाश्म पर बैठने ही वाला था कि गुरविच ने उसे रोक लिया और अपना ओवरकोट बिछा दिया। उसकी ओर सिर हिलाकर उसने कृतज्ञता प्रकट की और बैठकर तम्बाकू की डिबिया बाहर निकाल ली।

लड़कियाँ उसके सामने एक क़तार में बैठ गयीं और जब तक वह अपने लिए सिगरेट तैयार करता रहा, वे उसकी ओर ख़ामोशी से देखती रहीं। वास्कोव चेतवर्ताक की ओर मुख़ातिब हुआ:

"हाँ, तो बताओ, अब तुम कैसी हो?"

"ठीक ही हूँ।" वह मुस्कराना चाहती थी लेकिन मुस्कान होठों पर आयी नहीं: होठ उसका साथ नहीं दे रहे थे। "मुझे अच्छी नीन्द आयी थी।"

"हूँ, तो वे सोलह हैं," सार्जेंट-मेजर अधिक से अधिक शांति-पूर्वक बोलने की कोशिश कर रहा था, वह हर शब्द बोलने से पहले तौल लेना चाहता था। "सोलह सब्रमशीनगनें—उनसे निबटना कुछ मायने रखता है। ऐसी स्थिति में उनसे सीधे जा टकराना कठिन है। और उन्हें बिना रोके भी नहीं छोड़ा जा सकता। मेरे ख़्याल से, वे तीन घंटे में शायद यहाँ तक आ पहुँचेंगे।"

ओस्यानिना ने कोमेलकोवा से दृष्टियों का आदान-प्रदान किया, गुरविच घुटनों पर स्कर्ट ठीक करने लगी और चेतवेर्ताक की दृष्टि उस पर टिकी तो टिकी ही रह गयी थी—पलक झपकाये बिना। हर हरकत पर फ़ेदोत की नज़र थी, वह सब कुछ देख-सुन रहा था हालाँकि वह बैठा सिगरेट पीता, ज़ाहिरी तौर पर उसी में व्यस्त दिखाई दे रहा था। कुछ देर रुकने के बाद उसने फिर बोलना शुरू किया:

"ब्रिचकिना को मैंने छावनी पर वापस भेज दिया है। रात होने से पहले हम सहायता की उम्मीद नहीं कर सकते। और अगर हम उनसे मुक़ाबला शुरू कर दें तो रात होने तक टिके रहने में हम असमर्थ हैं। चाहे हम जैसी भी मोर्चाबन्दी करें, जितनी भी सुरक्षित जगह का चुनाव करें, हम टिके रहने में असमर्थ होंगे क्योंकि उनके पास सोलह सब्रमशीनगनें हैं।"

"तो फिर? तो हम उन्हें बस पास से गुज़रते देखते रहें?" ओस्यानिना ने शांतिपूर्वक पूछा।

"नहीं, हम उन्हें पहाड़ियाँ पार करने भी नहीं दे सकते," वास्कोव ने जवाब दिया। "हमें उनका रुख़ यक़ीनन बदलना होगा। हमें उनको लेगोन्तोव झील की ओर मोड़ देना है। लेकिन कैसे? यही सवाल है। उनसे भिड़ कर? यह बुद्धिमानी नहीं होगी। इस लिए, चलो, तुम्हीं लोग कुछ सुझाओ, अपने-अपने विचार दो।"

सबसे ज़्यादा चिन्ता सार्जेंट-मेजर को इस बात से थी कि कहीं वे उसकी ख़ुद की दुविधाग्रस्त स्थिति के बारे में न भाँप लें, उसके अहसास की थाह न पा लें—अगर कहीं ऐसा हुआ तो सब कुछ ख़त्म। उसकी वरिष्ठता मिट्टी में मिल जायेगी, कमांडर के रूप में उसकी इच्छा बेमानी हो जायेगी, उसके प्रति उनका विश्वास समाप्त हो जायेगा। इसलिए अपनी आवाज़ ऊँची किये बिना वह शांतिपूर्वक, बड़े सीधे-सादे ढंग से बोला और इस तरह सिगरेट पीता रहा मानो समय बिताने के लिए गाँव के अपने पड़ोसियों के बीच रुक गया हो। लेकिन इसके साथ ही हर संभावना पर विचार-विमर्श करता उसका दिमाग़ चक्कर काटता रहा।

शुरुआत के लिए, उसने लड़कियों को नाश्ता करने का आदेश दिया। लड़कियों की आनाकानी को बड़ी नरमी से अनसुनी करके अपने बुग़चे से सूअर के नमकदार गोश्त का टुकड़ा निकाला। कौन जाने किसके वशीभूत हो—उस के कोमल शब्दों के या नमकीन गोश्त के—लड़कियों ने जल्दी ही मुँह चलाना शुरू कर दिया। और अब फ़ेदोत को इस बात पर अफ़सोस हुआ कि उसने लीज़ा ब्रिचकिना को लम्बी यात्रा पर ख़ाली पेट भेज दिया था।

नाश्ता के बाद सार्जेंट-मेजर ने ठण्डे पानी से दाढ़ी बनायी। उसके पास अभी भी अपने बाप का ही उस्तरा था—उस्तरा क्या, दुर्लभ वस्तु कहिये—लेकिन फिर भी उसने दो जगह अपनी खाल काट ली। अख़बार के टुकड़ों से उसने उन्हें ढँक दिया और कोमेलकोवा ने अपने

बुग़चे से यू-डी-कोलोन की बोतल निकालकर अपने हाथ से ज़ख्मों पर रगड़ दिया।

जो कुछ वह कर रहा था, बड़े शांतिपूर्वक, बिना हड़बड़ी के लेकिन समय बीतता जा रहा था और उसके विचार उथले किनारों पर छोटे बच्चों की तरह धमाचौकड़ी मचा रहे थे। वह उन्हें एकत्र नहीं कर पा रहा था और इस बात पर बार-बार अफ़सोस कर रहा था कि कुल्हाड़ी उठाकर लकड़ी काटने का मौक़ा नहीं। अगर ऐसा हो पाता तो वह अपने विचारों को तरतीब देता, हर अनावश्यक चीज को दिमाग़ से निकालकर कोई रास्ता ढूँढ़ लेता।

जर्मन भी भिड़ंत नहीं चाहते होंगे, यह तो वह अच्छी तरह समझ सकता था। बड़ी चौकसी बरतते हुए, वे जंगल के सर्वाधिक घने हिस्सों में रहने की कोशिश कर रहे थे। टोह लेने के लिए जासूसों को काफ़ी आगे भेज देते। लेकिन जासूसों को क्यों? जिससे उन पर किसी की नज़र न पड़े सके और वे अनदिखे रहकर हर संभावित बाधा को पार कर ख़ामोशी से खिसक लें और अपनी ख़ास मंज़िल तक पहुँच जायें। ऐसी हालत में उसे कुछ ऐसा काम करना चाहिये जिस से वे तो उसे देख लें लेकिन यह समझ लें कि उसने उन्हें नहीं देखा है। इससे हो सकता है, मजबूर होकर वे रास्ता बदल लें और किसी दूसरे मार्ग से जाने की कोशिश करें। दूसरा मार्ग यानी लेगोन्तोव झील का चक्कर लगाकर—और इसका मतलब है, चौबीस घंटे उन्हें और चलना पड़ेगा।

लेकिन वह बलि का बकरा बनाये तो किसे? जर्मनों की नज़र के सामने लाये तो किसे? चारों लड़कियों और ख़ुद को? ठीक है, हो सकता है वे रुक भी जायें, पता लगाने के लिए जासूसों को भी भेजें; लेकिन कब तक—तभी तक न जब तक उन्हें यह पता नहीं चल जाता कि वे सिर्फ़ पाँच हैं। फिर उसके बाद?... और तब, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर वास्कोव, वे बस आगे बढ़ते चले आयेंगे। एक भी गोली चलाये बिना वे उन्हें घेर लेंगे। बस पाँच चाकुओं से वे उसकी पूरी टोली का सफ़ाया कर देंगे। चार लड़कियों और पिस्तौल-धारी एक सार्जेंट-मेजर से भयभीत हो जानेवाले बेवक़ूफ़ वे न थे, इन से डरकर वे दौड़कर जंगलों में नहीं जा छुपेंगे।

अपने विचार फेदोत ने ओस्यानिना, कोमेलकोवा और गुरविच के सामने जाहिर कर दिये चूँकि चेतवेर्ताक अच्छी नीन्द ले चुकी थी, वह स्वेच्छापूर्वक संतरी का काम करने को प्रस्तुत हो गयी। बिना कुछ छुपाये उसने उन्हें सब कुछ बता दिया और अन्त में कहा: अगर अगले एक या डेढ़ घंटे में हम लोगों ने कुछ नहीं सोचा तो सब कुछ उसी तरह होगा, जैसा मैं तुम्हें बता चुका हूँ। इस लिए तैयार रहो।"

तैयार रहो। तैयारियाँ थीं ही क्या वहाँ करने को? दूसरे लोक में जाने की? अगर ऐसी ही बात है तो जितनी जल्दी, उतना अच्छा"

जहाँ तक उसका सवाल था, उसने अपनी तैयारियाँ कीं। बुग़चे से उसने एक हथगोला निकाल लिया और पिस्तौल की सफ़ाई की, पत्थर पर फ़िनिश चाकू की धार रगड़कर तेज़ की। बस उसे इतनी ही तैयारियों की ज़रूरत थी लेकिन लड़कियों को तो वह भी न करनी थी। वे उससे कुछ दूर पर बैठीं, कानाफूसी में लगी थीं। आख़िर वे सब एक होकर आगे आयीं और बोलीं:

"मान लीजिये वे लकड़हारों के चक्कर में पड़ जायें, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर?"

वास्कोव चकराकर रह गया—भगवान ही जाने, लकड़हारों का कैसा चक्कर? कहाँ?... यह लड़ाई का समय था, जंगल सुनसान पड़े थे जैसा कि वे ख़ुद भी देख चुके हैं। लड़कियों ने समझाना शुरू किया और वास्कोव की समझ में बात आ गयी। बड़ी सीधी-सी बात थी। हरेक सैनिक टुकड़ी की—चाहे कोई भी हो—अपनी स्पष्ट रूप से निर्धारित सीमाएँ होती थीं; उन्हें अपने पड़ोसियों की जानकारी होती और हर सीमारेखा पर रक्षा-चौकी होती थी। लेकिन लकड़हारों के साथ दूसरी ही बात थी। जंगल में कहीं भी लकड़हारे हो सकते थे। वे अलग-अलग टोलियों में काम करते थे—कुल कितने हैं, यह पता लगाना आपका काम है। क्या जर्मन उनका पता लगाने की कोशिश करेंगे? शायद नहीं—यह उनके लिए ख़तरनाक होगा। अगर जर्मनों ने सावधानी नहीं बरती तो हो सकता है, कोई उन्हें देख ले और अधिकारियों को सचेत कर दे। निश्चित रूप से भला कौन बता सकता है—आसपास कितने लकड़हारे होंगे, कहाँ होंगे और उनके किन से संपर्क थे...

"हूँ, लड़कियो, कमाल की बुद्धि है तुम लोगों की, खूब सोचा!"

"उनके रिज़र्व ठिकाने के पीछे एक छोटा-सा सोता था—छिछला लेकिन शोर मचाता। जंगल सोते के ठीक दूसरे किनारे से शुरू हो जाता था, पानी के एकदम किनारे से। जंगल घना और ऐस्प वृक्षों के कारण अगम्य था। आँखें ज़्यादा से ज़्यादा दो क़दम की दूरी तक देख सकती थीं और दो क़दम चलिये तो झाड़ियों की दीवार खड़ी मिलती। कोई भी ज़ेइस दूरबीन यहाँ काम न देगी, न तो उससे कुंजों को भेद पाने की, न तो हमेशा परिवर्तित होनेवाले दृश्य को या इसकी गहनता की थाह ले पाने की उम्मीद की जा सकती है। लड़कियों की योजना स्वीकार करते समय फ़ेदोत के दिमाग़ में यही विचार आया था।

एकदम बीच में उसने चेतवेर्ताक और गुरविच को तैनात कर दिया जिससे किसी भी हालत में जर्मन उन्हें देखने से न चूक पायें। उसने उन्हें अलाव जलाने और यह बात ध्यान में रखने के लिए कहा कि खब धुआँ उठे, वे एक-दूसरे का नाम ले-लेकर ज़ोर-ज़ोर से चीखें, जिससे उनकी आवाज़ों से जंगल गूंज उठे। लेकिन उन्हें अपना काम इस तरह करना था कि झाड़ियों से कोई उन्हें देख न सके—उन्हें तेज़ी से अपना स्थान बदलकर खिसक लेना था लेकिन एक सीमा के अन्दर ही, बेहिसाब नहीं। उसने उन्हें वह सब कुछ उतार डालने के लिए कहा जिनसे उनके सैनिक होने का बहुत अधिक सन्देह होता था—बूट, छद्म, टोपियाँ और कमर की पेटियाँ।

उस ख़ास हिस्से में इन्हें तैनात कर देने के बाद अलावों से कतराकर निकल जाने के लिए जर्मनों के पास केवल एक ही रास्ता था—बायीं ओर का, क्योंकि दायीं ओर पानी के ठीक किनारे से खड़ी चोटियाँ शुरू हो जाती थीं और उस ओर से कोई भी उपयुक्त मार्ग न था। फिर भी सुरक्षा की दृष्टि से वास्कोव ने ओस्यानिना को वहाँ तैनात कर दिया: उसे भी उसने वही आदेश दिये थे—अलाव जलाने, शोर मचाने और स्थान बदलकर तेज़ी से खिसक लेने के। कोमेलकोवा के साथ खुद उसने सबसे नाज़ुक ठिकाने यानी बायीं ओर के ठिकाने की पहरेदारी का ज़िम्मा लिया। यह महत्वपूर्ण इसलिए था क्यों कि नदी का मोड़ यहाँ से अच्छी तरह देख पाना संभव था। कौन कह सकता है—जर्मन शायद अपना इरादा ही बदल दें और नदी पार करने लगें

तो यह ठिकाने उसे दो-तीन जर्मनों को मार डालने का मौक़ा देगा और लड़कियाँ भी तब तक भाग खड़ी होंगी।

समय कम होता जा रहा था और वास्कोव दूसरी लड़की पर पहरेदारी का काम सौंप, ओस्यानिना और कोमेलकोवा के साथ जल्दी-जल्दी तैयारियों में जुट गया। जब तक लड़कियाँ लकड़ियाँ जमा करती रहीं, वास्कोव कुल्हाड़ी से पेड़ काटता रहा—एकदम खुले ढँग से जिससे जर्मनों को सुनाई दे जाये, वे पहले ही चेत जायें! उसने ऊँचे-ऊँचे पेड़ चुने थे जिनसे सबसे ज़्यादा शोर हो। वह उन्हें इस तरह काट रहा था कि बाद में हल्का-सा झटका देने पर भी गिर पड़ें। पसीना बह-बहकर उसकी आँखों तक जा पहुँचा, मच्छर बड़ी निर्ममता से उसे काट रहे थे लेकिन कुल्हाड़ी से प्रहार पर प्रहार करता, हाँफ़ता उस समय तक काटने में लगा रहा जब तक अपने ठिकाने से दौड़ती हुई गुरविच उसके पास न आ पहुँची। सोते के पार से हाथ हिलाकर संकेत देती हुई वह बोली:

"वे आ रहे हैं!"

"सब अपनी-अपनी जगह पर," वास्कोव ने कहा। "अपनी-अपनी जगहों पर, लड़कियो, लेकिन याद रखो—सबको बहुत-बहुत चौकस रहना है। उन्हें अपनी झलक तो दिखा दो लेकिन पेड़ों के बीच, झाड़ियों में नहीं। और जितनी ज़ोर से हो सके, आवाज़ लगाओ, शोर मचाओ..."

उसके सैनिक चले गये, केवल गुरविच और चेतवेर्ताक दूसरे किनारे पर रह गयीं। कामचलाऊ जूते के साथ बँधी पट्टी को वह नहीं खोल सकी थी। उसके पास जाकर वास्कोव ने कहा:

"इसे थामे रहो, मैं तुम्हें उठाकर वहाँ तक ले जाऊँगा।"

"अरे, नहीं, कॉमरेड..."

"मैं ने क्या कहा, इसे थामे रहना। पानी बर्फ़-सा ठण्डा है और तुम्हारी तबीयत अभी भी ठीक नहीं।" और उस पर एक नज़र डालकर उसने बाँहों में उठा लिया (उस का वजन सौ पौंड से ज़्यादा न था)। गर्दन में बाँहें डालकर उसे पकड़ते हुए लड़की एकदम अकारण ही लजा उठी और बोली:

"आप तो मेरे साथ नन्हीं-मुन्नी लड़की-सा व्यवहार कर रहे हैं..."

वास्कोव कोई मज़ाक़ वाली बात कहना चाहता था—आख़िर कुन्दा ढोकर तो वह ले नहीं जा रहा था बल्कि बाँहों में एक लड़की थी लेकिन उसने एकदम ही दूसरी बात कही:

"और तुम गीले में फुदकती न फिरना।"

पानी लगभग घुटने तक गहरा और भयानक रूप से ठण्डा था, स्कर्ट ऊपर की ओर उठाये, गुरविच कष्टपूर्वक आगे-आगे चल रही थी: उसकी पतली-पतली टाँगें सफ़ेद दमक रही थीं और सन्तुलन बनाये रखने के लिए उसने बूट हिलाये। फिर पीछे मुड़कर उसने आवाज़ दी:

"पानी बर्फ़-सा ठण्डा है।" और फौरन ही अपना स्कर्ट नीचे गिरा दिया जिससे उसका किनारा गीला होने लगा। वास्कोव गुस्से से उस पर चीख़ पड़ा:

"अपना स्कर्ट ऊपर कर लो!"

यह सुनकर वह रुक गयी और मुस्करा कर बोली:

"सेना के नियमों में तो ऐसा कुछ भी नहीं लिखा, सार्जेंट-मेजर..."

हूँ, तो वे अभी भी मज़ाक़ कर सकती थीं, इसका मतलब है, स्थिति उतनी बुरी नहीं! वास्कोव ने उसे दिल से पसन्द किया था और जब वह अपने ठिकाने पर पहुँचा, जहाँ कोमेलकोवा अलाव जलाने में व्यस्त थी, वह बड़े अच्छे मूड में था। जितनी ज़ोर से हो सकता था, वह चीख़ पड़ा:

"चलो, आओ, लड़कियो, आगे बढ़ो, ख़ुश नज़र आओ!"

ओस्यानिना ने दूर से आवाज़ लगायी:

"ऐ, कौन है वहाँ? घोड़ा और गाड़ी ले आओ, इवान!..."

वे चीख़ते रहे, अधकटे पेड़ों को गिराते रहे, शोर मचाते हुए अलाव जलाते रहे। वास्कोव भी चीख़ रहा था लेकिन यदाकदा ही, बस इसलिए कि जर्मन एक पुरुष आवाज़ भी सुन लें लेकिन अधिकांश समय वह बेंत की झाड़ियों में दुबका, सोते पारवाली झाड़ियों का जायज़ा लेता रहा।

काफ़ी देर तक वह कुछ भी नहीं देख सका। अब तक चीख़ते-चिल्लाते लड़कियाँ थक चुकी थीं, उसके अधकाटे सभी वृक्षों को ओस्यानिना और कोमेलकोवा गिरा चुकी थीं, सूर्य ठीक जंगल के ऊपर

आ पहुँचा था, सोते का पानी चमक उठा था लेकिन दूसरे किनारे की झाड़ियाँ ख़ामोश और निस्पन्द थीं।

"हो सकता है, वे जा चुके हों?..." कोमेलकोवा उसके कान में बुबुदायी।

कौन जाने, चले भी गये हों। वास्कोव कोई घनदर्शी दूरबीन तो था नहीं, हो सकता है, चूक गया हो और वे अब तक रेंगकर किनारे जा पहुँचे हों, वे आख़िर पुराने घाघ होंगे—ऐसी ज़िम्मेदारी का काम जैसे-जैसे को यूँ ही नहीं सौंप दिया जा सकता।

लेकिन यह सब वास्कोव मन में सोच रहा था, ज़ोर से बस उसने इतना ही कहा: "ठहरो।"

जगह का जायज़ा लेते हुए उसने दुबारा अपनी आँखें उन झाड़ियों पर दौड़ायीं जिनकी एक-एक टहनी से वह अब तक परिचित हो चुका था। बेहद ज़ोर लगाकर झाँकने के कारण उसकी आँखें टीस उठीं। उसने पलकें झपकायीं, उन्हें मला और दुबारा झाँकना शुरू कर दिया। उसके ठीक सामने, सोते के दूसरे किनारे आल्डर के पत्ते काँपे, हटे और खूँटदार दाढ़ियोंवाला एक युवा चेहरा दिखाई दिया।

मुड़े बिना वास्कोव ने पीछे हाथ बढ़ाया और कोमेलकोवा के गोल-गोल घुटने, को पकड़कर दबा दिया।

कोमेलकोवा बुदबुदायी: "देख रही हूँ।"

आगे सोते के निचले हिस्से में उसे एक दूसरे जर्मन की झलक मिली। अपने बुग़चों व सामानों के बिना सामने की ओर सब मशीनगन ताने वे दोनों तट की ओर बढ़ रहे थे। उनकी आँखें दूसरे तट पर दौड़ रही थीं जो अभी भी आवाज़ों से गूँज रहा था।

वास्कोव का दिल बैठ गया। यह तो टोही-दल था। इसका मतलब तो बस यही था कि उन्होंने जंगल छानने की, लकड़हारों को गिनकर चुपके से उनसे बच निकलने की ठानी थी। तो सब कुछ गड़बड़ हो गया था, मेहनत से तैयार की गयी सारी लंबी-चौड़ी योजना टाँय-टाँय फिस्स हो गयी थी, उनकी चीख़-पुकार, धुँआती आग और कटे वृक्ष—किसी भी चीज़ से जर्मन भयभीत नहीं हुए थे। वे सोते को पार करनेवाले थे, झाड़ियों में दुबककर, लड़कियों की आवाज़ों, आग और शोर से दिशा-निर्देश पाते हुए साँप की तरह रेंगते हुए खिसक

जानेवाले थे। फिर वे उन्हें अंगुलियों पर गिन लेंगे और उनका हिसाब-किताब लगाकर... सब कुछ समझ जायेंगे।

धीमे से वास्कोव ने अपनी पिस्तौल निकाल ली—इतना धीमे से कि कोई डाल तक न हिल सके। वे दोनों उनके क़रीब पहुँचे, उससे पहले ही जब वे सोता पार कर रहे होंगे, उसने उन दोनों का काम तमाम कर देने का निश्चय कर लिया था। निस्सन्देह, दूसरे जर्मन बाक़ी सब मशीनगनों के साथ उसपर टूट पड़ेंगे लेकिन उसे उम्मीद थी, लड़कियाँ इस मौक़े का फ़ायदा उठाकर भाग जायेंगी या छुप जायेंगी। काश, वह राह के रोड़े की तरह कोमेलकोवा को हटा सके...

वह मुड़ा तो ठीक अपने पीछे कोमेलकोवा को घुटने के बल झुककर जल्दी-जल्दी ट्यूनिक उतारते देखा। ट्यूनिक ज़मीन पर फ़ेंककर, छुपने की कोई भी कोशिश किये बिना वह उछल पड़ी।

"रुको! ..." सार्जेंट-मेजर ने बुदबुदाकर आदेश दिया।

"राया, वेरा, आओ ..." गूँजती आवाज़ में पुकारते हुए कोमेलकोवा, झाड़ियों को चीरती सोते की ओर बढ़ गयी। क्या कर रहा है, इससे अनजान वास्कोव ने कोमेलकोवा का ट्यूनिक उठाकर कलेजे से चिपका लिया। तब तक वह हसीना धूप से नहायी नदी के कंकरीले तट पर पहुँच चुकी थी।

उस जगह, दूसरे किनारे की झाड़ियाँ हिल रही थीं जहाँ धूसर हरे रंगोंवाली आकृतियाँ ग़ायब हो गयी थीं। बड़े आराम से, आहिस्ते-आहिस्ते झेन्या ने अपना स्कर्ट उतारा, फिर अंगिया उतारी और हाथों को काली जाँघियों पर फेरते हुए वह अचानक गूँजती आवाज़ में गा उठी। वह गाना तो क्या, चीख़ना ज़्यादा था:

सेब—नाशपाती के पेड़ों में फूल लग गये,
नदी पर चुपके से कुहरे छा गये ...

आह, उस पल कितनी हसीन लग रही थी वह! लम्बी, नरम, गोरा-गोरा प्यारा-सा बदन। सबमशीनगनों से वह बस दस मीटर की दूरी पर थी। गीत को बीच में छोड़ वह नदी में घुस गयी, उछलती, छप-छप करती, उल्लास भरी किलकारियाँ भरती। धूप

में चमकती पानी की बून्दें उसके पुष्ट, शोख़ी भरे बदन से नीचे को लुढ़क रही थीं और ख़ौफ़ से भरा, साँस रोके सार्जेंट-मेजर गोलियों के चलने की प्रतीक्षा कर रहा था। बस अब चली, उसे लगी, वह दुहरी हो गयी, बाँहें झूल गयीं और... .

लेकिन झाड़ियाँ ख़ामोश थीं।

"अरी, ओ लड़कियो, आओ, तैरो !..." पानी में उछलती, कूदती कोमेलकोवा ऊँचे, उल्लास भरे स्वर में चीख़ी। "और हाँ, इवान को भी बुलाओ! ... ऐ इवान, कहाँ, कहाँ हो तुम? ..."

वास्कोव उसका ट्यूनिक नीचे फेंक, होल्स्टर में पिस्तौल रख, नीचे झुकते हुए झाड़ियों के झुण्ड में सरपट दौड़ पड़ा। कुल्हाड़ी को हिलाते हुए वह बड़ी प्रचण्डता से एक चीड़ वृक्ष पर टूट पड़ा। "ऐ, आ रहा हूँ मैं!" उसने चीखकर कहा और वृक्ष पर कुल्हाड़ी से दुबारा प्रहार किया। "हम सब आ रहे हैं, रुकी रहो हम लोगों के लिए! ऐ, हो!"

ऐसी तेज़ गति से अपने जीवन में उसने कभी वृक्ष नहीं गिराये थे—वह ख़ुद हैरान था, आख़िर इतनी ताक़त आ कहाँ से गयी थी। कन्धे से दबाव डालकर वह सूखे फ़र वृक्षों पर चीड़ का वृक्ष गिरा देता जिससे काफ़ी शोर होता। कुछ देर बाद हाँफ़ता हुआ वह दौड़कर अपने ठिकाने पर लौट आया और झाँककर देखने लगा।

कोमेलकोवा अब किनारे पर आकर पार्श्वाभिमुख खड़ी थी—उसके और जर्मनों के बीच। बड़ी शांति से उसने अपनी नाज़ुक-सी अंगिया सिर से नीचे सरका ली, रेशमी अंगिया उसके बदन से चिपक गयी—गीली और तिरछी पड़ती सूर्य की किरणों में लगभग पारदर्शी-सी। उसे अपनी ख़ूबसूरती का अहसास था, बेशक, वह जानती थी कि इस समय वह कैसी दिख रही होगी। तभी तो वह आहिस्ते-आहिस्ते, बड़े आराम से चल रही थी। फिर लचकते हुए उसने झटका देकर बाल कन्धों पर बिखेर लिये। वास्कोव दुबारा भय की जकड़ में आ गया—झाड़ियों के पीछे से अब गोली चलेगी और चमकती-दमकती इस नौजवान कंचन काया को छलनी कर जायेगी।

अपने गोरे-गोरे बदन के चपल प्रदर्शन के बाद उसने अंगिया के नीचे से अपनी गीली जाँघिया उतार डाली और पानी निचोड़कर

पत्थर पर सूखने डाल दी। टाँगें फैलाकर वह नीचे बैठ गयी और जमीन तक लटकते बालों को धूप में सुखाने लगी।

दूसरा किनारा ख़ामोश था और ख़ामोश रहा। कोई झाड़ी तक न काँपी। आँखें फाड़-फाड़कर देखने के बावजूद वास्कोव तय नहीं कर पाया कि जर्मन गये या यहाँ थे? और पहेली सुलझाने का वक़्त था नहीं, सो, जल्दी से ट्यूनिक उतार और पतलून की जेब में पिस्तौल ठूँसकर, भयानक शोर मचाता, आवाज़ लगाता वह तट की ओर चल पड़ा:

"ऐ, कहाँ हो तुम?"

वह अपनी आवाज़ उल्लासमय और भय-रहित बनाना चाहता था लेकिन किसी चीज़ ने उसका गला जकड़ लिया था। अब वह खुले में था और झाड़ियाँ पीछे—भय के मारे उसका कलेजा मुँह को आ रहा था। कोमेलकोवा के पास आकर वह बोला:

"अभी-अभी शहर से फोन आया है। लॉरी किसी भी पल यहाँ आने वाली है। बहुत कर लिया धूप-स्नान। चलो, कपड़े पहनो।"

दिखाने को वह चीख़-चीख़कर बोल रहा था और उसका एक भी जवाब उसे सुनाई ही दिया। जर्मनों के वहाँ, झाड़ियों में होने के कारण वह इतना अधिक तनावपूर्ण और सचेत था, वह उन्हें अनदेखा नहीं कर पा रहा था। वह उनकी उपस्थिति के प्रति इतना सचेत था कि उसे किसी पत्ते के हल्के से कंपन को भी सुन लेने का यक़ीन था और अगर कभी ऐसा हुआ तो वह इसी गोलाश्म के पीछे गिरकर, पिस्तौल निकाल लेगा। लेकिन कहीं कोई कंपन न हुआ।

हाथ पकड़कर कोमेलकोवा ने उसे नीचे खींच लिया और वह उसकी बग़ल में जा रहा। तभी अचानक उसने देखा कि वह मुस्करा तो रही थी लेकिन उसकी आँखें भय-विस्फारित थीं। भय साकार उसकी आँखों से झाँक रहा था।

"यहाँ से चल पड़ो, कोमेलकोवा," वास्कोव ने भरसक मुस्कराते हुए कहा।

वह बोलती रही, हँसती रही लेकिन वास्कोव को अभी भी कुछ सुनाई नहीं दे रहा था। उसे वहाँ से, झाड़ियों के बीच से उसको ले जाना था और फौरन ही। जर्मनों की गोली से उसके प्राणांत की

राह देखते, वह वहाँ खड़ा नहीं रह सकता था। लेकिन जर्मनों को बेवक़ूफ़ बनाते हुए, यह काम विनोदपूर्वक निबटाने के लिए उसे फौरन ही कुछ सोचना था।

"तो भले ढँग से तुम समझने को तैयार नहीं। अच्छी बात है, मैं लड़कों को तुम्हारा यह रूप दिखा देता हूँ!" हठात चीखकर उसने गोलाश्म पर से कोमेलकोवा के कपड़े खींच लिये। "अब ज़रा पकड़ो तो मुझे!"

आशानुरूप ही कोमेलकोवा किलकारी भरते हुए उछल खड़ी हुई और उसके पीछे-पीछे दौड़ पड़ी। वास्कोव बड़ी दक्षता के साथ पहले तो नदी के किनारे दौड़कर उसे चरका देता रहा, फिर झाड़ियों में खिसक कर वहाँ जा रुका जहाँ उपवन शुरू होता था।

"बहुत अच्छा, अब अपने कपड़ पहन लो, कोई हद होनी चाहिये, बहुत खेल चुकी आग से!"

उसकी ओर देखे बिना स्कर्टवाला हाथ उसने बढ़ा दिया; लेकिन कोमेलकोवा ने उसे लिया नहीं और उसका हाथ यूँ ही बीच हवा में टँगा का टँगा रहा। उसे गाली देने की इच्छा हुई लेकिन जब उसने मुड़कर देखा, प्राइवेट कोमेलकोवा ज़मीन पर दुहरी-सी दुबकी थी, हाथ चेहरे पर थे, उसके गोल कन्धे अंगिया के संकरे फ़ीतों में फूल-पिचक रहे थे...

उसके बाद वे ख़ूब हँसते रहे। जब उन्हें मालूम हुआ कि जर्मन सचमुच लौट गये थे, वे ओस्यानिना पर हँसते रहे जिसका गला चीख़ते-चीख़ते बैठ गया था, गुरविच पर हँसे जिसके स्कर्ट में जलने के कारण छेद हो गया था, कालिख व कीचड़ से काली पड़ी चेतवेर्ताक पर और कोमेलकोवा पर हँसे, किस तरह उसने जर्मनों को बेवक़ूफ़ बनाया था और ख़ुद सार्जेंट-मेजर वास्कोव पर। हँसते-हँसते उनकी आँखों में आँसू आ गये, वे बेहाल हो गयीं और ख़ुद वास्कोव भी हँसता रहा। वह अचानक ही भूल गया था कि सार्जेंट मेजर है। उसे बस इतना ही याद था कि उन्होंने जर्मनों को बवक़ूफ़ बनाया था, वह भी बड़े दुस्साहस के साथ और जर्मन भयभीत व चिन्तित थे, अब उन्हें लेगोन्तोव झील का चौबीस घण्टे का चक्कर लगाना पड़ेगा।

"भई, यह बात हुई!" हँसी के ठहाकों के बीच वास्कोव बोला।

"खूब, लड़कियो, ख़ब! अब वे, निस्सन्देह, बच कर नहीं निकल सकते–लेकिन हाँ, अगर ब्रिवकिना ठीक समय पर आ पहुँची तो।"

"ज़रूर पहुँचेगी वह, चिन्ता न कीजिये," ओस्यानिना भर्रायी आवाज़ में बोली और सब के सब दुबारा ठठाकर हँस पड़े। उसकी आवाज़ ही ऐसी हँसानेवाली थी। "वह अच्छी धावक है।"

"तुम्हारे मुँह में घी-शक्कर तो हो जाये इसी बात पर एक-एक जाम!" मेहनत से संजोये फ़लास्क को निकालते हुए वास्कोव ने कहा। "पेश है, उसके तेज़ क़दमों के और तुम्हारे चतुर दिमाग़ों के नाम पर, लड़कियो!"

सब व्यस्त हो गयीं। पत्थर पर उन्होंने एक तौलिया बिछा दिया, डबल रोटी और सूअर के गोश्त और मछली के टुकड़े किये। और जब तक वे इन औरताना कामों में लगी रहीं, मर्दों की तरह सार्जेंट-मेजर कुछ दूर पर बैठा धूम्रपान करता रहा। जब इन्हों ने उसे भोजन के लिए बुलाया, मन ही मन थकान के साथ "बला टली" कहते हुए, वह उठ खड़ा हुआ...

७

लीज़ा ब्रिचकिना के १९ वर्ष कल की आस लगाये ही बीते थे। हर सुबह वह आनेवाले गहन सुख की तीव्र प्रत्याशा महसूस करती और तभी माँ की थकानभरी, क्षयकारी खाँसी की आवाज़ बीच में विघ्न डाल देती और सुख के साथ यह आँखमिचौली वह दूसरे दिन तक के लिए स्थगित कर देती। इससे उसकी प्रत्याशाएँ मर-मिट नहीं जातीं –सिर्फ़ स्थगित हो जातीं।

"माँ अब ज्यादा दिन नहीं बचेगी," बाप निर्ममतापूर्वक उसे सचेत करता।

पाँच वर्ष तक हर दिन वह इन्हीं शब्दों से उसका स्वागत करता रहा। लीज़ा बाहर प्रांगण में चली जाती–सूअर, भेड़ और बूढ़े घोड़े को चारा देती। बूढ़ा घोड़ा पिता को काम के लिए लिया था। फिर माँ को धो-पोंछ, कपड़े बदलाकर चम्मच से खाना खिलाती। वह खाना पकाती, मकान की सफ़ाई करती, गाँव की सबसे पास की

दुकान से रोटी लाती; पिता के जंगली इलाक़ों की वह देखभाल भी करती। दूसरी लड़कियाँ और उसकी सहेलियाँ भी, सब की सब स्कूल की पढ़ाई ख़त्म कर चुकी थीं, कुछ आगे पढ़ाई करने कहीं और चली गयी थीं, कुछ की शादी हो गयी थी लेकिन लीज़ा बस अपने ही चक्कर में उलझी रही–वही रोज़-रोज़ खाना खिलाने, धुलाई करने, झाड़ू-पोंछा करने और दुबारा फिर खाना खिलाने में। एक बात और, अपने दमकते कल की आस उसने कभी नहीं छोड़ी।

उसका यह दमकता कल, उसके दिमाग़ में कभी भी माँ की मौत से नहीं जुड़ पाया था। माँ कभी स्वस्थ रही हो, अब तो उसे इसकी याद भी न थी। इसके अलावा, वह जीवन से कुछ इस क़दर भरपूर थी कि मौत का ख़्याल भी उसके दिमाग़ में नहीं आ सकता था।

मृत्यु के विपरीत, हालाँकि जिसकी याद उसका बाप बिना चूके खिन्नता से दिलाया करता था, जीवन उसके लिए एक ऐसी धारणा थी जो सच और वास्तविक थी। जीवन गौरवशाली कल में कहीं छुपा था; चाहे भले ही वह अब तक वनप्रान्त के उस हिस्से से कतराता रहा हो, इसके मीलों पास नहीं फटका हो। लीज़ा पक्के तौर पर जानती थी, जीने योग्य जीवन होता है और उस जीवन में उसका भी हिस्सा है। शायद वह उससे वंचित न रहेगी–बस उसे अपने कल की प्रतीक्षा थी। और वह धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करती रही थी।

चौदह साल की आयु से लीज़ा ने औरतों की प्रतीक्षा करने की यह महान कला सीखनी शुरू कर दी थी। माँ की बीमारी से मजबूर हो स्कूल छोड़ने पर, सबसे पहले वह अपनी कक्षाओं में लौटनेवाले दिन की प्रतीक्षा करती रही और बाद में ऐसी इक्की-दुक्की शाम की प्रतीक्षा करने लगी जब क्लब के पास की हरियाली में वह बैठ सके और फिर...

और फिर, बाद में उसे अचानक ही पता चला कि अब आगे देखने को, प्रतीक्षा करने को कुछ बचा ही न था। उसकी सहेलियाँ या तो पढ़ रही थीं या काम करने लगी थीं। सब अपने-अपने कामों में व्यस्त, उससे काफ़ी दूर जा बसी थीं। जिन लड़कों के साथ क्लब में फ़िल्म शुरू होने से पहले मज़ाक़ करते समय बिताना कभी इतना आसान और सीधा-सा था, अब वे बदले से, खिंचे से और उस पर

हँसते से प्रतीत होते थे। लीज़ा अब उनके साथ से कतरा जाती, उनकी मौजूदगी में ख़ामोश रहती, उनकी हँसी-ख़ुशी भरी भीड़ से दूर रहने की कोशिश करती और बाद में तो उसने क्लब जाना एकदम बन्द ही कर दिया।

उसका बचपन गया और उसके साथ ही, उसकी पुरानी दोस्तियाँ भी ख़त्म हो गयीं। अब वह एकदम बिना मित्रों की थी क्योंकि उसके घर की तेलही लैम्प की रोशनी निष्ठुर बूढ़े वन-अधिकारियों के अलावा किसी को आकृष्ट नहीं कर पाती थी। लीज़ा कड़वाहट और भय महसूस करती–न जाने उसके बचपन की जगह क्या आनेवाला है। जाड़ा बीत गया, लीज़ा भ्रम में डूबी और किसी अनजान वस्तु की उत्कंठा में खोयी रही। वसन्त में उसका बाप एक शिकारी के साथ आया।

"कुछ समय के लिए यह हमारे साथ ठहरने की सोच रहा है," उस ने अपनी बेटी को बताया, "लेकिन हम उसे ठहरा कहाँ सकते हैं? माँ मर रही है।"

"घासवाली दुछत्ती के बारे में क्या ख़्याल है?" आगन्तुक ने सुझाया।

"लेकिन अभी भी ठण्ड कम नहीं है?" हिचकिचाते हुए लीज़ा बोल उठी। "क्या मुझे भेड़ की खालवाला कोई कोट मिल सकता है?"

पिता और अतिथि रसोई में बैठकर काफ़ी देर तक वोद्का पीते रहा। तख़्तीवाली दीवार के पास से बुरी तरह माँ के खाँसने की आवाज़ आ रही थी। लीज़ा नीचे तहख़ाने में जाकर गोभी ले आयी और अण्डे तलती फिर उन दोनों की बातें सुनने लगी।

अधिकतर पिता ही बोल रहे थे। वह एक के बाद एक वोद्का का गिलास गले से नीचे उतारते जाते और भुनी गोभी को अंगुलियों से भींच कर दाढ़ीदार मुँह के अन्दर ठूंस लेते। और मुँह भरे ही भरे बोलते भी जाते:

"एक मिनट रुको, इतनी तेज़ी से नहीं, प्यारे। जीवन जंगलों की तरह है, इसकी निराई-सफ़ाई होनी चाहिये, घास-पात से मुक्त। क्या तुम सहमत नहीं? इतनी तेज़ी नहीं, बहुत-सी सूखी लकड़ी है, रुग्ण वृक्ष हैं, झाड़ियाँ हैं, क्यों, हैं या नहीं?"

"हाँ, इसकी सफ़ाई होनी चाहिये," अतिथि, ने सहमति जतायी। "निराई नहीं, इसकी छँटाई होनी चाहिये बेकार की घास-पात पर कोई रहम नहीं।"

"ठीक," लीज़ा का पिता बोला। "मैं सहमत हूँ। लेकिन इतनी तेज़ी से नहीं। हम वनअधिकारी जानते हैं, जंगलों के बारे में क्या किया जाये। जहाँ तक जंगलों का सवाल है, दिन के उजाले-सा यह स्पष्ट है। लेकिन अगर जीवन की बात हो तो–ज़िन्दा, साँस लेता, चलता, और रोता?"

"हाँ, जैसे कि एक भेड़िया," अतिथि ने यूँ ही मज़ाक़ से कहा।

"भेड़िया?" पिता आपे से बाहर हो गये। "भेड़िये ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? भेड़ियों से क्या शिकायत है तुम्हारी? चलो, ज़रा बताओ तो मुझे!"

"भेड़िये के दाँत होते हैं," अतिथि मुस्कराया।

"क्या भेड़िये में जन्म लेना कोई दोष है? बताओ, दोष दिया जा सकता है? नहीं, प्यारे, यह हम हैं जिन्होंने दोष भेड़ियों पर मढ़ दिया है। और ऐसा करते हुए, हमने उनसे सलाह भी न ली। क्या यह न्याय है?"

"अब, देखिये, इवान पेत्रोविच, भेड़िया और न्याय, दो अलग-अलग चीज़ें हैं। बेमेल।"

"बेमेल?... भेड़िये और खरहे के बारे में क्या ख़्याल है–क्या वे मेल खाते हैं? दाँत निपोरना बन्द करो। ठीक है, हमें आबादी के दुश्मनों के रूप में भेड़ियों पर नज़र रखने कहा गया है–ऐसा आदेश है। इसलिए हम रूस भर में सारे भेड़ियों को मारे डाल रहे हैं। एक-एक को। और परिणाम क्या होगा?"

"परिणाम?" शिकारी मुस्कराया। "हमें ख़ूब सारा शिकार मिल जायेगा।"

"इसका उल्टा होगा!" पिता ने चिड़चिड़ाकर कहा और भयानक आवाज़ के साथ अपना बालदार घूँसा मेज़ पर पटका। "मैं कहता हूँ, हमें तनिक भी शिकार नहीं मिलेगा! हम जिनका शिकार करते हैं, उन सब जानवरों को स्वस्थ रखने के लिए दौड़ते रहना चाहिये। दौड़ते हुए, मेरे प्यारे, सुन रहे हो न? और उन्हें दौड़ाते रहने के लिए उनमें भय पैदा करना चाहिये, उन्हें इस बात से डरना चाहिये कि किसी भी पल उन्हें मार के खा डाला जा सकता है। हाँ, निस्सन्देह, तुम जीवन को किसी भी एक रंग में ढाल दे सकते हो। यह संभव है। लेकिन क्या हमें ऐसा करना चाहिये? किस लिए – एक

संघर्ष को कम करने के लिए? फिर क्या होगा? मोटे और आलसी खरहे भेड़ियों के न रह जाने पर अपना कर्त्तव्य-पालन छोड़ देंगे। फिर क्या होगा? क्या हम नये भेड़िये पैदा करेंगे या जानवरों को व्यवस्थित रखने के लिए थोड़े से बाहर के देशों से मँगायेंगे?"

"अब आप ज़रा बताइये तो, कहीं आपको कुलक तो नहीं क़रार दिया गया है?" अतिथि ने बड़ी ख़ामोशी से इवान पेत्रोविच से पूछा।

"मुझे और कुलक?" वन-अधिकारी ने आह भरी। "मेरे पास जायदाद ही कौन-सी है—मेरे दो कुलक हैं, मेरे दोनों हाथ मेरी बीवी और बेटी। मुझे कुलक कहकर उन्हें कोई लाभ नहीं होने को।"

"उन्हें?"

"हाँ, ठीक है, वही, हम! ..." गिलासों में थोड़ी वोद्का डालकर पिता ने अतिथि से टकराया। "मैं भेड़िया नहीं हूँ, प्यारे, मैं खरहा हूँ।" बाक़ी गिलास एक घूँट में ख़ाली करके उन्होंने मेज़ पर रख दिया फिर भोड़े ढँग से, भालू की तरह वह उठ खड़े हुए। दरवाज़े के पास रुककर वह बोले:

"मैं सोने चला। मेरी बेटी तुम्हें जगह दिखा देगी।"

लीज़ा चुपचाप कोने में बैठी थी। शिकारी शहरी आदमी था, नौजवान, मजबूत व सफ़ेद दाँतोंवाला। वह उसकी ओर मंत्र-मुग्ध सी देखे जा रही थी। हाँ, इतनी चौकसी ज़रूर रख रही थी कि जब वह उसकी ओर देखता, वह दूसरी ओर देखने लगती। वह उससे नज़र मिलाने में डर रही थी। वह डर रही थी कि वह कुछ बात शुरू कर दे और जवाब देना उसके लिए कठिन हो जाये या कोई बेवक़ूफ़ी भरी बात ही कहीं वह बोल दे।

"तुम्हारे पिता बातचीत में बड़े लापरवाह हैं।"

"वह अनियमित सैनिक थे, कम्युनिस्ट," वह जल्दी से बोली।

"हमें मालूम है," मुस्कराता हुआ वह आदमी उठ खड़ा हुआ। "अच्छा, लीज़ा, बताओ मैं कहाँ सोऊँ।"

भूसाघर में तहख़ाने-सा अंधेरा था। लीज़ा दरवाज़े पर हिचकिचा उठी, फिर अतिथि के हाथों से भारी कोट और तकिया लेते हुए बोली:

"आप यहीं रुकिये ज़रा।"

वह कमज़ोर सीढ़ियों से ऊपर गयी, घास को इधर-उधर बिखेरकर तकिया उसने नीचे पटक दिया। अब वह नीचे जाकर अतिथि को आवाज़ दे सकती थी, लेकिन ऐसा करने के बदले वह घुटनों के बल घुप्प अन्धेरे में पिछले साल की पड़ी घास पर चलकर उसे ज्यादा आरामदेह बनाते हुए फैलाने लगी। सारे समय उसने कान खड़े कर रखे थे। मन में वह कभी क़बूल नहीं कर सकती थी कि वह उस आदमी के पैरों तले चरमराती सीढ़ियों की आवाज़ सुनने की प्रतीक्षा कर रही थी कि अन्धेरे में अनाड़ीपन से भरा हड़बड़ाया-सा सान्निध्य, उसकी साँस, उसकी बुदबुदाहट या फिर कठोर स्पर्श की प्रतीक्षा उसे थी। नहीं, उसके दिमाग़ में पाप भरा कोई भी विचार न था: बस वह इतना ही चाहती थी कि उसके दिल की धड़कनें अचानक ही ख़ूब ज़ोर-ज़ोर से चलने लगें, जिससे किसी अस्पष्ट संकेत का आभास हो, कोई ऐसी चीज़ जो गर्म हो, जलानेवाली हो, कोई ऐसी चीज़ जो पल भर में कोई संकेत दे और अगले ही पल लुप्त हो जाये। लेकिन चरमराने की कोई भी आवाज़ सुनायी न दी और लीज़ा नीचे चली आयी। दरवाज़े पर खड़ा होकर अतिथि धूम्रपान कर रहा था। लीज़ा ने रूखेपन से कहा कि उसे घास में सिगरेट पीने की बात भी नहीं सोचनी चाहिये।

"मैं जानता हूँ," उसने कहा और सिगरेट का टुकड़ा जमीन पर फेंककर पाँव से रौंद दिया। "शुभ रात्रि।"

वह सोने के लिए ऊपर चला गया और लीज़ा सफ़ाई करने घर में दौड़ गयी। आज सफ़ाई करते हुए, वह आम दिनों से ज्यादा चौकस थी, धीरे-धीरे हर प्लेट को वह रगड़कर धो रही थी। उसके कान दरवाज़े पर लगे थे—भय और आशा के साथ। अब वह आदमी आयेगा और खिड़की पर दस्तक देगा। लेकिन दस्तक की कोई आवाज़ न आयी। बत्ती बुझाकर लीज़ा अपने बिस्तरे पर सोने चली गयी—कानों में माँ के खाँसने की परिचित आवाज़ और नशे में धुत्त पिता के ज़ोर-ज़ोर से खर्राटे लेने की आवाज़ सुनाई दे रही थी।

हर सुबह अतिथि ग़ायब हो जाता और रात देर गये वापस लौटता—भूखा, थका। लीज़ा उसे भोजन देती और वह खा लेता—जल्दी-

जल्दी लेकिन लालचियों की तरह नहीं और यह बात उसे बड़ी पसन्द आती। खाना खाने के फौरन बाद अतिथि घासवाली दुछत्ती पर चला जाता। लीज़ा वहीं घर में रहती क्योंकि अब उसे उसके लिए बिस्तर ठीक करने की कोई ज़रूरत न थी।

"यह कैसी बात है कि आप शिकार से कुछ भी लेकर नहीं आते?" एक दिन साहस करके वह पूछ बैठी।

"भाग्य में ही नहीं," वह मुस्कराया।

"आप दुबले भी हो गये हैं," वह आगे बोली, उसकी ओर देखे बिना। "आप भला इसी को छुट्टियाँ कहते हैं?"

"मैं बहुत अच्छी तरह छुट्टियाँ बिता रहा हूँ, लीज़ा," अतिथि ने गहरी साँस छोड़ते हुए कहा। "बदक़िस्मती से, अब ख़त्म होनेवाली है: कल मैं जा रहा हूँ।"

"कल?..." सिर झुकाये ही उसने उदासी से दुहरा दिया।

"हाँ, सुबह में। और मैं बिना एक भी शिकार किये जा रहा हूँ। है न अजीब बात?"

"हाँ, अजीब तो है," वह दुखी आवाज़ में बोली।

बस उनमें इतनी ही बात हुई लेकिन वह घर से जैसे ही बाहर निकला, लीज़ा जल्दी-जल्दी रसोई को साफ़-सुथरा कर आँगन में खिसक आयी, काफ़ी देर तक वह अटारी के इर्द-गिर्द चक्कर लगाती, उस आदमी को खखारकर गला साफ़ करते सुनती रही। फिर दाँतों तले नाख़ून कुतरते हुए उसने बड़ी तेज़ी से और चुपके से बखार का दरवाज़ा खोल दिया मानो उसे डर हो कि वह कहीं अपना विचार न बदल दे। फिर सीढ़ियों से ऊपर चढ़ गयी।

"कौन है?" उसने शांतिपूर्वक आवाज़ दी।

"यह मैं हूँ," लीज़ा बोली। "क्या मैं आपका बिस्तर ठीक कर दूँ?..."

"यह तो ठीक ही है," वह बीच में बोल उठा। "तुम सोती क्यों नहीं?"

लीज़ा चुप रही, घास की अटारी के दमघोंट अन्धेरे में वह उसके बहुत क़रीब बैठी थी। उसे लीज़ा की साँस लेने की आवाज़ सुनाई दे रही थी हालाँकि वह उसे रोके रहने की भरसक कोशिश कर रही थी।

"देखो, जीवन बहुत ख़ुशी भरा नहीं, है न?"

"इस में क्या शक है," उसका जवाब मुश्किल से सुनाई दिया।

"इसके बावजूद इनसान को बेवक़ूफ़ी नहीं करनी चाहिये।"

लीज़ा को लगा, वह मुस्करा रहा था। उसे ख़ुद पर घृणा हो आयी, उसे उस पर और ख़ुद पर ग़ुस्सा आया – लेकिन फिर भी वहाँ रुकी रही। न तो वह यहाँ रुकने का, न तो यहाँ आने का कारण बता सकती थी। जीवन भर वह अकेली रही थी, कभी शायद रोयी भी न थी, उसे अकेलापन की आदत पड़ गयी थी लेकिन इस समय उसे दुनिया में सबसे ज्यादा कुछ पाने की इच्छा हो रही थी तो सहानुभूति की। वह स्नेह के शब्द सुनना चाहती थी, वह चाहती थी कोई उसका सिर थपथपाये, वह सान्त्वना चाहती थी और – चाहे भले ही वह क़बूल न कर पाये – वह चाहती थी कि कोई उसे चूम ले। पाँच साल पहले उसकी माँ ने चुम्बन लिया था और अब वह चाहती थी कि कोई उसे उस अद्‌भुत कल के कौल के लिए चूमे जिस वास्ते वह अब तक जीती आयी थी।

"जाओ, अब सो जाओ," उसने कहा। "मैं थका हूँ और मुझे सबेरे ही चल देना चाहिये।"

उसने जंभाई ली – किसी अनासक्त व्यक्ति की तरह ज़ोरदार और लम्बी। अपने होंठ चबाती, लीज़ा जल्दी-जल्दी नीचे उतर गयी। उसे घुटने में ज़बर्दस्त चोट भी लगी फिर भी दौड़ती हुई आँगन में पहुँचकर उसने फटाक से दरवाज़ा बन्द कर दिया।

सुबह में उसे पिता के घोड़ा कसने की आवाज़ सुनाई दी, उसने अतिथि द्वारा माँ से विदा लेने की आवाज़ सुनी; उसे फाटक की चरमराहट भी सुनाई दी। नीन्द का बहाना बनाये, वह लेटी रही और उसकी बन्द पलकों के तले से आँसू धीमे-धीमे बहते रहे।

दिन के भोजन के समय पिता थोड़ा पीये हुए वापस आये। चीनी के कुछ नीले-नीले दाने उन्होंने मेज़ पर टोपी से गिरा दिये जो खड़-खड़ करते मेज पर बिखर गये। "हाँ, भई," उन्होंने कहा, "हमारा अतिथि तो सचमुच बड़ा आदमी निकला। उसने हमें चीनी देने का आदेश दिया। ज़रा सोचो, लगभग साल होने को आया, जब हमने अपनी दुकान में चीनी देखी थी। और यह रही – तीन किलो चीनी!"

जेबें थपकाता, वह ख़ामोश हो गया, फिर तम्बाकू की थैली से उसने एक मुड़ा-तुड़ा काग़ज़ का टुकड़ा निकाला और कहा:

"यह तुम्हारे लिए है!"

"तुम्हें पढ़ना ज़रूर चाहिये, लीज़ा। जंगल में रहते-रहते तो तुम जंगली हो जाओगी। अगस्त में यहाँ आ जाओ और तकनीकी स्कूल में तुम्हें दाख़िल होने में मैं मदद करूँगा। तुम छात्रावास में रह सकती हो।"

काग़ज़ पर हस्ताक्षर और एक पता था। और कुछ भी नहीं, अभिवादन तक नहीं।

एक महीने बाद उसकी माँ मर गयी। अधिकांश समय चुप और उदास रहनेवाले उसके पिता वास्तव में ही बदमिज़ाज हो गये। लगातार शराब पीते रहते। पहले की तरह लीज़ा गौरवशाली कल का सपना देखती रही लेकिन बड़ी चौकसी से पिता के शराबी साथियों के लिए अपना दरवाज़ा बन्द ही रखती। अब उसका गौरवशाली कल बड़ी दृढ़ता के साथ अगस्त के महीने से जुड़ गया था। और दीवार की दूसरी ओर से शराबख़ोरों की आवाज़ें सुनती लीज़ा अब ख़स्ता हो गये उस काग़ज़ को एक या दो बार नहीं हज़ारों हज़ार बार पढ़ती।

तभी युद्ध छिड़ गया और शहर जाने की जगह लीज़ा सुरक्षात्मक कामों में लग गयी। सारी गर्मी उन खाइयों और तोपमार मोर्चों को बनाने में लग गयी जिन्हें नजरअंदाज़ कर जर्मनों के लिए गुज़रना टेढ़ी खीर हो। उसने ख़ुद को जर्मनों की पकड़ से बच जानेवालों के बीच, बार-बार खाइयाँ खोदते और पूर्व की ओर अधिकाधिक आगे बढ़ते पाया। पतझड़ के आख़िर तक वह वल्दाइ पहाड़ियों के पार कहीं थी, फिर उसने ख़ुद को हवामार टुकड़ी में पाया और तभी तो इस समय वह छावनी नम्बर १७१ की ओर दौड़ी चली जा रही थी...

लीज़ा को वास्कोव शुरू से ही रुच गया था, जब उसने उसे अपने होश पर क़ाबू पाने की कोशिश करते, नीन्द भरी आँखें झपकाते अपनी क़तार के पास खड़ा देखा था। वह मितभाषी था, जल्दबाज़ी उसे आती नहीं थी—यह उसकी एक जन्मजात विशेषता थी। बेशक, वह खेतिहर परिवार का था; और हाँ, उसमें वह मर्दानगी व विश्वसनीयता

भी थी जो औरतों को हमेशा भाती है—यह ऐसी चीज़ थी जिसे पारिवारिक सुख की गारंटी समझी जा सकती थी। लेकिन हुआ यह कि सारी लड़कियाँ कमांडेंट के नाम पर मज़ाक़ उड़ाने लग गयीं — यह आम बात हो गयी। लीज़ा ने मज़ाक़ उड़ानेवाली इस चुहल में कोई हिस्सा न लिया और जब सर्वज्ञा किर्यानोवा ने हँसी-हँसी में कहा कि कमांडेंट अपनी मकान-मालकिन के रूप जाल का शिकार हो गया है, लीज़ा एकाएक ही लाल होते हुए बोल उठी:

"यह झूठ है!"

"अरे, यह तो प्रेम में पड़ गयी है!" इतराते हुए किर्यानोवा बोल उठी। "अरे इश्क़ में पड़कर एकदम पागल ही बन गयी है, हमारी ब्रिचकिना, लड़कियो! वह अपना दिल सैनिक को दे बैठी है!"

"बेचारी लीज़ा!" नाटकीय आह भरते हुए गुरविच बोली।

बड़ा गुल-गपाड़ा मचा, सबने हँसना-बतियाना शुरू कर दिया और लीज़ा के आँसू फूट पड़े। वह दौड़कर जंगल में भाग गयी।

जब तक रीता ओस्यानिना ने उसे ढूँढ़ नहीं निकाला, पेड़ के एक ठूँठ पर बैठी वह रोती रही।

"अरे, अरे, मूरख! तुम्हें इतना परेशान होने की क्या ज़रूरत है, जैसे पेश आता है, जीवन को वैसे ही लेना चाहिये, समझी?"

लेकिन लीज़ा ऐसा नहीं कर सकती थी, वह अपनी अत्यन्त लज्जा में घुटती रही और सार्जेंट-मेजर यानी कमांडेंट हमेशा अपने काम में व्यस्त रहा। और यहाँ, यह मौक़ा न मिलता तो शायद उन्होंने एक-दूसरे की ओर ठीक से देखा भी न होता। तभी तो लीज़ा जंगलों के बीच सरपट भागी जा रही थी मानो पंख लगे हों।

"बाद में हम साथ-साथ गीत गायेंगे, मैं और तुम, लिज़ावेता," सार्जेंट-मेजर ने कहा था। "हम अपना काम ख़त्म कर लेंगे और गीत गायेंगे।..."

उसके शब्दों पर सोचती-विचारती, लीज़ा अपने आप मुस्करा उठी —जब-तब अन्दर ही अन्दर स्पन्दित करनेवाली उस शक्तिशाली, रहस्यमय अनुभूति से व्याकुल होकर जो लाज की सुर्ख़ी बनकर उसके गालों पर आ-जा रही थी। इन अनुभूतियों में खोयी, वह अपनी पहचानवाले ऐस्प वृक्ष को पार कर गयी। उसे इसका ख़याल तभी

आया, जब उसने पैरों तले पिलपिली ज़मीन महसूस की। लेकिन उसने दुबारा न लौटने का फ़ैसला किया। वहाँ गिरे बहुत से पेड़ और उनकी शाखाएँ थीं। उसने काम आने लायक़ एक टुकड़ा जल्दी से चुन लिया।

दलदल पार करने से पहले वह रुकी, कान लगाकर आवाज़ें सुनती रही फिर बड़ी तेज़ी से और कारोबारी ढँग से अपना स्कर्ट उसने उतार डाला। डण्डे के ऊपरी सिरे पर उसे बाँधकर उसने बेल्ट और स्कर्ट ठीक किया और सेना की नीली जाँघिया ऊपर करके वह दलदल में घुस आयी।

इस बार कोई भी राह दिखानेवाला, कीचड़ में पदचिह्न छोड़ते जानेवाला न था।

गीला, लिजलिजा कीचड़ उसके नितम्बों में चिपक गया, उसके पीछे-पीछे घिसटता गया और लीज़ा हाँफती, भारी-भारी साँसें लेती एक-एक इंच करके, क़दम-ब-क़दम आगे बढ़ती गयी—बर्फ़-से ठण्डे पानी में ठिठुरती और छोटे-से द्वीप के दोनों बौने वृक्षों पर आँखें टिकाये।

लेकिन न तो कीचड़, ठण्ड और न तो ज़िन्दा, पैरों तले साँस लेती-छोड़ती दलदल उतनी भयावह थी जितनी कि अन्धेरी, मनहूस दलदल के ऊपर छायी मौत-सी, नारकीय ख़ामोशी और निर्जनता। लीज़ा लगभग पाशविक भय की जकड़ में थी, ऐसे भय की जकड़ में जो उसे छोड़ने के बजाय हर क़दम पर अधिक शक्तिशाली होता जा रहा था और वह निस्सहाय, कारुणिक रूप में काँप रही थी। वह कन्धे के पीछे देखने, ज़रा-सा भी इधर-उधर हिलने डोलने या गहरी साँस लेने में भी भय खा रही थी।

वह द्वीप तक कैसे पहुँची, उसे याद न था। हाथों और घुटनों के सहारे रेंगकर वह ठोस ज़मीन पर पहुँची और सड़ती घास पर मुँह के बल गिर, फूट-फूटकर रो पड़ी। वह रुदबती रही—अपने गुदगुदे गालों से आँसू पोंछती, ठण्ड, निर्जनता और बेक़ाबू होते भय से काँपती।

जब वह पैरों पर उठ खड़ी हुई तब भी उसकी आँखों से अश्रु-धारा प्रवाहित हो रही थी। रास्ता न भूलने की भरपूर कोशिश करती, नाक सुड़कती वह छोटा-सा द्वीप पार कर गयी और मिनट भर भी चैन

लिये बिना, अपनी शक्ति फिर से बटोरे बिना, वह सीधे दलदल में घुस गयी।

पहले यह ज़्यादा गहरी न थी। इससे लीज़ा को शान्त होने और आशा महसूस करने का समय मिला। अब उसकी यात्रा आख़िरी मंज़िल पर थी और यह चाहे जितनी भी कठिन हो, इसके अन्त में वह सूखी, ठोस और घास व पेड़वाली परिचित ज़मीन पर होगी। लीज़ा के विचार नहाने-धोने की ओर मुड़ गये और उसके दिमाग़ में वे सारे तालाब घूम गये जो उसे याद थे। साथ में वह इस उधेड़बुन में भी थी कि वह अपने कपड़े पहले धो ले या छावनी पहुँचने तक इन्तज़ार कर ले। आख़िर, अब छावनी दूर ही कितनी थी, सारे मोड़ों के साथ सड़क उसे अच्छी तरह याद थी और घंटे-डेढ़ घंटे में उसे अपने लोगों के बीच पहुँच जाने का पक्का विश्वास था।

चलना और भी कठिन हो गया था। लथपथ कीचड़ में घुटने भर धँसी वह कठिनाई से चल पा रही थी लेकिन हर क़दम के साथ दूसरा किनारा क़रीब आता जा रहा था, लीज़ा अब उसे साफ़-साफ़ देख सकती थी—वहाँ रहा वह ठूँठ जहाँ से पिछली बार सार्जेंट-मेजर दलदल में कूद पड़ा था। कैसी हास्यास्पद, भोंड़ी कुदान थी वह—बेचारा अपना सन्तुलन खो बैठा था।

लीज़ा के विचार एक बार फिर वास्कोव की ओर मुड़ गये और अब वह मुस्करा रही थी। अब उसे अपने गाने का पूरा विश्वास हो चला था जब कमांडेंट अपना काम पूरा कर लेगा और वे छावनी लौट आयेंगे। बस उसे थोड़ी-सी चालाकी बरतनी होगी; शाम को उसके साथ जंगल में निकल पड़ने की कोई तरकीब लड़ानी होगी। फिर···अरे, तो फिर, यह स्पष्ट हो जायेगा कि जीत किसकी होगी—उसकी या वास्कोव की, मकान-मालकिन की। मकान-मालकिन के प्रति उसका आकर्षण तो सिर्फ़ इस कारण है कि दोनों एक ही छत के नीचे रहते हैं···

गड़प की बहुत ज़ोरदार आवाज़ के साथ उसके एकदम पास ही एक बहुत बड़ा गेरुआ रंग का बुलबुला फट पड़ा। यह इतना अचानक, उसके इतना क़रीब और इतनी तेज़ी से उठा व फटा कि वह चीख़ सके, इससे पहले ही सहज प्रेरणावश वह दूर छिटक गयी। वह छिटकी

तो बस एक ही क़दम भर थी लेकिन उसके पाँव फौरन ही उखड़ गये और किसी डाँवाडोल रिक्तता में छितरा गये। उसके कूल्हे कीचड़ की लथपथ जकड़ में थे। दिमाग़ के किसी कोने में पनपता भय अब पूरी तरह उस पर छा गया था, उसके हृदय को अपने चंगुल में जकड़ता। पैरों पर दुबारा खड़ी हो कर रास्ता ढूंढ़ने की कोशिश में वह पूरे बोझ के साथ डण्डे पर झुक गयी। सूखा डण्डा तड़ाक से टूट गया और लीज़ा मुँह के बल ठण्ड, पतले कीचड़ पर गिर पड़ी।

वहाँ नीचे कोई ठोस जमीन न थी। उसके पैर धीरे-धीरे अन्दर की ओर धँसने लगे। उसके हाथ निस्सहाय कीचड़ को मथते रहे और वह उलट-पलटकर, पतले कीचड़ में बेदम होती बल खाती रही। इसके बावजूद रास्ता कहीं पास ही था, एक क़दम, शायद आधा ही क़दम लेकिन यह आधा क़दम भी उसके बूते के बाहर था।

"बचाओ!··· बचाओ!··· बचाओ!···"

दहशत भरी अकेली आवाज़ गूँजी और काफ़ी देर तक उदासीन, बदबूदार दलदल के ऊपर प्रतिध्वनित होती रही। यह देवदार की उत्तुंग फुनगियों तक फड़फड़ायी, युवा आल्डर वृक्षों के बीच झूलती रही, क्षीण होती भर्राई बुदबुदाहट में बदल गयी और एक बार फिर पूरे ज़ोर से मई महीने के निरभ्र आकाश तक ऊँची उठ गयी।

काफ़ी देर तक लीज़ा उस सुन्दर नीले आकाश को देखती रही। बेदम होती, कीचड़ थूकती, आकाश की ओर वह अधिकाधिक ज़ोर लगाती रही और उम्मीद का दामन उसके हाथों से नहीं छूटा।

सूरज धीरे-धीरे पेड़ों की फुनगियों पर चढ़ आया, इसकी किरणें दलदल तक पहुँचने लगीं और आख़िरी बार लीज़ा को इसकी रोशनी सुध आयी—गर्म, असह्य रूप से उज्ज्वल—गौरवशाली कल की आस की तरह। आख़िरी पल तक उसे विश्वास रहा कि वह कल उसके लिए भी जरूर ही आयेगा।

८

जब वे हँसने और हल्का-फुल्का भोजन करने में लगे थे (पके भोजन का तो सवाल ही नहीं उठता था), दुश्मन काफ़ी दूर खिसक

गये थे। या, सीधे-सादे कहा जाये तो दुश्मन के सैनिक अपनी जान बचाने शोरगुल भरे किनारे, बक-बक करती गाँव की औरतों और अदृश्य पुरुषों से दूर जंगलों में गुम हो गये थे मानो कभी रहे ही न हों।

वास्कोव को यह तनिक पसन्द न था। उसे सिर्फ़ युद्ध का ही नहीं शिकार का भी अनुभव था और वह जानता था, दुश्मन और भालू, दोनों को नज़र से ओट नहीं होने देना चाहिये। कौन जाने, जर्मनों का मक़सद क्या था, कहाँ वे पलटेंगे और अपने टोहियों को कहाँ तैनात करेंगे। यह स्थिति घटिया शिकार-सी थी —कौन किसके पीछे है, मालूम ही न हो: आपके पीछे भालू या भालू के पीछे आप। इस स्थिति से बचने के लिए अन्य लड़कियों को नदी-किनारे छोड़ उसने ओस्यानिना के साथ मिलकर थोड़ी जासूसी करने का फैसला किया।

"मेरे एकदम क़रीब रहो, रीता। जब मैं रुकूँ, तुम भी रुको, जब मैं रेंगना शुरू करूँ, तुम भी वैसा ही करो। जर्मनों के साथ लुका-छिपी का मतलब है, मौत से लुका-छिपी, इस लिए तुम्हें एकाग्र रहना है—आँख और कान एकदम खुले, चौकस।"

वह झाड़ी-झाड़ी, एक से दूसरी चट्टान आगे-आगे चलता रहा, ओस्यानिना पीछे-पीछे। वह तब तक आँखें फाड़-फाड़कर देखता रहता जब तक आँखें दुखने नहीं लगतीं, कान जमीन पर लगाये रहता; वह हवा में यूँ सूँघने की कोशिश करता मानो कोई टाइम-बम फूटनेवाला हो। इस तरह देखते, सुनते, परखते जब उसके कान बज उठे, उसने मुश्किल से पता लगनेवाला हाथ का एक इशारा किया—और ओस्यानिना फौरन उसके पास आ गयी। ख़ामोशी से दोनों कान लगाये सुनते रहे, कहीं कोई टहनी तो नहीं टूट रही, मैगपाई तो कोई संकेत नहीं दे रहा। फिर झुककर सार्जेंट-मेजर आगे की ओर, किसी छाया की तरह फिसल कर चला गया। रीता चौकन्नी-सी पहलेवाली जगह पर ही बैठी रही।

इस तरह पहाड़ियाँ पार कर वे मुख्य ठिकाने पर जा पहुँचे, फिर उस छोटे से देवदार के जंगल में जहाँ से जर्मनों से बच कर उसी सुबह ब्रिचकिना ने जंगल का रास्ता तय किया था। सब कुछ शान्त व ख़ामोश था मानो दुश्मन कभी रहे ही न हों लेकिन फ़ेदोत ने न तो ख़ुद को, न जूनियर सार्जेंट को इस विचार के वशीभत होने दिया।

छोटे-से देवदार के जंगल के परे गोलाश्मों से भरा लेगोन्तोव झील का हल्का ढलवाँ काईदार किनारा था। मुख्य जंगल कुछ आगे जाकर, ऊँचाई पर से शुरू होता था और मुड़े-तुड़े भूर्ज वृक्षों के झाड़-झँखाड़ व फ़र की छोटी-छोटी झाड़ियाँ यहाँ से वहाँ तक फैली चली जाती थीं।

यहाँ पहुँचकर सार्जेंट-मेजर रुक गया; दूरबीन से झाड़ियों का निरीक्षण किया, कुछ देर तक वह कान लगाकर सुनता रहा, फिर खड़ा हो झील के चिकने दर्पण की ओर चलती हल्की-हल्की बयार को सूँघता रहा। आज्ञाकारितापूर्वक रीता उसकी बग़ल में लेटी रही – आर्द्र काई से गीले होते कपड़ों को महसूस कर वह नाराज़गी भी महसूस कर रही थी।

"तुम्हें कोई गँध मिल रही है?" सार्जेंट-मेजर ख़ामोशी से पूछते हुए मन ही मन हँस पड़ा। "संस्कृति उनका मानभंग कर रही है: वे कॉफ़ी बना रहे हैं।"

"आपने यह कैसे सोच लिया?"

"मुझे गँध मिल रही है–वे नाश्ता कर रहे हैं। सवाल सिर्फ़ यह है कि क्या सोलहों वहीं हैं?"

पल भर सोचने के बाद, देवदार के एक तने से अपनी बन्दूक टिका, बेल्ट को थोड़ा कसकर वह रीता की बग़ल में बैठ गया।

"हमें उनकी गिनती करनी होगी, देखना होगा, सब वहीं तो हैं। सुनो, अगर तुम्हें गोली चलने की आवाज़ सुनाई दे, तुम यहाँ से फौरन खिसक लेना और मेरे फौरन का मतलब है फौरन। लड़कियों को लेकर सीधे पूरब की ओर नहर पर चली जाना। वहाँ जर्मनों की रिपोर्ट करो, हालाँकि मेरा ख़्याल है, तब तक वे ख़ुद भी जान जायेंगे क्योंकि लीज़ा ब्रिचकिना अब छावनी पर किसी भी पल पहुँचने ही वाली होगी, सब साफ़ है न?"

"और आप?" रीता ने पूछा।

"बेकार है, ओस्यानिना," सार्जेंट-मेजर ने उस की बात काट दी। "हम कुकुरमुत्ते या बेरी चुनने तो निकले नहीं हैं। अगर उन्होंने मुझे देख लिया तो ज़िन्दा तो छोड़ेंगे नहीं। यह निश्चित है। इसलिए तुम्हें फ़ौरन लौटना शुरू कर देना चाहिये। क्या मेरा आदेश स्पष्ट है?"

रीता ख़ामोश थी।

"तुम्हें क्या कहना चाहिये, ओस्यानिना?"

"यही कि सब स्पष्ट है।"

खीसें निपोर सार्जेंट-मेजर नीचे झुककर सबसे पास के गोलाश्म की ओर बढ़ गया।

रीता आंखें गड़ाये देख रही थी लेकिन वह कब ग़ायब हुआ, वह यह नहीं देख पायी थी। वह देखते ही देखते धूसर काईदार गोलाश्मों में एकाकार हो गया था। उसका स्कर्ट और ट्यूनिक की आस्तीनें गीली हो रही थीं; वह रेंगते हुए वापस लौट आयी और एक ठूँठ पर बैठकर कान लगाये जंगल की शांत मर्मर ध्वनि सुनने लगी।

कोई भी बुरी घटना न होगी, इस दृढ़ विश्वास के साथ वह लगभग बिना किसी उत्तेजना के बैठी प्रतीक्षा कर रही थी। उसकी सारी शिक्षा-दीक्षा ने उसे सुखद परिणाम की प्रत्याशा ही सिखायी थी। उसकी पीढ़ी के लिए किसी काम की सफलता में सन्देह विश्वासघात के बराबर था। निस्सन्देह, भय और अनिश्चितता से उसका परिचय था लेकिन वास्तविक परिस्थितियों की तुलना में सफलता के प्रति आन्तरिक विश्वास हमेशा बाज़ी मार ले जाता।

पूरी तरह कान खड़े रखने, पूरी चौकसी बरतने के बावजूद सार्जेंट-मेजर एकदम अचानक और निःशब्द आ पहुँचा–फ़र की टहनियों में बस हल्का-सा स्पन्दन हुआ था। ख़ामोशी से अपनी बन्दूक उठाकर, उसे सिर से इशारा देते हुए वह कुंजों में गोता लगा गया। खड़ी चट्टानों के पास पहुँचकर ही वह रुका।

"तुम अच्छी सैनिक नहीं हो, ओस्यानिना। बेकार।"

उसने यह बात गुस्से से नहीं बल्कि चिन्ता भरी नज़र डालते हुए कही थी जिससे रीता मुस्करा उठी।

उसने वास्कोव से पूछा: "क्यों?"

"ज़रा अपनी ओर देखो, चूज़ों से भरे घोंसलेवाली जंगली मुर्ग़ी की तरह पेड़ के तने पर टंगी थीं तुम। आदेश था: चुपचाप लेटी रहना।"

"लेकिन वहाँ ज़मीन गीली थी।"

"गीली'''" सार्जेंट-मेजर गुर्राया। "तुम ख़ुशक़िस्मत हो जो वे

कॉफ़ी पी रहे हैं, नहीं तो यह तुम्हारे लिए मृत्यु शय्या बन जाती।"

"तो ग्रापका अनुमान सही था?"

"मैं कोई भविष्यवक्ता नहीं और यह अन्दाज़ लगाने की बात भी नहीं। दस आदमियों को मैंने भोजन करते देखा। दो आदमी पहरेदारी कर रहे हैं —यह भी मैंने देखा। बाक़ी आदमी दूसरी ओर पहरेदारी कर रहे होंगे। अलाव में मोज़े सुखाते सब आराम कर रहे हैं। अब हमारे मोर्चा बदलने का समय आ गया है। जब तक मैं यहाँ गोलाश्मों में इधर-उधर देखता हूँ, तुम दौड़कर जाओ और बाक़ी लड़कियों को ले आओ। जाते समय और उन्हें साथ लाते समय पूरी सावधानी रखनी है तुम्हें—तुम में से किसी के मुंह से खीं-खीं न सुनाई दे!"

"समझ गयी।"

"एक बात और: मैंने सूखने के लिए तम्बाकू वहाँ डाल रखा था, मेहरबानी करके उसे लेती आना, मेरी और चीज़ें भी।"

"ले आऊँगी, सार्जेंट-मेजर।"

उधर ओस्यानिना दूसरी लड़कियों को ला रही थी और इधर सार्जेंट-मेजर पेट के बल रेंग-रेंगकर पास व दूर के सभी गोलाश्मों की जाँच-पड़ताल कर रहा था। वह आँख, नाक, कान तथा सारी ज्ञानेंद्रियों से काम ले रहा था। लेकिन उसे जर्मन की भनक कहीं भी नहीं मिली। उसे अब थोड़ी राहत महसूस हुई। उसकी गणना के अनुसार ब्रिचकिना अब छावनी के पास पहुँच चुकी होगी और किसी भी पल रिपोर्ट करेगी। इस प्रकार जर्मन घुसपैठियों के इर्द-गिर्द अदृश्य जाल बिछा दिया जायेगा। शाम तक या बहुत हुआ तो सुबह तक — कुमक टुकड़ी उन तक आ पहुँचेगी। मर्दों को तो वह सीधी दिशा में भेज देगा और लड़कियों को खड़ी चट्टानों की आड़ में। अश्लील भाषा से जितनी दूर रहें, उतना अच्छा। हाथापाईवाली मुठभेड़ में हमेशा इनकी भरमार रहती थी।

एक बार फिर दूर से ही उसे लड़कियों के आने की आहट सुनाई दी। ऐसी बात न थी कि कोई शोर, बुदबुदाहट या धातु की वस्तुओं की झनझनाहट सुनाई दे रही हो लेकिन उनके अभी भी बहुत दूर रहने के बावजूद वह जान गया था कि वे आ रही हैं। हो सकता है, उनकी

सायास श्वास ध्वनि हो या उनके इस्तेमाल में आनेवाले यू-डीकोलोन की खुशबू, चाहे कुछ भी हो, सार्जेंट-मेजर ने अपनी क़िस्मत का शुक्रिया अदा किया कि जर्मनों में कोई पेशेवर शिकारी नहीं।

धूम्रपान के लिए वह मरा जा रहा था। दो घंटे से वह बिना तम्बाकू इधर से उधर रेंगता फिरा था। लोभ-संवरण न हो पाये और वह धूम्रपान करने लग जाये, इस डर से तम्बाकू वह लड़कियों के पास ही छोड़ आया था। जब वे आ पहुँचीं तो उन्हें खामोश रहने की चेतावनी देते हुए उसने तम्बाकू की माँग की। ओस्यानिना ने निराशा से हाथ फैला दिये:

"ओय री, मैं तो उसे भूल ही गयी!"

सार्जेंट-मेजर ने मन ही मन एक आह भरी — भगवान बचाये औरतों से, उन्हें कभी कुछ याद नहीं रहता! काश, उसके सैनिक मर्द होते तो कितना अच्छा रहता! बिना रुके वह उन्हें कोसता और तम्बाकू का थैला लाने वापस भेज देता जबकि अब उसे जबरन मुस्कराते हुए कहना पड़ रहा था:

"अरे कोई बात नहीं। मेरे बुग़चा में थोड़ा घटिया क़िस्म का तम्बाकू है... मुझे दरकार है, तुम उसे तो साथ ले ही आयी होगी?"

बुग़चा उसके हाथों में थमा दिया गया। तम्बाकू नहीं बल्कि उसके थैले के लिए सार्जेंट-मेजर को कहीं अधिक अफ़सोस महसूस हो रहा था क्योंकि वह एक उपहार था और उसपर अंकित था: "हमारी मातृभूमि के एक कुशल रक्षक को सप्रेम भेंट।" अभी अपनी निराशा वह पूरी तरह छुपा पाता, उससे पहले ही गुरविच मुड़कर दौड़ पड़ी।

"मैं उसे ले आऊँगी! मैं जानती हूँ, कहाँ है!"

"तुम कहाँ चल दी, गुरविच? लौट आओ, कॉमरेड दुभाषिया!..."

उसका चीख़ना बेकार रहा... उन्हें बस तेज़-तेज़, भारी क़दमों की आवाज़ सुनाई देती रही...

भारी इस लिए क्योंकि सोनिया गुरविच को जीवन में पहले कभी भी टॉप-बूट पहनने का मौक़ा नहीं मिला था। इस लिए अपनी अनुभवहीनता में उसने दो साइज़ बड़ा बूट ले लिया था। नियमित सेना का हर आदमी जानता है, जब बूट बहुत बड़े होंगे, भयानक आवाज़ होगी, सोनिया के परिवार का सेना से भूलकर भी कोई

वास्ता न पड़ा था। उनके घर में कभी कोई टॉप-बूट नहीं रहा था और उसके पिता को तो उन बूटों को डालना भी नहीं आता होगा...

नेमिगा नदी के दूसरे तट पर उनके छोटे से मकान के बाहर दरवाज़े पर लगे काँसे के नामपट्ट पर अंकित था: "सोलोमोन अरोनोविच गुरविच, डॉक्टर ऑव मेडिसिन।" यूँ तो उसके पिता ज़िला के एक मामूली डॉक्टर थे और डॉक्टर ऑव मेडिसिन का कोई भी वैज्ञानिक प्रमाणपत्र उनके पास न था, नामपट्ट दरवाज़े पर लगा रहा क्योंकि यह उन्हें गुरविच के दादा की ओर से उपहार मिला था। वह ख़ुद अपने हाथों से उसे दरवाज़े पर लगा गये थे। ऐसा उन्होंने इस लिए किया था क्योंकि उनका बेटा एक शिक्षित व्यक्ति था और यह बात वे पूरे मिन्स्क नगर को जताना चाहते थे।

दरवाज़े की बग़ल में घंटी लगी था जिसे काम में लाने के लिए बड़ी ज़ोर आज़माई करनी पड़ती थी। सोनिया का पूरा बचपन, दिन और रात, जाड़ा और गरमी, इसकी चिन्ता भरी घनघनाहट के साथ ही बीता था। मौसम चाहे कोई भी हो, उसके पिता अपना डॉक्टरी झोला उठाकर पैदल निकल पड़ते क्योंकि घोड़े-गाड़ी के लिए उनके पास पैसे न थे। घर आकर वे यक्ष्मा, गलसुओं की सूजन या मलेरिया की बातें कोमल स्वर में शुरू कर देते और दादी उन्हें घर में तैयार चेरी का पेय पीने को देती।

उनका बड़ा और संयुक्त परिवार था: बच्चे, चचेरे-ममेरे भाई, दादा-दादी, माँ की अविवाहित बहन व कुछ दूर के रिश्तेदार। घर में कोई भी ऐसी खाट न थी जिसपर दो से कम लोग सोते—किसी-किसी पर तो तीन भी।

विश्वविद्यालय में पढ़ाई के दौरान भी सोनिया अपनी बहनों के दिये कपड़ों से सीये गये कपड़े पहना करती थी; आम तौर से वे धूसर और ज़िरहबख़्तर की तरह कड़े होते। काफ़ी अरसे तक उसे उनके बज़न की चिन्ता न हुई क्योंकि नाच में जाने की जगह वह आम तौर से पुस्तकालय या ख़ुशक़िस्मती से मास्को कला थियेटर में सबसे सस्ते भाव की जगह का टिकट मिल जाने पर, वहाँ चली जाया करती थी। उसे इन कपड़ों की चिन्ता तब हुई जब व्याख्यान में साथ-साथ जानेवाले चश्माधारी पड़ोसी का उसके साथ-साथ पुस्तकालय जाना

यह उसे यूँ ही अकारण प्रतीत न हुआ। पाँच दिनों बाद उसके साथ गोर्की पार्क में उसने एक अविस्मरणीय शाम बितायी और गुरविच को ब्लॉक की कविता की एक नन्ही-सी पुस्तक भेंट की। दुबारा जब गुरविच को उसके बारे में पता चला तो बस इतना ही कि वह स्वयंसेवक के रूप में मोर्चे पर जा चुका है।

हाँ, विश्वविद्यालय में भी गुरविच अपनी बहनों के दिए कपड़ों से सीये गये कपड़े पहना करती थी। प्राय: वे पोशाकें लम्बी और ज़िरह-बख़्तर की तरह भारी हुआ करती थीं।...

लेकिन उसे वे कपड़े ज़्यादा दिनों तक नहीं पहनने पड़े थे—सिर्फ़ एक साल तक, उसके बाद वह सेना की वर्दी और टॉप-बूट पहनने लगी थी—दो साइज़ बड़े।

अपनी टुकड़ी में भी लोग उसे शायद ही जानते थे: उसका कोई महत्व न था, वह बस अपने काम से काम रखती और हवामार टुकड़ी में उसका चुना जाना संयोगमात्र था। उनके मोर्चेवाले इलाक़े में कोई लड़ाई नहीं चल रही थी, वे सब सुरक्षात्मक ठिकानों पर लगे थे। दुभाषियों की बहुतायत थी लेकिन हवामार सैनिकों की कमी। जर्मनों से लड़ाई के बाद, इस प्रकार, उसे और झेन्या कोमेलकोवा को हवामार जत्थे में भेज दिया गया। शायद, इसी कारण, दूसरी लड़कियाँ उसकी आवाज़ से उतनी अच्छी तरह परिचित न थीं—सिर्फ़ सार्जेंट-मेजर ही उसकी आवाज़ इस समय पकड़ पाया था।

"क्या यह गुरविच की आवाज़ नहीं?"

सबने अपने कान खड़े कर लिये—लेकिन चट्टानों में सब कहीं निस्तब्धता थी—सिर्फ़ हवा की हल्की-हल्की सरसराहट थी।

"नहीं तो," रीता बोली।" "आपको भ्रम हुआ होगा।"

वह दूर की, कोमल, किसी आह-सी आवाज़ दुबारा सुनाई न दी लेकिन सार्जेंट-मेजर ने उसे सुनने के लिए अपनी पूरी कोशिश लगा दी—और अचानक ही उसका चेहरा पत्थर की तरह कठोर हो गया। वह विचित्र-सी चीख़ मानो उसके सीने में उतर गयी थी, उसके कानों में मानो बजती-सी प्रतीत हो रही थी और जब उसका मतलब उसकी समझ में आया तो उसे काठ-सा मार गया। देखी-अनदेखी-सी दृष्टि उसने लड़कियों पर डाली और अजीब-सी आवाज़ में कहा:

"कोमेलकोवा, मेरे पीछे आओ। बाक़ी लड़कियाँ यहीं हमारी प्रतीक्षा करेंगी।"

छाया की तरह, हल्के-हल्के सरकते हुए वह आगे बढ़ा और झेन्या साँस रोके मुश्किल से उसके साथ-साथ चल पा रही थी। यह सच था कि सार्जेंट-मेजर को कोई वज़न ढोना नहीं पड़ रहा था और उसके पास बन्दूक थी, फिर स्कर्ट भी बाधा डाल रहा था—दौड़ते समय सिकुड़कर छोटा हो जाता। लेकिन मुख्य बात यह थी कि निःशब्द चलने की कोशिश में उस की सारी ताक़त ख़र्च हो रही थी।

जो चीख़ वास्कोव को सुनाई दी थी, उसका सारा ध्यान उसी पर केन्द्रित था—चीख़ एक ही बार उठी थी लगभग बेआवाज़-सी जिसे किसी तरह उसके कान ने पकड़ ली थी, पहचान व समझ ली थी। एसी चीखें वह पहले भी सुन चुका था—एसी चीख़ें जो दूसरी सारी आवाज़ों को दबा देती हैं, सब कुछ मिटा देती हैं और गूँजती चली जाती हैं, अन्तर्मन में, दिमाग़ में—एसी आवाज़ जिसे एक बार सुन लेने के बाद भुलाना कठिन था, ऐसी आवाज़ जिसे सुनकर आदमी को काठ मार जाये, भय से जकड़ ले, सीने को दबोच ले—उसकी जल्द-बाज़ी का यही कारण था।

उसके अचानक रुक जाने का भी यही कारण था—मानो सामने कोई दीवार आ खड़ी हुई हो और झेन्या जो उसके पीछे-पीछे दौड़ती चली आ रही थी, हड़बड़ी में बन्दूक की मुठिया उसके कन्धे से टकरा बैठी, लेकिन वह बस उकड़ूँ बैठ गया और हाथ ज़मीन पर रख एक पदचिह्न की बग़ल में हाथ रखकर देखने लगा।

यह एक बहुत चौड़ा-सा पदचिह्न था—स्पष्ट रूप से उसके तले की छाप पहचानी जा सकती थी।

"जर्मन?…" झेन्या ने गर्म व निःशब्द साँस ली।

सार्जेंट-मेजर ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने देखा, सुना और सूँघा। उसने मुट्ठियाँ भींच लीं, इतने ज़ोर से कि अँगुलियों के जोड़ सफ़ेद पड़ गये। झेन्या ने नज़र आगे उठाकर देखा—ज़मीन पर ताज़े धब्बे थे। सार्जेंट-मेजर ने सावधानी से एक पत्थर उठाया: उस पर एक गहरी काली-सी बूंद पड़ी थी जैसे कोई जीवित-सी वस्तु हो। झेन्या सहमकर पीछे हट गयी, उसकी इच्छा चीख़ पड़ने की हुई लेकिन उसने चीख़ दबा ली।

"अनाड़ी," सार्जेंट-मेजर ने कहा और दुहराया: "अनाड़ी…"

धीरे से पत्थर को नीचे रखकर, दिमाग़ में घटना की तस्वीर खींचते हुए, उसने आस-पास नज़र दौड़ायी, फिर वह चोटी की दूसरी ओर एक क़दम बढ़ गया।

उसके अनुमान के अनुसार ही सोनिया गुरविच बड़े अजीब ढँग से एक दरार में पड़ी थी—उसके जले स्कर्ट के नीचे से बेढँगे टॉप-बूट आड़ेतिरछे झाँक रहे थे। उसे ऊपर उठा सके, इस लिए सार्जेंट-मेजर ने उसे पेटी से पकड़कर खींचा—बड़े कोमल ढँग से। कुछ क़दम उठा ले जाने के बाद उसने उसे पीठ के बल लिटा दिया।

सोनिया की अधखुली आँखें मूढ़तापूर्वक आकाश की ओर टँगी थीं। उसके ट्यूनिक का अगला हिस्सा ख़ून से तरबतर था। बड़ी सावधानी से ट्यूनिक के बटन खोल सार्जेंट-मेजर ने उसके दिल की धड़कनें सुनने की कोशिश की। वह यह सब करता रहा और उधर झेन्या उसके पीछे निःशब्द खड़ी रही, उसका बदन काँप रहा था। आँसुओं को रोके रहने की ज़बर्दस्त कोशिश करते हुए उसने मुट्ठियाँ भींच रखी थीं। कुछ देर बाद सार्जेंट-मेजर सीधा हुआ, सोनिया की छाती पर ख़ून से चिपचिपी कमीज़ धीमे से ठीक की। छाती में दो छोटे-से सूराख थे। एक उसके उरोज को—बायीं ओर के उरोज को वेधता और दूसरा उसके नीचे, हृदय को।

"इसी कारण तुम चीख़ी थी," सार्जेंट-मेजर बड़बड़ाया। "इस तरह तुम चीख़ पायी—उसने तुम्हें पुरुष समझा होगा। पहली बार में वह तुम्हारे हृदय को नहीं वेध पाया—वह तुम्हारा उरोज था…"

उसने ट्यूनिक के बटन बन्द कर दिये—एक-एक करके सारे, कॉलर भी ठीक कर दिया। उसकी बाँहें मोड़कर सीने पर रख दीं। वह उसकी आँखें बन्द कर देना चाहता था लेकिन असफल रहा। उसने बस उसकी पलकों से ख़ून पोंछ दिया। वह उठ खड़ा हुआ:

"कुछ देर तक यहीं पड़ी रहो, प्यारी सोनिया।"

उसके पीछे झेन्या कँपकँपाते हुए एक बार सुबक उठी। सार्जेंट-मेजर ने भौंहों तले से उस पर फ़ौलादी दृष्टि डाली:

"मेमियाने का समय नहीं, कोमेलकोवा।"

मुश्किल से दिखाई देनेवाले पसलियों-सी छापवाले पदचिह्नों के पीछे-पीछे चलते हुए, वह तेज़ी से नीचे की ओर झुककर चल पड़ा।

९

क्या जर्मन सोनिया के लिए बाट जोहते बैठे थे या वह संयोगवश उनके बीच जा पहुँची थी? उसके लिए नासपीटा (सौ बार नास-पीटा!) तम्बाकू लाने वह हड़बड़ी में बिना सोचे-समझ उस रास्ते पर दौड़ी चली जा रही थी जिसे वे लोग दो बार तय कर चुके थे। उमंग में वह दौड़ती चली जा रही थी, उसे इसका तनिक भान न था कि उसके दुर्बल कंधों पर उतर आया स्वेदयुक्त भारी बोझ क्या था या उसके कलेजे में टीसता, होश उड़ाता दर्द कैसा था··· नहीं, उसे महसूस करने का समय मिला था, उसने समय रहते महसूस कर लिया था और तभी तो वह चीखी थी क्योंकि चाकू का पहला प्रहार हृदय तक नहीं पहुँच पाया था–उसका उरोज आड़े आ गया था, उसका ठोस, बालिकाओं-सा उरोज।

या शायद ऐसा कुछ भी न हुआ था? वे बाट जोहते बैठे हों? बल्कि में शायद जर्मनों ने उन सब को मात दे दी थी –अनुभवहीन लड़कियों को, नियमित सेना के खुद उस को भी जिसे जासूसी में साहस दिखाने के लिए विभूषित किया जा चुका था? हो सकता है, वह उनका पीछा नहीं बल्कि वे उनका पीछा करते रहे हों? शायद उन्होंने उन्हें भाँप लिया हो, सब तख़मीना लगाकर जान लिया हो कि किसकी स्थिति अच्छी है?

इस सब के बावजूद भय के वशीभूत नहीं बल्कि रोष के कारण वह आगे बढ़ा चला जा रहा था। उग्र, प्रचण्ड रोष से अपने दाँत पीसता वह केवल एक इच्छा से प्रेरित चला जा रहा था–किसी तरह उन्हें पकड़ ले और फिर···

"मेरे हाथों तुम्हें चीखने का भी समय नहीं मिलेगा··· नहीं, क़तई नहीं···"

गोलाश्मों पर अभी भी हल्के पदचिह्न यत्र-तत्र दिखाई दे रहे थे। उन्हें देख कर उसे पूरा यक़ीन हो गया था कि वे दो हैं। एक बार

फिर उसने खुद को कोसा। वह खुद को माफ़ नहीं कर सकता था जो क्षति उसे अभी उठानी पड़ी थी, वह इसलिए कि सभी दुश्मनों पर नजर रखने में वह असफल रहा था; अनदिखे जर्मनों को उसने अलाव की दूसरी ओर होने का अनुमान लगा लिया था, लड़कियों की ओर नहीं। अपनी दुभाषिया को गँवा बैठने का पूरा दोष उसी का था–अपनी उसी दुभाषिया को जिसके साथ पिछली रात उसने एक ही टीन में दलिया खायी थी। यह अनुभूति उसे चैन नहीं लेने दे रही थी, चीत्कार **कर** रही थी, अन्दर ही अन्दर उसे काटे डाल रही थी और उस अनुभूति की शांति का बस एक ही रास्ता था, जर्मनों को पकड़ना। वह कोई भी दूसरी चीज़ सोचना नहीं चाहता था, उसने पीछे मुड़कर यह भी नहीं देखा था कि कोमेलकोवा आ रही है या नहीं।

झेन्या जानती थी, वे कहाँ और क्यों दौड़ रहे थे। सार्जेंट-मेजर ने कुछ भी नहीं कहा था लेकिन वह जानती थी; वह जानती थी और तनिक भी भयभीत न थी। सब कुछ अचानक जम-सा गया था; इसलिए न कोई पीड़ा थी, न कोई रक्तस्राव। ऐसा लग रहा था मानो अन्दर का ज़ख़्म उसके इशारे की प्रतीक्षा में था, वह कहे और पीड़ा शुरू हो जाये लेकिन नहीं, वह उसे बाहर नहीं आने देगी। चुनाँचे, अब उसका ध्यान बँटानेवाला कुछ भी न था। यह कोई साल भर पहले, १९४१ की गर्मियों की बात थी, उस समय एक एस्तोनियाई औरत ने उसे छुपा दिया था···

सार्जेंट-मेजर ने अपना हाथ ऊपर उठाया और वह फ़ौरन रुक गयी, अपनी भारी-भारी साँसों पर क़ाबू पाने की कोशिश करती।

"थोड़ी देर ठहर जाओ और साँस पर क़ाबू पा लो," उसने एकदम अस्फुट स्वर में कहा। "वे यहीं कहीं पर हैं। कहीं बहुत क़रीब।"

झेन्या बन्दूक पर बोझ डालती झुक गयी, उसने अपना कॉलर खोल दिया। वह गहरी साँस लेना चाहती थी, फफड़ों में हवा भर लेना चाहती थी लेकिन इसके विपरीत, उसने अपनी साँस धीरे-धीरे, बेआवाज़ बाहर निकाल दी–विरोध में हृदय तेज़ी से धड़क उठा।

"वह वहाँ रहे वे," सार्जेंट-मेजर ने कहा।

पत्थरों के बीच एक सँकरी-सी दरार से वह झाँककर देख रहा था। बौने भूर्ज वृक्षों की नाज़ुक टहनियाँ हिल रही थीं।

"वे हमारे पास से गुज़रेंगे," बिना इधर-उधर नज़र घुमाये सार्जेंट-मेजर ने कहा। "तुम यहीं रुक जाओ। जब मैं बत्तख़ की बोली बोलूँ, तुम थोड़ा शोर करना। जैसे कोई पत्थर फेंक देना या फिर बन्दूक के कुन्दे से खट-खट कर देना जिससे उनका ध्यान तुम्हारी ओर खिंच जाये। लेकिन, हाँ, उसके बाद कोई आवाज़ नहीं होनी चाहिये, तुम्हें एकदम ख़ामोश जाना है, समझी?"

"समझ गयी," झेन्या ने कहा।

"याद रहे, बत्तख़ की बोली—उससे पहले नहीं।"

एक ज़ोरदार, गहरी साँस ले, वह एक गोलाश्म पर और फिर भूर्ज वृक्षों के कुंज में छलाँग लगा गया—जर्मनों का रास्ता काटते हुए।

वह उन पर सीधे धूप से निकलकर टूट पड़ना चाहता था जिससे नाचती, चित्र-विचित्र धूप-छाँह में वे उसे नहीं देख पाये; फिर वह उन में से एक की पीठ पर छलाँग लगा देगा—उसे पटककर नीचे गिराने के बाद चीख़ने तक का मौक़ा न देगा। हल्का-सा शोर भी किये बिना उसका काम तमाम...

उसने अच्छी जगह का चुनाव किया था। जर्मन निश्चित ही इस रास्ते से गुज़रते। वे तो दिखाई देंगे, खुले में होंगे जब कि वह ख़ुद उन्हें नहीं दिखाई देगा। निस्सन्देह, बिना चूके, वह उन्हें अपनी जगह पर से आसानी से गोली मार सकता था। लेकिन हो सकता है, उसकी गोलियों की आवाज़ें जर्मनों की मुख्य टोली के दोनों कानों में पड़ जायें—और वह यह नहीं चाहता था। इस लिए पिस्तौल होल्स्टर में डालकर उसने उसका बटन भी बन्द कर दिया—कहीं गिर न जाय। उसने अपने विजय-चिह्न फ़िनिश चाकू को जाँच-परख कर देखा, कटार में यह तेज़ी से निकल-बाहर तो हो रहा है?

इसी पल जर्मन पहली बार भूर्ज वृक्षों के बीच खुलकर दिखाई दिये जो अभी भी वसन्त के लेसदार परिधान में थे। जैसी कि वास्कोव को उम्मीद थी, वे दो थे: पहला हृष्ट-पुष्ट था। उसने दायें कन्धे पर सबमशीनगन रखी हुई थी। पिस्तौल से कितनी आसानी वह उन्हें समाप्त कर दे सकता था लेकिन उसने दुबारा यह ख्याल तलख़ कर दिया। इस बार आवाज सुनी जाने के भय से नहीं बल्कि इसलिए क्योंकि

उसे सोनिया की याद हो आयी थी और वह उन्हें आसान मौत नहीं मरने दे सकता था। आँख के लिए आँख, चाकू के लिए चाकू—यही एकमात्र तरीक़ा था।

बिना अधिक चौकसी रखे, जर्मन आराम से चले जा रहे थे: दूसरा तो बिस्कुट कुतरता, अपने होंठ चाटे जा रहा था। सार्जेंट-मेजर ने उनके क़दमों की दूरी का अन्दाज़ लगाया, कुल दूरी का हिसाब लगाया और जैसे ही वे उसके बराबर पहुँचे, अपना चाकू बाहर खींच निकाला और जब पहला जर्मन उससे छलाँग लेने भर की दूरी पर जा पहुँचा, उसने दो बार बत्तख़ की बोली मुंह से निकाली। दोनों जर्मनों ने नज़रें उठाकर देखा लेकिन तभी कोमेलकोवा ने बन्दूक के कुन्दे से एक पत्थर को कसकर टकरा दिया। वे शोर की ओर लपके और तभी सार्जेंट-मेजर ने छलाँग लगा दी।

उसकी छलाँग शतप्रतिशत सही थी, समय का अन्दाज़ एकदम ठीक था और दूरी-निर्धारण में राई भर की भी ग़लती नहीं हुई थी। वह जर्मन की पीठ पर आ रहा और अपने घुटनों से उसने उसकी कोहनियों में फाँस डाल दी। जर्मन साँस ले या चौंके, उससे पहले ही वास्कोव ने उसकी गर्दन पीछे मोड़ दी और तनी गर्दन तेज़ चाकू से चाक कर दी।

सब कुछ ठीक सार्जेंट-मेजर के योजनानुसार हुआ था। चीख़ न सके, इस लिए जर्मन को भेड़ की तरह जबह कर दिया गया था—ख़ून की धारा फूट निकलते समय वह बस सूँ-सूँ कर सका था। जब जर्मन धराशायी होने लगा, सार्जेंट-मेजर उछलकर हट गया और दूसरे की ओर दौड़ पड़ा।

इस सब में बस एक पल लगा था—सिर्फ़ एक पल। इधर जो घटना हुई थी, दूसरा जर्मन उससे अभी तक ग़ाफ़िल था। लेकिन या तो सार्जेंट-मेजर के पास अब दूसरी छलाँग लगाने की ताक़त नहीं बची थी या वह एक अनमोल क्षण गँवा बैठा था। चाहे कुछ भी हो चाकू काम में वह नहीं ला सका था। उसने उसके हाथ की सबमशीनगन को तो ठोकर मार दी थी लेकिन ऐसा करते समय चाकू नीचे गिर पड़ा था—वह ख़ून से तरबतर होने के कारण साबुन की टिक्की की तरह फिसलन भरी हो गया था।

काम बिगड़ गया था। द्वन्द्व का स्थान हाथापाई ने ले लिया था। बहुत लम्बा न होने के बावजूद जर्मन ताक़तवर साबित हुआ था। उसे हराना कठिन था और सार्जेंट-मेजर उस पर क़ाबू नहीं पा सका। काईदार ज़मीन पर गोलाश्मों व भूर्ज वृक्षों के बीच लड़ते हुए वे उलट-पलट होते रहे लेकिन जर्मन ने अभी तक मुँह से कोई भी आवाज़ नहीं निकाली थी। या तो उसे सार्जेंट-मेजर पर क़ाबू पा लेने की उम्मीद थी या वह अपनी ताक़त बर्बाद नहीं करना चाहता था।

वास्कोव से एक और ग़लती हो गयी, जर्मन को अधिक मजबूती से जकड़ लेने की कोशिश में वह उसे छोड़ बैठा था और जर्मन ने अपना चाकू पलक झपकते निकाल लिया था। सार्जेंट-मेजर चाकू से इस तरह भयभीत था कि उसे अपनी थोड़ी ताक़त और एकाग्रता भी गँवानी पड़ रही थी। आख़िरकार जर्मन उसे पछाड़ने में सफल हो गया और उसे अपने भारी पैरों से दबा दिया। अब फ़ौलादी चाकूवाला हाथ फैलता हुआ सार्जेंट-मेजर के गले की ओर बढ़ रहा था। हाँ, इतना ज़रूर था कि सार्जेंट-मेजर अभी भी उसकी कलाई को जकड़ लेने में समर्थ था, अभी भी लड़ सकता था लेकिन वज़न और दबाव के कारण जर्मन उससे बीस पड़ रहा था। वास्कोव ने भी महसूस कर लिया था कि बस कुछ ही पलों का सवाल है। जर्मन ने भी यह महसूस कर लिया था; आँखें संकुचित करते हुए उसने दाँत निपोर दिये।

लेकिन अगले ही पल उसका शरीर सूखे पत्ते की तरह काँप उठा। क्यों, यह बात पहले सार्जेंट-मेजर नहीं महसूस कर पाया। जर्मन पर किया पहला प्रहार वह नहीं सुन पाया था। दूसरे की आवाज़ उसे सुनाई दी: किसी सूखे तने पर किये प्रहार की तरह भद-भद-सी आवाज़ थी। उसे अपना चेहरा गर्म-गर्म ख़ून से तर होता महसूस हुआ और जर्मन नीचे गिरने लगा—खुले, विकृत मुँह से साँस लेने को छटपटाता। तब सार्जेंट-मेजर ने उसे उठा फेंका और झपटकर चाकू पकड़ते हुए उसके हृदय में घुसेड़ दिया।

तब कहीं उसने मुड़कर देखा: प्राइवट कोमेलकोवा उसके सामने खड़ी थी—नली की ओर से उसने बन्दूक को किसी लाठी की तरह पकड़ रखा था। बन्दूक का कुन्दा ख़ून से तरबतर था।

"बहुत ख़ूब, कोमेलकोवा—तुमने तारीफ़ का—काम किया है···"
हाँफ़ते हुए सार्जेंट-मेजर तीन बार टुकड़े-टुकड़े में बोला।

उसने उठने की कोशिश की लेकिन असफल रहा। हाँफ़ते हुए, किसी मछली की तरह मुँह खोलते-बन्द करते वह ज़मीन पर बैठा रहा। पहले जर्मन पर नज़र डालने के लिए उसने मुड़कर देखा—बड़ा शक्तिशाली था वह, किसी साँड़ की तरह। उसका शरीर अभी भी फड़क रहा था, वह घर्र-घर्र करता अभी भी ख़ून के फ़व्वारे उगल रहा था। दूसरा अब निस्पन्द था, मृत्यु स्थिर, एक अप्राकृतिक स्थिति में पड़ा।

"तो अब, झेन्या," सार्जेंट-मेजर शांतिपूर्वक बोला। "अब उन में दो की कमी हो गयी है···"

एकाएक अपनी बन्दूक नीचे गिराकर झेन्या झाड़ियों में चली गयी और दुहरी होकर किसी शराबी की तरह कभी इधर, कभी उधर कँपकँपाने लगी। घुटनों के बल गिरकर उसने वमन किया, सुबकियाँ लीं और किसी को याद की—शायद अपनी माँ को···

लड़खड़ाता सार्जेंट-मेजर उठ खड़ा हुआ। उसके घुटने अभी भी काँप रहे थे, पेट में पीड़ा हो रही थी लेकिन अब समय की तनिक भी बर्बादी ख़तरनाक थी। उसने कोमेलकोवा को कोई आवाज़ नहीं लगायी, उसे अपने हाल पर छोड़ दिया क्योंकि आमने-सामनेवाले पहले द्वन्द्व के पहले अनुभव का सदा, जब कोई इंसान स्वयं जीवन जैसे प्राकृतिक नियम तुम्हें हत्या नहीं करनी चाहिये—की अवहेलना करता है तो किसी आदमी को कैसा लगता है, यह उसे अच्छी तरह मालूम था। तुम्हें इसका अभ्यस्त होना चाहिये, अपने हृदय को कठोर बनाना चाहिये। मज़बूत आदमी और सैनिक, झेन्या से सौ गुना अधिक मज़-बूत लोगों को भी इसमें कठिनाई होती है और वे तब तक पीड़ित होते रहते हैं जब तक अपनी चेतना से समझौता नहीं कर लेते। और यह तो एक नारी थी, संभवतः एक भावी माँ जो स्वभाव से ही किसी भी हत्या के विरुद्ध थी—इसके बावजूद उसने एक प्राणी को मारकर चकनाचूर कर दिया था, अपनी बन्दूक के कुन्दे से उसकी खोपड़ी तोड़ दी थी। लेकिन सार्जेंट-मेजर की दृष्टि में इसका दोष भी जर्मनों पर ही था, उन्होंने मानवीयता के नियमों का उल्लंघन किया था और इस

प्रकार, किसी भी नियम-क़ानून की सीमा से पार जा पहुँचे थे। इस लिए अब तक गर्म उनके शरीर की तलाशी लेते हुए भी उसे बस उनके प्रति घृणा ही महसूस हुई–जैसी कोई सड़ी लाश हो।

उसे अभीप्सित वस्तु मिल गयी: तम्बाकू का बटुआ। बटुआ लम्बे, अभी-अभी भरे और अब ख़ामोश हो गये जर्मन की एक जेब में था। यह सार्जेंट-मेजर का ही बटुआ था जिस पर अंकित था: "मातृभूमि के श्रेष्ठ रक्षक को सप्रेम भेंट।" वही बटुआ जिसे लाने सोनिया गयी थी और अपना जीवन गँवा बैठी थी। रास्ते के आर-पार पड़े बाल-दार हाथ को लात मारकर उसने हटा दिया। फिर वह झेन्या की ओर चल पड़ा। झाड़ियों में घुटनों के बल झुकी वह अभी तक सुबक-सिसक रही थी।

"जाइये यहाँ से," उसने कहा।

चेहरे के क़रीब लाते हुए सार्जेंट-मेजर ने उसे तम्बाकू का बटुआ दिखाया। बटुआ उसने खुली हथेली पर रख छोड़ा था। बटुआ को पहचानकर झेन्या ने उसकी ओर नज़र उठाकर देखा।

"उठो, झेन्या।"

खड़ा होने में उसने उसकी मदद की। वह उसे दुबारा खुले में ले आना चाहता था। लेकिन एक क़दम आगे बढ़ाते ही झेन्या रुक गयी और इनकार में अपना सिर हिलाया।

"अब देखो," वह बोला, "तुम काफ़ी रो चुकी हो। तुम्हें एक बात समझनी चाहिये। वे मनुष्य नहीं, जानवर भी नहीं, बस फ़ासिस्ट हैं, कॉमरेड कोमेलकोवा! और तुम्हें उनके बारे में इसी ढंग से सोचना चाहिये।"

झेन्या ने उसकी ओर देखने तक से इनकार कर दिया और सार्जेंट--मेजर ने ज़ोर भी नहीं डाला। गोलियों की पेटी के साथ सबमशीनगनें उठा लेने के बाद वह उनके फ़्लास्क भी उठाना चाह रहा था लेकिन कोमेलकोवा पर नज़र डालने के बाद उसने इस विचार का त्याग कर दिया। इस घटना के बारे में कोमेलकोवा को याद दिलानेवाली जितनी कम वस्तुएँ हों, उतना ही अच्छा।

उसने लाश न छुपाने का फैसला किया। फिर उस खुली जगह से खून को भी तो साफ़ नहीं किया जा सकता था। फिर क्या फ़ायदा?

शाम हो आयी थी और अब जल्दी ही राहत पहुँचने की उम्मीद वे कर सकते थे। जर्मनों के पास बहुत कम समय रह गया था और सार्जेंट-मेजर चाहता था कि जितना भी बच रहा है, वह जर्मनों के लिए कठिन साबित हो। वे ख़ूब परेशान हों, अटकलें लगाते रहें और अपने टोहियों को समाप्त कर देनेवालों की तलाश करते रहें। हर आवाज़, हर परछाँई से वे ख़ौफ़ खायें।

कच्छ में पानी के एक छोटे से डबरे के पास पहुँचते ही (ऐसे डबरे यहाँ बहुत से थे) सार्जेंट-मेजर ने मुँह-हाथ धोया, कॉलर ठीक किया और झेन्या से कहा:

"तुम्हारा क्या ख्याल है? मुँह-हाथ धोने की इच्छा नहीं?"

उसने अपना सिर हिला दिया। प्रकट रूप से वह पीड़ित थी और उस जड़ता से निकाल पाने की उसकी हर कोशिश नाकामयाब रही थी। तब ठण्डी आह भरकर सार्जेंट-मेजर ने पूछा:

"तुम लड़कियों को तलाश लोगी या मैं साथ आऊँ?"

"मैं अकेली ही तलाश लूँगी।"

"तो फिर जाओ। उन्हें लेकर वहाँ पहुँचो जहाँ सोनिया पड़ी है। जगह मालूम है न तुम्हें... कहीं तुम अकेली जाने में डर तो नहीं रही?"

"नहीं।"

"लेकिन सावधान रहना, समझी?"

"जी।"

"तो जाओ। और जल्दी से। समय बरबाद न हो। शोक हम बाद में मनायेंगे।"

वे अलग हो गये। जब तक झेन्या नज़रों से ओझल नहीं हो गयी, सार्जेंट-मेजर उसकी ओर देखता रहा: जिस ढंग से वह चल रही थी, उसे पसन्द नहीं आया था। वह अपने-आप में गुम, मन की सुनने में लगी थी–दुश्मनों को भूलकर। कैसे गिरोह से उसका मुक़ाबला था...

सोनिया का शरीर पड़ा था। उसकी अधखुली आँखें आसमान पर टिकी थीं। सार्जेंट-मेजर ने उसकी आँखों को बन्द करने की एक और कोशिश की लेकिन दुबारा असफल रहा। उसने उसके ट्यूनिक की ऊपरी जेबों के बटन खोलकर सोनिया का कोमसोमोल कार्ड, अनुवादकों

के स्कूल का एक कागज़, दो चिट्ठियाँ और एक तस्वीर बाहर निकाल ली। यह एक सामूहिक तस्वीर थी, लोगों ने असैनिक पोशाकें पहन रखी थीं। बीचवाले आदमी को सार्जेंट-मेजर नहीं पहचान सका क्योंकि सोनिया की हत्या करनेवाले चाकू ने यहाँ पर एक छेद बना दिया था। लेकिन तस्वीर में उसे सोनिया जरूर मिल गयी। लम्बी आस्तीनोंवाली पोशाक पहने वह एक कोने में खड़ी थी। पोशाक के चौड़े कॉलर से उसकी पतली गर्दन मानो जुए से बाहर निकली प्रतीत हो रही थी। उसे एक दिन पहले की हुई बातचीत, सोनिया की पीड़ा की याद हो आयी। उसे यह सोचकर बड़ी कड़वाहट महसूस हुई कि सोनिया की—प्राइवेट सोफ़िया सोलोमोनोवना गुरविच की वीरतापूर्ण मृत्यु के बारे में लिखने-वाला भी कोई न था। सोनिया का छोटा-सा रूमाल उठाकर उसने उसे होंठों पर रखकर गीला किया और उसकी पलकों से खून साफ़ करके, चेहरा ढँक दिया। कागज़ात उसने अपनी जेब में डाल लिये, ऊपरवाली बायीं जेब में, ठीक पार्टी के अपने कार्ड की बगल में, फिर सोनिया की बगल में बैठकर अविस्मरणीय बन गये बटुए से। तम्बाकू निकालकर सिगरेट बनाने लगा।

उसका रोष शान्त हो चुका था, दिल का दर्द भी घुल चुका था; शेष रह गयी थी सिर्फ़ उदासी, पीड़ा, उसे ऊब-डूब करती। लेकिन अब समय सोचने-विचारने का, मामले को सुलझाकर अगला क़दम उठाने के बारे में फ़ैसला लेने का था।

जर्मन भेदियों की हत्या करके अपनी उपस्थिति प्रकट कर देने का उसे कोई अफ़सोस न था। समय उसके पक्ष में था। अब उसे बस प्रतीक्षा भर करने की जरूरत थी जब तक कि रिपोर्ट मुख्यालय में पहुँच जाये। जल्दी ही कोई टुकड़ी स्थिति से हर तरह निबटने का आदेश पाकर चल पड़ेगी। तीन या शायद ज्यादा से ज्यादा पाँच घंटे तक उन चारों को चौदह जर्मनों को रोक रखना होगा और उसे इस काम में सफल रहने की आशा थी। ख़ास तौर से अब, जबकि उन लोगों ने जर्मनों को सीधे रास्ते से आगे बढ़ने से रोककर चक्करदार रास्ते से—लेगोन्तोव झीलवाले रास्ते से होकर जाने पर मजबूर कर दिया था। उस रास्ते से उन्हें पूरे चौबीस घंटे तो लग ही जाने थे।

अब सारे साज-सामान के साथ लड़कियाँ उसके पास आ पहुँची थीं। उन में से दो गायब थीं—अलग-अलग ढँग से—लेकिन उनके सामान ग्रुप के साथ थे। अच्छा ख़ासा सामान उनके पास जमा हो गया था। सोनिया की लाश देखकर गाल्या चेतवेर्ताक काँपकर लगभग चीख़ ही उठी थी लेकिन ओस्यानिना ने कठोर आवाज में आदेश दिया:

"कोई मूढ़ता नहीं!"

गाल्या हो चुप गयी। सोनिया के सिर के पास घुटने के बल बैठकर वह धीरे-धीरे रोने लगी, रीता की साँस भारी हो उठी हालाँकि उसकी आँखें सूखे और जलते अंगारों-सी दमकती दिखाई दे रही थीं।

"तो जो करना चाहिये, करो," सार्जेंट-मेजर ने कहा।

ऐसी आपात् स्थिति के लिए कुदाल न होने पर अफ़सोस ज़ाहिर करते हुए उसने कुल्हाड़ी उठा ली फिर गोलाश्मों के बीच क़ब्र के लिए जगह ढूँढ़ने वह चल पड़ा। इर्द-गिर्द सब कहीं उसे चट्टान ही दिखाई दी, खोदने लायक़ कोई जगह न थी। आख़िर ज़मीन में उसे एक गड्ढा मिल गया। कुछ डालियाँ काटकर उसने गड्ढे की सतह पर बिछा दीं। फिर लौट आया।

"वह ऊँचे अंक पानेवाली छात्रा थी," ओस्यानिना ने कहा। "स्कूल व विश्वविद्यालय, दोनों जगहों पर उसे उत्तम अंक प्राप्त हुए थे।"

"हाँ," सार्जेंट-मेजर बोला। "उसे कविता से प्यार था।"

लेकिन मन में उसने कहा कि मुख्य बात यह नहीं। मुख्य बात यह थी कि सोनिया के बच्चे होते और समय आने पर बच्चों के बच्चे होते और इस तरह यह सिलसिला जारी रहता। लेकिन अब यह सिलसिला, यह सूत्र समाप्त हो गया था। मानवजाति के अनन्त ताने-बाने के एक नन्हे-से धागे को चाकू ने काट डाला था।

"उसे उठाओ," वह बोला।

कोमेल्कोवा और ओस्यानिना ने कन्धे से और चेतवेर्ताक ने पैरों की ओर से पकड़ लिया। लड़खड़ाती, काँपती वे उसे उठाकर ले चलीं। कामचलाऊ जूते के कारण चेतवेर्ताक, ख़ास तौर से भोंड़ी लग रही थी। सोनिया का ओवरकोट उठाये सार्जेंट-मेजर उनके पीछे-पीछे चल रहा था।

"बस, यहीं रुक जाओ," जब वे गड्ढे के पास पहुँच गयीं, उसने कहा। "कुछ पल के लिए उसे यहीं लेटा दो।"

उन्होंने सोनिया को क़ब्र के किनारे रख दिया। ज़मीन के असमतल होने के कारण उसका सिर आड़े-तिरछे होने लगा, तो कोमेल्कोवा ने एक फ़ौजी टोपी उसके गाल के नीचे रख दी। कुछ सोचने के बाद सार्जेंट-मेजर ने गुर्राती-सी आवाज में, ओस्यानिना की ओर देखे बिना उससे कहा, "उसे पैरों से पकड़ लो।" स्पष्ट रूप से उसे अपना काम नागवार लग रहा था।

"किस लिए?"

"जो कहा गया, वह करो! और वहाँ से नहीं, घुटनों से पकड़ो।"

उसने एक बूट उसके पैर से बाहर निकाल लिया।

"आप कर क्या रहे हैं?" ओस्यानिना चीख़ पड़ी। "आपको हिम्मत कैसे हुई!"

"क्या तुम नहीं देखती, हम में से किसी को इनकी बहुत अधिक जरूरत है?"

"ओह, नहीं, नहीं!..." आवेशपूर्वक चौंककर पीछे हटते हुए चेतवेर्ताक बोल उठी।

सार्जेंट-मेजर ने गहरी साँस छोड़ी। "लड़कियो, हम यहाँ कोई क्रीड़ा करने नहीं आये हैं। हमें ज़िन्दा बचे लोगों के बारे में सोचना चाहिये—युद्ध का यही नियम है। इसे पकड़ो, ओस्यानिना। यह आदेश है।"

दूसरा बूट निकालकर वह गाल्या चेतवेर्ताक की ओर मुड़ गया। "इन्हें पहन लो और कोई बकवास नहीं। मैं कोई चूँ-चपड़ नहीं सुनना चाहता—जर्मन हमारे लिए रुके नहीं रहेंगे।"

वह क़ब्र में कूद पड़ा। सोनिया को उठाकर, ओवरकोट में लपेटकर उसने नीचे लेटा दिया। लड़कियों द्वारा दिये गये पत्थरों से उसने क़ब्र पाट दी। बिना समय बर्बाद किये वे चुपचाप काम में लगी रहीं। शीघ्र ही एक ढूह वहाँ खड़ा हो गया और सार्जेंट-मेजर ने उसके ऊपर सोनिया की टोपी रख दी। टोपी को पत्थर से दबा दिया। कोमेल्कोवा ने वहाँ एक हरी टहनी रख दी।

"नक़्शे पर हम यह जगह चिह्नित कर लेंगे," उसने कहा। "युद्ध की समाप्ति पर उसके लिए स्मारक बनाया जायेगा।"

नक़्शे पर वह जगह ढूँढ़कर उसने क्रॉस का चिह्न लगा दिया। जब उसने नज़र ऊपर उठायी तो देखा कि चेतवर्ताक ने अभी तक एक पैर में पट्टियाँ लपेट रखी थीं।

"प्राइवेट चेतवर्ताक, माजरा क्या है? तुमने अपना जूता बदल क्यों नहीं डाला है?"

चेतवेर्ताक कँपकँपा उठी:

"नहीं, मैं नहीं पहन सकूँगी! मैं उसे पहनने से इनकार करती हूँ। मुझसे यह नहीं हो सकता। यह स्वास्थ्यकारक नहीं। मैं जानती हूँ, मेरी माँ एक चिकित्साकर्मी है..."

"बस, बस, काफ़ी झूठ बोल चुकी," ओस्यानिना फट पड़ी। "बहुत हुआ! तुम्हारी कोई माँ है ही नहीं! कभी तुम्हारी कोई माँ थी ही नहीं, तुम अनाथालय में पली हो। झूठ-मूठ की कहानियाँ न गढ़ो।"

गाल्या फफककर रो उठी—कटु, आहत, आँसू बह निकले—किसी ऐसे बच्चे की तरह जिसका खिलौना टूट गया हो।

"ओह, ऐसा न कहो! तुम ऐसी बात जबान पर ला कैसे सकी?" झेन्या ने मलामत से कहा और सुबकती लड़की के गले में अपनी बाँहें डाल दीं। "हमें द्वेषपूर्ण नहीं होना चाहिये, नहीं तो हम भी जर्मनों की तरह पशुवत हो जायेंगे..."

ओस्यानिना चुप रही।

गाल्या वास्तव में निराश्रिता थी और उसका उपनाम "चेतवेर्ताक" (चौथाई) भी उसे अनाथालय में ही दिया गया था क्योंकि वह क़द से सभी बच्चों से छोटी थी।

शिशुशाला एक भूतपूर्व मठ में थी जहाँ ऊँची गुम्बदाकार छत से मोटे-मोटे, पांशुवर्णी काष्ठ कीड़े नीचे गिरते रहते। जल्दी-जल्दी सफ़ेदी किये जाने के कारण पूरी तरह नहीं मिट पाये सन्तों के दाढ़ीदार चेहरे उन असंख्य प्रार्थनागृहों की दीवारों से बच्चों की ओर झाँकते रहते जिन्हें अब शिशुशाला के रूप में काम में लाया जा रहा था और भिक्षुकों की कोठरियाँ तहख़ानों-सी ठण्डी थीं।

दस साल की उम्र में ही गाल्या ने एक ऐसी घटना रचकर नाम

कमा लिया था जो मठ के लिए अभूतपूर्व थी। एक रात जब वह शौचालय के लिए अपने बिस्तरे से उठकर गयी तो अपने बेबस क्रन्दन से पूरी शाला की नीन्द भंग कर दी । नीन्द से जागे शिशुशाला के कर्मचारियों ने उसे एक आड़ अंधेरे गलियारे में फ़र्श पर पाया। गाल्या उन्हें बड़े स्पष्ट शब्दों में बता पाने में सफल रही कि एक दाढ़ीवाले बूढ़े ने उसे अपने भूगर्भीय माँद में खींच ले जाने की कोशिश की थी।

"हमले के उस मामले" पर कार्रवाइयाँ शुरू हो गयीं। व इस बात से गड़बड़झाला में पड़े थे कि पूरे ज़िले में दाढ़ीवाला एक भी बूढ़ा आदमी नहीं रहता था। बाहर से आये खोजबीन करनेवालों और स्थानीय शर्लाक होम्सों ने गाल्या बड़े धैर्यपूर्वक पूछ-ताछ की और जितनी बार उससे सवाल पूछे जाते, उसके मामले से सम्बन्धित उतनी नयी बातें जमा होती जातीं। गाल्या के बड़े अच्छे मित्र, शिशुशाला के भण्डारी ने, गाल्या के लिए इतना प्यारा उपनाम उसी ने चुना था, आख़िर पता लगा लिया कि यह सारा का सारा मामला ही गाल्या की कपोल-कल्पना है।

दूसरे बच्चों के व्यंग्य-बाणों का निशाना बनी रहनेवाली गाल्या ने आत्मरक्षा में आख़िरकार एक ऐसी कहानी गढ़ ली थी जिसकी नायिका वह स्वयं थी। उसकी कहानी बहुत कुछ टॉम थम्ब की कहानी जैसी थी लेकिन पहली बात तो यह कि मुख्य पात्र लड़का नहीं लड़की थी और दूसरी बात यह कि दाढ़ीवाले बूढ़े आदमी और अंधेरे तहख़ानों ने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

कहानी ने गाल्या को मशहूर बना दिया लेकिन इससे सुनते-सुनते लोग आख़िर ऊब गये। गाल्या ने नयी कहानी न गढ़ने का फ़ैसला किया लेकिन न जाने कैसे शिशुशाला के इर्द-गिर्द इस अफ़वाह ने ज़ोर पकड़ना शुरू किया कि साधुओं ने यहाँ ख़ज़ाना छुपा रखा था। बच्चों में जैसे महामारी-सी फैल गयी और देखते ही देखते मठ के सारे प्रांगण खोद डाले गये। व्यवस्थापकों ने किसी तरह इस मामले को निबटाया तो दूसरी मुसीबत आ खड़ी हुई: तहख़ानों में लहराते सफ़ेद चोगे पहने भूत दिखाई देने शुरू हो गये। वैसे भूत बहुत को दिखाई दिये और छोटे बच्चों ने परिणाम चाहे जो भी हो, रात में बिस्तर से निकलने से एकदम इनकार कर दिया। मुसीबत बढ़ते-बढ़ते वास्तविक

आपदा बन गयी और शिक्षकों को गुपचुप भूत पकड़ने का काम करना पड़ा। और पहले ही दिन गाल्या चेतावनीक रंगे हाथ पकड़ी गयी। उसने बिस्तरेवाली चादर लपेट रखी थी।

उसके बाद गाल्या ने जैसे शरारतें बन्द कर दीं। वह बड़ी लगन से पढ़ाई करती, छोटे बच्चों की देखभाल में मदद करती और हालाँकि जीवन भर उसने एकल प्रदर्शनों, सांध्य गाऊनों और सब की प्रशंसा-पात्रा बनने का सपना देखा था, वह सामूहिक गायन-मण्डली में शामिल होने को भी सहमत हो गयी। उसी समय वह पहली बार प्रेम में पड़ी और अपने हर कार्य में रहस्य का पुट देने की आदत के अनुसार शाला में छोटे-छोटे रुक्के, ख़तों, आँसुओं और अभिसार स्थलों की भरमार होने लगी। फिर वही ढाक के तीन पातवाली स्थिति आ गयी; शाला के अधिकारियों ने उससे छुटकारा पा लेने का फ़ैसला किया और अच्छी-ख़ासी छात्रवृत्ति के साथ उसे पुस्तकालयकर्मियों के विद्यालय में भेज दिया।

जब लड़ाई छिड़ी गाल्या तृतीय वर्ष की छात्रा थी और लड़ाई छिड़ने के बाद पहले ही सोमवार को बिना किसी अपवाद के पूरे ग्रुप ने स्थानीय लामबन्दी केन्द्र पर ख़ुद को प्रस्तुत कर दिया। गाल्या को छोड़कर पूरे ग्रुप को स्वीकार कर लिया गया क्योंकि आवश्यकतानुसार न तो वह ऊँचाई से, न तो आयु से उपयुक्त थी। गाल्या ने इसे झूठ कहकर इनकार कर दिया; सैनिक अधिकारियों पर उसने अपना हमला जारी रखा और इस बेशर्मी से झूठ बोलती रही कि आख़िर एक कर्नल को पट्टी पढ़ाने में सफल हो गयी। उसका दिमाग़ अपनी बातों से उसने इस तरह भर दिया कि कई रातों तक जागने के बाद भी वह साफ़ नहीं हो पाया। गाल्या को अपवाद स्वरूप बहाल कर उसने एक हवामार टुकड़ी में भेज दिया।

साकार सपना अपनी रोमांचकता खो देता है। वास्तविकता निष्ठुर व निर्मम साबित हुई थी और इसमें केवल वीरतापूर्ण उद्यम की ही नहीं बल्कि सेना के नियमों के कठोरता से पालन की भी ज़रूरत थी। ऊपर उठने और निरालापन की भावना शीघ्र ही समाप्त हो गयी। वहाँ का दैनिक कार्यक्रम मोर्चे के संबंध में गाल्या के ख़्यालों से सर्वथा भिन्न था। गाल्या की उलझन बढ़ती गयी, उसका सारा उल्लास जाता

रहा और दूसरों की नज़रों से बचकर वह रातों को रोया भी करती।

लेकिन तभी झेन्या आ पहुँची और संसार एक बार फिर से ख़ुशी से झूम उठा। बातें न गढ़ना गाल्या के वश के बाहर था। वस्तुत: मामला झूठ बोलने का न था बल्कि आकांक्षाओं की पूर्ति का था। इसी कारण, उसने कल्पनाओं में अपने लिए एक माँ भी गढ़ ली थी जो एक चिकित्साकर्मी थी और जिसका वजूद उसके दिल में घर कर चुका था...

उन्होंने काफ़ी समय ज़ाया कर दिया था और सार्जेंट-मेजर को घबड़ाहटट-सी महसूस होनी लगी। जितनी जल्दी हो सके, उन्हें यहाँ से निकलकर जर्मनों का पता लगाना चाहिये और उन्हें बुरी तरह खदेड़ कर अपने भेदियों को ढूँढ़ने के लिए छोड़ देना चाहिये। अगर उन्होंने सब कुछ उसी तरह किया तो सार्जेंट-मेजर बाज़ी ले जायेगा। वह जर्मनों को कठपुतलियों की तरह नचा देगा, उन्हें जिधर चाहेगा, भेज देगा लेकिन प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। उसे तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक कुमक नहीं पहुँचती और जर्मन घेर नहीं लिये जाते।

बेशक, उन्होंने काफ़ी समय गँवा दिया था। चाहे सोनिया को दफ़न करने में या चेतवेर्ताक से बहस करने में, इन सब में समय ख़र्च हुआ था। इसके साथ ही सार्जेंट-मेजर ने सबमशीनगनों की जाँच की, दोनों अतिरिक्त बन्दूकें छुपा दीं और कारतूसों का बँटवारा किया। उसने ओस्यानिना से पूछा:

"क्या कभी सबमशीनगन चलायी है?"

"सिर्फ सोवियत।"

"तो अब जर्मन सबमशीनगन पर हाथ आज़मा सकती हो। मेरे ख़्याल से तुम चला लोगी।" उसे चलाने का तरीक़ा बताते हुए उसने चेतावनी दी: "बौछार लम्बी न हो – इससे नली ऊपर सरक जाती है। छोटी-छोटी बौछारें ही करना।"

आख़िर वे चल पड़े··· पहले सार्जेंट-मेजर, उसके पीछे मुख्य भाग के रूप में चेतवेर्ताक और कोमेल्कोवा, पार्श्व में रही ओस्यानिना। व ख़ामोशी से चल रहे थे, चौकस लेकिन इसके बाजूद व जरूर ही अपनी-अपनी अनुभूतियों में खोये होने के कारण जर्मनों से जा टकराने

से बाल-बाल ही बचे। यह एक चमत्कार ही था कि आमना-सामना न हुआ।

क़िस्मत से सबसे पहले सार्जेंट-मेजर की नज़र उन पर पड़ी थी। जब वह एक गोलाश्म के पीछे से निकल आया तो उसने देखा दो जर्मन सीधे उनकी ओर बढ़े आ रहे थे – बाक़ी जर्मन उन दोनों के पीछे थे। अगर सात क़दम वह चूक गया होता तो इसके साथ ही सेना में उनकी सेवा की अवधि भी हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो गयी होती – गोलियों की दो बौछारें उनका काम तमाम करने को काफ़ी होतीं।

लेकिन वे सात क़दम उसने तय किये थे, इस लिए हर चीज़ उसके पक्ष में थी: कतराकर निकल जाने, लड़कियों को इधर-उधर फैल जाने का संकेत देने, जेब से हथगोला निकालकर उछाल फेंकने का समय उसे मिल गया था। क़िस्मत से हथगोला भी एकदम तैयार था और एक गोलाश्म के पीछ से उसने उसे उछाल फेंका। विस्फोट के फ़ौरन बाद ही अपनी सबमशीनगन से उसने गोलियों की बौछार भी कर दी थी।

सेना के नियमों में ऐसी मुठभेड़ों को "आकस्मिक झड़पें" कहा गया था। ऐसी झड़पों की लाक्षणिक विशेषता यह होती है कि दुश्मन आपकी शक्ति से अपरिचित होता है, उनका मुक़ाबला टोही दल से हुआ है या किसी अग्रिम दस्ते से – उनके लिए यह फ़ैसला करना कठिन होता है। यानी मुख्य बात थी, उन्हें अटकल लगाते रहने में फँसाये रखना, उन्हें दम मारने का भी मौक़ा न देना।

आदतन, सार्जेंट-मेजर को इन सब बातों पर सोच-विचार करने की जरूरत नहीं पड़ती थी – वे सब उसकी स्मृति में अंकित रहती थीं जीवन भर के लिए। फिर स्वत: दूसरा विचार आया, गोली चलाने का। तब लड़कियों का ख़्याल आया: क्या वे आड़ ले पायीं, मोर्चा ले पाने में सफल रहीं या भाग खड़ी हुईं?

शोर से कान बहरे हुए जा रहे थे क्यों कि जर्मन काम लायक सभी सबमशीनगनों से उसके गोलाश्म पर गोलियाँ बरसाये जा रहे थे। पत्थर के टुकड़ों से उसके चेहरे पर घाव हो गया था, आँखें धूल से भर गयी थीं और आँसुओं के कारण वह मुश्किल से देख पा रहा था – उन्हें पोंछने का उसे समय ही नहीं मिला था।

उसकी सबमशीनगन का खटका खटककर रह गया; गोलियाँ खत्म हो चुकी थीं। उसे इसी बात का डर था। दुबारा भरने में बहुमूल्य क्षण खर्च होते और इस समय उन क्षणों का मतलब था जीवन और मृत्यु। खामोश गन की ओर जर्मन सरपट धावा बोलते आगे बढ़ आ सकते थे; दस मीटर की दूरी वे आसानी से तय कर ले सकते थे और फिर वही होता।

लेकिन जर्मन वह सरपट धावा नहीं कर पाये। उन्होंने अपने सिर भी ऊपर नहीं उठाये क्योंकि ओस्यानिना की सबमशीनगन अपना काम कर रही थी। वह स्वल्प बौछार कर रही थी, सावधानी से निशाना लेते हुए और निकट से, जिससे वास्कोव को वे बहुमूल्य क्षण हासिल हो गये जिनके लिए आपको अपने मेहरबान का जीवन भर शुक्रिया अदा करना होगा।

लड़ाई कितनी देर चली, बाद में किसी के लिए भी बता पाना असंभव था। अगर मिनटों और सेकेंडों में गिना जाये तो यह पलायी झड़प थी—सेना के नियमों के अनुसार जैसा कि किसी भी आकस्मिक झड़प को होना चाहिये, लेकिन अगर शारीरिक शक्ति, स्नायविक तनाव और जान पर खेल जाने के आधार पर बात की जाये तो इसकी बराबरी जीवन के एक बहुत बड़े हिस्से और कुछ के तो पूरे जीवन की आहुति से की जा सकेगी।

गाल्या चेतवेर्ताक तो दहशत के मारे एक भी गोली नहीं चला पायी थी। आड़दार पत्थर के पीछे मुँह छुपाये और कानों पर हाथ रखे वह जमीन पर बस लेटी रही थी। उसकी बन्दूक बगल में यूँ ही पड़ी रही थी। झेन्या जल्दी संभल गयी थी, उसने अटकलपच्चू गोलियाँ भी चलायी थीं—निशाना लेने का मौक़ा कहाँ था और फिर यह कोई चाँदमारी का मैदान तो था नहीं। बस इस उम्मीद से वह गोली चलाती गयी कि किसी न किसी को तो शायद लग ही जायगी।

झड़प में दो सबमशीनगनें और एक बन्दूक, बस इतने ही हथियार काम में लाये गये थे लेकिन इसके बावजूद जर्मन मैदान छोड़ भागे थे। इसलिए नहीं कि वे डर गये थे—इसका तो सवाल ही नहीं उठता। बल्कि इसलिए कि उनके सामने तस्वीर साफ़ न थी। सो, कुछ देर तक गोलियों का जवाब देने के बाद वे पीछे हट गये थे—गोलियों

की आड़ लिये बिना, बिना रक्षात्मक आड़वाली टुकड़ी के —वे बस जंगल में लौट गये थे।

गोलीबारी अचानक ही थम गयी: केवल कोमेल्कोवा गोली चला रही थी, बन्दूक के हर झटके से उसका शरीर काँप उठता। कारतूस की पेटी खत्म होने के साथ ही वह भी रुक गयी। उसने सार्जेंट-मेजर की ओर इस तरह देखा मानो बस यूँ ही हवा खाने चली आयी हो। चेहरा छिल गया था।

"तो यह हुई बात," सार्जेंट-मेजर ने लम्बी साँस छोड़ी।

ऐसी पूर्ण निस्तब्धता थी कि कानों में बजती सुनाई दे रही थी। हवा में बारूद, प्रस्तर-चूर्ण और धुएँ की बू थी। सार्जेंट-मेजर ने चेहरे पर हाथ फेरे तो हाथों में खून दिखाई दिया—पत्थर के टुकड़ों से उसका चेहरा छिल गया था।

"क्या आप जख्मी हो गये हैं?" अस्फुट स्वर में ओस्यानिना ने पूछा।

"नहीं," सार्जेंट-मेजर ने कहा। "अपनी आँखें जमाये रखो।"

गोलाश्म के परे झाँकने के लिए वह उठ खड़ा हुआ—लेकिन कोई भी गोली नहीं चली। उसने नजरें दौड़ायीं तो देखा भूर्ज के कुंज में वृक्षों की फुनगियाँ हिल रही थीं—कुंज जंगल से जुड़ा था। पिस्तौल कसकर हाथ में पकड़े वह आगे की ओर खिसक आया फिर सरपट दौड़कर एक दूसरे गोलाश्म के पीछे छुप गया। उसने फिर दुबारा झाँककर देखा, हथगोले के विस्फोट से विदीर्ण काई पर खून के गहरे चकत्ते दिखाई दे रहे थे। खून तो काफ़ी था लेकिन लाश एक भी नहीं दिखाई दे रही थी—जरूर ही साथ उठा ले गये होंगे।

चट्टानों व झाड़ियों में टोह लेते सार्जेंट-मेजर ने निष्कर्ष निकाला कि जर्मनों ने अपने पीछे कोई भी आड़ देनेवाली रक्षात्मक टुकड़ी नहीं छोड़ी है। वह पूरी तरह तनकर उठ खड़ा हुआ और बड़ी राहत के साथ लड़कियों के पास लौट आया हालाँकि उसका चेहरा टीस रहा था। और वह जबर्दस्त थकान महसूस करने लगा था। सिगरेट पीने तक की उसकी इच्छा नहीं हो रही थी। उसका दिल बस लेटने को कर रहा था, चाहे सिर्फ़ दस मिनटों के लिए ही क्यों नहीं लेकिन अभी वह लड़कियों के पास पूरी तरह पहुँचा भी नहीं था कि ओस्यानिना अचानक उससे सवाल कर उठी:

"क्या आप कम्युनिस्ट हैं, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर?"

"मैं बोल्शेविक पार्टी का सदस्य हूँ...."

"तो हम आपको अपनी कोमसोमोल बैठक की अध्यक्षता करने के लिए आमंत्रित करते हैं।"

सार्जेंट-मेजर को अपने कानों पर विश्वास ही न हुआ।

"बैठक?"

अचानक उसकी नज़र आँसू बहाती चेतवेर्ताक पर जा पड़ी जब कि गोलियों के धुएँ से जिप्सी की तरह काली पड़ गयी कोमेल्कोवा गुस्से से अपनी आँखें चमकाती चीख रही थी, "बुज़दिल!"

अब सारी बात उसकी समझ में आ चुकी थी।

"बैठक? बहुत खूब!" सार्जेंट-मेजर ने कहना शुरू किया, उसे अपने अन्दर क्रोध उठता-सा महसूस हुआ। "बहुत खूब, अद्‌भुत—बैठक। तो हम बैठक करने जा रहे हैं जिसमें हम कॉमरेड चेतवेर्ताक के आचरण पर बहस करेंगे, समय की कसौटी पर खरी न उतरने के कारण असकी निन्दा करेंगे फिर उसे मिनट-ब-मिनट ठीक-ठीक दर्ज करेंगे। क्या यही तुम लोग चाहती हो?"

कोई कुछ न बोली, गाल्या चेतवेर्ताक भी रोना छोड़कर उसकी बात सुनने लगी।

"और फिर हम जर्मनों को अपनी ग़लती का बदला चुकाने की पूरी छूट दे देंगे। क्या हम यही तो चाहते हैं? नहीं, हम ऐसा नहीं चाहते, क्यों? इसलिए, तुम्हारे सार्जेंट-मेजर और एक कम्युनिस्ट की हैसियत से मैं फिलहाल सभी बैठकों पर पाबन्दी लगाता हूँ। अब मैं तुम्हें स्थिति से अवगत कराता हूँ: जर्मन जंगल में लौट गये हैं। जिस जगह हथगोला फटा था, वहाँ काफ़ी खून है। इसका मतलब है, वहाँ कोई मरा ज़रूर है। इस लिए हम उनकी संख्या अब तेरह मान ले सकते हैं—यह तो हुई पहली बात। दूसरी बात यह कि मेरे पास कारतूस की एक पूरी पेटी बच रही है। और तुम्हारे पास कितनी है, ओस्या-निना?"

"डेढ़।"

"तो यह बात है। जहाँ तक बुज़दिली का सवाल है—कोई भी बुज़दिल नहीं। लड़कियो, बुज़दिली का पता तो केवल दूसरी मुठभेड़ में ही चल पायेगा। पहली मुठभेड़ में इसे बुज़दिली नहीं, अस्तव्यस्तता

कहेंगे। ऐसा अनुभवहीनता के कारण होता है। क्या तुम सहमत हो, प्राइवेट चेतवेर्ताक?"

"जी...."

"अगर ऐसी बात है तो अपनी आँखें और बहती नाक पोंछ डालो। ओस्यानिना आगे बढ़ेगी और जंगल पर नज़र रखेगी। बाक़ी दोनों भोजन और यथासंभव आराम करेंगी। कोई सवाल?... शुरू हो जाओ।"

खामोशी से उन्हों ने खाया। सार्जेंट-मेजर को भूख न थी। उसकी इच्छा पैर फैलाकर केवल बैठने की थी। फिर भी जी क़ाबू में करके वह मुँह चलाता रहा क्योंकि उसे ताक़त की ज़रूरत थी। उसके सिपाहियों ने भुक्खड़ों-सा खाया—एक-दूसरे की निगाहों से बचते हुए अपने मज़बूत जवान दाँतों से चबा-चबाकर। लेकिन इसके बावजूद वह खुश था—वे ढेर नहीं हुई थीं बल्कि अभी तक डटी थीं।

अब सूरज क्षितिज में नीचे झुक आया था और जंगल का सिरा ज्यों-ज्यों अंधेरा होता गया, सार्जेंट-मेजर की चिन्ता बढ़ती गयी। कुमक पहुँचने में देर हो रही थी और जर्मन झुटपुटे का इस्तेमाल उस पर टूट पड़ने या झीलों के बीचवाली सँकरी राह से निकल जाने या जंगल में ग़ायब हो जाने के लिए कर सकते थे। फिर ढूँढ़ते रहिये उन्हें! उसे उनकी तलाश अभी शुरू कर देनी चाहिये, अगर उसे सही स्थिति की जानकारी हासिल करनी है तो उनके पीछे-पीछे चल देना होगा। उसे करना तो ऐसा ही चाहिए लेकिन ताक़त बची नहीं थी।

बेशक, जैसा वह चाहता था, वैसा नहीं हो पा रहा था। वह एक सैनिक गँवा चुका था और जर्मनों के सामने अपना ठिकाना प्रकट कर चुका था। उसकी टुकड़ी को आराम की ज़रूरत थी। और पता नहीं कुमक कहाँ रह गयी थी?

बहरहाल, जब तक ओस्यानिना खाती रही, सार्जेंट-मेजर ने उतनी देर तक आराम कर लिया। फिर वह उठ खड़ा हुआ और कमर की पेटी कसने के बाद कठोरता से बोला:

"टोह लेने प्राइवेट चेतवेर्ताक मेरे साथ जायेगी। ओस्यानिना यहाँ का मुखिया बनेगी। तुम्हारी ज़िम्मेदारी होगी, हिसाब भर दूरी से हम लोगों का पीछा करना। जब तुम्हें गोलियों की आवाज़ सुनाई दे—

ख़ुद को छुपा लो – यह आदेश है। ख़ुद को छुपाकर हमारे आने तक राह देखो अगर हम वापस नहीं आते, चुपचाप, एकदम ख़ामोशी से – जहाँ हमारे पहले ठिकाने थे, वहाँ से होकर पश्चिम की ओर बढ़ती जाओ – जब तक किसी से तुम्हारी मुलाक़ात न हो। फिर रिपोर्ट दो।"

ऐसे काम में चेतवेर्ताक को साथ नहीं लेना चाहिये, यह बात उसके दिमाग़ में ज़रूर आयी थी। कोमेल्कोवा इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त थी – एक ऐसी विश्वस्त कॉमरेड जो दिन में दो बार कसौटी पर खरी उतरी थी। वे कसौटियाँ भी ऐसी थीं जिन पर कोई भी आदमी शेखी बघार सकता था। लेकिन इसके बावजूद उनके सीनियर होने के नाते उसे सैनिक कमांडर से कुछ अधिक होना चाहिये था – उसका कर्त्तव्य उन्हें प्रशिक्षित करना भी था। यह बात भी सेना के नियमों के अनुसार थी।

और सार्जेंट-मेजर सेना के नियमों के प्रति महान आदरभाव रखता था। वे नियम उसे कंठस्थ थे। वह उनका अक्षरशः पालन करता। इसी कारण इस समय असने गाल्या से कहा :

"तुम अपना बुगचा और ओवरकोट यहीं छोड़ जाओगी। तुम मेरे पदचिह्नों पर चलती आओगी और मेरी हर हरकत पर आँखें टिकाये रहोगी। और दूसरी बात, चाहे कुछ भी हो तुम्हारे गले से कोई आवाज़, चीख़ नहीं निकलनी चाहिये – और आँसुओं को तो भूल ही जाओ।" चेतवेर्ताक ने जल्दी से सिर हिला दिया, उसकी आँखों में संत्रस्तता छायी थी।

११

जर्मन मुक़ाबले से कतरा क्यों निकले थे? उनके अभ्यस्त कानों ने प्रतिद्वन्द्वियों की सही शक्ति (वास्तव में तो इनकी ताक़त जवाब दे गयी थी!) का अन्दाज़ ज़रूर लगा लिया होगा तो फिर क्यों वे पीठ दिखा गये थे?

यह बेमानी सवाल नहीं थे और न ही जिज्ञासा मात्र जिससे मजबूर हो सार्जेंट-मेजर उनका समाधान करने निकल पड़ा था। आपको अपने दुश्मन को ज़रूर जानना चाहिये। उसकी हर कार्रवाई, उसकी हर हरकत आपके लिए एकदम स्पष्ट होनी चाहिये। आप उसके बारे में सोचना तभी शुरू करते हैं जब आप एकदम साफ़-साफ़ जानते हैं कि वह ख़ुद क्या सोच सकता है। और फिर युद्ध में सिर्फ़ यही नहीं मायने रखता है कि कौन किसे गोली मार देता है। युद्ध में उससे कहीं ज़्यादा बड़ा सवाल बुद्धिमत्ता में मात देने की होती है। नियम इसलिए बनाये जाते हैं कि आप स्वतंत्रतापूर्वक सोच सकें – बहुत दूर तक, दूसरे पक्ष के बारे में, अपने दुश्मन के बारे में।

लेकिन सार्जेंट-मेजर ने घटनाओं पर चाहे जितनी बार भी सोच-विचार किया, एक बात स्पष्ट प्रतीत हुई – जर्मनों को उसकी टोली का कोई पता न था। इस का मतलब था जिन दो जर्मनों की उसने हत्या की थी, वे अग्रिम दस्ते के नहीं बल्कि भेदिये थे। मुख्य दस्ता, उनकी नियति से अनभिज्ञ, पीछे-पीछे चला आ रहा था। सोच-विचार के बाद वह इसी निष्कर्ष पर पहुँचा था लेकिन इससे क्या फ़ायदा उठाया जा सकता है, इस संबंध में कोई नतीजा नहीं निकाल पाया था।

वह दिमाग़ लड़ाता रहा, ताश के पत्तों की तरह तथ्यों को उलटता-पलटता रहा लेकिन मस्तिष्क को मुख्य समस्या पर ही टिकाये रहा। बिना किसी आवाज़ के, हर चीज़ से चौकस वह लगभग तिरता-सा चला जा रहा था और अगर संभव होता तो वह अक्षरशः अपने कान खड़े कर लेता। लेकिन धीमी-धीमी बयार में न तो कोई आवाज़, न बू थी और बिना रुके सार्जेंट-मेजर आगे बढ़ता रहा। मुसीबत की मारी लड़की घिसटती चाल से उसके पीछे-पीछे चली आ रही थी और सार्जेंट-मेजर अक्सर उसकी ओर मुड़कर नज़र डाल लेता लेकिन अब तक शिकायत का कोई मौक़ा उसने नहीं दिया था। वह उसके आदेशों का पालन कर रही थी, उसके पीछे-पीछे चल रही थी – लेकिन अनिच्छापूर्वक, उसकी गति स्वच्छन्द न थी – शायद वह अभी भी सिर के ऊपर से गुज़रती उन गोलियों के बारे में सोचती जा रही थी।

लेकिन नहीं, गाल्या वास्तव में गोलीबारी की बात भूल चुकी थी। वह तो सोनिया के तीखे नाक-नक़्शवाला चेहरा, उसकी मृत, अधखुली आँखें और ख़ून से कड़ा पड़ गया उसका ट्यूनिक था जो उसे परेशान

कर रहा था। और ''' वे छोटे से दो छेद जो उसके सीने में हो गये थे! न तो वह सोनिया के, न तो उसकी मृत्यु के बारे में सोच रही थी बल्कि जुगुप्सा की सीमा तक चमड़ियों को बेध कर पार करते चाकू को, मानव शरीर को काटने की पीड़ा को महसूस कर रही थी, शारीरिक रूप से उसका अनुभव कर रही थी, खून की जघन्य बू से उसकी नासिका फटी जा रही थी। गाल्या हमेशा से वास्तविक से अधिक काल्पनिक जगत में सक्रिय रही थी और इस समय वह इन सब चीज़ों को भूलने को, विस्मृत कर देने की असफल कोशिश में लगी थी। इसके फलस्वरूप वह दिमाग़ उलट देनेवाले दहशत से भर उठी थी और इस खौफ़नाक बोझ ने उसे विवेकशून्य बना दिया था।

जैसा कि स्वाभाविक ही था, सार्जेंट-मेजर को इसकी कोई जानकारी न थी। वह यह नहीं महसूस कर पाया कि जिस सैनिक से वह जीवन-मृत्यु की अत्यन्त निकट सम्भावनाओं से जुड़ा था, वह सैनिक जर्मनों तक पहुँचने से पहले ही, उन पर एक बार भी गोली चलाये बिना मर चुका है।

सार्जेंट-मेजर ने एक हाथ ऊपर उठाया: पदचिह्न दायीं ओर को चले गये थे। बहुत हलके, पथरीली ज़मीन पर मुश्किल से दिखाई देते। यहाँ नम काई पर जलसिक्त पदचिह्न गहरे दिखाई दे रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो भारी बोझ ढोते-ढोते जर्मनों के क़दम यहाँ डगमगा गये थे और उनके क़दमों की बड़ी-बड़ी छापें यहाँ अंकित हो गयी थीं।

"यहीं रुकी रहो," सार्जेंट-मेजर ने बुदबुदाकर कहा।

पदचिह्नों के समानान्तर वह दायीं ओर बढ़ गया। झाड़ियों में खोज-बीन के बाद वास्कोव को लाशें मिल गयीं। लाशें एक छोटे से गड्ढे में पड़ी थीं जिन पर जल्दी-जल्दी झाड़ियों का ढेर ऊपर से रख दिया गया था। बड़ी सावधानी से असने झाड़ियों को हटा दिया। मुँह के बल वहाँ दो लाशें पड़ी थीं। उनका निरीक्षण करते हुए, वह उकड़ूँ बैठ गया। ऊपरवाली लाश की गर्दन के पीछे एक साफ़ दिखाई देता छोटा-सा छेद था। खून का कोई नामोनिशान न था और छोटे-छोटे तराशे बाल झुलस गये थे।

"इसे ख़ुद ही गोली मार दी," सार्जेंट-मेजर ने निष्कर्ष निकाला।

"अपने ही आदमी को। सिर के पीछे। घायल हो गया था। सो ख़त्म कर दिया—उनका नियम ही यही है''''"

सार्जेंट-मेजर ने थूक दिया। हाँ, यह जघन्य अपराध तो था लेकिन उसने लाशों पर थूक दिया। उनके प्रति घृणा के अलावा उसे कुछ भी महसूस नहीं हुआ—उसके लिए वे क़ानून के बाहर, मानवीय संबंधों के परे थे।

और फिर, मानव को पशुओं से सिर्फ़ इसलिए न भिन्न माना जाता है कि उसमें मानव होने का एहसास है। जब यह अहसास ख़त्म हो जाता है, वह पशु हो जाता है। दो हाथ, दो पैरवाला पशु; भयानक पशु, महा भयावह। ऐसे प्राणी के लिए कोई मानवीय अनुभूति नहीं हो सकती—न तो करुणा, न दया। जब तक वह पशु अपनी मांद में रेंग न जाये, उसकी पिटाई होनी चाहिये; वहाँ भी उसकी पिटाई होनी चाहिये ताकि उसे याद आ जाये, वह यह समझ ले कि कभी वह भी एक मानव था।

केवल कुछेक घंटे पहले, दिन में वह प्रतिशोध की आग में मानो जल रहा था: खून का बदला खून। अब अचानक ही सब कुछ स्थिर हो गया था —परिपक्व। घृणा के रूप में—तटस्थ, सुनिश्चित घृणा के रूप में परिपक्व हो चुका था। लेकिन सनक भरा नहीं।

"तो तुम्हारा ऐसा ही क़ानून है? ''' मैं इसे याद रखूँगा।"

फिर बड़ी शांति से हिसाब लगाया: दो और कम गये यानी बारह रह गये। एक दर्जन।

वह वहाँ लौट आया जहाँ चेतवेर्ताक प्रतीक्षा कर रही थी। उस पर नजर पड़ते ही उसे अपने अन्दर कुछ टूटता-सा महसूस हुआ। वह संत्रस्त थी—बहुत बुरी तरह, कहीं अन्दर से जीवन भर बनी रहनेवाली संत्रस्तता से। पल भर में सार्जेंट-मेजर ने यथासंभव सारा उल्लास अपने अन्दर भर लिया; वह उसे देखकर यूँ मुस्कराया मानो वह उसकी ही प्रियतमा हो और आँख मारकर बोला:

"हमने उनमें से दो का काम तमाम कर दिया है, गाल्या! १४ में से दो गये, १२ बचे। उतना बुरा तो नहीं, कॉमरेड सैनिक। तुम्हारे, हमारे लिये कुछ भी नहीं!"

लेकिन उसके मुँह से कोई भी शब्द नहीं फूटा, वह मुस्करायी तक

नहीं। बस वह उसकी ओर देखती रही—ऐसी आँखों से जो सब कुछ कह रही थी। ऐसे मामलों में अगर चेतवेर्ताक की जगह कोई पुरुष होता तो अच्छा-ख़ासा क्रोध पैदा हो सकता था, उसे जमकर गाली दी जा सकती थी या कान गर्म कर दिया जाता। यह वास्कोव अनुभव से जानता था। लेकिन इस लड़की के साथ क्या किया जाये — कुछ नही सूझ रहा था। इस तरह का उसे कोई भी अनुभव न था, सेना के नियम भी इस संबंध में ख़ामोश थे।

"क्या कभी तुमने पावेल कोर्चागिन के बारे में पढ़ा ?"

चेतवेर्ताक ने उसकी ओर ऐसे देखा मानो वह कोई पागल आदमी हो लेकिन फिर भी सिर हिला दिया। वास्कोव की आशा बलवती हो उठी।

"तो तुमने उसके बारे में पढ़ा है। अच्छी बात है। लेकिन मैंने उसे देखा है—ठीक उसी तरह जैसे अभी तुमको देख रहा हूँ—कहो, कैसा लगा तुम्हें ? जानती हो, एन-सी-ओ के एक दल को यानी हम लोगों को जिन्हें सैनिक व राजनीतिक प्रशिक्षण में अच्छे अंक प्राप्त हुए थे, मास्को ले जाया गया। तो वहाँ हमने समाधि, सब तरह के प्रासाद, संग्रहालय देखे और पावेल कोर्चागिन से मुलाक़ात की। हालाँकि वह बड़े ओहदे पर है, बड़ा सीधा-सादा, अच्छे दिलवाला आदमी है। उसने हमारा अच्छी तरह स्वागत किया, चाय पिलायी और सेना में हमारे हाल-चाल के बारे में पूछा…"

"आप मुझे झाँसा काहे को दे रहे हैं ?" शांतिपूर्वक चेतवेर्ताक पूछ बैठी। "कोर्चागिन को लकवा मार गया था। और उसका नाम कोर्चागिन भी नहीं—ओस्त्रोव्स्की है। वह अन्धा भी है, अंगुली तक नहीं उठा सकता और मेरे स्कूल के लड़के-लड़कियाँ उसको ख़त लिखा करती थीं।"

"शायद यह कोई दूसरा कोर्चागिन हो ?…"

वास्कोव को इतनी लज्जा महसूस हुई कि वह पानी-पानी हो गया। मच्छरों पर भी वश नहीं चल रहा था—ख़ास क़िस्म के मच्छर थे, शाम को आ पहुँचनेवाले। "तो भई, हो सकता है, मैं ग़लत होऊँ—मुझे नहीं मालूम। जैसा कि उन्होंने बताया…"

उनसे कुछ आगे कोई टहनी तड़ाक से टूटी। वह बड़ी साफ़ आवाज़

करती टूटी थी, किसी के भारी पैरों के तले दबकर और इसे सुनकर वास्कोव तो लगभग हर्षित ही हो उठा। उसने ख़ुद को कभी ऐसी स्थिति में नहीं पड़ने दिया था जिससे उसे अपनी ओर से झूठ बोलना पड़ा था। अपने जूनियरों के सामने उसने कभी ख़ुद को हँसी का पात्र नहीं बनने दिया था। उसे इस समय महसूस हो रहा था कि नकचढ़ी लड़की की मलामतें सहने की अपेक्षा वह अकेले ही दर्जन भर जर्मनों का सामना कर लेगा। "झाड़ियों में! …" वह बुदबुदाया, "और एकदम ख़ामोश!"

उसके पास बस इतना ही समय था कि वह चेतवेर्ताक को झाड़ियों में खिसकाकर, डालों को ठीक कर पास ही के एक गोलाश्म के पीछे सरक जब उसने नज़र उठाकर देखा तो उसे दो जर्मन दुबारा दिखाई दिये लेकिन वे बड़ी सावधानी से, फूक-फूककर क़दम रखते चल रहे थे। उनकी सबमशीनगनें आग उगलने को एकदम तैयार थीं। सार्जेंट-मेजर अभी हैरानी से सोच ही रहा था कि जर्मन दो-दो की संख्या में अभी भी क्यों चल रहे थे, उन दोनों के ठीक पीछे, बायीं ओर की झाड़ी हिल उठी। तो यह बात है, जर्मनों ने निगरानी के लिए दोनों ओर से दो-दो जर्मन तैनात कर रखे थे और वे अचानक मुठभेड़ तथा अपने टोहियों के ग़ायब हो जाने से काफ़ी दुविधा में थे।

लेकिन सार्जेंट-मेजर की नज़र उन पर पहले पड़ी थी और उनकी नज़र सार्जेंट-मेजर पर नहीं पड़ी थी—यह बात उसके पक्ष में थी। तुरुप का पत्ता उसके हाथों में था। निस्सन्देह, उसके पास यही तुरुप का पत्ता था लेकिन हमले का फ़ैसला करने पर यह और प्रभावकारी हो जायेगा। लेकिन ऐसे क्षण में हड़बड़ी की कोई ज़रूरत नहीं थी और वास्कोव काई में और अधिक गहरे धँस गया, अपने पसीने-पसीने हुए ललाट से मच्छरों को भगाने में भी वह डर रहा था। वे थोड़ा और खिसक लें। वे उसकी ओर अपनी पीठ करें, किस दिशा में तलाश कर रहे हैं, इसका संकेत दें और तब वह अपना खेल शुरू करेगा—अपना तुरुप का पत्ता चलेगा।

ख़तरे में पड़ा आदमी या तो एकदम नहीं सोचता या फ़ौरन ही दो आदमियों की तरह सोच लेता है। एक अगले क़दम की सोचता है तो दूसरा वास्तविक अवसर को ध्यान में रखता है क्योंकि वह सब

कुछ देखता है, उससे कुछ भी नज़रअन्दाज़ नहीं हो पाता। जब वास्कोव अपनी तुरुप चाल के बारे में सोच रहा था, न तो जर्मन उसकी नज़र से ओझल हो पाये थे और न तो वह चेतवेर्ताक को ही पल भर के लिए भूला था। हाँ, वह अच्छी तरह छुपी थी, इस संबंध में वह आश्वस्त था। और फिर जर्मन उससे काफ़ी दूर से गुज़र रहे थे, इसलिए उस ओर से किसी अनहोनी की अम्मीद नहीं थी। जर्मन ज़मीन को टुकड़ों में बाँटते हुए जाते प्रतीत हो रहे थे और इस हिसाब से वास्कोव व चेतवेर्ताक, दोनों, अलग ही अलग सही, एक-एक टुकड़े के केन्द्र में थे। इसका मतलब था, उन्हें प्रतीक्षा करनी थी, ख़ामोश रहते हुए, यहाँ तक कि साँस लिये बिना ही काई और झाड़ियों में घुलमिल जाना था—कार्रवाई बाद में। दोनों को आपस में मिलकर निशानों का फ़ैसला करके अकेली सर्विस बन्दूक व जर्मन सबमशीनगन का मुँह उनकी ओर खोल देना होगा।

जर्मन दुबारा उसी पहलेवाले रास्ते से जाते प्रतीत हो रहे थे। देर या सबेर, उनका रास्ता निश्चित रूप से ओस्यानिना और कोमेल्कोवा से जा टकरानेवाला था। निस्सन्देह, सार्जेंट-मेजर को इसकी चिन्ता थी लेकिन बहुत ज़्यादा नहीं। उनकी अग्नि-दीक्षा हो चुकी थी और उन्होंने अपने होश बरक़रार रखे थे। इस लिए वे या तो ख़ामोशी से छुप जायेंगी या वहीं वापस लौट पड़ेंगी। इसके अलावा, जर्मनों के अपने पास से गुज़र जाने के बाद वह उनपर दो तरफ़ा गोलियों की वर्षा शुरू कर देने की सोच रहा था।

जिन झाड़ियों में चेतवेर्ताक छुपी थी, उनसे बायें, बीस मीटर की दूरी पर जर्मन एक सीध में खुले मैदान में निकल आये। कुछ दूरी पर, दायें-बायें, उनके भेदिये चल रहे थे—बिना कोई ढील दिये, पूरी चौकसी के साथ लेकिन वास्कोव जानता था, वे किस ओर से जायेंगे। उसके ख़्याल से, उनमें से कोई भी न तो उससे, न तो गाल्या से आ टकरानेवाले थे। लेकिन सावधानीवश उसने सबमशीनगन का सेफ्टीकैच हटाकर रख लिया। जर्मन ख़ामोशी से, दुबके-दुबके बन्दूक ताने आगे बढ़ रहे थे। भेदियों के व्यूह में रक्षित वे बायें-दायें देखे बिना चल रहे थे। मुसीबत अगर आयेगी भी तो आगे से ही। लेकिन अगले कुछ क़दम आगे बढ़ने के बाद ही वे चेतवेर्ताक और वास्कोव की

बन्दूकों की मार में आ जायेंगे और उस क्षण के बाद से उनकी पीठ सार्जेंट-मेजर के शिकारी निशाने की ज़द में रहेगी।

डालियों की तेज़ खरखराहट के साथ गाल्या चेतवेर्ताक अचानक ही झाड़ियों से बाहर उछल पड़ी। सीधी खड़ी हो, उसने निराशापूर्वक अपने हाथ ऊपर उठाकर झटके। फिर वह खुले मैदान के पार जर्मनों के ठीक सामने सरपट दौड़ पड़ी। "आ-अ-अ-आह" अनजाने ही ही वह आर्तनाद कर उठी। ठीक बस क़दम की दूरी से एक सबमशी-नगन आग उगल उठी। दौड़ने से तनी उसकी दुबली-पतली पीठ में गोलियाँ धँस गयीं और वह मुँह के बल ज़मीन पर गिर पड़ी। निपट ख़ौफ़ से उसकी बाँहें अभी तक सिर के ऊपर उठी थीं। उसका अन्तिम चीत्कार मौत की बड़बड़ाहट के साथ ख़त्म हो गया और मृत सोनिया के बूटवाले उसके अभी तक दौड़ते पाँव काई पर लताड़-पछाड़ कर रहे थे।

उस खुले मैदान में पूर्ण निस्तब्धता छा गयी। पल भर को हर गति थमकर रह गयी। किसी सपने की भाँति गाल्या के पैरों की गति भी धीमी-धीमी होती गयी। वास्कोव भी अपने गोलाश्म के पीछे पड़ा रहा। वह हिला तक नहीं, उसे अभी तक यह समझने का मौक़ा नहीं मिल पाया था कि उसकी योजनाओं पर पानी फिर गया था, वह अपना तुरुप गँवा चुका था। कौन जाने, इस स्थिति में वह कब तक पड़ा रहा होता या बाद में किस तरह पेश आता लेकिन अचानक ही रास्ते में आनेवाली हर चीज़ को कुचलते व दौड़ते क़दमों का भयानक शोर उसे अपने पीछे सुनाई दिया और उसने अन्दाज लगा दिया, गोलियों की आवाज़ सुनकर दायीं ओर का जर्मन टोही दौड़ा ठीक उसी की ओर बढ़ा चला आ रहा था।

अब योजनाओं का कोई समय न था, वह सिर्फ़ एक ही मुख्य बात जानता था: उसे जर्मनों को किसी दूसरे रास्ते पर मोड़ देना है। उन्हें किसी दूसरी जगह ले जाना है, बाक़ी लड़कियों की विपरीत दिशा में बहका देना है। इस बात का फ़ैसला ले, अपनी जगह से उछल खड़ा हो उसने गाल्या के शरीर पर झुकी दोनों आकृतियों को खुले आम गोली का निशाना बना दिया; फिर झाड़ियों के पीछे से दौड़कर आते आदमी की ओर गोलियों की लंबी बौछार कर दी और वह झुककर सिन्यूखिना पहाड़ियों से दूर जंगल की भाग चला।

किसी को गोली लगी या नहीं, वह नहीं देख पाया; उसके दिमाग़ में दूसरी-दूसरी बातें थीं। जंगल में सुरक्षित पहुँचने और लड़कियों की रक्षा करने के लिए उसे किसी न किसी तरह जर्मनों के घेरे के बीच से गुज़रना था। एक इनसान और कमांडर के रूप में अपनी बची लड़कियों की प्राण-रक्षा करना उसका कर्त्तव्य था। जो मर गयीं, वही काफ़ी हैं। बस काफ़ी है, अब और नहीं—जीवन भर नहीं।

जिस ढंग से सार्जेंट-मेजर उस शाम दौड़ा था, इस तरह दौड़े उसे बहुत अर्सा हो चुका था। वह झाड़ियों में सरपट भागता रहा गोलाश्मों में चकमा देता फिरा, गिरा, उठा, दुबारा दौड़ा, सिर के ऊपरवाले पत्तों को वेध जाती गोलियों से बचता ज़मीन पर लोट पड़ा। जवाबी तौर पर वह काँपती आकृतियों को सबमशीनगन की हल्की बौछार से वेध देता, साथ में काफ़ी शोर भी मचाता जाता। झसुड़ झंखाड़ों को रौंदता, धप-धप आवाज़ करता वह दौड़ता रहा। जब तक गला बैठ नहीं गया, वह ज़ोर-ज़ोर से चीख़ता रहा क्योंकि जर्मनों को अपने पीछे-पीछे झाँसा में लाये बिना लौट पड़ने का कोई औरचित्य भी तो नहीं था। उसे यह खेल जारी रखना था, आग से खेलते जाना था।

लेकिन एक बात वह निश्चित रूप से जानता था: संभवतया, जर्मन उसे घेरकर नहीं पकड़ सकते थे। उन्हें इस भूक्षेत्र की कोई जानकारी न थी, उनकी संख्या थोड़ी रह गयी थी और फिर वे अब तक उस अचानक झड़प को नहीं भूल पाये थे, उन्हें वह सीधा आमना सामना अच्छी तरह याद था। सो, उसका पीछा करते समय भी वे इर्द-गिर्द देखना नहीं भूल रहे थे। अन्यथा जर्मनों को छोड़ता हुआ वह कभी बच नहीं निकलता। पागलों की तरह उसका पीछा करते रहने से वे आपे से बाहर हो गये थे, उन्हें यह सोचने समझने का समय ही नहीं मिला कि उनका सामना, सिर्फ़ एक ही प्रतिद्वन्द्वी से है।

कुहरे ने भी उसकी मदद की; उस वसन्त में कुहरे ही कुहरे छाये रहे थे। क्षितिज के पीछे सूरज के लुप्त होते ही, तत्क्षण गड्ढे धुंधले कुहरे से भर जाते; यह सतहों पर तैरता, झाड़ियों पर लटकता होता और एक आदमी की तो बात ही क्या, उस गहरे दूधिये कुहरे में पूरा का पूरा रेजिमेंट छुप जा सकता था। वास्कोव कुहरे के बादल

में कभी भी गोता लगा जा सकता था—ढूँढ़ते रहें! लेकिन दिक़्क़त यह थी कि वैसे सफ़ेद कुहरे फैलते हुए झीलों की ओर चले गये थे जब कि इसके विपरीत वह जर्मनों को बहकाकर जंगल की ओर ले जा रहा था। इसलिए कुहरों की शरण वह केवल लाचारी में ही लेता। फिर एकाएक बाहर निकल आता मानो जर्मनों से "हलो" या "क्या हाल है, मैं अभी तक ज़िन्दा हूँ," कहना चाहता हो...

निस्सन्देह, वह भाग्यशाली था। इससे कम गोलीबारी में ही किसी के गोलियों से छलनी हो जाने की संभावना कहीं ज़्यादा थी। हाँ, वह भाग्शाली था। अपनी मृत्यु के साथ लुका छिपी का लम्बा खेल खेलने के बाद आख़िर वह जंगल में जर्मनों के पूरे झुण्ड को अपने पीछे लिये हुए आ पहुँचा और वहीं पर उसकी सबमशीनगन आख़िरी बार "क्लिक" की आवाज़ के साथ ख़ामोश हो गयी। उसे दुबारा भरने के लिए उसके पास कुछ भी न था, गन उसके हाथों का बोझ बनकर रह गयी थी। सो, हवा से गिरी लकड़ियों के ढेर में उसे अन्दर घुसेड़कर वह निहत्था लौट पड़ा।

यहाँ कुहरे न थे। गोलियाँ तड़ातड़ पेड़ों के तनों से टकरायीं और छाल-चिप्पियों की वर्षा-सी हो गयी। अब अपने और बीच दूरी बढ़ाने का समय आ जर्मनों के गया था। अब अपनी जान बचाने के बारे में सोचने की ज़रूरत थी लेकिन अपनी हार से उन्मत्त हुए जर्मन उसे आख़िर एक अर्द्धवृत्त में घेर लेने में सफल हुए—उसे ज़िन्दा पकड़ने की उम्मीद में उस पर बुरी तरह दबाव डालते हुए, कोई मोहलत दिये बिना, वे ज़ाहिरी तौर पर उसे दलदल की ओर ले जाने की कोशश कर रहे थे। वे एक ऐसी स्थिति में पहुँच गये जिस में वास्कोव अगर उनका कमांडर होता, पूछताछ के लिए उस क़ैदी को ज़िन्दा पकड़ लेने पर मुट्ठी भर-भरकर पदक देने का वायदा करता।

दिमाग़ में यह ख़्याल आते ही, राहत के साथ यह महसूस होते ही कि वे उसे गोली शायद नहीं मारेंगे, कोई चीज़ कोहनी के नीचे, उसकी बाँह के मांसल हिस्से में आ लगी। पहले वह हैरान हुआ फिर सोच लिया बाँह किसी नुकीली डाल में फँस गयी होगी। तभी उसे अचानक ही कोई गरम-गरम सी चीज़ कलाई के नीचे रेंगकर आतीं

महसूस हुई। कोई बहुत ज्यादा ख़ून न था: गोली सिर्फ़ एक नस को छू गयी थी लेकिन बाँह में यह सूराख लिये, वह लड़ाई क्या करेगा। इस समय उसे अपने इर्द-गिर्द देखने, स्थिति का जायज़ा लेने, घाव पर पट्टी बाँधने और थोड़ा आराम करने की ज़रूरत थी। वह जर्मनों के घेरे के बीच से, उनसे बचकर नहीं भाग सकता था। एकमात्र रास्ता था, दलदल की ओर भाग चले।

इस पलायन में उसने अपनी सारी बची-खुची शक्ति लगा दी। उसका कलेजा मुँह को आ चुका था जब वह अचानक ही दलदल के पास उस जगह आ पहुँचा जहाँ सीमाचिह्न के रूप में चीड़ के वृक्ष खड़े थे। उसने झटपट एक डण्डा उठा लिया और सम्भवत: उसकी नज़र बाक़ी के पाँच डण्डों पर भी पड़ी थी लेकिन वह इस पर कोई ख़ास ग़ौर नहीं कर सका। जंगल जर्मनों की पदचापों से प्रतिध्वनित, उनकी आवाज़ों से गुंजायमान और जर्मन गोलियों की आवाज़ से भर उठा था।

दलदल पारकर वह ठोस भूखण्ड तक कैसे पहुँचा, बाद में उसे इसकी कोई याद न रही थी। बस वह वहाँ पहुँच गया था—प्रताड़ित, अंग-भंग चीड़ वृक्षों की छाया तले। ठण्ड से वह होश में आया: वह बुरी तरह कँपकँपा रहा था, उसके दाँत बज रहे थे। धीरे-धीरे उसे बाँह में हल्की-हल्की पीड़ा महसूस हुई—क्या है यह, गीला-गीला?

फिर वास्कोव को बाद में इसकी कोई याद नहीं आ पायी, वह कितनी देर तक वहाँ पड़ा रहा था। फिर भी, उसके हिसाब से काफ़ी समय बीत चुका था क्योंकि आस-पास पूर्ण निस्तब्धता छायी थी: जर्मन पीछा छोड़ ज़रूर ही लौट गये होंगे। प्रभात की पूर्ववेला में कुहरे घने हो गये थे और ज़मीन के ऊपर चिपके-से होने के कारण वास्कोव की हड्डी तक ठण्ड से कँपकँपा उठी थी। उसके ज़ख़्म से अब ख़ून नहीं रिस रहा था। उसकी बाँह कँधे तक कीचड़ से लिपटी थी, गोली का सूराख भी उससे भर गया था और सार्जेंट-मेजर ने उसे हटाने की कोई ज़हमत नहीं उठायी। ख़ुशक़िस्मती से जेब में उसे पट्टी मिल गयी। उसने कीचड़ के ऊपर से ही पट्टी बाँधकर आस-पास नज़र दौड़ायी।

जंगल के परे धीरे-धीरे उजाला हो रहा था और दलदल के ऊपर आकाश गुलाबी रंग से चमक उठा था। कुहरा ज़मीन से और अधिक चिपका जा रहा था। लेकिन यहाँ, बर्फ़ सरीखे ठण्डे दूधिया कुहरे में नीचे पड़ा-पड़ा वास्कोव ठण्ड से काँप रहा था और उसे अपने संजोकर रखे गये फ्लास्क की याद बड़ी सता रही थी। इस समय तो चलते-फिरते रहने से ही जान बच सकती थी। सो, जब तक वह पसीने-पसीने नहीं हो गया, आस-पास उछल-कूद करता रहा। तब तक कुहरा भी हल्का पड़ गया था और वह अपने इर्द-गिर्द ज्यादा अच्छी तरह देख सकता था।

जर्मनों की ओर से ख़तरे का कोई संकेत न था। बेशक, हो सकता है, वे घात लगाये बैठे हों लेकिन इसकी बहुत अधिक संभावना न थी। उन्होंने दलदल को अगम्य समझकर सार्जेंट-मेजर वास्कोव को मृत मान लिया होगा।

दूसरी दिशा की ओर जो सीधी छावनी की ओर, मारिया निकिफ़ोरोवना की ओर जाती थी, उसने कोई ज्यादा ध्यान नहीं दिया। उस ओर कोई ख़तरा न था; उस ओर जीवन था; शायद भर जग अल्कोहल, तले अण्डे, सूअर के गोश्त के टुकड़े और फिर इच्छुक मकान मालकिन। नहीं, उसे उस ओर नज़र नहीं डालनी चाहिये, लोभ के वशीभूत नहीं होना चाहिये लेकिन राहत, राहत कहाँ थी जिसकी प्रतीक्षा वह अब तक उस ओर से कर रहा था और शायद इसी कारण वह चुपके से उस ओर एक नज़र डाल लेता था।

वह, वहाँ—कोई काली-सी चीज़ पड़ी थी—कोई काला-सा धब्बा जो सार्जेंट-मेजर को दुविधा में डाल रहा था। वह उसकी जाँच-पड़ताल करने के लिए वहाँ तक चल ही देना चाहता था लेकिन थकान के कारण उसने उसे बाद में देखने का फ़ैसला किया और आराम करने लगा। जब तक वह आराम करता रहा, उतनी देर में काफ़ी उजाला हो चुका था और दलदल के ऊपर उस काले धब्बे का रहस्य उसकी समझ में आ गया। और उसी पल, चीड़ वृक्ष के पास बचे पाँच डण्डों का मतलब भी वह समझ गया। वहाँ पाँच के पाँच डण्डे पड़े थे, इसका मतलब हुआ कि प्राइवेट ब्रिचकिना इस अभिशप्त दलदल में सहारे के लिए डण्डा लिये बिना उतर गयी होगी।

अब सेना से मिला उसका स्कर्ट मात्र ही बच रहा था। बाक़ी कुछ भी नहीं रहा था–राहत पहुँचने की उम्मीद भी नहीं...

१२

और इसके साथ ही उसके दिमाग में उस सुबह की तस्वीर घूम गयी जब उसने जंगल से बाहर आते जर्मनों की गिनती की थी। उसे अपने बायें कन्धे के पीछे से अस्फुट स्वर में बोलती सोनिया गुरविचच की, लीज़ा ब्रिचकिना की विस्फारित आँखों की और भूर्ज वृक्ष की छाल के कामचलाऊ जूते में एक पाँव लपेटे गाल्या चेतवेर्ताक की याद को आयी। वह यह सब याद करता रहा और ज़ोरों से बोल उठा:

"हूँ, तो ब्रिचकिना वापस नहीं लौट पायी..."

उसकी भारी, ठण्ड से बैठी आवाज़ दलदल के ऊपर हल्के-हल्के तैरती रही और फिर सब कहीं निस्तब्धता छा गयी। इस भयावह स्थान में मच्छर भी भिनभिनाये बिना काट खाते। दीर्घश्वास छोड़कर सार्जेंट-मेजर कृतसंकल्प के साथ दलदल में उतर पड़ा। डण्डे के सहारे, लथपथ कीचड़ में मुश्किल से चलता वह आगे बढ़ गया। वह कोमेलकोवा और ओस्यानिना के बारे में सोचता हुआ उनके जीवित रहने की दुआ कर रहा था। पेटी में लगी पिस्तौल के बारे में भी उसने सोचा–हथियार के नाम पर अब उसके पास बस यही बच रही थी।

अगर जर्मन एक भी आदमी यहाँ तैनात कर जाते, जब तक शरीर सड़ने न लगता, सार्जेंट-मेजर दलदल में मुँह गड़ाये, इस जगह पर हमेशा-हमेशा के लिए पड़ा रहता। वे उसे किसी भी दूरी से गोली का निशाना बना सकते थे क्योंकि वह सीना आगे किये, एकदम सीधा तना किनारे तक आया था और मुँह के बल लोट जाने को वहाँ ठोस ज़मीन नहीं थी। लेकिन जर्मन किसी को भी वहाँ छोड़ नहीं गये थे, वास्कोव बिना किसी परेशानी के पूर्वपरिचित सोते के पास पहुँच गया।

किसी तरह रगड़-पोंछकर उसने ख़ुदको साफ़ किया और छककर पानी पीया। फिर ढूँढ़कर ऊपरवाली जेब से कागज़ का टुकड़ा निकाल,

उसमें तम्बाकू की जगह सूखा शैवाल भरकर उसने एक सिगरेट तैयार की और लाइटर से सुलगाकर कश लेने लगा। अब वह कुछ सोचने-समझने को तैयार हो चुका था।

एक चौथाई दुश्मन समाप्त कर डालने के बावजूद ऐसा लग रहा था मानो अपनी यह व्यक्तिगत लड़ाई वह परसों ही हार चुका था। हार इसलिए गया था क्योंकि वह जर्मनों को रोके रहने में असफल रहा था, आधे सैनिकों को गँवा चुका था, सारा का सारा गोला-बारूद ख़त्म होने के बाद अब सिर्फ़ पिस्तौल ही बच रही थी। चाहे जिस ढँग से, जिस पहलू से वह सोचता उसे ऐसा ही प्रतीत होता। और सब से बुरी बात थी, किस दिशा में जर्मनों को ढूँढ़ा जाये, इसका उसे कोई अन्दाज़ न था। भूख से या बदबूदार सिगरेट से या अकेलेपन अथवा बर्रों की तरह सिर में भिनभिनाते उदासीन विचारों के कारण --वास्कोव कड़ुवाहट से भर उठा था। हाँ, बर्रों की तरह जो काटते तो थे लेकिन शहद नहीं प्रदान करते थे...

निस्सन्देह, उसे अपनी बची-खुची टुकड़ी तक पहुँचने की कोशिश करनी चाहिये। लड़कियाँ तो बस दो ही बच रही थीं लेकिन सर्वोत्तम। वे तीनों मिलकर अच्छी-ख़ासी सैन्य शक्ति का रूप धारण कर सकते थे लेकिन सवाल हथियारों का था। उसका मतलब है, कमांडर के रूप में उसे दो समस्याओं के समाधान ढूँढ़ने हैं: अगला क़दम क्या हो और लड़ाई किस चीज़ से लड़ी जाये? इसके समाधान का उसके पास केवल एक ही तरीक़ा था: पहले अपनी स्थिति का जायज़ा लेकर जर्मनों का पता लगाये और हथियार प्राप्त करे।

पिछली रात बेलगाम उसका पीछा करने के चक्कर में जर्मन बड़ी तेज़ी से और असावधानी से दौड़े थे मानो वे अपने घर में हों। इसके फलस्वरूप, इस समय जंगल में उनके असंख्य पदचिह्न बरक़रार थे। उन्हें तरतीब देने की कोशिश करते हुए वास्कोव ने किसी नक़्शे की तरह उन्हें पढ़ना शुरू कर दिया। उसकी गणना के अनुसार पीछा करने में अधिक से अधिक दस जर्मन लगे थे। इसका मतलब था, साज़-सामान की देखभाल करने के लिए कुछेक को पीछे छोड़ दिया गया था या फिर वास्कोव उनका सफाया करने में सफल रहा था। इसके बावजूद, इतना तो उसे मान ही लेना चाहिये कि वे दर्जन भर होंगे

क्योंकि उसने निशाना लिये बिना गोलियाँ चलायी थीं–निशाना लेने के लिए समय ही नहीं था।

पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए वह जंगल के छोर पर पहुँच गया। यहाँ से वह वोप झील, सिन्यूखिना पहाड़ियाँ और दायीं ओर फैली झाड़ियों व चीड़ के जंगलों को अच्छी परह देख सकता था। दिशा-निर्धारण के लिए फेदोत वास्कोव यहाँ कुछ देर तक रुक गया लेकिन न तो वह लड़कियों को, न तो हमलावरों को देख पाया। यहाँ पूर्ण निस्तब्धता थी। यह एक भव्य, निस्तब्ध सुबह थी और इसी भव्य निस्तब्धता में सबमशीनगन लिये जर्मन व पुराने ढँग की बन्दूकें थामे रूसी लड़कियाँ छुपी थीं।

गोलाश्मों में जाकर लड़कियों को ढूँढ़ने की इच्छा चाहे जितनी भी आकर्षक लगी हो, सार्जेंट-मेजर ने जंगलों की शरण न छोड़ने का फैसला किया। उसे जीवन खतरे में डालने का कोई अधिकार न था–तनिक भी नहीं क्योंकि कड़ुवाहट व निराशा के बावजूद अभी तक वह खुद को पराजित नहीं मान पाया था –ख्यालों में भी नहीं। उसके ख्याल में, लड़ाई का अन्त इस तरह हो ही नहीं सकता। इसलिए, निस्तब्ध विस्तृतियों पर आँखें टिकाने के बाद वास्कोव दुबारा गुल्म में लौट आया और पहाड़ियों का चक्कर लगा, चक्करदार रास्ते से लेगोन्तोव झील की ओर आगे बढ़ गया।

उसकी गणना सीधी-सादी थी। उसने यूँ सोचा: रात में भली-भाँति उसका पीछा करनेवाले जर्मनों को उत्तर की धवल रातों में भी आगे बढ़कर खतरा मोल लेने में असुविधा महसूस होगी। ज्यादा संभावना थी कि वे दिन होने तक प्रतीक्षा करेंगे और समय व्यतीत करने के लिए लेगोन्तोव झील के किनारेवाले जंगलों से बढ़कर अच्छी जगह–दूसरी नहीं हो सकती थी! पलायन की भी अच्छी गुंजाइश थी–और कम से कम दलदल तो न थी। इस लिए फेदोत ने भूसन्धि-वाले परिचित गोलाश्मों की जगह सर्वथा अनजान मार्ग से जाने का फैसला किया।

एक पेड़ से दूसरे पेड़ की आड़ में वह यहाँ बड़ी चौकसी के साथ चल रहा था क्योंकि पदचिह्न अचानक ही यहाँ आकर गायब हो गये थे। लेकिन जंगल में पूर्ण निस्तब्धता थी। केवल पक्षी बोल रहे थे और

उनकी आवाज़ों से वास्कोव ने जान लिया, यहाँ आस-पास कोई भी नहीं।

काफ़ी समय बीत गया और वह अपनी गणनाओं को गलत समझने लगा, जर्मनों को शायद वह गलत जगह पर ढूँढ़ रहा था। सहज ज्ञान के अलावा कोई भी संकेत चिह्न न था और सहज ज्ञान के अनुसार उसने सही दिशा का चुनाव किया था। शिकारियोंवाले अपने सहज ज्ञान पर भी वह प्रश्न चिह्न लगाने जा रहा था कि तभी एक खरहा उसके आगे दौड़ता चला गया। सरपट दौड़ता हुआ वह एक खुली जगह में वास्कोव की उपस्थिति से अनभिज्ञ, पीछे की ओर देखता अपने पिछले पैरों पर खड़ा हो गया। खरहा भयभीत था, प्रकटतया मनुष्यों को देखकर क्योंकि वैसे प्राणियों से उसका कोई परिचय न था और इसी कारण वह अब उनके प्रति उत्सुकता प्रकट कर रहा था। खरहे की तरह सार्जेंट-मेजर अपने कान खड़ेकर उसी दिशा में देखने लगा।

देखने-सुनने की भरसक कोशिश के बावजूद उसे कुछ भी असामान्य नहीं दिखाई दिया। ऐस्प वृक्षों के गुल्म में खरहे के गायब हो जाने के बहुत देर तक, आँखों के पानी-पानी हो जाने के बावजूद वह जहाँ का तहाँ छुपा रहा। उसे अपने कानों से ज्यादा खरहे का भरोसा था और खरहा जिस ओर देख रहा था, उधर आगे बढ़ते हुए, वह बहुत खामोशी से, छाया की तरह चल रहा था।

पहले उसे कुछ भी नहीं दिखाई दिया और तब उसे झाड़ियों के बीच से कुछ भूरा-भूरा दिखाई दिया। यह बड़ा विचित्र-सा दिखाई दे रहा था और यत्र-तत्र काई से आच्छादित था। साँस रोके, वास्कोव एक क़दम और आगे बढ़ गया। हाथों से टहनियों को हटाया तो आधी ज़मीन में धँसी एक पुरानी कुटिया की काई भरी दीवार बाल-बाल स्पर्श से बची। शायद संत लेगोन्त यहीं रहा करता था, सार्जेंट-मेजर ने मन में सोचा।

वह कोने से खिसके आया और उसे सड़े लट्ठों से घिरा एक पुराना कुआँ दिखाई दिया। बीच में झाड़-झंखाड़ से भरी एक पगडण्डी थी। कुटिया का दरवाजा इस समय एक क़ब्ज़े पर लटकता झूल रहा था। पिस्तौल निकाल, कानों पर तब तक जोर डालकर वह सुनने की कोशिश करता रहा जब तक दिमाग़ नहीं झनझना उठा और फिर

तब पंजों के बल चलता हुआ वह दरवाज़े तक आ पहुँचा। उसने दरवाज़े के पाखे, ज़ंग लगे क़ब्ज़े पर नज़र दौड़ाई। किसी के चलने से घास कुचल गयी थी, सीढ़ी पर अभी तक किसी के पैरों का गीला निशान पड़ा था। इन सब बातों से उसने निष्कर्ष निकाला कि कोई घण्टे भर पहले ही दरवाज़े को तोड़ा गया था।

लेकिन सवाल था, क्यों? साधु की किसी परित्यक्त कुटिया के दरवाज़े को जर्मनों ने बस यूँ ही अत्सुकतावश तो तोड़ा नहीं होगा: उन्हें किसी न किसी वजह से इसकी ज़रूरत थी। वे शायद किसी आश्रय की तलाश में थे – शायद उनके साथ घायल हों या फिर उन्हें कुछ छुपाने के लिए जगह की ज़रूरत हो। सार्जेंट-मेजर कोई दूसरा कारण नहीं ढूँढ़ पाया, इस लिए अपना कोई भी चिह्न वहाँ न छोड़ने की चौकसी बरतते हुए वह झाड़ियों में लौट आया। वह दुबारा झाड़ियों के झुण्ड में रेंगकर जा पहुँचा और अचल पड़ा रहा।

शरीर पर मच्छरों के आराम से बैठते न बैठते, उसे एक मैगपाई की व्याकुल चीं-चीं सुनाई दी। फिर कोई टहनी टूटी, कोई झन-झन, टन-टन-सी आवाज़ हुई और एक के बाद एक बारहों जर्मन जंगल से निकलकर लेगोन्तोव की कुटिया की ओर जाते दिखाई दिये। उनमें से ग्यारह के हाथों में बोझ थे (सार्जेंट-मेजर के ख्याल में वे विस्फोटक थे) और बारहवाँ एक डण्डे पर झुका, बुरी तरह लंगड़ाकर चल रहा था। कुटिया के पास जाकर उन्होंने बोझ नीचे रख दिये और घायल आदमी पलक झपकते सीढ़ी पर दुहरा हो गया। एक आदमी विस्फोटकों को कुटिया में उठा-उठाकर रखने में लग गया जब कि दूसरे धूम्रपान करते हुए किसी चीज़ पर विचार-विमर्श करने लगे। बारी-बारी से वे एक मानचित्र को भी देखते जा रहे थे।

मच्छर वास्कोव को काटते, उसका ख़ून पीते रहे लेकिन वह पलक झपकाने की भी हिमाक़त न कर सका। वह जर्मनों के बहुत क़रीब था – बस दो क़दम की दूरी पर, पिस्तौल को कसकर पकड़े वह उनका प्रत्येक शब्द सुन रहा था लेकिन समझ एक भी नहीं पा रहा था। जर्मन भाषा में बातचीत की एक पुस्तक से उसे आठ वाक्यांश मालूम थे और उन्हें वह कूजते रूसी उच्चारण से ही जान सकता था।

लेकिन वह ज़्यादा देर तक असमंजस में नहीं रहा। बीच में खड़े

वरिष्ठ आदमी ने, जिसके मानचित्र पर सब बारी-बारी से झाँक रहे थे, हाथ से एक इशारा किया और सबमशीनगनें ताने दस जर्मन जंगल की ओर रवाना हो गये। जब वे जंगलों में गुम हो गये, पेटियों को कुटिया में उठा-उठाकर रखनेवाला आदमी घायल को खड़े होने में मदद देते हुए कुटिया में ले गया।

तब कहीं वास्कोव को आराम करने और मच्छरों को सज़ा देने का मौक़ा मिला। अब सब कुछ स्पष्ट था और मूलभूत प्रश्न समय का था: स्पष्ट रूप से सिन्यूख़िना पहाड़ियों की ओर जर्मन बेरी चुनने नहीं गये थे – वे लेगोन्तोव झील का चक्कर लगाने नहीं बल्कि भूसन्धि से होकर गुज़रने को कृतसंकल्प थे। वे उस ओर पेटियों के बग़ैर रवाना हुए थे – जिससे रास्ते की खोजबीन में आसानी हो।

निस्सन्देह, वह उनसे पहले दूरी तय करके, आसानी से लड़कियों को ढूँढ़कर दुबारा सब कुछ शुरू कर सकता था। लेकिन सिर्फ़ एक ही अड़चन थी – हथियारों की कमी।

उस पल कुटिया में दो सबमशीनगनें थीं – टूटे दरवाज़े के ठीक पीछे। दो गनें – ख़ज़ाना ही कहिये! लेकिन उन्हें प्राप्त कैसे किया जाये – वास्कोव अभी तक कुछ भी नहीं सोच पाया था। खुले आम, ढिठाई से उन्हें पाने की कोशिश करने का मतलब था, बला सिर बुलाना। और ख़ास तौर से जब कि रात जागकर बितायी हो, एक बाँह ज़ख़्मी हो। इस लिए फ़ेदोत वास्कोव जर्मनों के कुटिया से बाहर निकलने की प्रतीक्षा करने लगा।

और सचमुच उनमें से एक बाहर निकल आया, अपने या साथी के लिए पानी लेने। बड़ी चौकसी के साथ वह बाहर आया, बाँह नीचे सबमशीनगन दबाये, पेटी में दो फ्लास्क लगाये। उसे इसका तनिक भी भान न था कि वह मौत की गोद में जा रहा है। वह कुछ देर तक कान लगाकर सुनता और नज़रें दौड़ाकर आसपास देखता रहा और फिर दीवार से हटकर कुएँ की ओर बढ़ गया। वास्कोव ने तनिक भी आहट के बिना पिस्तौल उठा ली। फिर जैसे किसी निशानेबाज़ी प्रतियोगिता में हिस्सा ले रहा हो, इस तरह साँस रोककर बड़े आहिस्ते से उसने खटका दबा दिया। धीमे से पिट् की आवाज़ हुई और जर्मन लहराकर आगे की ओर गिर पड़ा। पूरा यक़ीन करने के लिए सार्जेंट-

मेजर ने एक गोली और दाग़ दी। वह सुरक्षित स्थल से निकलनेवाला ही था कि चमत्कारवश उसकी नज़र एक गन की दमकती नली पर पड़ गयी। नली टूटे दरवाज़े की दरार से झाँक रही थी। वह रुक गया। दूसरा, घायल जर्मन पहलेवाले को आड़ दिये था। वह सब कुछ देख चुका था और अगर वास्कोव कुएँ की ओर दौड़ा तो गोली का निशाना बन जायेगा।

वास्कोव जहाँ का तहाँ ठिठककर रह गया। निश्चित ही जर्मन अपनी गन का इस्तेमाल करेगा। एक बार गोली चलेगी और ज़ोरदार, प्रतिध्वनित होती आवाज़ सब को चौकस कर देगी – बस इतनी ही की ज़रूरत थी। मुख्य टुकड़ी दौड़ती वापस आ पहुँचेगी – जंगल को छान मारेगी और सार्जेंट-मेजर की बस ऐसी-तैसी हो जायेगी। दूसरी बार वह नहीं बच पायेगा।

लेकिन जर्मन ने गोली नहीं चलायी। वह रुका हुआ था – उसकी गन की नली संकेत में दाग नहीं रही थी बल्कि बस कभी इधर, कभी उधर झूल रही थी। उसने अपने साथी को कुएँ के घेरे के पास मुँह के बल गिरते देखा था – उसका शरीर अभी भी तड़प रहा था लेकिन फिर भी उसने ख़तरे का संकेत देने के लिए बन्दूक नहीं दाग़ी थी। वह प्रतीक्षा कर रहा था। लेकिन किस लिए?

सहसा बात वास्कोव की समझ में आ गयी। वह आदमी ख़ुद अपनी जान बचाने की सोच रहा था – नाज़ी कमीना! उसे अपने दम तोड़ते साथी, सैनिक आदेशों या झील की ओर रवाना हो गयी बाक़ी टुकड़ी की कोई फ़िक्र न थी। इस समय वह बस इतना ही सोच रहा था कि वास्कोव का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट न होने दे। वह अपने अदृश्य शत्रु से भयभीत था और कुटिया की लट्ठों से बनी मोटी दीवार के पीछे रहकर ईश्वर से ज़िन्दा रखने की दुआ कर रहा था

तो यहाँ मौत से भयभीत एक जर्मन है। यह सोचकर सार्जेंट-मेजर ने राहत की साँस ली।

पिस्तौल पेटी में खिसकाकर वास्कोव निःशब्द पीछे लौट आया फिर तेज़ी से कुटिया का चक्कर लगा विपरीत दिशा से कुएँ की ओर रेंगता हुआ आगे बढ़ गया। जैसा कि उसने सोचा था, घायल जर्मन मृत व्यक्ति की निगरानी नहीं कर रहा था और सार्जेंट-मेजर बिना किसी

भय के लाश के पास पहुँच गया। सबमशीनगन और कारतूसों की पेटी उठाकर वह अनदिखे जंगल में लौट आया।

अब सब कुछ उसकी फुर्ती पर निर्भर करता था – उसने चक्करदार रास्ते से जाने का फ़ैसला किया था। उसे ख़तरा तो मोल लेना ही था और क़िस्मत ने भी साथ दिया। जब वह चोटी की ओर जानेवाला चीड़ के जंगल में दौड़ता हुआ पहुँचा तभी थोड़ी देर के लिए आराम करने की बात उसने सोची।

यह उसकी जानी-पहचानी जगह थी – इसके चप्पे-चप्पे में वह रेंगता चला जा सकता था। कहीं यहीं पर उसकी लड़कियाँ थीं - लेकिन हाँ, कहीं वे यह जगह छोड़कर पूर्व की ओर न चली गयी हों! अगर कोई ऐसी-वैसी घटना हो तो अनसे उसने ख़ुद ही यहाँ से खिसक लेने को कहा था लेकिन इसके बावजूद वास्कोव इस समय यह मानने से इनकार कर रहा था कि उन्होंने उसके आदेश का अक्षरशः पालन किया होगा। वह यह मानने से इनकार कर रहा था, वह इस बात पर विश्वास नहीं करना चाहता था।

यहाँ उसने थोड़ी देर आराम किया; जर्मनों की ओर से कोई आवाज़ सुन पाने के लिए कानों पर पूरा ज़ोर डाल वह सावधानी से सिन्यूखिना पहाड़ियों की ओर उस रास्ते से आगे बढ़ चला जिसे चौबीस घण्टे पहले उसने ओस्यानिना के साथ तय किया था। तब सब ज़िन्दा थीं – हरेक, हाँ, लीज़ा ब्रिचकिना को छोड़कर।

तो वे सचमुच लौट गयीं। हाँ, लेकिन दूर नहीं – बस उस सोते के पार जहाँ पिछली सुबह जर्मनों के लिए उन्हों ने नाटक रचा था। फ़ेदोत वास्कोव को लड़कियों के इधर आ जाने की कोई संभावना न थी और उन्हें गोलाश्मों के बीच या पहलेवाले ठिकानों पर न पाकर वह निराश हो सोते के किनारे आ गया। सोते के किनारे वह उनकी तलाश में नहीं बल्कि खोये-खोये अन्दाज़ में भटकता सा आ पहुँचा था। एक बाँह से ज़ख़्मी अब वह एकदम निपट अकेला था, इस अनुभूति ने उस पर अपना पूरा प्रभाव जमा लिया था। अवसाद ने उसके मस्तिष्क में यूँ घर कर लिया था कि उसे सब कुछ गड्ड-मड्ड लगने लगा था और वह पूर्ण विषण्णता की स्थिति में सोते के किनारे जा पहुँचा था। लेकिन पानी पीने के लिए वह सोते के किनारे घुटने

के बल जैसे ही झुका, उसे एक अस्फुट-सा स्वर सुनाई दिया, "कॉमरेड सार्जेंट-मेजर..."

फिर उसी स्वर ने ज़ोर से दुहराया:

"कॉमरेड सार्जेंट-मेजर!"

वह उछलकर उठ खड़ा हुआ—वह, वहाँ रहीं, दौड़तीं, छप-छपाक करतीं, सोते को पारकर उसी की ओर बढ़ी चली आ रही थीं। उन्होंने अपने स्कर्ट भी ऊपर नहीं उठाये थे। वह भी उनकी ओर दौड़ पड़ा और बीच धारे में तीनों एक-दूसरे के आलिंगन में बद्ध हो गये। दोनों उससे चिपक गयी थीं, उससे लटकती-सी वे उसे चूमे जा रही थीं—उसकी उसी सूरत में, मैली, पसीने से तर, बढ़ी दाढ़ीवाली...

"हाँ तो, लड़कियो, तो अब!..."

बड़ी मुश्किल से वह ख़ुद को रोने से रोक पाया। बरौनियों पर आँसू झिलमिला आये थे—यानी वह बुरी तरह कमज़ोर पड़ गया था। लड़कियों के कन्धों पर बाँहें रखे वह सोते के दूसरे किनारे आ पहुँचा। ख़ुद को उससे चिपकाने, उसके ठूँठदार गाल से अपना गाल सटाने का कोई भी मौक़ा कोमेलकोवा हाथ से नहीं जाने दे रही थी।

"तो अब, मेरी लड़कियो, मेरी नन्हीं मुन्नियो! क्या तुम लोगों को कुछ खाने, सोने का मौक़ा मिल पाया?"

"हमें इसकी कोई इच्छा नहीं, कॉमरेड सार्जेंट-मेजर..."

"सार्जेंट-मेजर को भेजो जहन्नुम में, मैं तुम लोगों के लिए सार्जेंट-मेजर नहीं। अब इतना कुछ साथ-साथ झेल लेने के बाद, बिलकुल नहीं! तुम मेरी बहनें हो, मैं तुम लोगों का भाई हूँ। इसलिए मुझे फ़ेदोत या फ़ेद्या कहा करो जैसे माँ पुकारती थी।"

उनके ओवरकोट, बुग़चे और बन्दूकें झाड़ियों में छुपी थीं। वास्कोव सीधे अपने बुग़चे के पास जा पहुँचा लेकिन उससे पहले ही झेन्या पूछ उठी:

"गाल्या का क्या बना?"

उसने शान्त, झिझकती आवाज़ में पूछा था। वे सब कुछ समझ चुकी थीं सिर्फ़ पुष्टि चाहती थीं। सार्जेंट-मेजर ने कोई जवाब नहीं दिया। ख़ामोशी से उसने अपना बुग़चा खोला, थोड़ी सूखी डबलरोटी निकाली, थोड़ा सूअर का गोश्त और साथ में फ्लास्क भी निकाला।

थोड़ा-थोड़ा अलकोहल तीन मगों में डालकर उसने डबलरोटी तोड़ी और गोश्त के टुकड़े किये। मग लड़कियों के हाथों में थमाते हुए उसने अपना मग टोस्ट के अन्दाज़ में ऊपर उठा लिया:

"हमारी कॉमरेड बहादुरों की मौत मरी हैं। गाल्या चेतवेर्ताक दुहरी गोलीबारी में और लीज़ा ब्रिचकिना दलदल में। इस तरह, सोनिया सहित हम तीन को गँवा चुके हैं। यही स्थिति है। लेकिन दुश्मनों को चकफेरी कराते चौबीस घण्टे बीत चुके हैं। पूरे चौबीस घण्टे! हम किसी तरह की राहत की उम्मीद नहीं कर सकते और जर्मन इसी ओलर बढ़ चले आ रहे हैं। इस लिए हम अपनी बहनों की स्मृति का सम्मान करें और फिर कार्रवाई के लिए तैयार हो जायें। संभवतया यह हमारी अन्तिम लड़ाई होगी..."

१३

ऐसी भी मुसीबत होती है जो आप पर पहाड़ बनकर टूट पड़ती है और आपको विदीर्ण कर निराशा के गर्त में धकेल देती है। लेकिन जब वह आपको छोड़ जाती है, आप ख़ुद को जीवित महसूस करते हैं, आपको ऐसा महसूस होता है जैसे कुछ हुआ ही नहीं था। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि कोई छोटी-सी गड़बड़ी, नज़र की मामूली-सी चूक के भी भयानक परिणाम होते हैं।

किसी के साथ ऐसा न हो।

ऐसी ही मामूली-सी गड़बड़ी उस समय वास्कोव के साथ पेश आयी जब नाश्ता के बाद वे लड़ाई की तैयारियों में जुटे। उसने अपने बुग़चे को छान मारा, उसे हिला-डुलाकर देख लिया, तीन-तीन बार हाथ फिरा-फिराकर देखा लेकिन उसे वे चीज़ें नहीं मिलीं जिनकी उसे तलाश थी। दूसरे हथगोले का पलीता और पिस्तौल के कारतूस—थीं तो यह मामूली चीज़ें लेकिन पलीता के बिना हथगोला बेकार था—लोहे का बस एक ढेला भर पत्थर की बटिया की तरह।

"लड़कियो, अब हमारे पास गोला-बारूद नहीं।"

उसने यह बात मुस्कराकर कही थी जिस से लड़कियाँ परेशान न

हों। और कैसी बेवक़ूफ़ थीं वे लड़कियाँ – जवाब में मुस्करा दिया, निरपेक्ष स्थिति छा गयी उन पर।

"कोई बात नहीं, फ़ेदोत, हम उसके बिना ही काम चला लेंगे!"

यह कोमेलकोवा बोली थी। उसका नाम लेते हुए वह थोड़ा-सा लड़खड़ा गयी थी। वह लजा भी गयी थी, यह स्वाभाविक भी था। अपने कमांडर को नाम लेकर बुलाने की वह अभ्यस्त न थी।

जर्मनों की गोलीबारी का जवाब देने के लिए उनके पास तीन बन्दूकें, दो सबमशीनगनें और एक पिस्तौल थी। दुश्मनों की दस सबमशीनगनों के मुक़ाबले यह चीज़ें कुछ भी न थीं, दुश्मन उन पर दस सबमशीनगनों से गोलियों की वर्षा कर सकते थे लेकिन उसे जंगल से मदद मिलने की बड़ी उम्मीद थी – जंगल से और सोते से।

"हाँ, तो यह लो, रीता, तुम्हारी सबमशीनगन के लिए एक और पेटी। ध्यान रहे, लम्बी बौछार न हो। सोते के पार गोली बन्दूक से चलाना। सबमशीनगन का इस्तेमाल तब करना जब वे सोते को पार करने लगें – उस समय यह बड़े काम की साबित होगी। बहुत, बहुत उपयोगी।"

"समझती हूँ, फ़ेदोत..."

और इस बार भी वह लड़खड़ा गयी। वास्कोव ने खींसें निपोरते हुए कहा:

"मेरे ख़्याल से, अगर तुम मुझे फ़ेद्या कहो तो ज्यादा आसान होगा। निस्सन्देह, फ़ेदोत कोई बड़ा आकर्षक नाम नहीं लेकिन क्या करूँ, मुझे यही नाम दिया गया था..."

पिछले चौबीस घण्टों ने जर्मनों पर अपनी स्पष्ट छाप छोड़ दी थी। अब वे पहले के मुक़ाबले तीन गुना ज्यादा सावधान थे, आगे बढ़ने में जल्दबाजी किये बिना वे हर गोलाश्म को देखते-भालते चल रहे थे। जितनी अच्छी तरह संभव था, वे चप्पे-चप्पे की छानबीन करते हुए, ऐन दोपहर के समय सोते के किनारे जा पहुँचे। सब कुछ पूर्ववत था – सिर्फ़ सोते के पार लड़कियों की गूँजती आवाज़ें न थीं और वहाँ छायी निस्तब्धता रहस्यमय एवं ख़तरनाक थी। जर्मन इस ख़तरे के प्रति अच्छी तरह चौकस थे। झाड़ियों में तो उनकी झाँकी मिल रही थी लेकिन सोते के किनारे तक पहुँचने से पहले वे काफ़ी देर तक वहीं रुके रहे।

फ़ेदोत ने लड़कियों को उस जगह तैनात किया था जहाँ सोता काफ़ी चौड़ा होकर मोड़ लेता था। उसने उनके लिए ठिकानों को चुनकर, संकेत ठिकाने तय कर दिये। उस छोटे से अन्तरीप को उसने ख़ुद अपने लिए चुना जहाँ, सच कहा जाये तो पिछले दिन झेन्या कोमेलकोवा ने अपने शरीर की बदौलत जर्मनों को आगे बढ़ने से रोक दिया था। यहाँ सोते के दोनों किनारे लगभग मिल-से जाते थे और उनके दोनों किनारे से जंगल शुरू हो जाता था। सोता पार करने के लिए इससे बेहतर जगह कोई नहीं हो सकती थी। जर्मन अधिकतर यहीं दिखाई दिये थे, शायद वे घबड़ाये दुश्मन को चिढ़ाने की आशा करते हों। लेकिन अब तक उसकी टुकड़ी में कोई भी घबड़ाया नहीं था और वास्कोव ने जर्मनों के पानी में उतरने से पहले गोली न चलाने का आदेश अपनी सैनिकों को दे रखा था। उसने उन्हें साँस लेने में भी सावधानी बरतने का आदेश दिया था। जिससे पक्षी भयभीत होकर चहचहाना न बन्द कर दें।

उसने सब कुछ पहले से ठीक-ठाक कर रखा था: बन्दूकें भरी थीं, सेफ्टी-कैच चढ़े थे जिससे नियत समय से पहले कोई मैगपाई तक चेतावनी न दे सके। लगभग पूर्ण शान्ति से सार्जेंट-मेजर अब दूसरे किनारे की निगरानी कर रहा था – केवल क़िस्मत की मारी बाँह सड़े दाँत की तरह दुख रही थी।

दूसरी ओर नज़ारा एकदम अलग था: चहचहाते पक्षी ख़ामोश हो गये थे, मैगपाई लगातार चीं-चीं कर रहे थे। इनमें से कोई भी चीज़ फ़ेदोत की नज़रों से नहीं चूक पायी थी; वह चौकसी से इन्तज़ार कर रहा था – कब यह खेल ख़त्म होता है और जर्मन प्रतीक्षा करते-करते थककर बाहर निकल पड़ते हैं।

फिर भी जो पहली गोली चली, वह उसने नहीं चलाई थी और उसे इसके चलने की उम्मीद थी लेकिन इसके बावजूद वह चौंका ज़रूर: गोली हमेशा अचानक, अप्रत्याशित होती है। गोली की आवाज़ बायीं ओर से आयी थी और फिर एक के बाद एक कई गोलियाँ चलीं। वास्कोव ने नदी के मोड़ की ओर देखा तो एक जर्मन को हाथ-पाँव के बल रेंगते हुए पानी से बाहर निकलकर अपने किनारे की ओर भागते पाया। गोलियाँ उसके इर्द-गिर्द, चारों ओर चल रही थीं लेकिन उसे एक

भी लग नहीं रही थी। कर-कर करते कंकड़ों पर से अपनी एक टाँग घसीटते, जर्मन हाथ-पाँव के सहारे साथियों तक रेंगकर पहुँच गया।

तभी घायल जर्मन को आड़ देने के लिए सबमशीनगनें आग उगल उठीं और सार्जेंट-मेजर अपनी जगह से उछलकर लड़कियों के पास दौड़ पड़नेवाला था कि तभी ऐन मौक़े पर उसने ख़ुद पर क़ाबू कर लिया। दूसरे किनारे की झाड़ियों से निकलकर चार जर्मन उसी समय गोलियों की आड़ में दौड़ते हुए सोता पारकर जंगल में गुम हो जाने की आशा से सरपट भागे। ऐसी स्थिति में बन्दूक बेकार थी क्योंकि हर गोली दाग़ने के बाद बोल्ट ठीक करने का समय न था। इस लिए फ़ेदोत ने सबमशीनगन उठा ली। उसके घोड़ा दबाते ही दूसरी ओर की झाड़ियाँ, दो जगहों से चमक उठीं और उसके सिर के ऊपर से गोलियाँ सर-सर करती गुज़र गयीं।

इस लड़ाई में वास्कोव बस इतना ही जानता था—पीठ नहीं दिखानी है। अपनी ओर की मुट्ठी भर ज़मीन भी दुश्मनों के हवाले नहीं करनी है। चाहे जितना भी कठिन हो, स्थिति चाहे जितनी भी निराशाजनक हो, उसे अपने मोर्चे पर डटे रहना है। उसे डटे रहना है, नहीं तो दुश्मन उसे रौंद डालेंगे—और यही अन्त होगा। वह अपने पीछे पूरे रूस को महसूस करता था। ऐसा प्रतीत होता मानो और कोई नहीं, बल्कि फ़ेदोत वास्कोव ही उसका एकमात्र रक्षक और सपूत जीवित था। और दुनिया में ख़ुद उसके, दुश्मन और रूस के अलावा कहीं कोई दूसरा न था।

लेकिन लड़कियाँ—उसका एक कान उन्हीं की ओर था—उनकी बन्दूकें चल रही हैं या नहीं। उधर से गोलीबारी जारी है यानी वे जिन्दा हैं, मोर्चे पर हैं, अपने रूस की रक्षा में लगी हैं।

यहाँ तक कि उधर से जब हथगोलों के फटने की आवाज़ आयी, तब भी वह भयभीत नहीं हुआ। उसे अहसास हो चुका था कि लड़ाई बन्द होने की, दम मारने की मोहलत मिलने की ज़रूरत थी क्योंकि जर्मन ऐसे दुश्मन से लड़ाई लम्बी नहीं खिंच सकते जिसकी ताक़त की उन्हें कोई जानकारी न थी। उन्हें भी फिर से मोहरे सजाकर चाल चलने की जरूरत थी। सोते को पारकर जो चार जर्मन उसकी ओर बढ़े आ रहे थे, वे इतनी फ़ुर्ती से वापस लौट पड़े कि किसी को गोली

लगी या नहीं, सार्जेंट-मेजर नहीं देख पाया। उसे भयभीत करने के अभिप्राय से, उन्होंने झाड़ियों से उस पर गोली चलायी। फिर वे रुक गये और कुछ देर बाद पानी पर सिर्फ़ तैरता धुआँ भर रह गया।

उसे कुछ मिनटों की मोहलत मिल गयी थी। निस्सन्देह, मिनटों में हिसाब करनेवाला दिन यह न था क्योंकि कहीं से राहत पहुँचने की आशा वह नहीं कर सकता था। तो भी उन्होंने दुश्मनों के दाँत खट्टे कर दिये थे, उनके नाकों चने चबवा दिये थे। बिना कुछ साव धानी बरते वे इस जगह से दुबारा गुज़रने की कोशिश नहीं करेंगे। वास्कोव को पूरा विश्वास था, दुश्मन कहीं दूसरी जगह से अब निकलने की कोशिश करेंगे—अधिक संभावना सोते के ऊपरी हिस्से से थी क्योंकि नीचेवाले मोड़ के दोनों किनारों पर चिकने पत्थरों की दीवार-सी खड़ी थी। इसलिए उसे कहीं और, दायीं ओर आगे चल देना चाहिये। सावधानी के ख़्याल से एक लड़की को यहाँ छोड़ देगा।

अपनी टुकड़ी द्वारा व्यूह-रचना के बारे में सोचने के लिए वास्कोव को समय मिल सके, उस से पहले ही उसे अपने पीछे पदचाप सुनाई दिये। उसने मुड़कर देखा तो कोमेलकोवा को सीधे झाड़ियों के बीच से अपनी ओर दौड़कर आते पाया।

"सिर नीचे रखो!"

"जल्दी!.. रीता!.."

रीता के साथ क्या हुआ, फ़ेदोत को उससे पूछने की कोई ज़रूरत नहीं पड़ी—कोमेलकोवा की आँखें सब कुछ कह रही थीं। झपटकर अपने हथियार उठा, वह दौड़ पड़ा और कोमेलकोवा से पहले उस जगह पर पहुँच गया। रीता दुहरी हुई, एक चीड़ वृक्ष के तले दुबकी थी। अपने विवर्ण होंठों पर उसने जबरन मुस्कान लाने की कोशिश की। होंठों को वह बार-बार जीभ से तर कर रही थी। पेट को उसने हाथों से कसकर पकड़ रखा था। ख़ून की धार उसके हाथों से नीचे गिर रही थी।

"क्या था?"

"हथगोला..."

उसने रीता को पीठ के बल लिटा दिया। उसने उसे हाथों से उठाया। दर्द के भय से वह उसे ऐसा नहीं करने देना चाहती थी।

बहुत हल्के-हल्के, कोमलता से उसने उसका हाथ हटाया और देखते ही सब कुछ समझ गया। सब कुछ लथपथ हो गया था—खून, फटे कपड़े और माँस के अन्दर धँस गयी चमड़े की पेटी।

"मुझे चिथड़े चाहिये!" उसने कहा। "जो कुछ अन्दर से पहनने के कपड़े हैं, वह सब!"

काँपते हाथों से झेन्या तब तक अपना बुग़चा खोल चुकी थी। उसने कोई बड़ी बारीक, चिकनी-सी चीज़ पकड़ा दी।

"भगवान के लिए रेशमी कपड़ न दो। मुझे लिनेन की जरूरत है!.."

"है ही नहीं..."

"धत्त तेरे की!..." वह दौड़कर अपने बुग़चे के पास जा पहुँचा और जल्दी-जल्दी खोलने लगा।

"जर्मन..." रीता के होंठ बुदबुदाये। "जर्मन कहाँ हैं?" पल भर को झेन्या ख़ाली-ख़ाली आँखों से रीता को घूरती रही फिर अगले ही पल झपटकर अपनी सबमशीनगन उठा, पीछे मुड़कर देखे बिना सोते के किनारे चली गयी।

जाँघिये का अतिरिक्त जोड़ा और पट्टियों के दो गोले निकालकर सार्जेंट-मेजर रीता के पास लौट आया। रीता ने उससे कुछ कहने की कोशिश की —उसने अनसुनी कर दी। दाँत पर दाँत जमाये अपने चाकू से उसने ख़ून से तर उसका ट्यूनिक, स्कर्ट, जाँघिया सब काट डाला। कमाँची ने विषम रूप से उसके शरीर में धँसकर पेट को फाड़ डाला था। गहरे ख़ून के भीतर से नीली-भूरी आँतें दिखाई दे रही थीं। उसने अपनी बनियान तह कर ज़ख्म पर रखकर पट्टी बाँधनी शुरू कर दी।

"घबड़ाने की कोई बात नहीं, रीता, सब ठीक है... ऊपरी घाव है, अन्दर से सब ठीक है। तुम ठीक हो जाओगी..."

किनारे से अन्धाधुन्ध गोलियों के चलने की आवाज़ सुनाई दी। एक बार फिर चिल्लपों मच गया, पत्ते बिखरने लगे। वास्कोव पट्टी बाँधता रहा लेकिन हर बार वह ख़ून से गीली हो जाती।

"जाओ... वहाँ जाओ..." रीता ज़ोर लगाकर बोल उठी। "झेन्या वहाँ है..."

अगली बार गोलियों की वर्षा उन तक आ पहुँची। इस बार वे सिर के ऊपर से नहीं गुज़री थीं बल्कि उनकी ओर निशाना लेकर चलायी गयी थीं लेकिन उन्हें लगी नहीं। सार्जेंट-मेजर लहराकर पास ही लोट गया, फिर झपाक से पिस्तौल निकाल पल भर को दिखाई पड़ी एक आकृति पर दो बार गोली दाग दी। जर्मन सोते को पारकर गये थे।

झेन्या की सबमशीनगन अभी भी आग उगल रही थी। वह जंगल में आगे की ओर लौटती हुई गोली चलाती जाती। वास्कोव ने जान लिया, वह जर्मनों को अपने पीछे बहकाकर उनसे दूर ले जा रही है। लेकिन संभावतः, सब जर्मन उसके पीछे-पीछे नहीं जा रहे थे। कहीं आस-पास कोई दूसरा जर्मन भी था और सार्जेंट-मेजर ने एक और गोली दाग दी। अब ओस्यानिना को लेकर यहाँ से खिसक चलने का समय आ गया था क्योंकि जर्मन बहुत क़रीब थे और कोई भी क्षण उनके लिए अन्तिम हो सकता था।

दर्द से अपने पीले पड़े होंठों को भींचकर रीता ने जो कुछ बुद-बुदाकर कहा, उसे अनसुनी करते हुए उसने रीता को उठा लिया। वह बन्दूक उठा लेना चाहता था लेकिन नहीं उठा सका और झाड़ियों में दौड़ पड़ा। हर क़दम के साथ उसे अपनी बायीं बाँह में भयानक दर्द महसूस होता और उसे अपनी ताक़त जवाब देती प्रतीत होती।

बुग़चे, बन्दूकें, ओवरकोट और झेन्या के अन्दर से पहने जानेवाले बारीक, चिकने और हल्के-हल्के कपड़े जिनको ख़ुद सार्जेंट-मेजर ने फाड़ डाला था, चीड़ के नीचे पड़े रहे।

ख़ूबसूरत कपड़े झेन्या की कमज़ोरी थे। अपनी ख़ुशमिज़ाजी व दोस्ताना स्वभाव के कारण वह बहुत-सी चीज़ों के बिना भी अपना काम आसानी से चला ले सकती थी लेकिन लड़ाई के मौक़े पर माँ से मिले इन कपड़ों को वह सैनिक बुग़चे में बिना चूके लिये फिरती थी। उसकी यह ज़िद तोड़ी नहीं जा सकती थी। लगातार मिली फटकारों, हलकानियों व किसी सैनिक की अनेकानेक परेशानियों को झेलने के बावजूद वह उन्हें छोड़ नहीं पायी।

उन में से एक जोड़ा तो सच में ग़ज़ब का था—किसी का भी दिमाग़ फेर दे। यहाँ तक कि झेन्या के बाप को भी कहना पड़ा था:

"तुमने हद कर दी है, झेन्या, किस मौक़े के लिए है यह?"

"मैं एक पार्टी में जा रही हूँ!" उसने सिर अकड़ाकर कहा, हालाँकि वह अच्छी तरह जानती थी, पिता जी का मतलब कुछ दूसरा है।

उनके बीच ज़बर्दस्त सहानुभूति थी। वह कहता: "क्या शूकर का शिकार करना पसन्द करोगी?"

"मैं इसकी इजाज़त नहीं दूँगी!" उसकी माँ ख़ौफ़ से बोल उठती। "क्या पागल हुए हो, छोटी-सी बच्ची को शिकार के लिए साथ घसीट रहे हो।"

"उसे इसका अभ्यस्त होने दो!" पिता हँस पड़ते। "लाल सेना के कमाँडर की बेटी को किसी चीज़ का डर नहीं होना चाहिये।"

झेन्या को किसी भी चीज़ का डर न था। वह घुड़सवारी करती, बन्दूक चलाने का अभ्यास करती, शूकर का शिकार खेलने बाप के साथ जाती, अपने बाप के मोटरबाइक पर बैठकर फ़ौजी शहर में ऊधम मचाती फिरती।

भोज-उत्सव में वह जिप्सी व स्पेनी नृत्य भी करती, गिटार पर गाती और छरहरे लेफ़्टिनेंटों के साथ हेले भी करती। यह सब वह बड़ा अनायास करती—मनोरंजन के लिए, प्रेम में पड़े बिना।

"तुमने तो लेफ़्टिनेंट सेर्गेयचुक का दिमाग़ ही एकदम उड़ा दिया है, झेन्या। आज उसने मेरे पास अपनी रिपोर्ट यूँ शुरू की:

"कॉमरेड झेन्या, मेरा मतलब है जनरल..."

"मुझे बनाने की कोशिश न कीजिये, डैड!"

यह बड़े मौज-मज़े का समय था लेकिन मम्मी भौंहें चढ़ाते, आहें भरती रहती। झेन्या वयस्क हो गयी है, पूर्ण स्त्री-लोग यही कहते हैं, और वह ऐसा आचरण करती है... माँ के लिए ऐसा आचरण समझ के बाहर था। कभी निशानेबाज़ी, घुड़सवारी, मोटरबाइक तो कभी रात-रात भर नाच-गाना, लेफ़्टिनेंटों द्वारा बड़े-बड़े गुलदस्ते भेंट करना, खिड़की के नीचे खड़े होकर प्रेम गीत गाना, उसे कविताओं में पत्र लिखना।

"तुम्हें इस तरह का आचरण नहीं करना चाहिये, झेन्या प्यारी! जानती हो, लोग तुम्हारे बारे में क्या-क्या कहते हैं?"

"जो उनके मन में आये, कहने दो, मम्मी!"

"लोग कहते हैं, तुम्हें कर्नल लूझिन के साथ देखा गया है। वह पारिवारिक आदमी है। तुम्हारा उसके साथ मेल ठीक नहीं, झेन्या!"

"जैसे मुझे लूझिन की कोई ज़रूरत है!" झेन्या कन्धे सिकोड़कर कहती और दौड़ती ग़ायब हो जाती।

अद्भुतता और वीरता से परिपूर्ण लूझिन एक ख़ूबसूरत जवान आदमी था। ख़ाल्खिन-गोल में शूरता के लिए उसे लाल पताका की उपाधि और फ़िन युद्ध में लाल सितारा की उपाधि मिल चुकी थी। उसकी माँ सोचती, ज़रूर कोई बात है, नहीं तो झेन्या इस सम्बन्ध में बातचीत से कतराती ही क्यों और परेशान होती रहती।

अपने परिवार के मार डाले जाने के बाद झेन्या सोवियत क्षेत्र में वापस लौटने में सफल रही तो लूझिन ने ही उसे सहारा दिया। उसने उसकी मदद की, हिफ़ाज़त की, सान्त्वना दी। झेन्या की निरीहता से उसने किसी तरह का फ़ायदा उठाया, यह तो कोई नहीं कह सकता था लेकिन उसने उसका स्नेह ज़रूर पा लिया। झेन्या को सहारे की ज़रूरत थी, एसी बाँहों की ज़रूरत थी जिस पर सिर रखकर वह रो सके, ऐसे आदमी की ज़रूरत थी जो उससे हमदर्दी जता सके, उसका लाड़ उठा सके, दूसरे शब्दों में, इसे ऐसे आदमी की ज़रूरत थी जिसके सहारे वह लड़ाई के उस विकट समय में धरती पर अपने पैर जमा सके। अब हर चीज़ उसकी इच्छा के मुताबिक़ हो रही थी—हमेशा की तरह आज भी झेन्या अपने होश नहीं गँवायेगी, उसे ख़ुद पर विश्वास था और अब, जर्मनों को झाँसा में लेकर ओस्यानिना से दूर ले जाते समय भी उसे इस बात का पूरा यक़ीन था कि अन्त में सब कुछ ठीक रहेगा।

बग़ल में पहली गोली लगने के बाद भी उसे सिर्फ़ हैरानी ही हुई थी। उन्नीस की उम्र में मरने की बात सोचना भी व वाहियात था, निहायत बेवक़ूफ़ी। ऐसा भी भला कहीं हो सकता है।

पर्णावलियों के बीच से अन्धाधुन्ध गोली चलाते हुए, जर्मन उसे संयोगवश ही निशाना मारने में सफल हुए थे। ख़ामोश रहकर, प्रतीक्षा करने से शायद अभी भी बच निकलने का मौक़ा उसे मिल सकता था। लेकिन वह तब तक गोलियों की बाढ़ छोड़ती रही जब तक गोलियाँ

ख़त्म नहीं हो गयीं। औंधी लेटी, वह गोली चला रही थी। बच निकलने की कोशिश उसने अब छोड़ दी थी क्योंकि जीवनदयी रक्त के बहने के साथ-साथ उसकी शक्ति भी क्षीण होती जा रही थी। जर्मनों ने उसे एकदम पास से गोली मारकर ख़त्म कर दिया फिर वे काफ़ी देर तक उसके मौत के बावजूद गर्वीले व सुन्दर चेहरे [की ओर देखते खड़े रहे।

१४

रीता जानती थी, उसका घाव जानलेवा है और उसकी मृत्यु पीड़ादायक व विलम्बित होगी। अब तक दर्द तो शायद एकदम न था लेकिन हाँ, पेट में दाह सा जरूर महसूस हो रहा था। यह धीरे-धीरे बढ़ता जाता और बड़ी तेज़ प्यास महसूस होती। उसे मालूम था, पानी पीना ठीक नहीं, इसलिए थोड़े से चीथड़ों को एक गड्ढे में भिगोकर उसने होंठ गीले कर लिये।

एक गिरे हुए फ़र वृक्ष की जड़ों के तले उसे छुपाकर वास्कोव चला गया था। उसने उसे टहनियों से अच्छी तरह ढँक दिया था। गोलियों की आवाज़ अभी भी सुनाई दे रही थी लेकिन फ़ौरन बाद ही सब कहीं ख़ामोशी छा गयी और रीता ने रोना शुरू कर दिया। वह सुबक-सुबककर नहीं बल्कि निःशब्द रो रही थी। बड़े-बड़े अश्रुकण उसके गालों पर लुढ़क रहे थे। अब उसने जान लिया था, झेन्या जीवित नहीं रही।

बाद में आँसू थम गये। उनकी जगह उस दारुण स्थिति ने ले ली जिससे उसे अब सामना करना था, जिस से समझौता करने के लिए उसे ख़ुद को तैयार करना था। एक सर्द, अँध खाई पैरों तले पैदा हो रही थी और रीता उसे भावुकतावश नहीं बल्कि साहसपूर्वक देख रही थी।

उसकी ठण्डी आहें अपने लिए, अपने जीवन या अपने यौवन के के लिए न थीं क्योंकि अब वह अपने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण चीज के प्रति व्यग्र थी। अपने बेटे को वह यतीम छोड़े जा रही थी–निपट अकेला। उसकी देखभाल की जिम्मेदारी अपनी बीमार माँ पर छोड़कर।

रीता मन ही मन एक तस्वीर बना रही थी–युद्ध के दौरान उसके जीवित रहने और बाद के उसके जीवन की।

शीघ्र ही वास्कोव लौट आया। टहनियों को एक ओर फेंककर अपनी घायल बाँह को झुलाता वह ख़ामोशी से नीचे बैठ गया।

"झेन्या खेत आयी?"

उसने सिर हिला दिया। पल भर बाद बोला:

"हमारे बुग़चे जाते रहे। बुग़चे और बन्दूकें भी। वे या तो उन चीज़ों को अपने साथ ले गये या कहीं छुपा दिया है।"

"झेन्या की··· मौत फ़ौरन हुई?"

"एकदम," उसने कहा लेकिन वह जानती थी, वास्कोव सच नहीं बोल रहा है। "वे जा चुके हैं। शायद विस्फोटक आदि लाने के लिए···" तभी उसकी नज़र रीता की धूमिल, सब कुछ समझती दृष्टि पर पड़ी और वह अचानक ही चीख़कर बोल उठा:

"उन्होंने हमें पराजित नहीं कर दिया है, समझी? मैं अभी तक जिन्दा हूँ और मुझे मारने मैं उनके छक्के छूट जायेंगे!"

दाँत पीसते हुए वह ख़ामोश होकर दुबारा अपनी बाँह को झुलाने लगा।

"दर्द करता है?"

"दर्द तो यहाँ करता है," उसने अपने सीने पर टहोका लगाया। "यह यहाँ, मेरे दिल को कुरेदे डाल रहा है! मैंने ही तुम सब को, तुम पाँचों को इसमें फँसाया–और किस लिए? मुट्ठी भर जर्मनों के लिए?"

"अपने को दोष न दो··· यह तो लड़ाई है···"

"जब तक लड़ाई चल रही है तब तक तो ठीक है लेकिन क्या लड़ाई ख़त्म हो जाने के बाद, शान्ति काल में भी लोग इसी ढँग से सोचेंगे? क्या वे समझ पायेंगे, तुम सब को मृत्यु का वरण क्यों करना पड़ा था? और फिर मैं ने जर्मनों को गुज़र ही क्यों नहीं जाने दिया? मैंने यह फैसला लिया ही क्यों? मैं क्या जवाब दूँगा जब वे मुझसे पूछेंगे: 'आप मर्द लोग हमारी माताओं को बचाने में असफल क्यों रहे? उन्हें मौत के आग़ोश में भेजकर आप ख़ुद जीवित कैसे रहे? क्या आप किरोव रेलवे और श्वेत सागर बाँध को उनसे अधिक महत्व दे रहे थे?

उनकी रक्षा करनेवाले सैनिक भी तो होंगे जो पाँच लड़कियों के साथ पिस्तौल लिये एक सार्जेंट-मेजर से जरूर ज्यादा होंगे!"

"ऐसा न कहो," उसने कोमल स्वर में कहा। "किसी के देश की शुरुआत बाँधों से नहीं होती। हम अपने देश की रक्षा कर रहे हैं। सबसे पहले देश की सब कहीं बाँध की।"

"ह्म्म..." बड़े ज़ोर से दीर्घ निःश्वास छोड़कर वास्कोव चुप हो गया। "तो देखो, तुम यहीं रहो। मैं जाकर थोड़ा इधर-उधर नज़र डाल आऊँ। नहीं तो कहीं अचानक ही टूट पड़े तो हमारा ख़ात्मा ही समझो।" रिवाल्वर निकालकर न जाने क्यों वह अपनी आस्तीन पर उसे कुछ देर तक चमकाता रहा। "यह रख लो, इस में बस दो गोलियाँ बची हैं लेकिन कुछ तो है।"

"रुको!" रीता की नजर उसके चेहरे से गुज़रकर डालियों से अर्द्ध-आच्छादित आकाश को घूर रही थी। "याद है, जब मैं छावनी के पास जर्मनों से जा टकरायी थी? मैं शहर में अपनी माँ से मिलने जानेवाली थी। तीन साल के मेरा एक छोटा-सा बेटा है वहाँ। अलिक कहके लोग उसे पुकारते हैं—असली नाम अल्बर्ट है। माँ बहुत बीमार है, ज़्यादा दिन बचेगी नहीं। पिता जी मोर्चे पर गये थे लेकिन उनका कोई पता नहीं।"

"चिन्ता न करो, रीता, मैं समझता हूँ।"

"धन्यवाद।" उसके विवर्ण होंठों पर स्मृति की मुद्रा छा गयी। "क्या अब तुम मेरी सबसे आख़िरी इच्छा पूरी कर दोगे?"

"नहीं।"

"इनकार करना समझ में नहीं आता? चाहे जो भी हो, मैं तो मरूँगी ही। जिन्दा रहने का मतलब है, और पीड़ा झेलनी होगी।"

"मैं थोड़ी टोह लेकर लौट आऊँगा। रात होते-होते हम अपने लोगों के बीच होंगे।"

"अच्छा, मेरा चुम्बन लो," वह अचानक बोली।

बड़े फूहड़पन से झुककर, सकुचाते-सकुचाते उसने उसका ललाट चूम लिया।

"तुम्हारी दाढ़ी गड़ती है..." आँखें बन्द किये-किये वह लगभग अस्फुट स्वर में बोली। "अब जाओ। मेरे ऊपर टहनियाँ डालो और जाओ।"

उसके निष्प्रभ गालों पर धीमे-धीमे आँसू लुढ़क आये। फ़ेदोत आहिस्ते-आहिस्ते उठ खड़ा हुआ और रीता को टहनियों से सावधानी से ढँककर, लम्बे-लम्बे डग भरता सोते की ओर, जर्मनों की ओर बढ़ गया।

बेकार हथगोला—हथियार के नाम पर अब सिर्फ़ वही तो था—उसकी जेब में झूल रहा था। उसे महसूस हुआ या शायद सुनाई दिया—टहनियों के तले से गोली चलने की बड़ी हल्की-सी आवाज़ हुई थी और पलक झपकते दब गयी थी। उसके पाँव जहाँ के तहाँ जम गये, वह बड़े ध्यान से सुनने की कोशिश करने लगा। और तब, नहीं, ऐसा नहीं हो सकता है, यह मानते हुए वह दौड़ता फ़र वृक्ष की ओर लौट पड़ा।

रीता ने कनपटी में गोली मार ली थी—ख़ून न के बराबर निकल पाया था। घाव के इर्द-गिर्द बारूद के नीले दाग़ से पड़ गये थे और न जाने किस कारण वास्कोव काफ़ी देर तक एकटक उसको देखता रहा। फिर वह रीता को कुछ दूर उठाकर ले गया और वहीं एक गड्ढा खोदने लगा जहाँ वह लेटी थी।

जमीन मुलायम थी और खोदने में आसानी हो रही थी। एक डण्डे से कुरेदकर उसने जमीन पोली की। फिर हाथों से उठा-उठाकर मिट्टी बाहर फेंक देता। जड़ों को चाकू से काटता जाता। तेज़ी से वहाँ का काम ख़त्म कर वह उस जगह जा पहुँचा जहाँ मृत झेन्या पड़ी थी। उसकी बाँह में भयानक दर्द हो रहा था। इस लिए वह झेन्या के लिए अच्छी-सी क़ब्र नहीं खोद पाया। यह ख़्याल उसे परेशान करता रहा और दिल में यह मलाल लिये उसके होंठ बुदबुदाते रहे:

"मुझे माफ़ करना, झेन्या, माफ़ कर देना..."

डगमगाता, लड़खड़ाता, बड़े कष्ट से चलता वह सिन्यूख़िना पहाड़ियों के पार जर्मनों की ओर बढ़ता गया। एकमात्र गोलीवाली पिस्तौल को उसकी अंगुलियों ने जकड़ रखा था। इस समय उसकी सिर्फ़ एक ही इच्छा हो रही थी, जितनी जल्दी जर्मनों से मुलाक़ात हो जाये और वह कम से कम एक और जर्मन को तो मार सके। अब उसमें कोई ताक़त बची नहीं रही थी, तनिक भी नहीं—सिर्फ़ पीड़ा ही पीड़ा थी, पूरे बदन में।

फीका झुटपुटा अभी तक गर्म चट्टानों पर फैला था। गड्ढों में कुहरे जमा होने लगे थे, बयार सो गयी थी—मच्छरों के झुण्ड उस पर

मँडराने लगे थे। उस सफ़ेद-सफ़ेद से कुहरे में उसकी लड़कियों की— पाँच की पाँचों की छवि छुपी थी और अपनी विह्वलता में सिर को दाय-बाये झटकते हुए, वह बुदबुदाये जा रहा था। फिर भी जर्मन अभी तक नहीं मिले थे। न तो वे दिखाई दे रहे थे, न गोली चला रहे थे हालाँकि वह खुले आम, भारी-भारी क़दमों, सीना तानकर उनसे मिलने को उतावला हो चला जा रहा था। बहुत हो ली लड़ाई, अब इसे ख़त्म करो—और यह पूर्ण विराम उसकी पिस्तौल की नली में पड़ा था।

हाँ, बिन पलीते का हथगोला भी था उसके पास—मात्र लौह पिण्ड-सा। न जाने क्यों वह उसे ढोये फिर रहा था। शायद आदतन—आख़िर वह सार्जेंट-मेजर था और सेना की सम्पत्ति बर्बाद करने की उसकी आदत न थी। अब उसका कोई लक्ष्य न था, बस एक इच्छा मात्र थी। वह घूम फिरकर नहीं चल रहा था, न तो वह पदचिह्नों की तलाश कर रहा था—वह सीधे, स्वचालित ढंग से चला जा रहा था। फिर भी जर्मन कहीं न थे...

चीड़ कुंज पारकर वह जंगल से गुज़र रहा था—हर बीतते मिनट के साथ वह लेगोन्तोव की उस कुटिया के क़रीब पहुँचता जा रहा था जहाँ आज ही सुबह, बड़ी आसानी से उसने हथियार हासिल कर लिया था। सारी दूसरी जगहें छोड़कर वह वहीं क्यों जा रहा था, यह सोचने के लिए भी वह नहीं रुका। शिकारी की अचूक, सहजप्रवृत्ति उसे पूरे विश्वास के साथ उस ओर लिये जा रही थी। वह बस उसके कहे मुताबिक़ चला जा रहा था। और उसी सहज प्रेरणा के वशीभूत उसने चलते-चलते अपनी गति धीमी कर ली थी। फिर एकाग्रता से सुनने की कोशिश करता हुआ वह झाड़ियों में खिसक गया।

कुएँ और कुटियावाली वह खुली जगह कोई सौ मीटर की दूरी से देखी जा सकती थी। इस समय इन सौ मीटरों को वास्कोव ने निः-शब्द तय कर लिया था—मानो उसमें कोई भार ही न हो। वह जानता था, दुश्मन वहाँ होगा—यक़ीनन होगा, सहज प्रेरणावश, ठीक उसी तरह जैसे भेड़िया जान लेता है, खरहा कहाँ उसकी राह में आ टकरायेगा।

खुले मैदान के किनारे झाड़ियों के बीच वह बुत-सा खड़ा रहा; काफ़ी देर तक, बिना हिले-डुले—कुएँ के इर्द-गिर्द ध्यान से नज़र

दौड़ाता। जिस जर्मन की उसने हत्या की थी, अब वहाँ न था। उसकी नज़र कुटिया पर, आस-पास की अंधेरी झाड़ियों पर रेंगती रही। कुछ भी सन्देहास्पद न था, रत्ती-भर भी नहीं लेकिन सार्जेंट-मेजर धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करता रहा।

उस समय उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ जब कुटिया के कोने से एक हल्की छाया धीरे-धीरे हिली। उसे इस बात का खूब पता था कि यहीं कहीं पहरेदारी की गयी होगी।

आहिस्ते-आहिस्ते वह आगे बढ़ा—संतरी की ओर, एक-एक डग एक-एक युग के बराबर रखता। जैसे सपने में चल रहा हो। इस तरह वह एक पैर ऊपर उठाता, फिर भारहीन-सा ज़मीन पर रखता—एकदम धीरे-धीरे। वह क़दम नहीं रख रहा था—बून्द-बून्द करके अपने शरीर का भार उँडेल रहा था—जिससे एक टहनी तक आवाज न करे। इस तरह, पक्षियों की भाँति ऐसा नृत्य करते हुए, उसने खुले मैदान का चक्कर लगाया और गतिहीन संतरी के पीछे जा खड़ा हुआ। और अब, पहले से भी अधिक मन्द गति से, फिसलते हुए वह उस लम्बी-चौड़ी, काली छायाकृति की ओर बढ़ चला। वह चल नहीं, फिसल रहा था।

एक क़दम बाक़ी रहने पर वह रुक गया। काफ़ी देर तक उसने साँस रोक रखी थी, अब दिल को आराम करने की थोड़ी मोहलत दी। बहुत पहले ही पिस्तौल वह पेटी में खिसका चुका था और इस समय दाहिने हाथ में उसने चाकू थाम रखा था। उसकी नासिका मानुष गँध से भर उठी थी। उस एकमात्र निर्णायक प्रहार के लिए वह एक मिलि-मीटर से भी सन्तुलन बिगड़ने नहीं देना चाहता था। उसने धीमे-धीमे अचूक निशाना साधा।

लेकिन इसके साथ ही उसने बची-खुची ताक़त को बटोरने में भी समय लगाया। ताक़त रही ही कितनी थी—बस रंचमात्र, बायीं बाँह तो अब किसी काम की न थी।

उस प्रहार में उसने जो कुछ बचा था, वह सब लगा दिया। चीख़ तो उसे शायद ही कहेंगे, बस एक विचित्र-सी, लम्बी आह भर निकली थी और फासिस्ट घुटनों के बल भहराकर गिर पड़ा। भड़ाक से दरवाज़ा खोल सार्जेंट-मेजर कुटिया के अन्दर फट पड़ा।

"हौन्दे होख!"

वे गहरी नीन्द में सोये थे। रेलवे की ओर बढ़ने के लिए आखिरी प्रयास से पहले वे अच्छी तरह आराम कर रहे थे। सिर्फ़ एक जाग रहा था और कोने में रखी बन्दूक की ओर झपटा तो वास्कोव ने उसकी हरकत भाँपकर गोली चला दी। नीची छत के तले गूंज ज़ोरों से प्रतिध्वनित हुई, जर्मन दीवार से लगकर गिर पड़ा। सारेकेसारे जर्मन शब्द सार्जेंट-मेजर के मुंह से निकल पड़े। वह रूसी मिश्रित जर्मन में "ल्यागेट, ल्यागेट!" कहकर चीख़ उठा।

जितनी बुरी से बुरी गालियाँ, बददुआएँ उसे आती थीं, वह बक गया...

लेकिन उनके भयभीत होने का कारण उसका आदेश न था और न ही वह हथगोला जिसे दिखा-दिखाकर सार्जेंट-मेजर उन्हें धमका रहा था। वे इसकी कल्पना भी नहीं कर सकते थे, सपने में भी नहीं कि वह अकेला था, आस-पास कई वर्स्ट तक उसके अलावा कोई भी नहीं। उनके फ़ासिस्ट मस्तिष्क में यह बात समझ से बाहर थी और इसी कारण उसके आदेश के मुताबिक़ सिर नीचे करके वे फ़र्श पर लेट गये—चारों के चारों, तेज़ी दिखाने वाला पाँचवाँ तो दूसरी दुनिया में पहुंच चुका था।

फिर उन्होंने ख़ूब अच्छी तरह बेल्टों से एक-दूसरे को बाँधा। सबसे आख़िरवाले को वास्कोव ने ख़ुद अपने हाथों से बाँधा। इसके बाद वह रो उठा। उसके गन्दे, दाढ़ी बढ़े चेहरे पर आँसुओं की धारा बह चली। वह एक साथ ही चीख़ता, चिल्लाता, रोता-हँसता जा रहा था। ज्वर से वह कँपकँपा भी रहा था।

"तुम लोग हमारी थाह नहीं ले पाये, है न? कुल मिलाकर वे पाँच थीं। पाँच लड़कियाँ, सिर्फ़ पाँच। लेकिन तुम समझ नहीं पाये, थाह नहीं ले पाये। कहीं भी नहीं। तुम सब यहीं आख़िरी साँस लोगे — एक-एक। अगर ऊपरवाले तुम्हें ज़िन्दा छोड़ देते हैं, मैं अपने हाथों से तुम्हारी हत्या कर दूँगा! बाद में मेरा कोर्टमार्शल करते हैं तो करते रहें!"

उसकी बाँह टीस उठी। उसे अपने अन्दर सब कुछ जलता महसूस हुआ, मस्तिष्क भटकने लगा। उसे अपने बेहोश हो जाने का डर था। अपना होश बनाये रखने में वह सारी बची-खुची शक्ति लगा रहा था।

वापसी में उसे कुछ भी याद न रहा था। नशे में धुत्त आदमी की

तरह लड़खड़ाकर वास्कोव के चलने के कारण जर्मनों की पीठ झटके खाकर, कभी इधर, कभी उधर झूल पड़ती। उसे उन चार पीठों के अलावा कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था और दिमाग में बस एक ही बात थी—अगर वह बेहोश होने लगा तो उससे पहले ही उन्हें गोली मार देगा। उसकी चेतना अन्तिम महीन धागे से लटकी थी। शरीर इस बुरी तरह दुख रहा था कि वह रो पड़ता, सुबक उठता। वह बेहोश होने ही वाला था।

लेकिन उसने अपने होश तभी बिसराये जब किसी ने चुनौती दी और उसने समझ लिया, वे दुश्मन नहीं, दोस्त थे। रूसी...

* * *

बड़ी एकान्त, सुहानी जगह है। न धूल, न गन्दगी। पर्यटकों की सुविधा के लिए कई तरह के इन्तज़ाम हैं। हफ़्ते में एक दिन रोटी लेकर मोटरबोट आता है।

और कुकुरमुत्ते, जिधर देखिये, उधर।

आज मोटरबोट से सफ़ेद बालोंवाला एक बूढ़ा आया है—दबंग, एक बाँह कटी हुई। साथ में रॉकेट सेना का एक कप्तान भी है। क्या ख़ूब उपाधि जड़ी है कप्तान के नाम के साथ—अल्बर्ट फ़ेदोतोविच! कभी सुना है ऐसा नाम? और वह बूढ़े को "डैड" कहता है! वे इधर-उधर किसी चीज़ की तलाश कर रहे थे लेकिन मुझे मालूम नहीं...

...कल बातचीत बीच में ही रह गयी थी। लगता है, यहाँ भी लड़ाई हुई थी... मेरे, तुम्हारे पैदा होने से पहले वे यहाँ लड़े थे।

अल्बर्ट फ़ेदोतोविच और उसके पिता अपने साथ एक शिलापट्ट लाये थे। सोते के पार, जंगल में हम ने एक क़ब्र की तलाश की। वही जानें, कप्तान के पिता ने न जाने कैसी पहचान के सहारे क़ब्र ढूँढ़ निकाली थी। शिलापट्ट ले जाने में मैं उनकी मदद करना चाहता था लेकिन फिर सोचा, अच्छा हो, अगर उन्हें ख़ुद ही करने दूँ।

और यहाँ की सुबह कितनी निस्तब्ध, कितनी शान्त है, इसे मैं आज ही महसूस कर पाया हूँ। ऊषा नागरी यहाँ आती तो है लेकिन उसके पायल खनकते नहीं।

वसील बीकोव

सोत्निकोव

वसील बीकोव (जन्म १९२४) १९४१ में छात्र थे और स्वयंसेवक के रूप में फ़ौरन मोर्चे को रवाना हो गये थे। इन्होंने नाज़ियों के विरुद्ध उक्रेन, रूमानिया व हंगेरी में लड़ाइयाँ लड़ीं और दो बार ज़ख़्मी हुए। सेना छोड़ने के बाद इन्होंने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया और शीघ्र ही पुस्तकें लिखनी शुरू कर दीं। इस समय बीकोव सोवियत बेलोरूस के सर्वाधिक लोकप्रिय युद्ध लेखकों में एक हैं। उनकी कहानियों के कथानक उन दिनों के हैं जब युद्ध ने सोवियत जन-जीवन को ओतप्रोत कर रखा था और सदैव अधिकाधिक वीरता की माँग थी। बीकोव की कृतियों में सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं "क्रौंच रोदन," "तीसरी ज्वाला," "आल्पस गायन," "सोत्निकोव," "शिलास्तम्भ" तथा "सुबह तक जीवित"। १९७४ में वसील बीकोव को साहित्य के लिए राज्य पुरस्कार दिया गया।
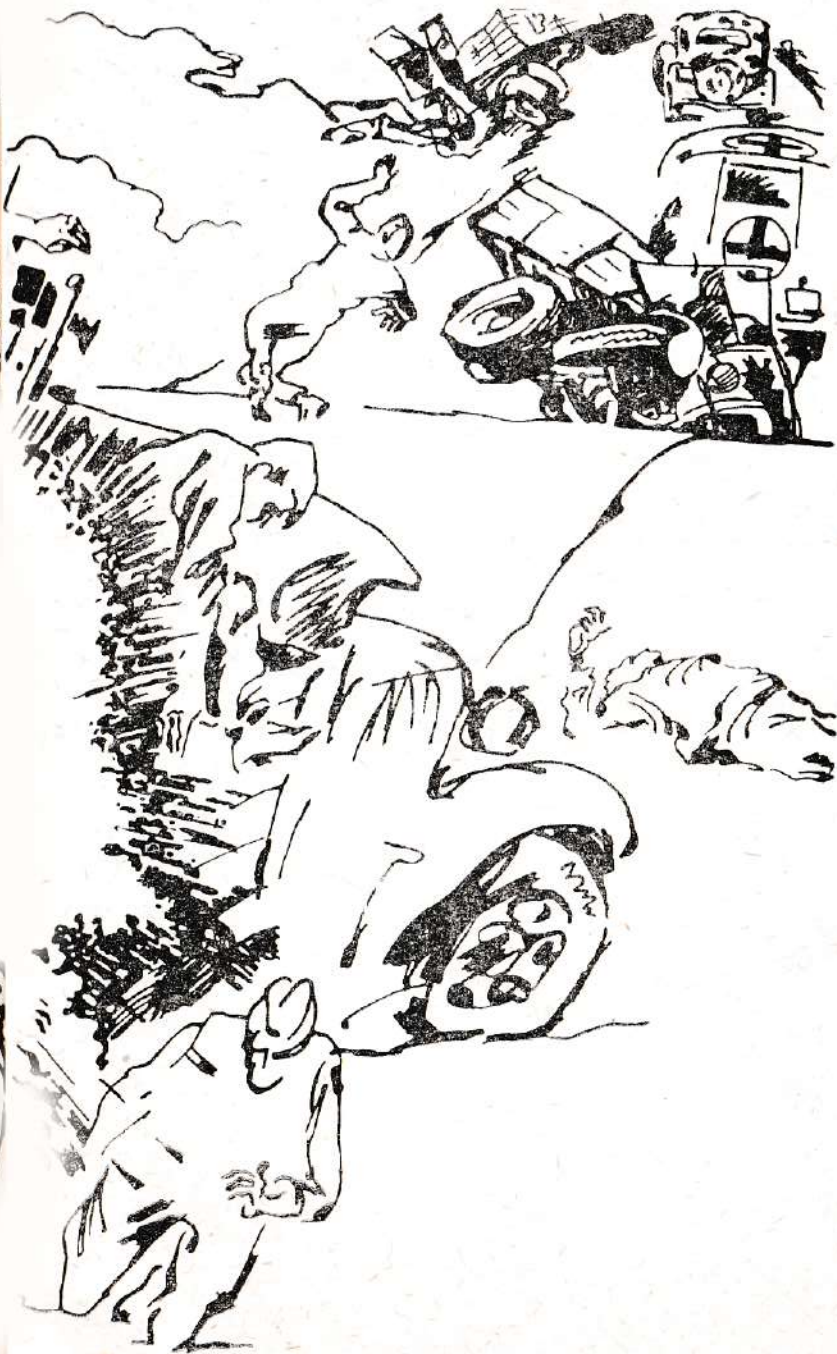
१

वे जगंल के के बीच एक ऐसे रास्ते से आगे बढ़ रहे थे जिस पर बेहिसाब बर्फ़ के कारण घोड़े के खुरों, स्लेजों के गुज़रने या आदमियों के पदचिह्नों का नामोनिशान तक न था। ग्रीष्म में तो शायद नाममात्र की आवाजाही भी होती थी लेकिन फ़रवरी के हिमझंझावात के बाद तो इसे कोई रास्ता समझना भी मुश्किल था। सब कहीं बर्फ़ की एक-सी परत फैली थी। इक्के-दुक्के आल्डरों से मिले-जुले फ़र वृक्ष सड़क की दोनों ओर इस भोंड़े ढंग से झुके थे कि रात में वहाँ कोई धुंधला सफ़ेद गलियारासा बन जाता था। इसके बावजूद, वे रास्ते से भटके नहीं थे। नंगी अन्धेरी झाड़ियों से झाँकते हुए रिबाक पतझड़ से याद में बैठाये स्थानों को अधिकाधिक पहचानता जा रहा था। पतझड़ की एक शाम वह स्मोल्याकोव के ग्रुप के दूसरे चार लोगों के साथ इसी रास्ते से छोटे-से गाँव की ओर गया था। उसका मक़सद खाने-पीने के सामानों की बेहद कमी को भी कुछ ठीक करना था। और वह रहा

जाना-पहचाना छोटा-सा कंदरा, इसी के किनारे बैठकर सिगरेट पीते हुए वे तीनों आगे गये दो दूसरे लोगों से बढ़ने का सिगनल पाने के लिए इन्तज़ार कर रहे थे। इस समय कंदरे के अन्दर जाने का कोई रास्ता न था: हवा द्वारा उड़ा लायी बर्फ़ कंदरे के किनारों पर खपरैल जैसी बनी हुई थी और ढलान के पत्र-विहीन नव वृक्ष फुनगियों तक बर्फ़ में समाये थे।

एक ओर, फ़र वृक्षों की फुनगियों के ऊपर मलिन-सा अर्द्धचन्द्र, तारों की उदास टिमटिमाहट के बीच तनु प्रभा के साथ धीरे-धीरे नभ में तैरता आगे बढ़ रहा था। लेकिन इसके कारण रात का एकाकीपन थोड़ा कम हो जाता था क्योंकि ऐसा महसूस होता था जैसे कोई जीवित, सदय प्राणी सकुचाते-सकुचाते साथ चल रहा हो। गहरे जंगल में फ़र वृक्षों व झाड़-झंखाड़, धुँधली परछाइयों तथा ठण्ड खायी शाखाओं के आकुल गुम्फन के स्याह झमेले की निविड़ कालिमा का राज्य था जब कि यहाँ, निर्मल हिमश्वेत पर रास्ता सहज दृष्टिगोचर था। हालाँकि रास्ते पर चलना कठिन था लेकिन चूँकि यह अछूते जंगल से गुज़रता था, अचानक हमलों की सम्भावना न थी और रिबाक के ख़्याल से, इस निभृत स्थान पर शायद ही कोई उनकी बाट जोहता छुपा हो। लेकिन फिर भी उन्हें सावधान तो रहना ही था और खास कर गिल्यानी की दुर्घटना के बाद तो जरूर ही—कुछ घण्टे पहले ही वे वहाँ जर्मनों से जा टकराने से बाल-बाल बचे थे। सौभाग्य से, गाँव के बाहर ही उनकी मुलाक़ात जलावन की लकड़ी ले जाते एक बूढ़े से हो गयी थी। उसने इन्हें ख़तरे से आगाह कर दिया था और वे जंगल की ओर पलट पड़े थे। वहाँ जंगल में झाड़ियों में काफ़ी समय तक सिर मारने के बाद वे इस रास्ते पर आ निकले थे।

जो भी हो, जंगल या खुले में अचानक मुठभेड़ से रिबाक बेकार ही भयभीत होनेवाला न था क्योंकि व हथियारों से लैस थे। निस्सन्देह, उनके पास गोलियाँ कम थीं लेकिन किया भी क्या जा सकता था। गोर्ली कच्छे में रुके रहनेवालों ने बदतर तंगहाली के बावजूद उन्हें यथासम्भव ज़रूरत की हर चीज़ मुहैया कर दी थी। इस समय, बन्दूक की पाँच गोलियों के अलावा रिबाक के मेषचर्मवाले कोट की जेब में पाँच राउण्ड भर गोलियाँ थीं। सोत्निकोव के पास भी उतनी ही थीं।

हथगोले साथ नहीं लाने का अफ़सोस जरूर था लेकिन शायद उन्हें इनकी आवश्यकता भी नहीं पड़ेगी—सुबह तक तो कैम्प लौट ही आयेंगे। उम्मीद तो कम से कम ऐसी ही थी। हाँ, गिल्यानी में थोड़ी बाधा आ जाने के कारण रिबाक महसूस कर रहा था, अब देर हो रही थी और उन्हें तेज़ी से आगे बढ़ना चाहिए लेकिन अपने साथी के कारण उसके पाँव बँधे थे।

जब से वे जंगल से गुज़र रहे थे, रिबाक को हमेशा अपने साथी की कफयुक्त खाँसी की आवाज़ सुनाई देती रही थी-कभी एकदम क़रीब से, कभी काफ़ी दूर से। लेकिन अब वह आवाज़ अनायास ही थम गयी थी और रुककर रिबाक ने पीछे नज़र दौड़ायी। सोत्निकोव काफ़ी पीछे छूट गया था और धुँधलके में घोंघे की चाल से रेंगता चला आ रहा था। अपनी व्यग्रता को दबा, गन्दे-फटे जूतों में थके-हारे अन्दाज़ में वह पल भर को घिसटता-सा चलता रहा। कानों तक लाल सेना की टोपी से ढँके, वह बड़े अजीब ढँग से सिर झुकाये था। दूर से उसकी तेज़-तेज़, भारी साँसें रात की सर्द खामोशी में सुनाई दे रही थीं। रुकने पर भी वह अपनी साँसों पर क़ाबू नहीं पा सका था।

"क्या हाल है? हिम्मत नहीं हारे?"

"छि:!" निर्बद्ध उत्तर दे सोत्निकोव ने कन्धे की बन्दूक ठीक की। "अभी दूर है?"

रिबाक जवाब देते हिचकिचाया। उसने पहले अपने साथी की छोटी, चुस्त बेल्टवाले ओवरकोट में सिमटी दुर्बल आकृति पर खोजती नज़र डाली। उसे पहले से ही मालूम था, सोत्निकोव थक जाने की बात नहीं मानेगा बल्कि चेहरे पर उल्टे उल्लास बिखेर लेगा। निस्सन्देह, वह सहानुभूति पाना नहीं चाहेगा। चाहे जो हो, उसमें तीन आदमियों के बराबर आत्मसम्मान और दुराग्रह का भाव था। कुछ हद तक इसी दुराग्रह भाव के कारण उसे इस मिशन में भेजा गया था। कमाण्डर रिबाक के साथ किसी को भेजने के लिए आदमी का चुनाव करना चाहते थे तब सोत्निकोव ने बीमार होने के बावजूद कुछ नहीं कहा था। पहले व्दोवेत्स व ग्लुश्चेन्को नामक दो आदमियों को बुलाया गया था। व्दोवेत्स से मशीनगन खोल कर अभी-अभी उसकी सफ़ाई शुरू की थी और ग्लुश्चेन्को ने पैर गीले होने के कारण रिबाक के साथ न

जाने के लिए माफ़ी चाही थी – पानी लाते समय ग्लुश्चेन्को घुटने तक दलदल में धँस गया था। तब कमाण्डर ने सोल्तिकोव का नाम लिया था और वह बिना चूँ-चपर किये उठ खड़ा हुआ था। जब दोनों रास्ते पर चल पड़े, सोल्तिकोव की खाँसी शुरू हो गयी। रिबाक ने पूछा, अन्य दो आदमियों की तरह उसने भी इनकार क्यों नहीं कर दिया था तो सोल्तिकोव बोला, "क्योंकि दूसरों ने इनकार कर दिया था।" रिबाक इस तर्क को पूरी तरह समझ तो नहीं पाया था लेकिन थोड़ी देर बाद अपनी चिन्ता को अकारण समझ चुप हो गया। जब आदमी अपने पैरों पर खड़ा है तो मामूली खाँसी से परेशान होना बेकार है – लड़ाई के ज़माने में लोग ठण्ड लगने से नहीं मरते! ठिकाने पर पहुँचकर थोड़ा गरमायेगा और गरम-गरम आलू पेट में जायेंगे कि बस फिर चाकचौबन्द।

"बढ़े चलो, अब ज़्यादा दूर नहीं," हिम्मत बढ़ाते हुए रिबाक बोला और अपनी राह पर आगे बढ़ गया।

लेकिन अभी उसने मुश्किल से क़दम आगे बढ़ाया होगा जब उसके पीछे सोल्तिकोव का गला दुबारा घरघराया और उसे देर तक दमलेवा खाँसी का दौरा पड़ गया। खाँसी रोकने की कोशिश करते हुए, आजग की ओर झुक कर उसने आस्तीन में मुंह दबा लिया लेकिन इससे उसकी खाँसी और भी बढ़ गयी।

"थोड़ी बर्फ़ चूस लो, राहत मिलेगी," रिबाक ने सुझाया।

खांसी के दौरे से जूझने के कारण हाँफते हुए सोल्तिकोव ने मुट्ठी भर बर्फ़ लेकर चूसना शुरू कर दिया और इससे धीरे-धीरे सचमुच उसकी खाँसी धीमी पड़ने लगी।

"साली, जान ही निकाल लेती है!" वह बड़बड़ाया।

रिबाक ने पहली बार चिन्तित भृकुटि डाली लेकिन कुछ कहा नहीं और दोनों आगे बढ़ते रहे।

खोह से रास्ते की ओर एक सीध में पदचिह्न चले गये थे और रिबाक ने जान लिया, कोई भेड़िया अभी-अभी यहाँ से गुज़रा था (शायद वह भी इनसानी रिहाइश की ओर बढ़ रहा था, ऐसे हिम तुषार में बाहर रहना कोई हँसी-ठट्ठा न था)। वे मुड़कर ध्यान से पदचिह्नों के पीछे-पीछे चल पड़े। वे उन्हें न सिर्फ़ इस कुहरे भरी रात में सड़क का पता बता रहे थे बल्कि कहाँ बर्फ़ छिछली थी,

इसकी जानकारी भी देते थे। भेड़िये को इसका पूरा पता था। बहरहाल, अब वे अपनी यात्रा के अन्तिम चरण में थे, गाँव अब किसी भी क्षण दृष्टिगोचर होनेवाला था और यह सोचकर रिबाक के मन में ख़ुशी की एक नयी लहर दौड़ गयी।

"वह वहाँ ल्युब्का रही। जानलेवा लड़की!" बिना मुड़े वह शान्तिपूर्वक बोला।

"क्या कहा तुमने?"

"मैं गाँववाली लड़की के बारे में कह रहा था। उसे देख कर सारी व्यथा-पीड़ा भूल जाओगे।"

"अभी भी दिमाग़ में लड़कियाँ हैं?"

साफ़ तौर पर बड़ी मेहनत से घिसटती चाल से पीछे-पीछे आ रहे सोल्तिकोव ने सिर झुका लिया। वह पहले से भी ज़्यादा झुक आया था। स्पष्ट रूप से, उसका पूरा ध्यान डगमगाये बिना चाल बरक़रार रखने पर एकाग्र था।

"क्यों नहीं, यह भी कोई कहने की बात है? लेकिन पहले कुछ खाने को मिल जाये..."

लेकिन खाने की बात सुनकर भी सोल्तिकोव पर कोई असर नहीं पड़ा। वह फिर पिछड़ गया था और रिबाक अपनी चाल धीमी कर पलट कर देखने लगा।

"कल दलदल में जब मुझे झपकी आ गयी थी, मुझे सपने में रोटी दिखाई दी थी। एकदम बग़ल में गरमागरम रोटी। तभी मेरी आँखें खुल गयीं और मैंने पाया, आग की गरमी थी वह तो। कैसा धोखा था।"

"सपनेवाली बात आश्चर्यजनक नहीं," रुँधी आवाज़ में सोल्तिकोव ने हामी भरी। "और जिस पर अगर पूरा हफ़्ता उबला तिन्नी धान खा कर गुज़ारना पड़ा हो..."

"हाँ, और जानते हो, वह तिन्नी धान भी अब ख़त्म हो चुका है। जो कुछ बचा-खुचा था, ग्रोत्स्की ने कल ही बाँट दिया था।" और इतना कहकर रिबाक चुप हो गया। वह इस चिन्ताजनक विषय पर और अधिक बातचीत से कतरा रहा था।

और फिर, बातचीत के लिए यह समय भी ठीक नहीं था: वे

जंगल के छोर पर पहुँच चुके थे और रास्ता खुले मैदान के बीचों बीच जाता था। एक ओर बेंतों से अटी पड़ी दलदल थी जहाँ से तेज़ मोड़ लेता रास्ता सीधी चढ़ाई की ओर चला गया था। रिबाक अब किसी भी क्षण आल्डर वृक्षों के पीछे से स्नानघर की छेददार छत के दिखाई देने की प्रतीक्षा कर रहा था। और फिर अहाते के पीछे गाँव होगा, उपगृह होंगे—साथ ही, ऊपर की ओर उठी ढेंकलीवाला कुआँ होगा। ढेंकली नीचे की ओर हो तो उन्हें लौट जाना था—अन्दर अजनबी लोग हैं। पहले एक बार बूढ़े रोमान के साथ ऐसा ही तय हुआ था। बेशक, बात बहुत पहले हुई थी। सच कहा जाये तो वे पतझड से यहाँ नहीं आये थे क्योंकि उन्हें मुख्य मार्ग के उस ओर इधर-उधर रहना पड़ा था। कोई एक माह पहले ही जर्मनों ने जहाँ से उन्हें निकाल बाहर किया था, फिर वहीं भगा-भगाकर ले आये थे।

रिबाक तेज़ क़दमों से रास्ते का मोड़ पार कर ढलान के ऊपर जा पहुँचा। भेड़िये के पद्चिह्न भी गाँव की ओर ही गये थे। इनसानी रिहायश महसूस कर भेड़िये ने झाड़ियों के क़रीब रहते हुए, रास्ते के किनारे-किनारे बड़ी सावधानी से छोटे-छोटे डग भरे थे। बहरहाल, रिबाक की नज़रें अब रास्ते पर न थीं, उसका पूरा ध्यान आगे की ओर लगा था—जहाँ झाड़ियाँ ख़त्म होती थीं।

ढलान पर जल्दी-जल्दी चलता, आख़िर वह एकदम ऊँचे पर जा पहुँचा। पहली ही नज़र में उसे लगा, उससे भूल हुई थी: गाँव की इमारतें निस्सन्देह थोड़ी ही दूर पर तो थी। एक-आध बार के जाने-पहचाने रास्ते पर अक्सर ऐसा ही होता है—रास्ते के कुछ हिस्से तो एकदम ही भूल जाते हैं और आदमी जब उसे याद करता है, वास्तव से छोटा मान बैठता है। रिबाक ने चाल तेज़ कर दी लेकिन सोत्निकोव फिर पीछे छूटने लगा। फिर भी, रिबाक ने अब उसकी ओर ध्यान देना छोड़ दिया था क्योंकि अचानक न जाने क्यों, वह चिन्तित हो उठा था।

रात के धुँधलके में न तो स्नानघर, न दूसरी इमारतें दिखाई दे रही थीं लेकिन उस दिशा से हवा के झोंकों के साथ कुछ जलने की कड़वी गन्ध आ रही थी। शुरू में रिबाक ने इसे अपनी कल्पना समझा—गन्ध शायद कहीं जंगल की ओर से आ रही थी। वह कोई

सौ क़दम और आगे बढ़ गया—आॅल्डरों के बीच से उसकी निगाहें गाँव की परिचित हिमाच्छादित छतों को देख पाने के लिए ज़ोर लगा रही थीं। लेकिन नहीं: अभी तक गाँव का कोई चिह्न तक न था। दुबारा जलने की गन्ध आयी—यह आग या धुएँ की ताज़ा गन्ध न थी बल्कि कोयले व राख की अरुचिकर दुर्गन्ध थी। ठीक जगह पहुँचने की बात महसूस कर रिबाक मन ही मन भुनभुनाने के बाद रास्ते के बीचों बीच दौड़ लगा बाड़े के पास जा पहुँचा।

बेशक, बाड़ा अपनी जगह था—आड़ी-तिरछी बल्लियों से जुड़े कुछ नोकदार खम्भे बर्फ़ से बाहर झाँक रहे थे। वहाँ आलू की छोटी-सी क्यारी के पीछे ही तो कभी स्नानघर था जहाँ इस समय बर्फ़ का एक ढूह मात्र खड़ा था। यहाँ-वहाँ काले-काले उभरे चकत्ते दिखाई दे रहे थे—शायद अधजली लकड़ियाँ थीं। उससे थोड़ी दूर पर सेबों के बाग़ के पास जहाँ कभी इमारतें हुआ करती थीं, अब बर्फ़ से ढके ढूह थे और उनके बीच आधी तोड़ी-फोड़ी, बेतुके ढंग से नंगी अँगीठी खड़ी थी। उपगृहों के तो निशान तक बाक़ी न थे—राख भी न बची थी।

दिल ही दिल में पहले की तरह ज़बर्दस्त लानतें भेजता, कुछ समझ पाने में असमर्थ रिबाक पहले तो एक मिनट तक बाड़े के पास खड़ा का खड़ा रह गया। रिबाक की कल्पना में सरल, अकृत्रिम गँवई स्नेह से पूरित कुछ समय पहले की इस रिहायश की तस्वीर खिंच गयी—मकान, पोर्च, बड़ी-सी धुआँती अँगीठी और आलू के केक बनाती बूढ़ी मेलानिया। सफ़र के बाद—छककर खाना खाने के बाद जूते उतार कर वे अंगीठी के गरम आले पर बैठे थे और खिलखिला कर हँसती ल्युब्का उन्हें जंगली बादाम पेश करती जा रही थी। और अब उसके सामने राख का ढेर भर था।

"बेग़ैरत कहीं के!" क्षणिक निराशा पर क़ाबू पाते हुए रिबाक बाड़ा फलाँग कर ताज़ा बर्फ़ से ढकी अँगीठी के पास जा पहुँचा। अँगीठी के मुँह को अपनी घनी परत से बन्द किये बर्फ़ बड़ी बेतुकी लग रही थी। चिमनी भी टूट चुकी थी—निस्सन्देह वह भी आग में जल कर गिर पड़ी होगी और बर्फ़ के नीचे बेढंगे कूड़े के ढेर में जली लकड़ियों के साथ दबी होगी।

तब तक पीछे से घिसटती चाल चलता सोत्निकोव भी वहाँ आ पहुँचा। बाड़े के पास पल भर के लिए ख़ामोश खड़ा रहने के बाद, आँगन की अछूती बर्फ़ को पार कर वह कुएँ पर आ गया। सिर्फ़ कुआँ ही सही सलामत बचा लग रहा था। ढेंकली भी ज्यों की त्यों बची थी। ख़ूब ऊपर की ओर उठी इसकी टोंटी ठण्डी हवा के झोंकों में धीरे-धीरे हिल रही थी। रिबाक ने खाली सूराख़दार डोल को अपने बूट से एक क़रारी ठोकर लगा दी। फिर वह बर्फ़ के नीचे आधी दबी बेपहियेवाली गाड़ी के पास जा पहुँचा। उन्हें यहाँ खाने को कुछ भी मिलनेवाला न था। आग से अगर कोई चीज बची भी रही होगी तो न जाने कब की उठाकर ले जायी गयी होगी। फ़ार्म जल चुका था, वहाँ कोई भी न था। अब इनसानों के पदचिह्न भी यहाँ नहीं थे। हाँ, भेड़िये के पदचिह्न जरूर मौजूद थे जो ख़ुद किसी मंशा से क़िस्मत के मारे इस गाँव तक आ पहुँचा था।

"यह रहा हमारे अरमानों का महल!" आह भरते हुए रिबाक खिन्नतापूर्वक कुएँ के पास लौट आया।

"यह सारा किसी देशद्रोही के काम का परिणाम है।" सोत्निकोव भर्राई आवाज़ में बोला। साफ़ तौर पर निष्प्राण-सा वह एक ओर से कुएँ से कन्धा टिकाये खड़ा था। जब उसकी खाँसी रुकी, उसके सीने से हल्की घर्र-घर्र की आवाज़ आती रही। जेब में हाथ डाल कर रिबाक ने कारतूसों के बीच से उबले तिन्नी धान निकाले—यही उस का आज का बचा-खुचा राशन था।

"लोगे थोड़ा?"

विरक्त भाव से सोत्निकोव ने हाथ बढ़ा दिया। रिबाक ने थोड़े से दाने उसकी हथेली पर गिरा दिये। ख़ामोशी से वे मुलायम ठण्डे दानों को चबाने लगे।

मामला उनके लिए बुरी तरह गड़बड़ा गया था और रिबाक ने सोचा, इसे महज संयोग नहीं कहा जा सकता। शायद जर्मन उसकी यूनिट को तंग घेरे में ले रहे थे। अपने दोनों के भूखे रह जाने की बात उसकी नजर में उतनी महत्वपूर्ण न थी जितनी कि उसे दलदल के लोगों की चिन्ता थी। हफ़्ते भर की मुठभेड़ और जंगल से पलायन के कारण वे थके-हारे थे, खाने को उनके पास आलू के अलावा कुछ भी न

था—रोटी तक न थी, और तो और, उनमें से चार घायल थे, उन्हें स्ट्रेचर पर ढोना पड़ रहा था। फिर उन्हें फाँसने को पुलिस और सेना थी, बच निकलने का कहीं कोई रास्ता न था। जंगल से आते समय रिबाक ने सोचा था, शायद दलदल के इस हिस्से की अब तक घेराबन्दी नहीं की गयी थी और वे गाँव तक पहुँच जायेंगे या फिर, फ़ार्म तो था ही। लेकिन अब गाँव की उन की आशाएँ धूल-धूसरित हो चुकी थीं और थोड़ी दूरी पर, यहाँ से लगभग दो मील की दूरी पर एक छोटा-सा गाँव था लेकिन वहाँ पुलिस के दस्ते थे और वृक्ष विहीन खुला रास्ता था वहाँ तक जाने को।

तिन्नी धान के दाने चबाते, रिबाक ने चिन्ता भरी दृष्टि से सोत्निकोव की ओर देखा।

"क्या हाल है तुम्हारा! अगर तबीयत गड़बड़ लग रही हो तो लौट जाओ। मैं गाँव तक किसी तरह पहुँचने की कोशिश करूँगा।"

"अकेले?"

"हाँ, और क्या? आख़िर हम ख़ाली हाथ तो लौट नहीं सकते।"

सोत्निकोव ठण्ड से काँप रहा था। हवा के कारण पाला हड्डियों में घुसा जा रहा था। बची-खुची गर्मी बनाये रखने के लिए वह अपने ठण्ड खाये हाथ कोट की लम्बी आस्तीनों में गहरे घुसेड़े था।

"फ़र का कनटोप क्यों नहीं ले लिया था?" रिबाक ने उसे भिड़-का।

"तुम्हें मालूम है, वे पेड़ पर नहीं उगते?"

"लेकिन हरेक ग्रामीण के पास एक-आध तो होता ही है।"

"तो मुझे क्या करना चाहिए था? किसी ग्रामीण को लूट लेना चाहिए था?" थोड़ी देर चुप रहने के बाद सोत्निकोव ने जवाब दिया।

"तुम्हें लूटने की ज़रूरत न थी। और भी तरीक़े थे।"

"छोड़ो, चलो, हम अपनी राह चलें," बात ख़त्म करते हुए सोत्निकोव ने कहा।

बाड़ा पार कर वे खुले में जा पहुँचे। सोत्निकोव फ़ौरन आगे की ओर झुक पड़ा—उसने हवा से बचने के लिए सिर को अन्दर की ओर सिकोड़ लिया था जिसके कारण उसका सिर टोपी के अन्दर और भी छोटा, कॉलर के अन्दर और भी ज्यादा घुसा लग रहा था। कहीं अपने

कोट के अन्दर से रिबाक ने चमड़े के मोज़े की तरह चिकट एक मोटा-सा तौलिया निकाला फिर अपने साथी की ओर उसे बढ़ाते हुए वह बोला:

"यह लो, गले में लपेट लो! इससे तुम्हें थोड़ी गर्मी मिलेगी।"

"छोड़ो भी।"

"अरे ले भी लो! अगर कुछ देर ऐसे ही चलते रहे तो प्राण पखेरू उड़ जायेंगे।"

झिझकते हुए सोत्निकोव ठहर गया और घुटनों के बीच बन्दूक को जकड़ते हुए उसने कड़ी अँगुलियों से फूहड़ ढंग से तौलिये को गले में लपेट लिया।

"यह हुई न बात!" रिबाक सन्तोषपूर्वक बोला। "और अब आओ, पूरे जोश से आगे गुज़ाकी की ओर बढ़ चलें। सिर्फ़ दो ही किलोमीटर है यहाँ से। वहाँ हमें ज़रूर कुछ न कुछ मिल जायगा..."

२

बाहर खुले में तो जंगल से भी ज्यादा ठण्ड थी। उन्हें सतत सीधी तीखी चुभन जरूर थी और सोत्निकोव के अनढके हाथ बुरी तरह दुखने लगे। हाथों को ठण्ड से बचाने के लिये वह कभी उन्हें जेबों में, कभी आस्तीनों में, कभी सामने से कोट के अन्दर डाल लेता लेकिन बेकार, वे जमे के जमे ही रहते। कुछ ही देर में उसका चेहरा, खास कर कान भी बेजान हो गये। पीड़ा से कँपकँपाते वह उन्हें ओवरकोट की मोटी आस्तीन से रगड़ने लगा। उसे पैरों की उतनी चिन्ता न थी—चलते रहने से उनमें गर्मी पैदा हो रही थी। बेशक, दाहिने पैर की दो अँगुलियाँ बेजान हो चुकी थीं लेकिन पाले में वे हमेशा ही बेजान हो जाती थीं और गर्म जगह में आते ही फिर से दर्द करने लगती थीं। लेकिन ठण्ड के कारण उसका शीतजड़ित बीमार शरीर पूरा का पूरा दुख रहा था और कँपकँपी छूट रही थी, सो अलग से।

बावजूद इसके, हालत और भी बुरी हो सकती थी। यहाँ बर्फ़

काफ़ी जमी हुई थी और कम गहरी। कभी-कभार ही उन्हें बर्फ़ में लथड़ना पड़ रहा था—कभी एक पैर से तो कभी दूसरे से। अब वे सेवारों की चोटी के परे पहाड़ी से नीचे की ओर जा रहे थे।

जंगल की अपेक्षा खुले में थोड़ा ज़्यादा उजाला था। हलका पारदर्शी अन्धेरा चारों ओर फैला था और सरकण्डों के सूखे डण्ठल बर्फ़ पर धीमे-धीमे हिल रहे थे। कोई पन्द्रह मिनट बाद आगे एक बड़ी-सी झाड़ी की काली आकृति दिखाई दी—यह शायद सोते के किनारे बेतरतीब उगे सरकण्डों या आल्डरों की झाड़ियाँ थीं—और वे धीमे-धीमे उसी ओर बढ़ गये।

सोत्निकोव की हालत बद से बदतर हो रही थी। सिर चकरा रहा था, कभी-कभी दिमाग़ सुन्न हो जाता और कुछ देर तक उसे अपनी या आस-पास की कोई सुध नहीं रहती। शायद उसे सचमुच लौट जाना चाहिए था या सबसे बड़ी बात है उसे ऐसी हालत में आना ही नहीं चाहिए था लेकिन दरअसल उसे इतनी बुरी तरह बीमार होने का विश्वास ही न था। हद बात है, लड़ाई के समय बीमार! उनमें से कोई भी इतना बीमार नहीं पड़ा था कि सारे काम-काज से छुट्टी दे दी जाये और ख़ास करके ऐसे छोटे-से काम से। उनमें से कई को सर्दी-खाँसी थी लेकिन जंगल में ठण्ड कोई बीमारी नहीं मानी जाती। और दलदल में शिविरअग्नि के पास वापस लौट आने के बाद जब कमाण्डर ने उसे नाम लेकर बुलाया तो सोत्निकोव के दिमाग़ में बीमार होने की बात तक नहीं आयी थी। गाँव में उन्हें रसद लाने के लिए जाना है, यह सुनकर तो उसे ख़ुशी ही हुई थी क्योंकि कई दिनों से वह भूखा था और कुछ समय के लिए मकान की गर्मी में तपने का अवसर मिलेगा, इस विचार से ही वह उल्लसित हो उठा था।

वाह, खूब तप चुके!

जंगल में तो थोड़ा अच्छा भी था, यहाँ खुले में तो भयानक था। उसे डर था, कहीं भहरा कर गिर न पड़े। तेज़ घुमरी और कमज़ोरी के कारण उससे सीधा चला नहीं जा रहा था।

"क्या हाल है, दोस्त?"

रिबाक रुक गया था। पलट कर वह इन्तज़ार करने लगा। बिना

जवाबतलबीवाले इस मामूली सवाल से सोत्निकोव उत्साहित हो उठा। उसे सबसे ज्यादा भय अपने दोस्त के लिए सहायक की जगह मुसीबत बन जाने का था। लेकिन उसने तय कर लिया था, अगर हालत बदतर हुई तो वह किसी पर बोझ बनने की जगह अपनी राह चलता बनेगा। सम्भावित रूप से विश्वसनीय रिबाक को भी छोड़कर। जब से एक सड़क के पार टुकड़ी के बचे-खुचों को लौटा लाने का काम उन दोनों पर सौंपा गया था, दोनों के बीच एक किस्म का सम्बन्ध-सूत्र पैदा हो गया था और पिछले कुछ दिनों से वे व्यवहारतः अभिन्न रहे थे। निस्सन्देह, इसी कारण दोनों इस काम में भी जान खपाये थे।

"हमें बस यह खड्ड जगह पार करना है और ठीक ढलान के पीछे ही गाँव है। अब दूर नहीं," रिबाक उसे उत्साहित करते हुए बोला। सोत्निकोव साथ आ जाये, इसलिए उसने अपनी चाल धीमी कर दी थी।

जब सोत्निकोव पास आ गया, वे साथ-साथ ढलान से नीचे उतरने लगे। ऊपर के मुक़ाबले यहाँ बर्फ़ गहरी थी और उनके पैर पतली बर्फ़ीली परत पर अक्सर धँस जाते। अब चाँद उनके पीछे छूट गया था। बर्फ़ीली ज़मीन पर हवा चौकड़ी भर रही थी और सोत्निकोव के कोट के छोटे किनारे उसके नम घुटनों से टकरा जाते। रिबाक सहसा अपने साथी की ओर पलट पड़ा।

"अन्यथा न लेना, तुम सेना में क्या थे? मेरे ख़्याल से मामूली सैनिक तो नहीं ही होगे?"

"नहीं। बटालियन कमाण्डर।"

"पैदल सेना?"

"तोपख़ाना।"

"ओह, तो यह बात है, चलने की आदत नहीं। मुझे तो पैदल सेना में चलना ही पड़ता था।"

"बहुत दूर?" सोत्निकोव ने पूछा। उसे पूरबवाली रास्ते की अपनी यात्रा याद हो आयी थी।

लेकिन रिबाक ने अपने ढंग से मतलब लगाया।

"देखते ही हो। सार्जेण्ट-मेजर से मामूली सैनिक तक। तुम नियमित सैनिक थे?"

"पूरी तरह नहीं। उन्तालीस तक मैं स्कूल अध्यापक था।"

"फिर तो कालेज में भी पढ़े होगे?"

"शिक्षक प्रशिक्षण कॉलेज में। दो साल।"

"मुझे तो बस पाँच साल की शिक्षा मिली और वह भी कहा जाये तो सिर्फ़..."

दोनों पैरों से बर्फ़ में धंस जाने के कारण रिबाक आगे कुछ न बोल सका। मन ही मन कोसते हुए, उसने राह थोड़ी बदल दी। वे बेंतों-सरकण्डोंवाले हिस्से के आख़िरी छोर पर पहुँच गये थे। यहाँ बर्फ़ मुलायम थी, चलना आसान था। पैरों के नीचे ज़मीन दलदली प्रतीत होती। किस ओर से आगे बढ़े, यह तय कर पाने में असमर्थ सोत्निकोव दुविधाग्रस्त खड़ा हो गया।

"पीछे-पीछे आओ। मेरे पैरों के निशानों पर पैर रखते चले आओ, आसान होगा," कुछ आगे बढ़ गये रिबाक ने कहा। वह बेंतों-सरकण्डों के बीच पहुँच गया था।

चारों ओर जमे सरकण्डों की भौंड़ी मर्मर ध्वनि के बीच से, फिर एक हिमाच्छादित सोते और दूसरे जलीय चरागाह को गहरी, मुलायम बर्फ़ के बीच से बड़ी मुश्किल से रास्ता तय करने के बाद जब वे चौड़े गर्त के पार पहुँचे, काफ़ी समय बीत चुका था। सोत्निकोव की हालत अब गिरा या तब जैसी थी, उसका दम घुट रहा था, दलदला गर्त ख़त्म करके ठोस ज़मीन पर पाँव रखने की वह तड़प रहा था। आख़िर वे झाड़ियों से छुटकारा पा गये। आगे मामूली ढलान थी जहाँ बर्फ़ कम गहरी थी। लेकिन बाद में महसूस हुआ, इस पर चढ़ना उतना आसान न था। सोत्निकोव की थकान बढ़ती ही गयी और उसे किसी चीज़ की कोई सुध न रही। हवा के कारण या थकान से उसके कान लगातार बज रहे थे, बेहोशी पर क़ाबू पाकर आगे बढ़ते रहने में उसे ज़बर्दस्त कोशिश करनी पड़ रही थी।

लम्बी ढलान के बीच में पहुँचकर उसे सचमुच असह्य प्रतीत होने लगा, पैरों तले ज़मीन खिसकती महसूस हुई। क़िस्मत से, वहाँ बर्फ़ कम थी, कहीं-कहीं हवा उसे पूरी तरह अपने साथ उड़ा ले गयी थी और पैरों तले धूल भरे, चिपचिपे नंगे धब्बे झाँक रहे थे। रिबाक काफ़ी आगे जा चुका था। शायद ढलान की चोटी पर पहुँच कर वह

आसपास नजर डालना चाहता था क्योंकि गाँव अब किसी भी क्षण दिखाई दे सकता था। लेकिन चोटी पर पहुँचने से पहले ही वह रुक गया। सोत्निकोव को लगा, जैसे उसने कुछ देखा था लेकिन इतनी दूर से बता नहीं सकता था। बर्फ़ ढकी पहाड़ी सीधी, तारों भरे आकाश की ओर उठती चली गयी थी और वहीं ऊपर रात के धुन्ध अन्धेरे में कहीं ख़त्म हो जाती थी। पीछे छिन्न-भिन्न हरियाली की पट्टी, अस्पष्ट रूपरेखाओं व अन्धेरी आकृतियों से युक्त [कुछेक धूमिल धब्बोंवाला धूसर कुहरे में डूबा गर्त था। उसके और आगे, यहाँ से लगभग अदृश्य-सा गहरे अन्धेरे में डूबा जंगल था जिसे वे छोड़ चुके थे। वह जंगल तो बहुत दूर छूट चुका था और यहाँ, चारों ओर अन्धेरी, हिमाच्छादित विस्तृति मात्र थी—अगर यहाँ कोई घटना हुई तो वे असहाय-से हो जायेंगे।

आख़िर सोत्निकोव जब घिसटता-सा पास पहुँचा, हवा की ओर पीठ किये रिबाक तब भी वहीं खड़ा था। अब वह उसके पदचिह्नों पर नहीं चल रहा था बल्कि किसी तरह होश सम्भाले रखने की कोशिश करता डगमगाता पाँव जमाता आगे बढ़ रहा था। जब वह अपने साथी के पास पहुँचा, अचानक उसे पैरों तले रास्ते का अहसास हो आया।

उन्होंने कोई बात नहीं की बल्कि पल भर ध्यान से चारों ओर कान लगाने के बाद, दृष्टियों का आदान-प्रदान करके धीरे-धीरे रास्ते के दोनों पट्टियों से ऊपर की ओर बढ़ना शुरू कर दिया। रास्ता शायद किसी गाँव की ओर जाता था: यानी रास्ते में कहीं गिरे बिना वह अपनी यात्रा पूरी कर सकता था। चारों ओर वही अन्धेरी विस्तृति थी, धूमिल सूनापन, बर्फ़, अगोचर रूप से अनगिनत विभिन्न परछाँइयों व धब्बों को समेटता अन्धेरा। और कहीं भी किसी रोशनी या गतिविधि का कोई चिह्न तक न था-धरती शान्त एवं निस्तब्ध थी।

"हॉल्ट!"

क़दम आगे बढ़ा और सोत्निकोव जहाँ का तहाँ जम-सा गया, उसके नमदे के बूटों तले बर्फ़ मुख़्तसर चरमरा उठी थी। पीछे रिबाक बुत-सा खड़ा रह गया। ऊपर सड़क से कहीं सर्द रात में आवाज गूँजी और विलीन हो गयी। चिन्तातुर दृष्टियों से उन्हों ने अन्धेरे में झाँका:

थोड़ी ही दूर पर गर्त में गाँव था—अन्धेरे में वह किसी बेतरतीब पिण्ड-सा अस्पष्ट दिखाई दे रहा था। लेकिन यक़ीनी तौर पर वे कुछ भी निश्चित नहीं कर पाये।

उन्हें सचमुच कोई आवाज़ सुनाई दी थी या उनकी कल्पना मात्र थी, यह तय कर पाने में असमर्थ वे आगे की ओर झाँकते रास्ते पर निश्चल खड़े रह गये। चारों ओर ऊँची झाड़ियों के बीच हवा सीटी बजा रही थी और उनके आस-पास सर्द ख़ामोश रात बिछी थी। एक बार फिर वह आवाज गूँजी, इस बार यह ज्यादा साफ़ थी—कोई इनसानी आवाज—आदेश दिया जा रहा था या गाली दी जा रही थी—और तभी सारे सन्देह मिटाती कहीं दूर में गोली चली, खुले में इसकी आवाज़ चारों ओर गूँज उठी थी।

अब सन्देह की कोई गुंजाइश न थी, रिबाक ने साँस छोड़ी जबकि सोत्निकोव अचानक खाँसने लगा—शायद उसने काफ़ी देर से साँस रोक रखी थी।

खाँसी रोकने की बहुत कोशिश के बावजूद, आवाज़ों पर कान लगाये वह थोड़ी देर खाँसता रहा। निस्सन्देह, गोली चलानेवालों के बारे में शक की कोई गुँजाइश न थी: रात के समय गाँव में गोली चलानेवाले जर्मनों अथवा उनके पिछलग्गुओं के अलावा कौन हो सकते थे? तो उस ओर उनका रास्ता बन्द था, उन्हें वापस लौट जाना चाहिए।

बहरहाल, गोली चलने की फिर कोई आवाज नहीं आयी, हालाँकि हवा के साथ एक या दो बार कुछ आवाज़ें जरूर सुनाई दीं—पता नहीं बातचीत का अंश था या किसी ने चुनौती दी थी। कुछ देर तक इन्तज़ार करने के बाद रिबाक ने बर्फ़ पर थूक दिया।

"हरामजादे अपने जर्मन बापों की सेवा में लगे हैं!"

वायुमय निस्तब्धता में कान लगाये दोनों और कुछ देर तक जहाँ के तहाँ खड़े रहे, दोनों को एक ही सवाल परेशान कर रहा था: अब उन्हें क्या करना चाहिए, कहाँ जाना चाहिए? शायद अभी तक आस लगाये, रिबाक उस ओर झाँकने की कोशिश कर रहा था जहां अन्धेरे में सड़क विलीन हो जाती थी। ठण्ड से काँपता सोत्निकोव सीधी आती हवा से किनारे हो गया।

"हाँ तो, उधर जाने का सवाल ही नहीं उठता," चरमराती बर्फ़ पर विषादपूर्वक एक से दूसरे पैर पर बोझ डालते हुए रिबाक ने फ़ैसला लिया। "मान लो, अगर हम नीचे की ओर गर्त के किनारे-किनारे चलते जायें तो? अगर मेरी याद दग़ा नहीं दे रही हो तो उसी रास्ते पर कहीं कोई गाँव ज़रूर है।"

"ठीक है," कन्धे उचकाकर सोत्निकोव ने सहमति जतायी। उसका कन्धा उचकाना, बुख़ार से काँपने जैसा कहीं ज्यादा था।

कहाँ जा रहे हैं, इसकी चिन्ता उसे न थी, कम से कम इस काटती हवा में तो खड़ा नहीं रहना पड़ेगा। उसकी स्थिति धुत्त शराबियों-सी थी। अब उसकी सारी कोशिशें नीचे गिर पड़ने से ख़ुद को बचाने की थीं क्योंकि तब वह शायद फिर उठकर खड़ा नहीं हो पायेगा।

वे सड़क से पलटकर अछूती बर्फ़ के पार एक लम्बे भूभाग की ओर बढ़ चले। बर्फ़ पहले सिर्फ़ टखनों तक गहरी थी लेकिन जैसे-जैसे वे गर्त में उतरते गये, बर्फ़ भी गहरी होती गयी। क़िस्मत से गर्त का घेरा ज्यादा चौड़ा न था, उन्होंने उसे जल्दी ही पार कर लिया। सोत्निकोव को इन हिस्सों की कोई जानकारी न थी, वह पूरी तरह रिबाक पर निर्भर था। रिबाक पिछली पतझड़ में यहाँ टोह लेने तब आया था जब गोर्ली दलदल में उसकी छोटी-सी टुकड़ी ने तैयारियाँ शुरू ही की थीं। टुकड़ी ने सड़क पर मामूली हमले से शुरुआत करके कई बड़े काम किये थे—इस्त्याकावाले पुल को उड़ा दिया था, किसी छोटी-सी बस्ती के सन के कारख़ाने को जला डाला था। लेकिन जब उन्होंने कुछ महत्वपूर्ण जर्मन अधिकारियों को मौत के घाट उतार दिया, दुश्मन सचमुच क्रुद्ध हो उठे। नवम्बर के अन्त में जर्मन सैनिकों की तीन कम्पनियों ने गोर्ली दलदल को घेर लिया और वे बोर्कोव जंगल के ज़रिये किसी प्रकार बाल-बाल बच निकलने में सफल रहे थे।

उस समय सोत्निकोव कहीं बहुत दूर था और उसने शायद गुरिल्ला सैनिकों के बारे में कुछ सोचा भी नहीं था। उसने मोर्चाबन्दी को तोड़कर आगे बढ़ जाने की तीसरी बार कोशिश की थी। उस समय उसे सेना से बाहर होने की बात पर पल भर के लिए भी विश्वास न था।

किसी समय के शक्तिशाली गोलन्दाज रेजीमेंट में से कुछ ही लोग अब बच गये थे। उन्होंने लोगों ने बारह दिन व रातें स्लोनिम के निकट पूर्व की ओर बढ़ने की अनथक कोशिशें कीं। लेकिन बेर्योज़िना नदी पार करते समय, छुपे दुश्मनों ने उन पर हमला करके उनकी धज्जियाँ उड़ा दीं। दुश्मनों की गोलियों से और नदी में डूबने से बचे लोगों को गिरफ़्तार कर लिया गया। सौभाग्य से या दुर्भाग्य से सोत्निकोव भी क़ैद कर लिया गया।

बेशक, उसकी गोलन्दाज़ सेना के छोकरे बेहतरीन थे, शानदार थे वे लोग—टोही दलवाले, बन्दूकची व सिगनल देनेवाले। रेजीमेंट, सेना व परेड ड्रिलों में उनके अच्छे प्रशिक्षण, महारत एवं निशानेबाज़ी के लिए उसे अपने वरिष्ठों से मात्र उच्च अंक तथा प्रशंसाएँ ही प्राप्त हुई थीं। उनसे यह प्रत्याशा उचित ही होती कि युद्ध छिड़ने पर उन्हें यक़ीनन श्रेष्ठता प्राप्त होगी, सब कहीं पदक मिलेंगे, अख़बारों में ख़ूब प्रशस्तियाँ छपेंगी और सब कुछ हासिल होगा। आख़िर उन्होंने प्रशिक्षण पाया था, इसकी तैयारी की थी और निस्सन्देह, इस के लिये सर्वथा योग्य भी थे।

लेकिन लड़ाई के ज़माने में सब कुछ गड़बड़झाला हो गया। फिर कमाल दिखाने के लिए तोपख़ाने के पास कुछेक क्षण ही तो होते थे, सफलता उन्हीं के क़दम चूमती जो अधिक से अधिक तेज़ी से पहलकर पाते, सबसे पहले गोले भर सकें, जिनकी बुद्धि उनका साथ देती और जब हाथ काँपते हों तो दिमाग़ दुरुस्त हो।

घनी झाड़ी के किनारे-किनारे रिबाक आत्मविश्वासपूर्वक लम्बे डग भरता सामने की ओर बढ़ रहा था। सोत्निकोव फिर पीछे छूट गया था। लड़ाई में मारे गये एक स्थानीय गुरिल्ला का नमदे का बूट जो वह पहने था, बर्फ़ पर लगातार चरमर कर उठता। उनका रास्ता पहाड़ी से नीचे की ओर जाता था। उन्हें उल्टी हवा का सामना करना पड़ रहा था। आसमान में झुक आया पीला चाँद निरन्तर चमक रहा था। पहले की तरह बर्फ़ीली ठण्ड व तूफ़ानी हवा थी। ठण्ड सोत्निकोव की जान काढ़े डाल रही थी। फ़रवरी की उस रात जैसी ठण्ड उसे जीवन में कभी नहीं भुगतनी पड़ी थी। थकान व लम्बे सरकण्डों के बीच हवा की एकरस खड़खड़ाहट उसके दिमाग़ में रेलपल

मचाती बातों को बेतरतीब कर रही थी। दौड़ते विचारों के इस गड्ड-मड्ड से जब-तब अत्यन्त स्पष्ट रूप से अतीत की झलकियाँ अचानक कौंध जातीं...

सोत्निकोव के लिए सब से दुखद बात थी कि यह पहली और अन्तिम वास्तविक लड़ाई थी जिसके लिए बतौर बटालियन कमाण्डर उसने सेना में अपने सेवा-काल के दौरान तैयारी की थी। बदक़िस्मती से, यह विनाशकारी लड़ाई अविवादस्पद किन्तु प्राय: देखी-अनदेखी की जानेवाली इस सचाई का एक और प्रमाण थी कि पिछली लड़ाई के अनुभव से यदि शक्ति प्राप्त हुई थी तो दूसरी ओर, इसी कारण सेना में ख़ामियाँ भी आ गयी थीं। निस्सन्देह, किसी लड़ाई की ख़ासियत में पिछली लड़ाई के विशिष्ट लक्षण उतने अन्तर्निहित नहीं होते जितनी कि अनदेखी या उपेक्षित प्रत्याशाएँ तथा अप्रत्याशित आक्रामक कारनामे। यही चीज़ें हैं जो लड़ाई में जीत व हार निर्धारित करती हैं। अत्यन्त दुख की बात थी कि इसका अहसास सोत्निकोव को उस दिन बहुत देर से हुआ जब मोर्चे पर उसका क्षणिक अनुभव किसी काम का साबित नहीं हो सकता था और उसका पूरा का पूरा शक्तिशाली तोपख़ाना स्लोनिम के निकट सड़क पर मुड़ी-तुड़ी धातु का ढेर बन गया था।

अब यह सब किसी भयानक सपने-सा प्रतीत होता था, हालाँकि उसके बाद भी उसे बहुत से स्वप्नवत अनुभव हो चुके थे, पहली लड़ाई की याद वह जीवन भर नहीं भुला पायेगा।

...लगातार चौथे दिन सैनिक टुकड़ी छोटे-बड़े जंगली रास्तों से पश्चिमी दिशा की ओर, फिर पलट कर दक्षिण की ओर बढ़ती रही थी। लेकिन पाँच मील जाते-जाते उसे उत्तर की ओर लौटना पड़ा। ट्रैक्टरों की अनवरत गरज से कान बहरा गये थे। रेडियेटरों में पानी खौलने लगा था, लोगों के चेहरे पसीने व धूल से सन गये थे। सुबह से शाम तक उनके सिरों के ऊपर लुफ़्ट्वॉफ़े* के विमान मँडराते और जंकर** बम बरसाते रहे थे। बमों के विस्फोट से मार्ग पर उथले बालू के ढेर लगे थे, आगे चलनेवाली तोपें तेज़ी से धुँआती जलती खड़ी

* वॉफ़े–जर्मन वायुसेना–अनु।

** जंकर–एक बमवर्षक विमान–अनु।

थीं। जो बच गयी थीं, वे आगे बढ़ गयीं। इस प्रकार टुकड़ी बिना रुके चलती रही। तोपों की लौह पट्टियों के तले गड्ड-मड्ड बैठे जवान बन्दूकों से अन्धाधुन्ध गोलियाँ चलाते लेकिन उनका असर शायद ही कुछ होता। ऐसा भी न होता कि उनके डर से जहाज़ थोड़ा ऊपर उड़ान भरते। वे भयहीन-से वृक्षों की फुनगियों को लगभग छूते हुए एकदम नीचे से उड़ानें भर रहे थे।

इस सड़क को छोड़कर, मोर्चेबन्दी का आदेश पाने के लिए दुआएँ करता सोत्निकोव तोपख़ाने के एक अगले ट्रैक्टर पर बैठा था। तब वह जर्मनों का दिखा देता! ऐसे कमाल दिखाता जिनके उन्होंने सपने भी न देखे होंगे। लेकिन आदेश बिना रुके चलते रहने का था। टुकड़ी आगे बढ़ती ही रही। और अब हर दो घण्टों में अत्यन्त धृष्टतापूर्वक जंकर व हाइन्केल उन पर बम वर्षा कर रहे थे। टुकड़ी की सारी तोपें बेकार साबित हो रही थीं।

और इस प्रकार पश्चिमी बेलोरुस के रास्तों पर उनके इस भूल-भुलैये की आख़िरी रात आ पहुँची।

पलटन अब पहले जितनी विशाल न रह गयी थी, उसकी हालत पतली हो गयी थी: कई तोपों को चलानेवाले आदमी मारे गये थे तो ख़ुद सोत्निकोव के तोपख़ाने में एक तोप बम की सीधी चपेट में आ गयी थी। बशक, तीन तोपें बिलकुल सहीसलामत थीं। हाँ, उनकी लौह पट्टियों पर प्रहार हुआ था, पहियों की संचालक पट्टियाँ टूट गयी थीं और नलियों व नीचे के हिस्सों में बम के टुकड़ों की चोटें आयी थीं। चार मृत तोपचियों को गोलों की पेटी में ले जाया जा रहा था, सात घायलों को पीछे भेज दिया गया था। लेकिन अन्य की तुलना में यह बहुत बड़ी क्षतियाँ न थीं: दूसरी तोपख़ाना टुकड़ियों की हालत और भी ख़राब थी। रेजिमेण्ट जितनी बड़ी टुकड़ी आधी रह गयी थी, कई तोपें तो राह में छोड़नी पड़ी थीं। क्षतिग्रस्त ट्रैक्टर उन्हें खींच नहीं सकते थे, फ़ालतू ट्रैक्टर थे ही नहीं। अब वे लगभग पूरी रात पूर्व की ओर बढ़ते रहे थे और यह एक बुरा संकेत था। उससे एक सिगरेट माँगते हुए डिप्टी – चीफ़-ऑफ़–स्टाफ़ ने संकेत दिया था कि शायद उन्हें घेरे में लिया जा सकता है। अब निश्चित रूप से ऐसा ही दिखाई देने लगा था। चार दिनों व रातों से जवान सोये नहीं थे। सो, तोपों के

पिछले हिस्सों में बैठे-बैठे वे सुबह के समय झपकियाँ ले लेते क्योंकि उस समय पूरी शान्ति रहती। हाँ, कसाई की तलवार की तरह उनके सिरों पर अनिश्चितता तो सवार ही रहती। भिनसरे के समय वे किसी गाँव में थोड़ी देर को रुके। उनके ठीक सामने की ओर से थोड़ी पैदल सेना आती दिखाई दी। एक तेज़ रोशनी से लगभग आधा आकाश चमक उठा—शायद कोई चीज़ जल रही थी: लोगों ने बताया, कोई रेलवे स्टेशन था। किसी ने उन्हें कुछ नहीं बताया था, कमाण्डर जवानों से ज़्यादा बुद्धिमान न थे लेकिन किसी न किसी तरह, जर्मनों के आस-पास होने की ख़बर उन तक पहुँच गयी थी। जल्दी ही रेजिमेण्ट के कमाण्डर मेजर पाराख़्नेविच ने टुकड़ी को बेंतों की क़तारोंवाली सड़क की ओर मोड़ दिया। वे मोटा-मोटी दक्षिण की ओर चल पड़े। रात में चलना कहीं आसान था, कोई हमला न होता लेकिन दूसरी ओर उनकी स्थिति बहरों-गूँगों-सी थी। ट्रैक्टरों के शोर में उन्हें कुछ भी सुनाई नहीं देता और गर्मियों की रात में कुछ दिखाई देने की उम्मीद ही नहीं की जा सकती थी। भोर होते-होते थकान के मारे सोत्निकोव सीट पर बैठे-बैठे सो गया लेकिन अभी शायद उसने आँखें बन्द ही की थीं कि रास्ते के एक किनारे विस्फोट से चौंक कर वह जाग गया। उस पर ढेर सारी मिट्टी व एक गरम-गरम लहर आ पड़ी और वह उछल कर पैरों पर उठ खड़ा हुआ। पहिये की संचालक पट्टी दाहिनी ओर को झूल गयी थी। और फिर जो क़हर मचा सो मचा ही...

सूर्योदय होनेवाला था। बेंतों के पीछे क्षितिज नीला था। जई का कोई खेत मद्धिम-मद्धिम दमक रहा था। सामने कहीं ऊपर की ओर से टुकड़ी के अगले हिस्से पर टैंकों ने गोलाबारी शुरू कर दी थी। सोत्निकोव के ज़मीन पर छलांग लगाते ही तीसरी तोप के पहिये की संचालक पट्टी पास ही धधक उठी और एक छोटी तोप किसी गड्ढे में धँस गयी। इर्द-गिर्द भयानक विस्फोटों से बहरा हुए उसने तोपख़ाने को दायें-बायें खिसकने का आदेश दिया लेकिन सँकरे रास्ते पर भारी-भरकम तोपों को मोड़ना आसान न था। दूसरी तोप का चालक उसे सीधे गड्ढे के पार जई के खेत में लेता चला गया। फ़ौरन उसके ट्रैक्टर में दो गोले आ टकराये। तोप उलट गयी, पहिये आसमान ताकने लगे। सुबह जलते ट्रैक्टरों से रोशन हो गयी। खेत घने, कड़वे धुएँ से ढँक गया

ऊपर से सड़क पर टैंकों से टुकड़ी पर गोले बरसाये जा रहे थे।

शायद इससे बदतर हालत की उम्मीद नहीं की जा सकती थी। उनकी धज्जियाँ उड़ रही थीं और सारा का सारा गोला-बारूद लगभग धरा का धरा रह गया था। मात्र कुछ पलों की मोहलत महसूस कर सोत्निकोव ने तोप चालकों को किसी तरह आख़िरी सही-सलामत छोटी तोप का मुंह मोड़ने में मदद देने के लिए कहा और पिछले हिस्सों को तरतीब किये बिना नली से ढक्कन खींच निकाला। फिर उसने एक भारी गोला दाग़ दिया। पहले टैंकों की स्थिति का ठीक-ठीक अन्दाज़ लगा लेना असम्भव था: टुकड़ी के अगले हिस्से की गाड़ियाँ जल रही थीं और उनके चालक सड़क से नीचे की ओर भागते आ रहे थे। धुआँ व टूटे ट्रैक्टरों के कारण ठीक निशाना लेना असम्भव था। लेकिन आधा मिनट के बाद, गड्ढे के दूसरे किनारे पर धीरे-धीरे रेंगते, पेड़ों के बीच पहले जर्मन टैंक को उसने देख ही लिया। उसकी नली इन लोगों की ओर सधी थी और एक के बाद दूसरा गोला वह टुकड़ी पर भयानक आवाज़ के साथ छोड़े जा रही थी। सोत्निकोव ने झटके से तोप की दाब पट्टी एक ओर खिसका दी (तोप में गोला पहले से भरा था) और किसी तरह काँपते हाथों से मोटी नली को उसने किसी न किसी तरह घुमा लिया और आख़िरकार दूरबीन में सुबह के धुधँलके में मद्धिम दिखता दानवी टैंक पूरी तरह पेश हुआ।

गोला छूटा और वज्रघोष सा हुआ। तोप की नली तेज़ी से झटका खाकर पीछे की ओर खिसकी और दूरबीन की भरपूर चोट उसकी ठुड्डी में लगी। नीचे, अनकसे पिछले हिस्सों की टेक से पत्थरों के बीच से चिनगारियाँ छूटीं, एक टेक गड्ढे के किनारों से जा टकरायी, दूसरी खुरदरे रास्ते पर गिर पड़ी। धूल के उठते ग़ुबार में उसे अभी भी कुछ दिखाई नहीं दे रहा था लेकिन उसे तोप की दाबपट्टी की सोल्लास चीख़ सुनाई दे गयी थी। उसने समझ लिया, निशाना सही बैठा था। दूरबीन से उसे तभी दूसरा टैंक बढ़ता दिखाई दे गया। वह रास्ते के पीछे से आगे बढ़ रहा था। उसने आगे छोटी तोप की नली से सीधे उसके, धूसर मुँह का निशाना साध कर "फायर" कहा। फिर वज्रघोष से उसका कान बहरा गये लेकिन किसी तरह वह उछल कर

पीछे हट गया जिससे तोप के झटके से चोट न लगे धूल के बीच उसे
अन्दर आग लग जाने के कारण अण्डे की तरह टूट कर बिखरता दूसरा टैंक
दिखाई दे गया। दूर तक मार करनेवाली भारी, अनियन्त्रित तोप ने
अपने शक्तिशाली गोले से टैंक की धज्जियाँ उड़ा दी थी।

अचानक उन्हें लड़ाई में सफलता की सिर चकरा देनेवाली असावधानी
ने जकड़ लिया। अब उन्हें अपने नुक़सानों, धूलभरे गोलाश्म पत्थरों
पर ख़ून बहाते पड़े अपने मृतकों व घायलों का अथवा साज़-सामान
में लगी आग व टैंकों से बरसती गोलियों का कोई ध्यान न रह गया
था। अत्यन्त विपरीत परिस्थितियों में बचे-खुचे कुछेक तोप चालकों ने टैंकों
के विरुद्ध मोर्चा सम्भाल लिया था। अब उजाला हो जाने
के कारण वे आसानी से निशाना ले सकते थे। सड़क के परे धुआँ
व लपटें उठ रही थीं: जर्मन टैंक जल रहे थे।

सोल्निकोव ने छह भारी भारी गोले डाले और दो अन्य टैंकों को
चकनाचूर कर डाला। लेकिन कहीं भीतर से उसे ख़तरे का आभास
हो आया। उसने जान लिया, भाग्य ज्यादा देर तक साथ नहीं देनेवाला।
अब जर्मनों के टैंक का दूसरा या तीसरा गोला उसी के निमित्त होगा।
आगे की ओर शायद अब कोई जीवित न बचा था। रेजिमेण्ट का
कमाण्डर जो किसी तरह जान बचाकर पीछे तक लौट आया था, इस
समय तोप की पिछली टेक पर ख़ून से लथपथ मरा पड़ा था। पास
ही गड्ढे में से कुछ जवानों ने बन्दूकों से टैंक की झिरी का निशाना
लेना जारी रखा था। गोले मारनेवाला कोगोल्कोव गोलों की पेटियों
के पास मुंह के बल ज़मीन पर पड़ा था। सोल्निकोव के पीछे कोई
भी न था। हाथों व घुटनों के बल रेंगकर वह एक गोले की पेटी
की ओर बढ़ ही चला था कि उसे अपने पीछे कान बहरा कर देनेवाला
धमाका सुनाई दिया और वह चारों खाने चित्त गोलाश्म पत्थरों पर
आ गिरा। कई पलों तक सड़क पर काला, दमघोंट धुआँ छा गया।
धूल व रेत से दम घुटते हुए उसे अपने ज़िन्दा होने का अहसास हुआ।
धूल व रेत का बादल जब थोड़ा कम होने लगा, वह सीधे तोप
की ओर बढ़ा। लेकिन तोप एक गड्ढे के किनारे बुरी
तरह मुंह बाये खड़ी थी, विस्फोट के धमाके से उसकी
नली नीचे की ओर झुक गयी थी, पहियों के तले से रबड़ के जलने

के कारण धुआँ उठ रहा था। तभी उसने महसूस कर लिया, अब खेल
ख़त्म हो चुका था। उसे अपने सही-सलामत होने का भी विश्वास
न था। उसे कान बहरा जाने के कारण आस-पास विस्फोटों की कोई
आवाज सुनाई नहीं दे रही थी, सिर में बस लगातार दर्दनाक सनसनाहट
भरी थी। नाक से ख़ून बह रहा था। उसने नाक तो पोंछ ली लेकिन
उसका गन्दा धब्बा गाल पर बना रहा। फिर वह रास्ते से फिसल कर
गड्ढे में जा उतरा। पेड़ों के पीछे से, सड़क की दूसरी ओर से चरम-
राती चाल चलता, गरजता, रास्ते में गहरे हिचकोले खाता एक टैंक
चला आ रहा था। शायद वही टैंक था जिसने उसका निशाना लिया
था। सुबह की ताज़ा बयार से जलता ट्रैक्टर दुबारा धुआँने लगा था,
विस्फोटों के कारण तेल व टी एन टी की तीखी गन्ध फैली थी और
मृत रेजिमेण्ट कमाण्डर के ट्यूनिक का कन्धा काला पड़ गया था।

इतनी तेज़ी से अपने सफाया हो जाने के कारण हक्का-बक्का
सोल्निकोव मुंह बाये सड़क के परे से आते जर्मन टैंकों को घूरता, उनपर
लिखे नम्बरों व सफेद क्रॉसों को देखे जा रहा था। तभी किसी ने
उसे आस्तीनों से खींच लिया। पलट कर देखा तो टुकड़ी सार्जेण्ट खड़ा
था। उसका चेहरा ख़ून व कालिख से सना था। वह चीख़-चीख़ कर
कुछ कहते हुए, उसे रास्ते से नीचे लौट जाने को इशारा कर रहा था।

गड्ढे के साथ-साथ उस दिशा में उसे दौड़ते लोग दिखाई दिये
और वे दोनों भी तीखे धुएँ के बीच से उनके पीछे हो लिये...

३

रिबाक अनतिविस्तृत क्षुपवन के गिर्द रास्ता तय करके रुक गया। आगे
एक छोटी-सी पहाड़ी के किनारे जाती रात के धुँधलके में किसी गाँव के
पहले मकान एक काले अम्बार-सा दिखाई दे रहे थे। पिछली पतझड़ में
रिबाक सैनिकों के साथ रास्ते के किनारे किनारे इस गाँव से गुज़रा था
लेकिन वहाँ गया नहीं था। इस लिए उसे नहीं मालूम था, गाँव क़रीब से
कैसा दिखाई देता है। चाहे जो हो, इस समय वह इस सोच में नहीं पड़ना
चाहता था! यह पता लगाना ज़्यादा महत्वपूर्ण था कि इस गाँव में जर्मन
या पुलिसवाले तो नहीं जिससे वहाँ पहुँचकर सीधे उनके जाल में फँस न जाये।

पल भर कान लगाये वह झाड़ियों के पास खड़ा रहा। गाँव से कोई

भी सन्देहास्पद आवाज़ आती सुनाई नहीं दे रही थी। रात में दबी कई आवाजें थीं, कोई कुत्ता भी अलस भाव से किकिया रहा था। पास की हिमवत टहनियों में सीटी बजाती हवा तेज़ी से लगातार चल रही थी। धुएँ की बू भी थी—ज़रूर कोई अँगीठी जल रहा होगा। तभी सोत्निकोव भी पीछे आ पहुँचा और रुककर उसी की तरह अन्धेरे में झाँकने लगा।

"साफ़ है मैदान?"

"लगता तो है," रिबाक धीरे से बोला। "चलो, थोड़ा आगे बढ़ें।"

गाँव का आख़िरी मकान थोड़ी ही दूर पर काले धब्बे-सा था। चूँकि गली वहीं से शुरू होती थी, वह खिड़की तक हिमपात में डूबा था। वहाँ जल्दी से और आसानी से पहुँचा जा सकता था। लेकिन आख़िरी मकान के पास हमेशा किसी मुसीबत में पड़ने का कहीं ज़्यादा ख़तरा होता: आम तौर से रात के पहरेदार या गश्तीवाले वहीं अपने चक्कर ख़त्म करते और पुलिसवाले भी वहीं अपने फन्दे डाले होते। इसलिए वह एक ओर से बर्फ़ के पार बढ़ चला। एक गड्ढा पार करके वे कँटीले तारों वाले एक अहाते के साथ-साथ उस ओर बढ़ चले जिधर कुछ सब्ज़ी के बाग़ों के दूसरे छोर पर खलिहानों के एकान्त झुण्ड थे। वे कान लगाये लगभग एक मिनट तक एक स्नानघर या टूटी छतवाले अनाजघर के दरके कोने के पीछे खड़े रहे। फिर सावधानी से आस-पास नज़र डालने के बाद रिबाक हिम्मत करके खुले में जा पहुँचा। उनसे थोड़ी ही दूर पर एक कम ऊँचा, लम्बा घुमावदार झोंपड़ा था। लोगों की आवाजाही के कारण बर्फ़ में वहाँ तक एक पगडण्डी-सी बन गयी थी। रिबाक उस पगडण्डी पर कुछेक क़दम चलने के बाद नीचे बर्फ़ में उतर गया क्योंकि उस पर उसके जूतों से काफ़ी आवाज़ होती थी। सोत्निकोव पगडण्डी की दूसरी ओर चलने लगा। इस तरह वे झोंपड़े की ओर बढ़ चले।

झोंपड़े तक पहुँचने से पहले ही उन्हें किसी चीज़ के काटे जाने की आवाज़ें सुनाई दीं। कोई आदमी आधे मन से आँगन में लकड़ी चीर रहा था। रिबाक अचानक ख़ुश हो उठा: लकड़ी चीरने का मतलब था, गाँव में सब कुछ सामान्य था, यहाँ कोई अजनबी नहीं। अन्दर जाने से पहले खिड़की पर दस्तक देने की भी ज़रूरत न थी: चाहे कोई भी हो, उससे सब कुछ पूछा जा सकता था। फिर एकाएक उसके दिमाग़ में आया, कि अगर वे दबे पाँव अन्दर नहीं जा पहुँचते हैं और वह आदमी कहीं डर गया

तो अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर लेगा और उसे किसी भी तरह दरवाज़ा खोलने के लिए राज़ी नहीं किया जा सकेगा। सो, वह दबे पाँव बर्फ़ पर बिखरे लट्ठों के ऊपर से कोने का चक्कर लगाकर दरवाज़े के पास जा पहुँचा।

अहाते के पास, आँगन के अस्पष्ट धुँधलके में कोई आदमी एक लट्ठे को फाड़ने में लगा था। वह फ़ौरन नहीं जान पाया कि यह कोई औरत थी जो अपने पीछे पदचाप सुनकर भय के मारे चीख़ उठी थी।

"शान्त, शान्त!" रिबाक धीमी आवाज़ में बोला।

वह जहाँ की तहाँ बुत-सी खड़ी रह गयी—वह एक नाटे क़द की, प्रौढ़ महिला थी। उसने मोटे बुने कपड़े का रूमाल सिर पर बाँध रखा था। सावधानीवश रिबाक ने पोर्चवाले दरवाज़े पर नज़र डाली लेकिन वह बन्द था और आँगन में शायद कोई अन्य व्यक्ति न था। ऐसी बात नहीं कि वह चिन्तित हो उठा था। इस गाँव में कोई ख़तरा नहीं, वह पहले से ही आश्वस्त हो चुका था। पुलिसिये घर में बनायी वोद्का पीने में व्यस्त होंगे और शायद जर्मन यहाँ हों ही नहीं।

"ओह् हो, ओह् हो! मैं तो डर ही गयी थी। हे भगवन!" सीने पर क्रास बनाते हुए बुढ़िया रिरियाई।

"बस, बस, शान्त हो जाओ। गाँव में बहुत से पुलिसवाले हैं?"

"नहीं। एक था, वह भी कहीं चला गया है। दूसरा कोई नहीं।"

"यह बात है," आँगन में चक्कर लगाते हुए रिबाक बोला। "इस जगह का नाम क्या है?"

"लियासिनी। लियासिनी गाँव," बुढ़िया ने उसे लगातार घूरते हुए जवाब दिया। अभी तक वह अपने भय पर पूरी तरह क़ाबू नहीं पा सकी थी।

उसकी कुल्हाड़ी एक शाख़दार लट्ठे में गहरे फँसी थी। वह उसे बीच से दो टुकड़े करने की बेकार कोशिश में लगी थी।

रिबाक तय कर चुका था, यहाँ रुककर थोड़ा तरोताज़ा होने के बाद खाने-पीने का कुछ सामान हथियायेगा! जगह काफ़ी निरापद प्रतीत हो रही थी, फिर ज़रूरत पड़ने पर मोर्चेबन्दी के लिए अनाजघर व लकड़ी के लट्ठे तो थे ही।

"घर में और कौन है?"

"कोई भी नहीं, सिर्फ़ मैं ही हूँ", औरत ने जवाब दिया मानो उनकी नादानी पर चकित हो।

"क्या सचमुच कोई दूसरा नहीं?"

"नहीं, सच में कोई नहीं। मैं अकेली रहती हूँ," मानो इस बात से दुखी हो उसने कहा। वह अभी भी उसे एकटक घूरे जा रही थी। निस्सन्देह, रात में उनके इस तरह अचानक आ टपकने का कारण वह भाँप लेना चाहती थी।

बहरहाल, रिबाक पर उसके दुखद, विनीत लहजे का कोई असर नहीं पड़ा था। वह गँवई औरतों के ऐसे वशीभूतकारी हाव-भावों से अच्छी तरह परिचित था। इनका जादू उस पर नहीं चलनेवाला था। वह आँगन का जायज़ा लेने में लगा रहा। उसने देखा, मकान के बाहरी हिस्सेवाला दरवाज़ा गहरे अंधेरे में झाँकता खुला था। वहाँ गोबर की तेज़ बू थी।

"ख़ाली है?"

"बिलकुल," कुल्हाड़ी के पास से हटे बिना उस औरत ने दुखपूर्वक कहा। "ख़ाली कर गये।"

"कौन?"

"क्यों, तुम किसके बारे में सोचते हो? ·· क्या मैंने, जिसका बेटा लाल सेना में काम करता है? हरामज़ादे, दोज़ख़ की आग में जलें।"

रिबाक ने उस पर सहानुभूति भरी एक नज़र डाली। अगर वह जर्मनों को गालियाँ दे रही थी तो इसका मतलब था, वह झूठ नहीं बोल रही, उस पर विश्वास किया जा सकता था। तो यहाँ भी क़िस्मत दग़ा दे गयी। जर्मनों ने जब पहले से ही लूट लिया था तो वह बचा-खुचा कैसे बटोर ले जा सकता था। उन्हें कोई दूसरी जगह तलाशनी होगी।

सोत्निकोव दीवार के पास विषण्ण मन दोहरा हुआ खड़ा था। रिबाक उस औरत के पास जा पहुँचा।

"इसे टुकड़े नहीं कर पा रहीं?"

औरत ने भाँप लिया, रिबाक मदद करना चाहता है। उसका चेहरा काफ़ी खिल उठा।

"कुल्हाड़ी तो मैंने हुमच कर चलायी थी लेकिन वह इसी में फँस गयी। अब निकल ही नहीं रही है।"

"इधर आ जाओ, मैं देखता हूँ।"

रिबाक ने बन्दूक को कंधे के पीछे लटकाकर कुल्हाड़ी की मुठिया को दोनों हाथों से पकड़ लिया। उसने कुन्दे पर ज़ोरों से एक बार प्रहार किया।

फिर और एक बार। उसे अपने हाथों में ताक़त व बचपन में हासिल महारत महसूस हो रही थी। तब वह अक्सर जाड़े की शामों में दूसरे दिन के लिए लकड़ियाँ फाड़ा करता था। उसे आरी चलाना पसन्द नहीं था। कुल्हाड़ी से लकड़ी काटने को वह सदैव तत्पर रहता। इस कठोर कार्य में उसे एक प्रकार का मौलिक सन्तोष मिलता था। निस्सन्देह, इसके लिए मर्दानगी की ज़रूरत थी।

चौथे प्रहार में कुन्दे में टेढ़ी-मेढ़ी दरार पड़ गयी और वह दो टुकड़े हो गया। फिर उसने उन दोनों के भी टुकड़े कर दिये।

"बहुत-बहुत शुक्रिया, बेटे। भगवान तुम्हारा भला करे," बुढ़िया ने कहा। अब उसके चेहरे पर पहले जैसे दुराव का कोई चिह्न न था।

"आशीर्वादों से काम नहीं चलेगा, स्नेहमयी! कुछ खाने को है?"

"खाने को? सोचो, मैं खाने को कहाँ से कुछ लाऊँगी? मेरे पास थोड़े आलू हैं, हालांकि बहुत ही कम हैं। अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हारे लिए पका दे सकती हूँ। अन्दर आ जाओ।"

"उससे कोई लाभ न होगा। हम अपने साथ कुछ ले जाना चाहते हैं; जैसे कोई गाय ही मिल जाये।"

"हुँह, गाय! और तुम्हारे ख़्याल में, इस समय तुम्हें कोई गाय कहाँ मिलेगी?"

"वहाँ कौन रहता है?" रिबाक ने बाग़ के पार इशारा करते हुए पूछा। वहाँ से बाड़े के पीछे से किसी मकान की बर्फ़ ढँकी छत दिखाई दे रही थी। शायद वहाँ अँगीठी जल रही थी क्योंकि वहाँ से आँगन में धुएँ व खाना पकाने की बू आ रही थी।

"हाँ, वह प्योत्र काचन का घर है। इस समय गाँव का मुखिया है," बुढ़िया ने सरलतापूर्वक बताया।

"क्या? गाँव का मुखिया? सुन रहे हो?" रिबाक ने सोत्निकोव की ओर मुड़ते हुए कहा। वह एक कुन्दे पर टेक लगाकर दीवार के पास खड़ा था।

"जर्मनों ने उसे मुखिया बनाया है।"

"कमीना होगा, क्यों?"

"नहीं, तुम ऐसा नहीं कह सकते। हम ही लोगों में से है, गाँव का ही है।"

रिबाक थोड़ा हिचकिचाया फिर फ़ैसले पर पहुँच गया।

"ठीक है, आओ, हम चलकर उससे मिलते हैं। निस्सन्देह, उसके पास तुमसे तो ज़्यादा ही होगा।"

रास्ता तलाशने की जहमत उठाये बिना वे अहाते के बोड़ के तले से रेंग गये। फिर वे बाग़ के पार चल पड़े। बाग में राख व आलू के छिलकों की भरमार थी। उसके बाद पुराने अहाते के एक सूराख़ से वे आँगन में जा पहुँचे।

यह उस बुढ़िया के आँगन से ज़्यादा साफ़-सुथरा था। कोई भी घर के मालिक के माहिर हाथों का कमाल महसूस किये बिना नहीं रह सकता था। आँगन में तीन तरफ़ इमारतें थीं–रिहाइशी झोंपड़ा, अनाजघर और एक मामूली-सा सायबान। प्रवेश पोर्च के सामने एक स्लेज गाड़ी खड़ी थी। गाड़ी के पेटे में थोड़ा बचाखुचा भूसा था। यानी मालिक घर पर ही था। सायबान की लटकती छत के नीचे जलावन की लकड़ियों का पूरा साबूत ढेर पड़ा था।

बाग़ पार करते समय रिबाक ने हिमाच्छन्न खिड़कियों से टिमटिमाती रोशनी देख ली थी–शायद कोई ढिबरी जल रही थी। वह विश्वासपूर्वक लम्बे डग भरता प्रवेश द्वार की लकड़ी की चरमराती सीढ़ियों पर चढ़ गया।

उसने दरवाज़ा खटखटाया नहीं। दरवाज़े की सिटकनी खुली थी। चूँकि वह ख़ुद भी गाँव का रहनेवाला था, दरवाजा खोलने में उसे कोई दिक़्क़त नहीं हुई। उसने हैण्डल को बस ४५ अंश कोण तक घुमा दिया। दरवाज़ा चरमराता खुल गया। दलान व भण्डार का काम देनेवाले गलियारे से गुज़रते हुए उसे किसान के घर की आधी भूली भरी-भरी गन्ध महसूस हुई। उसने सावधानी से दीवार पर हाथ फेरा। जमकर कड़ी पड़ी कोई पोशाक फिर चौखट उसकी अँगुलियों को छू गयी। बर्फ़-सी ठण्डी दीवार को टटोलते हुए उसने फ़ौरन ही बोल्ट की तलाश कर ली–ऐसा बोल्ट हरेक ग्रामीण घर में होता। यह दरवाज़ा भी बिना ताला लगा मिला। दरवाज़े को अपनी ओर खींच वह ऊँची दहलीज पर खड़ा हो गया। बोल्ट को अपने ठण्डे हाथों से सोत्निकोव ने थाम लिया था।

मेज़ के बीच में एक उल्टी कटोरी पर ढिबरी जल रही थी। ठण्डी हवा के झोंके से लौ टिमटिमा रही थी। कन्धों पर कोट लपेटे, मेज़ के पास बैठे छोटी दाढ़ियोंवाले एक प्रौढ़ आयु के व्यक्ति ने अपने सफ़ेद बालोंवाला सिर ऊपर उठाया। उसके चौड़े चेहरे पर नाख़ुशगवारी के निपट भाव स्पष्ट हो आये थे।

"नमस्ते," रिबाक ने गम्भीर विनम्रता से कहा।

जर्मनों के इस भाड़े के टट्टू के साथ वह ऐसे अभिवादन के बिना भी पेश आ सकता था लेकिन थोड़ी देर के लिए उसे इस प्रकार बातचीत

को टाल देना ही ठीक समझा। लेकिन बूढ़े ने कोई जवाब नहीं दिया, उसने मेज़ के पास से उठने की भी कोई कोशिश नहीं की। किसी भी प्रकार की तनिक भी जिज्ञासा के बिना वह सूनी-सूनी निगाहों से उन्हें घूरता भर रहा।

उनके पीछे से अभी भी ठण्डे झोंके आ रहे थे और सोत्निकोव दरवाज़े को ढकेल देने की थोड़ी कोशिश में खड़खड़ की आवाज़ पैदा कर रहा था। रिबाक ने पलट कर एक तेज़ झटके के साथ दरवाज़े को बन्द कर दिया। आख़िर बूढ़ा मेज़ के पास से धीरे-धीरे उठ खड़ा हुआ, हालाँकि उसके चेहरे के भाव पूर्ववत थे मानो रात में इस तरह आ धमकनेवाले इन बिन बुलाये मेहमानों के बारे में उसे कोई अनुमान नहीं हो पा रहा हो।

"तुम ही हो गाँव के मुखिया?" मेज़ के पास पहुँचते हुए रिबाक ने आधिकारिक लहज़े में पूछा। वह संभलकर चल रहा था क्योंकि बर्फ़ के कारण उसके लड़ाई के दौरान हाथ में आये जूते फिसल रहे थे।

बूढ़े ने गहरी साँस छोड़ी और मोटी-सी किताब बन्द कर दी जिसे वह ढिबरी को रोशनी में पढ़ रहा था। उसने स्पष्ट रूप से महसूस कर लिया था, बातें करनी ही होंगी।

"हाँ, मैं ही हूँ। क्यों?" उसने सधी आवाज़ में कहा। उसकी आवाज़ में न भय था, न किसी तरह की चापलूसी थी।

तभी अँगीठी के पीछे से सरसराहट सुनाई दी और एक नाटी, पतली व हर तरह से बहुत चुस्त-फुर्तीली औरत पर्दे के पीछे से वहाँ आ पहुँची। आते-आते उसने सिर का रूमाल ठीक किया। निस्सन्देह, वह गृह-स्वामिनी थी। कन्धे से बन्दूक उतार कर रिबाक ने कुन्दे की ओर से उसे पैरों के पास रख लिया।

"क्या कुछ सूझ रहा है कि हम कौन हैं?"

"देख रहा हूँ, मैं अन्धा नहीं। अगर तुम वोद्का के लिए आये हो तो बता दूँ, ख़त्म हो चुकी है। जो बची-खुची थी, सब ले गये।"

रिबाक ने सोत्निकोव की ओर साभिप्राय देखा: कहीं यह ठूँठ-सा बूढ़ा उन्हें पुलिस का आदमी तो नहीं समझ रहा है? शायद, ठीक ही है, समझता रहे, उसने सोचा और वैसे ही दयालु, शान्त लहजे में बोलना जारी रखा।

"ख़ैर, कोई बात नहीं। हम वोद्का के बिना काम चला लेंगे।"

मुखिया ख़ामोश रहा जैसे कुछ सोच रहा हो। उसने ढिबरीवाली

कटोरी को मेज़ के किनारे पर खिसका दिया। जिससे फ़र्श पर रोशनी पड़ सके।

"अगर ऐसी बात है तो क्या बैठोगे नहीं?"

"हाँ, हाँ, बैठो, बैठो, मेरे प्यारो!" पति के अनुरोध पर ख़ुश हो औरत सुरीली आवाज़ में बोल उठी। और मेज़ के पास से वह एक बेंच को खींच कर अँगीठी के पास ले गयी। यहाँ तुम्हें गर्मी मिलेगी। तुम लोग तो एकदम जम ही गये होगे। ऐसी भयावह सर्दी है..."

"जब यहाँ आये हैं तो बैठ भी लें," रिबाक बोला लेकिन वह ख़ुद नहीं बैठा। उसने सोत्निकोव को सिर से इशारा करते हुए कहा, "बैठकर थोड़ा गरमा लो, साथी।"

सोत्निकोव को ज़्यादा कहने की ज़रूरत न थी, वह फ़ौरन बेंच पर बैठ गया। उसने अँगीठी की सफ़ेदीवाली दीवार से पीठ टिका दी। वह बन्दूक़ को सहारे की टेक की तरह पकड़े था। उसने अपनी फ़ौजी टोपी ठीक करने की भी ज़हमत नहीं उठायी थी। टोपी ज्यों की त्यों उसके जमे कानों पर कसकर बँधी रही। उधर रिबाक को गर्मी महसूस होने लगी। उसने फ़र के कोट के बटन खोल लिये और टोपी सिर के पीछे कर ली। पहले जैसा ही घर का मालिक पूरी तरह अलाहदा मेज़ के पास बैठा रहा। उसकी पत्नी हाथ पर हाथ रखे चिन्तातुर दृष्टि से उनकी प्रत्येक गतिविधि को देख रही थी। "भयभीत है," रिबाक ने सोचा। बतौर गुरिल्ला जो आदत उसमें घर कर गयी थी, उसी के मुताबिक़ बैठने से पहले उसने घर का एक पूरा चक्कर लगाया। अँगीठी के पीछे ख़ाली अन्धेरी जगह पर जैसे यूँ ही नज़र डालते हुए वह उस जगह रुक गया जहाँ लाल रंग की अलमारी थी। अलमारी के कारण खाट के पासवाला कोना छुप जाता था। उसके जाने के लिए जगह छोड़ औरत आदरपूर्वक एक ओर हो गयी।

"वहाँ कोई भी नहीं, तुम्हें चिन्ता की कोई ज़रूरत नहीं।"

"तो बस तुम्हीं लोग रहते हो?"

"हाँ, बिलकुल। पति और मैं।" फिर अचानक जैसे घिघियाते हुए बोली: "तुम्हारे लिए मेज़ पर खाना लाऊँ? इस भयानक मौसम में सफ़र के बाद तुम लोगों को बड़ी भूख लग आयी होगी। इतनी सर्दी में बिना किसी गर्म भोजन के आप लोग ज़रूर..."

रिबाक का चेहरा चमक उठा, उसने सन्तोषपूर्वक अपने दोनों जमे हाथ रगड़े।

"हमारा भी यही ख़्याल है। तुम क्या सोचते हो?" सोत्निकोव की ओर मुख़ातिब हो उसने कृत्रिम हिचकिचाहट के साथ पूछा। "हम थोड़ी जान डाल लें, आख़िर भली महिला हमें कह रही हैं..."

"तो फिर खाना लाती हूँ," वह ख़ुशी से बोल उठी। "बन्दगोभी शायद अभी भी गरम हो। देखती हूँ, थोड़े आलू भी उबाल लूँ?"

"नहीं, कुछ भी बनाने की ज़रूरत नहीं, हमारे पास समय नहीं," रिबाक ने दो टूक कहा। फिर उसने मुखिया पर नज़र डाली जो मेज़ पर कोहनी रखे, कोने में निस्पन्द बैठा था।

उसके ऊपर कशीदे कढ़े तौलियों से ओढ़े तीन पवित्र चित्रों की परछाइयाँ-सी हो रही थीं। रिबाक अपने भारी बूटों में भोंडी चाल से उस दीवार के पास जा पहुँचा जहाँ कई फोटो लगे शीशे का फ्रेम टँगा था। जानबूझकर वह बूढ़े की आँखों से अपनी नजर बचा रहा था, क्योंकि उसने भाँप लिया था कि ख़ुद बूढ़ा चुपके-चुपके उसे घूरता जा रहा था।

"तो तुम जर्मनों के लिए काम करते हो?"

"करना पड़ता है," बूढ़े ने लम्बी साँस ली। "कोई दूसरा चारा नहीं।"

"काफ़ी पैसे देते हैं?"

बूढ़ा सवाल में छुपे कुत्सापूर्ण व्यंग्य को भाँपे बिना नहीं रह सका, फिर भी उसने शान्तिपूर्वक, सम्मानभाव से जवाब दिया।

"मैंने कभी माँगा नहीं और जानने की ख़्वाहिश भी मुझे नहीं। मैं अपने साधनों से ही काम चलाऊँगा।"

"तो यह बात है!" रिबाक ने मन में सोचा। "बड़ा अड़ियल है।"

दीवार पर भोजवल्क के फ्रेम में दर्जन भर फोटों में से एक किसी नौजवान का था जो शक्ल-सूरत से किसी न किसी तरह बूढ़े से मिलता था। उसने गोलन्दाज़ सेना के चिह्नोंवाला ट्यूनिक पहन रखा था, सीने पर तीन बिल्ले लटक रहे थे। उसकी दृष्टि अत्यन्त शान्त व सचेत थी लेकिन इसके साथ ही उसमें युवावस्था के अकृत्रिम आत्म-विश्वास की झलक भी थी।

"कौन है वह? तुम्हारा बेटा?"

"हाँ, हमारा बेटा ही है। हमारा तोलिक," रिबाक के कन्धे के पीछे दीवार पर टँगे फ़ोटो की ओर रुक कर देखते हुए औरत ने स्नेहपूर्वक हामी भरी।

"इस समय कहाँ है? कहीं पुलिस में तो नहीं?"

बूढ़े ने क्रुद्ध दृष्टि ऊपर उठायी।

"हमें कहाँ से मालूम? वह तो मोर्चे पर गया था..."

"हे भगवान, जब से सन् ३९ में वह गया है, हमने उसे नहीं देखा है। पिछली गर्मियों के बाद से हमें उसकी कोई ख़बर नहीं मिली है। काश, हम जान पाते, उसका क्या बना, वह कहाँ है, जिन्दा है या मर गया, सही-सलामत है या किसी अनजानी क़ब्र में सड़ रहा है," मेज़ पर बन्दगोभी का शोरबा रखते हुए औरत बीच में ही बोल उठी।

"हूँ, तो यह बात है," दुख भरे लहजे पर ध्यान दिये बिना रिबाक बोला। औरत को बात पूरी कह देने का मौक़ा देने के बाद वह अचानक बूढ़े से मुख़ातिब हो कह उठा: "तुमने अपने बेटे को शर्मिन्दा कर दिया है!"

"यही बात तो मैं इतने दिन-रात कहती रही हूँ!" अँगीठी के पास ही खड़ी-खड़ी औरत ने कूजती आवाज़ में सोत्साह कहा। "हमारे बेटे को, हमारे सभी लोगों को, यही तो..."

यह कुछ-कुछ अप्रत्याशित था–ख़ास तौर से औरत सचमुच दर्दीली आवाज़ में बोलती लग रही थी। बहरहाल, उसके शब्दों का बूढ़े पर कोई असर नहीं पड़ा बल्कि वह चेहरे पर म्लान भाव लिये वैसे ही बैठा रहा और रिबाक को लगा जैसे उसके दिमाग़ का कोई पेंच ढीला हो। लेकिन जैसे ही यह विचार रिबाक के मन में आया, बूढ़े की क्रुद्ध दृष्टि और भयावह हो उठी।

"बहुत हुआ! इससे तुम्हारा कोई सरोकार नहीं!"

औरत चुप हो गयी और तब बूढ़े मुखिया ने एक दोषारोपणयुक्त दृष्टि रिबाक पर फेंकी।

"और उसने मुझे शर्मिन्दा नहीं किया? जर्मनों को यहाँ आने दिया। क्या यह शर्म की बात नहीं?"

"घटनाक्रम ही ऐसा रहा। यह उसकी ग़लती नहीं।"

"तो यह किसकी ग़लती है, मैं पूछ सकता हूँ? शायद मेरी?" चेहरे पर रत्ती भर भी परेशानी या भय के बूढ़े ने ख़ास परवाह अन्दाज़ से पूछा। फिर अपने शब्दों पर ज़ोर डालने के लिए मेज़ पर हाथ पटकते हुए उसने कहा, "यह आप लोगों की ग़लती है, और कुछ नहीं।"

रिबाक भोंड़े ढंग से "हँह" कहकर रह गया। वह इस असुखद व कठिन बातचीत को जारी नहीं रखना चाहता था क्योंकि वह अपने अनुभव से जानता था, ऐसी बातचीत का कोई अन्त न होता।

मेज़ के आधे हिस्से पर एक छोटा-सा दस्तरख़ान बिछा कर उस औरत ने बन्दगोभी के शोरबे की कटोरी रख दी। उस की ख़ुशबू से रिबाक के पेट में अचानक चूहे कूदने लगे और वह बाक़ी बातें भूल गया। बूढ़े के प्रति रिबाक को तनिक भी आदर भी अनुभूति न हुई। गाँव के मुखिया बनने के सम्बन्ध में उसके बेसिर पैर के कारण उसे तनिक भी प्रभावित नहीं कर पाये थे। वह जर्मनों की चाकरी में था, रिबाक के लिए इतना ही काफ़ी था। लेकिन इस समय उसे भोजन की बड़ी इच्छा हो रही थी, सो, उसने बूढ़े की जर्मनों की चाकरी के बारे में सारी बातें फिलहाल टाल दीं।

"लो, बैठकर थोड़ी भूख मिटा लो। यह थोड़ी रोटी भी है," औरत सहृदयतापूर्वक बोली।

टोप हटाये बिना रिबाक बैठ गया।

"आओ, कम से कम मुँह जुठा लो!" उसने सोत्निकोव से कहा।

सोत्निकोव ने दुर्बलतापूर्वक बस सिर हिला दिया। "तुम खाओ। मुझे भूख ही नहीं लगी है।"

रिबाक ने बेंच पर दुहरा बैठकर खाँसते अपने साथी की ओर ध्यान से देखा। जब-तब वह ऐसे काँप उठता मानो तेज बुखार हो। अपने अतिथि की हालत से नावाकिफ़ उस औरत ने हैरानी से देखा।

"ऐसी क्या बात है? खाना क्यों नहीं चाहते? तुम्हें शायद कोई दूसरी चीज़ पसन्द आये?"

"नहीं, धन्यवाद। मुझे कुछ भी नहीं चाहिए," पतली अँगुलियोंवाले जमे हाथों को आस्तीनों के अन्दर गहरे घुसेड़ते हुए सोत्निकोव दृढ़ स्वर में बोला।

औरत सचमुच परेशान हो उठी थी।

"हे भगवान, शायद कोई ग़लती हुई। मुझे माफ़ करना अगर..."

मेज़ के पासवाली बेंच पर रिबाक ख़ूब फैल कर आराम से बैठ गया। घुटनों के बीच बन्दूक दबा ली। उसे पता भी न चला, बिना कोई शब्द बोले उसने कब पूरी कटोरी साफ़ कर दी। पहले की ही तरह बूढ़ा कोने में बैठा था–बिना हिले-डुले और क्रुद्ध। औरत वहीं मेज़ के पास मँडराती खड़ी थी–उन की आवभगत को वह वस्तुतः तत्पर थी।

"ठीक है, मैं रोटी ले लूँगा। यह उसका हिस्सा है," सिर से सोत्निकोव की ओर इशारा करते हुए रिबाक ने कहा।

"क्यों नहीं, क्यों नहीं। जैसी तुम्हारी मर्ज़ी!"

बूढ़ा किसी चीज की प्रतीक्षा में – शायद किसी शब्द या गम्भीर बात-चीत शुरू होने की प्रतीक्षा में शान्तिपूर्वक बैठा प्रतीत हो रहा था। उसके बड़े-बड़े नसदार हाथ काली जिल्दवाली किताब पर निश्चल पड़े थे। कोट की सामनेवाली जेब में बची-खुची रोटी ठूस कर रिबाक अप्रसन्न स्वर में बोल उठा, "पढ़ रहे हो, क्यों?"

"यह कोई गुनाह नहीं, मेरा विश्वास है।"

"सोवियत या जर्मन?"

"बायबिल है।"

"बायबिल? देखूँ तो ज़रा, मैंने कभी देखा नहीं।"

बेंच पर खिसक कर रिबाक ने उत्सुकतापूर्वक किताब उठा ली और उसका पहला पृष्ठ खोला। पृष्ठ खोलते न खोलते उसे ख़्याल आया, ऐसा नहीं करना चाहिए था, उसे इसमें दिलचस्पी नहीं दिखानी चाहिए थी क्योंकि हो सकता है, किताब जर्मनी में छपी हो।

"बड़े दुख की बात है। यह तुम्हारा कोई नुकसान नहीं पहुँचायेगी," बूढ़ा चिड़चिड़े लहजे में बोल उठा।

रिबाक ने झटके से किताब बन्द कर दी।

"छोड़ो, इससे तुम्हारा कोई मतलब नहीं। हमें तुम्हारे उपदेश की कोई जरूरत नहीं। तुम जर्मनों की चाकरी करते हो, सो, हमारे दुश्मन हो," रिबाक ने सन्तोष की अनुभूति के साथ कहा क्योंकि इस बहाने अब उसे आतिथ्य के लिए किसी तरह का शुक्रिया अदा करने की जरूरत न रही थी। वह अब ऐसे मौक़े के मुताबिक रुख़ भी अख़्तियार कर सकता था। मेज के पास से उठकर वह कमरे के बीच में आ खड़ा हुआ। उसने अब थोड़ी कस आयी बेल्ट ठीक की। अब उनके सम्बन्ध भिन्न थे, उसे अपना मक़सद पूरा करना चाहिए लेकिन फिर भी थोड़ी तैयारी अभी जरूरी थी। "तुम हमारे दुश्मन हो और तुम जानते हो, हम अपने दुश्मनों के साथ कैसे पेश आते हैं?"

"इस पर निर्भर करता है कि किसके दुश्मन हैं," बूढ़े ने शान्त किन्तु दृढ़ स्वर में कहा जैसे उसे अभी तक स्थिति की गम्भीरता का अहसास न हो।

"हमारे दुश्मन, रूसी जनता के दुश्मन।"

"मैं अपनी जनता का दुश्मन नहीं।"

बूढ़ा हठपूर्वक अपनी बात पर अडिग था, रिबाक को ताव आने लगा।

वह इस भाड़े के टट्टू को यह समझाने में समय बर्बाद करने का इच्छुक नहीं था कि वह किस प्रकार सोवियत राज्य का दुश्मन है। रिबाक उसके साथ किसी लम्बी बहस में नहीं पड़ना चाहता था। उसने गर्हित व्यंग्य के साथ कहा:

"शायद उन्होंने तुम्हें मजबूर किया? तुम्हारी इच्छा के विपरीत?"

"नहीं, पूरे तौर पर नहीं लेकिन क्यों?" बूढ़ा बोला।

"तो तुमने अपनी इच्छा से काम स्वीकार किया?"

"मेरे ख़्याल से, तुम ऐसा कह सकते हो।"

"फिर कहने-सुनने को कुछ भी नहीं," रिबाक ने सोचा। उसे बूढ़े के प्रति असीम विद्वेष महसूस हो रहा था। उसे अफ़सोस हुआ, बेकार बातों में उसने इतना समय क्यों बर्बाद किया – बात शुरू से ही साफ़ थी।

"ठीक है! आओ चलें!" उसने तीखे स्वर में आदेश दिया।

तभी बाँहें फैलाए, चिरौरी करती औरत रिबाक की ओर दौड़ी।

"ओह, मेरे प्यारे, उन्हें कहाँ ले जा रहे हो? नहीं, मेहरबानी करके मत ले जाओ! मूर्ख समझ कर छोड़ दो! बूढ़ा आदमी है – और कुछ नहीं बस, उनकी मूर्खता ही समझो..."

बहरहाल, मुखिया को आगे कुछ कहने की जरूरत न पड़ी। वह अद्भुत स्वाभिमान के साथ मेज के पास से धीरे-धीरे उठ खड़ा हुआ। उसने लम्बा फ़र कोट पहना। वह पूरी तरह सफ़ेद बालोंवाला था लेकिन इतनी के बावजूद उसके कन्धे बड़े और चौड़े थे। उसके खड़ा होने से फ़ोटों-वाला दीवार का पूरा कोना छुप गया।

"ख़ामोश रहो!" उसने बीवी को आदेश दिया। "यह सब बन्द करो!"

स्पष्ट रूप से उसकी बीवी आज्ञापालन की अभ्यस्त थी क्योंकि पल भर को ठिठकती वहाँ खड़ी रहने के बाद वह पर्दे के पीछे चली गयी। किसी चीज से टकरा न जायें, इसलिये चौकसी के साथ बूढ़ा मेज के पीछे से बाहर निकल आया।

"तो मैं तुम्हारी मर्जी पर हूँ। जो जी में आये, करो। तुम नहीं तो दूसरे करेंगे। वे लोग मुझे पहले भी एक बार वहाँ खड़ा करके गोली चला चुके हैं," बूढ़े ने अपने सिर से खिड़कियों के बीचवाली दीवार की ओर इशारा किया।

रिबाक की नजर स्वतः उस ओर उठ गयी जिधर बूढ़े ने संकेत किया था। निस्सन्देह वहाँ सफ़ेद दीवार पर कई काली-काली बिन्दियाँ थीं जो गोलियों के छेद प्रतीत होते थे।

"कौन लोग?"

हर चीज़ के लिए तैयार बूढ़ा कमरे के बीच में खड़ा था।

"तुम्हारे ही कुछ साथियों ने। उन्हें वोद्का चाहिए थी।"

रिबाक को अन्दर ही अन्दर झुरझुरी हो आयी: उसे दूसरों के साथ तुलना की बात अच्छी न लगी थी। उसे अपने इरादे ठीक जँचे थे लेकिन यह जानकर कि दूसरों ने भी उसी जैसे इरादे रखे थे, वह कुछ अलग ढंग से सोचने लगा। इसके साथ ही उसे लगा, बूढ़ा वाग्जाल में फँसा नहीं रहा था: झूठ बोलनेवाले लोग कदापि ऐसे लहजे में नहीं बोल सकते। चुपचाप सुबकते हुए औरत ने पर्दे के पीछे से झाँककर देखा। सोत्निकोव कूबड़ बैठा खाँस रहा था—वह बूढ़े के साथ बातचीत में कोई हिस्सा नहीं ले रहा था—शायद उसकी हालत इस लायक़ न थी।

"हूँ हूँ। कोई गाय है?"

"हाँ, हम अब तक उसे बचा पाये हैं..." बूढ़ा सामान्य लहजे में ही बोला। उस पर जैसे बातचीत में तब्दीली का कोई असर ही न था।

औरत की सुबकियाँ थम गयीं। वह उनकी बातचीत बड़े ध्यान से सुन रही थी। रिबाक सोच रहा था। गाय खोल कर जंगल में हाँक ले जाने की बात बड़ी लुभावनी थी लेकिन वहाँ तक का रास्ता यहाँ से लम्बा था, शायद सुबह से पहले न पहुँच सकें।

"ठीक है! आओ, चलें।"

उसने बन्दूक कन्धे पर लटका ली। बूढ़े ने निरीहतापूर्वक टोप उठा कर डाल लिया। फिर बिना एक शब्द बोले, उसने द्वार खोल दिया। रिबाक उसके पीछे-पीछे बाहर जाते हुए सोत्निकोव से कहता गया:

"तुम यहीं इन्तज़ार करो!"

४

दरवाज़ा बन्द होते ही औरत उस ओर दौड़ पड़ी।

"हे भगवान! उन्हें कहाँ ले जा रहा है! क्यों? आख़िर किस लिए?"

"वापस जाओ!" भर्राई आवाज़ में सोत्निकोव चीख़ पड़ा। अपनी जगह से उठे बिना उसने एक पैर आगे बढ़ाकर उसका रास्ता रोक दिया।

औरत भयभीत हो रुक गयी। वह थम-थमकर सुबक रही थी—जब तब बीच में रुककर बाहर से आनेवाली आवाज़ों पर कान लगा देती। सोत्निकोव अभी-अभी हुई बातचीत ध्यान से नहीं सुन पाया था लेकिन उसके ज्वराक्रान्त मस्तिष्क में जितनी बातें जा पायी थीं, उनके आधार पर उसने अनुमान लगा लिया था कि रिबाक बूढ़े को गोली मार देगा।

लेकिन समय बीतता गया और गोली चलने की कोई आवाज़ सुनाई नहीं दी। रूमाल के कोने से मुँह ढाँके, औरत का क्रन्दन जारी था, हालाँकि उसके कान बाहर से आनेवाली प्रत्येक आवाज़ को सुनने को तत्पर थे। सोत्निकोव बेंच पर बैठा-बैठा ही उस पर कड़ी नज़र रखे था कि कहीं वह दरवाज़े की ओर भाग-दौड़ मचाकर आँगन में कोई तमाशा न खड़ा कर दे। उसे कैसा तो महसूस हो रहा था। खाँसी जान निकाले ले रही थी, दर्द के कारण सिर फट रहा था, अंगीठी के पास उसे कभी ठण्डक, कभी गर्मी महसूस हो रही थी।

"मुझे जाने दो, प्यारे! मेहरबानी करो, मुझे एक बार कम से कम झाँक तो लेने दो कि क्या..."

"वहाँ देखने लायक़ कुछ नहीं है!"

मिनमिनाते हुए औरत ने मद्धिम रोशनी में नज़रें दौड़ायीं। निस्सन्देह, उसे आशा थी, तरस खाकर सोत्निकोव उसे दरवाज़े तक जाने देगा। लेकिन वह समय बर्बाद कर रही थी—सोत्निकोव उसके मिनमिनाने या कलपने से पिघलनेवाला न था। उसे बस एक ही बात याद आ रही थी कि किस प्रकार पिछली गर्मियों में ऐसी ही एक औरत से साबका पड़ने पर अपने भोलेपन के कारण उसकी जान पर बन आयी थी। इसी औरत की तरह वह भी सरलता की प्रतिमा थी—उसका चेहरा भी इतना ही दयालु था और सिर पर सफ़ेद रूमाल।

जंगल से निकलते ही उसने फ़ौरन उसे देख लिया था। वह शाक-सब्ज़ी वाले खेत में चुकन्दर के पौधों के बीच खड़ी थी। तब उसने सोचा था: क्या ख़ूब चेर्नियै भाग्य ने भी साथ दिया है! उससे दिगोरी दलदल के पार जाने का रास्ता मालूम हो जायेगा। उसे पिछले दिन ही बताया गया था कि दलदल पार करने का एक मात्र रास्ता वहीं से था।

वह गीली झाड़ियों से बाहर निकल आया। बिना किसी की नज़र में पड़े, वह सनई के ऊँचे-ऊँचे पौधों का चक्कर लगाकर ठीक वहीं पहुँच गया

जहाँ वह ग्रौरत क्यारियों में ध्यानमग्न हो खुरपी चला रही थी। उसे ऊपर को उठा उसका काला स्कर्ट, गोरी-गोरी पिण्डलियाँ, खस्ताहाल जाकिट ग्रौर कन्धों के गिर्द पड़ा शॉल–सब कुछ ग्रभी भी दिखाई दे रहा था। ग्रौरत चुकन्दर की छँटाई में यूँ मग्न थी कि उसे ग्राते देख नहीं पायी। उसने निःशब्द उसका ग्रभिवादन किया ग्रौर उसे बड़ी हैरानी हुई कि ग्रौरत तनिक भी डरी नहीं थी, हाँ लगातार उसे घूरती जरूर रही थी मानो सवाल उसके पल्ले न पड़ा हो।

फिर उस ग्रौरत ने विस्तार से बता दिया कि किस तरह उस रास्ते तक पहुँचा जाये, पंक के ऊपर रखी तख्तियाँ कैसे पार की जायें ग्रौर दल-दल से बचने के लिए फ़रों के कुंज की किस ग्रोर से जाया जाये। उसने ग्रौरत का शुक्रिया ग्रदा किया ग्रौर जब वह पलटकर चल देने को था तभी इधर-उधर नजर घुमाते हुए वह बोल उठी: "रुको। तुम भूखे होगे," ग्रौर स्कर्ट में चुकन्दर की फुनगियाँ बटोरकर वह उसे ग्रपने साथ-साथ लिये बाग़ के किनारे-किनारे प्रांगण की ग्रोर बढ़ गयी। वह भी बिना उधेड़बुन के उसके पीछे-पीछे चल पड़ा। ग्रौर करता भी क्या, वसंत के भेड़िये जैसा भूखा जो था! चुपचाप, छककर गाँव का भोज उड़ाने की कल्पना करता!

राह में उसने उसे ऐसे स्नेह से सम्बोधित किया था जैसे उसका "प्रियतम" हो। उसे ग्रभी भी याद था। वह बड़ा गन्दा लग रहा था, दाढ़ी बढ़ी थी, ग्रोस के कारण घुटने तक कपड़े गीले थे–कुल मिलाकर देखने में वह बड़ा चौपट लग रहा था। ग्रामीणों जैसी बोली वह बोल नहीं सकता था–ग्रपनी सेना की पहचान छुपाना भी ग्रसम्भव था। पहली नज़र में कोई उसका भेद जान सकता था–वह कौन था, कहाँ से ग्राया था। तब पास में कोई हथियार भी न था ग्रौर वह एक दिन पहले मौत से बाल-बाल बचा था...

इधर मुखिया की बीवी बेचैनी से, रो-रोकर कमरे में लड़खड़ाते क़दमों से चक्कर लगाती रही।

"लेकिन तुम देखते नहीं, वह उनको गोली मार देगा!"

"पहले ही सोचना चाहिए था!" सोत्निकोव उदासीन भाव से बोला। ग्रागन से ग्रावाज सुनने के लिए उसने कान लगा दिये।

"मैंने हज़ारों बार उनको कहा था, गिड़गिड़ायी थी लेकिन उन्होंने

कान ही नहीं दिया! भगवान ही जाने, क्या लाचारी थी उनको! उससे कहीं कम उम्र के लोग भी थे। लेकिन भले लोग यह काम करना नहीं चाहते थे ग्रौर बुरों से यहाँ के लोग डरते थे!"

"ग्रौर क्या लोगों को तुम्हारे पति से कोई डर नहीं?"

"मेरे प्योत्र से? क्या खूब! यहाँ हर कोई उनको जानता है, यहाँ हमने पूरा जीवन बिताया है–ग्राधा गाँव हमारा सगा-सम्बन्धी है। वह सब किसी से भले ढंग से पेश ग्राने की कोशिश करते हैं।"

"ग्रोह ग्रच्छा?!"

"शायद यह एकदम सच नहीं। प्यारे, शायद तुम्ही ठीक हो। हमेशा वैसा कहाँ हो पाता है। वे उसकी पीठ पर सवार हो जाते हैं, मजबूर करते हैं: इतना ग्रनाज जुटाग्रो या इतना कपड़ा जमा करो या सड़क से बर्फ़ हटाने के लिए लोगों को इकट्ठा करो। ग्रौर सोचो, वह क्या कर सकते हैं? उनको लोगों के साथ जबर्दस्ती करनी पड़ती है, ग्रपने ही लोगों को लूटना पड़ता है।"

"तुम क्या सोचती हो? तुम्हारे ख़याल से हमलावर लूट-खसोट के ग्रलावा कुछ करेंगे?"

"वे तो करते ही हैं, करने दो, नरक में जायें! वे लॉरियों में ग्राये ग्रौर सारे सूग्रर ले गये। हमारी बछिया भी ले गये। उन्होंने कहा, यह सज़ा है, जर्मनी को पहुँचाये गये नुक़सान की सज़ा है क्योंकि हमारा बेटा लाल सेना में है... मिट्टी में मिल जाये उनका जर्मनी!"

"जली-भुनी तो तुम जितनी भी सुना लो, प्यारी, मैं तुम्हारा विश्वास करनेवाला नहीं," उसने तन्द्रिल भाव से सोचा, पाँव उसने सावधानीवश ग्रभी भी फैला रखे थे। उसे याद था, उस ग्रौरत ने भी मेज़ लगाकर रोटी के टुकड़े करते हुए, जर्मनी को इसी तरह कोसा था। सूग्रर की चर्बी ग्रौर दूध लाने वह कई बार गलियारे में गयी थी। सोत्निकोव मुँह से लार टपकाते मेज़ के पास खाने की चीज़ों के ग्राने की प्रतीक्षा करता मूर्खों-सा बैठा था। हाँ, उसे एक बार हल्की ग्रावाज़ में किसी को बुलाते जरूर सुनाई दिया था, फिर दबी-दबी बातचीत भी कानों में पड़ी थी लेकिन तभी किसी बच्चे की निद्रालस ग्रावाज़ सुनकर उसे तसल्ली हो गयी थी। इसके ग्रलावा, जब ग्रौरत वापस ग्रायी थी, एकदम शान्त व पहले जैसे दोस्ताना ग्रन्दाज़ में थी। उसने सोत्निकोव के लिए मग में दूध डाला फिर

सूअर के गोश्त के टुकड़े किये। उस की सहृदयता से सोत्निकोव की आँखें लगभग भर आयीं, वह गोश्त के टुकड़े दाँतों तले कुतरने लगा, साथ में दूध के घूँट भी भरता जाता। उसी क्षण वह जहाँ का तहाँ ढेर हो गया होता अगर किसी सहज प्रेरणावश उसने भयभीत होकर फूलदार गमलों से आधी ढँकी खिड़की के शीशे से बाहर की ओर नहीं झाँका होता। उसकी तो धड़कन ही रुक गयी: सड़क पर बन्दूक लिये और बाँहों पर पट्टी लगाये दो आदमी चले आ रहे थे। उनके साथ एक आठ साल की लड़की तेज़ क़दमों से चलती और उन्हें कुछ समझाती चली आ रही थी।

दुर्भाग्यवश, अपनी अत्यन्त किंकर्तव्यविमूढ़ता के कारण वह उस "सहृदय" औरत से कुछ नहीं कह पाया। बस उसे एक ओर धकिया कर उसने खिड़की से बाहर बाग़ में छलाँग लगा दी थी। पेट के बल रेंग कर उसने अहाता पार किया और चरागाह में वह जा पहुँचा फिर घाटी में लुढ़कता चला गया। उसे अपने पीछे गोलियों के चलने, चीख़ने व गालियाँ बकने की आवाज़ सुनाई दी और घाटी से यक़ीनन उसे औरत की आवाज़ पहचान में आ रही थी: कर्णकटु और एकदम बदली हुई, वह पुलिसवालों को बता रही थी कि सोत्निकोव किधर झाड़ियों में ग़ायब हुआ था।

और अब यह थी, उस पर "प्यार व स्नेह बरसाती।"

आँगन से कोई भी अशुभकारी आवाज़ नहीं सुनाई देने के कारण मुखिया की बीवी थोड़ी-थोड़ी शान्त हो चली। वह उसके ठीक सामने बेंच पर कोने में बैठ गयी।

"प्यारे, तुम नहीं जानते, ऐसा वह अपनी इच्छा से नहीं करते हैं। गाँववासियों ने ही अनुरोध किया था। उन्होंने इस ज़हमत से पीछा छुड़ाने की बड़ी कोशिश की। लेकिन तभी शहर से कोई पत्र आ पहुँचा, गाँवों के मुखियों को किसी बैठक के लिए बुलाया गया था। और यहाँ लियासिनी में कोई भी मुखिया न था। सो, लोगों ने उनसे कहा: "तुम्हीं जाओ प्योत्र, तुम जर्मनी में लड़ाई के क़ैदी भी रह चुके हो।" और वह भी पहले महायुद्ध में, ज़ारशाही के ज़माने में। क़ैदी के रूप में दो साल तक जर्मनी में रहकर उन्होंने जर्मनों के लिए काम किया था। "तुम उनके रंग-ढंग जानते हो," लोगों ने कहा, "इसलिए जबतक हमारे लोग यहाँ वापस नहीं आ जाते, दो-चार महीनों तक यह बोझ सम्भालो। नहीं तो जर्मन बुदिला को मुखिया बना देंगे और फिर मुसीबतों का कोई अन्त नहीं

रहेगा।" बुदिला भी यहीं लियासिनी का रहनेवाला है लेकिन समझ लो, बड़ा भयावह आदमी है। लड़ाई से पहले वह कोई बड़ा अधिकारी था, एक गाँव से दूसरे गाँव का दौरा करता रहता था—उस समय भी लोग उससे बहुत ख़ौफ़ खाते थे। अब उसे पुलिस में काम मिल गया है। और उसके तो दोनों हाथों में लड्डू ही हैं!"

"ज़रूर एक दिन गोली सीने के पार हो जायेगी।"

"होने दो, कम से कम हमें तो छुटकारा मिल जायेगा—शैतान को छोड़कर किसी की आँखें गीली नहीं होंगी ... तो तुम समझ ही रहे हो, प्योत्र कैसे झमेले में फंस गया, मूर्खतावश उसने मुखिया का काम सम्भाल लिया। खुद मुसीबत मोल ले ली। क्या तुम सोचते हो, उसे जर्मनों की चमचागिरी में आनन्द मिलता है? कोई भी दिन ऐसा नहीं बीतता जब उसे वे बन्दूक की नोक पर धकियाते और धमकाते नहीं—चाहें उन्हें वोद्का की जरूरत हो या किसी और चीज़ की। बेचारे का जीवन दूभर है, अन्यथा मत सोचो। एकदम असह्य स्थिति है।"

जागते रहने की भरसक कोशिश करता, सोत्निकोव अँगीठी के पास अपनी सिंकाई करता बैठा था। खाँसी से नीन्द पर क़ाबू पाने में बड़ी मदद मिली। अगर वह थोड़ी देर के लिए थमती थी तो दोबारा इतनी तेज़ी से आती कि उसे सिर फटता महसूस होता। वह बस एक कान से औरत की बातें सुनता जा रहा था, उसकी शिकायतों पर अधिक ध्यान देने की उसकी कोई इच्छा न थी। वह किसी भी ऐसे आदमी के प्रति सहानुभूति जताने में असमर्थ था जिसने जर्मनों की चाकरी कर ली हो, चाहे उसे चाकरी में कितनी भी दिक़्क़तें क्यों नहीं पेश आती हों। प्रतीयमान परिस्थितियों की उसे कोई चिन्ता नहीं थी, अपने अनुभव से उसे इनकी अच्छी जानकारी थी। फ़ासिज़्म के विरुद्ध जब जीवन-मरण की लड़ाई चल रही हो, वाजिब से वाजिब कारण भी कोई मायने नहीं रखते थे। इन सभी कारणों को नज़रअन्दाज़ करके ही विजय पायी जा सकती थी। अपनी पहली लड़ाई के समय ही उसे इसका अहसास हो गया था और अभी तक उसका विश्वास वैसा ही बना था और लड़ाई की सारी जटिलताओं के बावजूद वह इन्हीं की बदौलत अपने आदर्शों पर टिका रह पाया था।

अचानक सोत्निकोव को लगा, उसने पलकें झपका ली थीं। जोर लगाकर उसने पैरों पर उठ खड़ा होने की कोशिश की लेकिन लड़खड़ाहट में

लगभग दीवार से जा टकराया। औरत चौंककर उस की मदद को आगे बढ़ आयी। उसने सोत्निकोव को ज़मीन पर गिर पड़ी बन्दूक उठाने में किसी तरह मदद की। सोत्निकोव ने मन ही मन में खुद को बड़ी गालियाँ दीं।

"क्या बात है, प्यारे? क्यों, तुम बीमार हो क्या? हे भगवान, तुम्हें तो लेटना चाहिए। तुम्हारे सीने में ठण्ड लगी है। एक मिनट ठहरो, मैं अभी तुम्हारे लिए एक दवा उबाल लाती हूँ।"

अकृत्रिम चिन्ता के साथ वह अँगीठी के पीछे तेज़ी से चली गयी। बर्तनों के खड़कने की आवाज़ आयी। निश्चय ही सूरत से दयनीय लगता होगा, तभी तो औरत इतनी चिन्तित हो उठी थी, सोत्निकोव ने सोचा।

"परेशान होने की कोई ज़रूरत नहीं, मैं बिलकुल ठीक हूँ।"

सच में उसे खाने, पीने या किसी भी चीज़ की इच्छा नहीं हो रही थी—बस वह चुपचाप अँगीठी की गरमाहट में बैठा रहना चाहता था।

"तुम ठीक हो? क्या मतलब है तुम्हारा? तुम बीमार हो, बेटे, इसमें कोई सन्देह नहीं। मुझे काफ़ी देर से यह बात महसूस हो रही थी। अगर तुम्हें जल्दी है, इन सूखी रसबदरियों को अपने पास रख लो, बाद में उबालकर पी लेना। एक ख़ुराक तो अभी ही पी डालो ... यह लो... ।"

"मैं कहता हूँ न, मैं बिलकुल ठीक हूँ।"

अँगीठी पर से छोटी-छोटी थैलियों से निकालकर वह औरत कुछ देने लगी लेकिन सोत्निकोव ने इनकार कर दिया। औरत के प्रति उसके ख़्यालात अच्छे न थे, वह उससे हमदर्दी या मदद की इच्छा नहीं रखता था। तभी गलियारे में किसी के भारी क़दमों से चलने की आवाज़ आयी, रिबाक ने पुकारा था और मुखिया दरवाज़े के पास से कमरे में झाँक रहा था।

"आओ, तुम्हें तुम्हारा दोस्त बुला रहा है।"

वह उठ खड़ा हुआ, सिर में भिनभिनाहट हो रही थी। अंधेरे गलियारे में दुर्बल चाल से लड़खड़ाता वह आगे बढ़ गया। खुले दरवाज़े से उसे बर्फ़ भरे आँगन में रिबाक खड़ा दिखाई दिया। रिबाक के सामने ज़मीन पर एक मरी भेड़ पड़ी थी। शायद वह उसे कन्धों पर उठानेवाला था।

"ठीक है, अब तुम अन्दर जाओ," रिबाक ने मुखिया से कहा। उस की आवाज़ में पहले जैसी दुर्भावना न थी। "और दरवाज़ा बन्द कर लो। हमें जाते देखते रहने की कोई ज़रूरत नहीं।"

मुखिया शायद कुछ कहना चाहता था लेकिन प्रकट में कुछ बोले बिना वह मुड़कर घर की ओर चला गया, शायद उसने विचार बदल दिया था। बाहर का दरवाज़ा मज़बूती से बन्द हो गया, फिर कमरे का दरवाज़ा भी बन्द हुआ।

"उसे छोड़ रहे हो, क्यों?" सोत्निकोव ने भर्रायी आवाज़ में पूछा।

"जाने दो, बूढ़े चण्डाल को!"

ज़ोर लगाकर रिबाक ने भारी भेड़ को उठा कर कन्धों पर झटके से रख लिया। फिर वह सायबान के कोने-कोने आगे बढ़ चला। अछूती बर्फ़ से होकर वह परिचित बखार की ओर जा रहा था जो कुछ दूरी पर बर्फ़ की पृष्ठभूमि में काले धब्बे सा-खड़ा था।

सोत्निकोव उसके पीछे-पीछे घिसटता चल पड़ा।

५

सवेरे के अपने ही पदचिह्नों का अनुसरण करते हुए वे ख़ामोशी से चले जा रहे थे। काँटेदार तारोंवाले अहाते से घिरे बखार को पार करके वे ढलान के पास घनी झाड़ियों तक जा पहुँचे। गाँव में पूर्ण निस्तब्धता थी, किसी भी खिड़की से रोशनी की टिमटिमाहट नहीं आ रही थी। रात्रिकालीन शिथिलता में डूबी हिमाच्छादित छतें, दीवारें, अहाते और बाग़ों के वृक्ष अंधेरे में धूमिल दिखाई दे रहे थे। भेड़ को पीठ पर लादे रिबाक तेज़ी से आगे-आगे बढ़ रहा था—ललाट पर सफ़ेद धब्बोंवाली भेड़ का सिर लगातार उसके कन्धों पर झूल रहा था। शायद आधी रात बीत चुकी थी, चाँद शीर्ष पर पहुँच चुका था और उज्ज्वल, कुहरीले धूमिल वृत्त में चमक रहा था। तारे पहले से अधिक प्रभामान हो उठे थे और पैरों तले बर्फ़ की चरमराहट ज़्यादा गूँजने लगी थी—पाला पराकाष्ठा पर था। रिबाक को मुखिया के घर पर देर तक अटके रहने का खेद था लेकिन ख़ैर, समय बेकार नहीं गया था। उन्होंने आराम किया था, बदन गरमाये थे और सबसे बड़ी बात यह हुई थी कि वे ख़ाली हाथ वापस नहीं जा रहे थे। हालाँकि सत्रह आदमियों में एक भेड़ का गोश्त ज़्यादा दिनों तक चलनेवाला नहीं था लेकिन हर किसी को गोश्त का एक-एक बड़ा टुकड़ा ज़रूर मिल

जायेगा। उन्हें लम्बा रास्ता तय करना पड़ा था लेकिन कम से कम कुछ तो हासिल कर ही लिया था। अब उन्हें यक़ीनन सुबह तक वापस पहुँच जाना चाहिए।

बोझ उठाये वह लम्बे-लम्बे डग भर रहा था, रात के अंधेरे में पहले से परिचित रास्ते में अब अधिक सावधानी बरतने की चिन्ता उसे न थी। लेकिन अगर सोत्निकोव साथ न होता तो शायद काफ़ी रास्ता वह तय कर लेता। उसे छोड़ा भी तो नहीं जा सकता। सच में उस रात रिबाक को अपने साथी पर थोड़ा गुस्सा आया था लेकिन किया क्या जा सकता है, सोत्निकोव की ग़लती तो थी नहीं। ज़रा सोचो तो सही, अगर कहीं से उसे गर्म कपड़े मिल जाते तो वह निस्सन्देह इस समय ठीक हालत में होता और भेड़ को ढोने में मदद भी करता। पहले भेड़ का वज़न कुछ भी महसूस नहीं हुआ था लेकिन अब तो जैसे भारी से भारी होता जा रहा था। उसके वज़न से उसके कन्धे दबे जा रहे थे और उसे मजबूरन सिर नीचा रखना पड़ रहा था जिसके कारण आगे की ओर रास्ता देखना मुश्किल था। वह कभी भेड़ को इस कन्धे पर, कभी उस कन्धे पर रख रहा था जिससे बारी-बारी से कन्धों को थोड़ा आराम मिल जाये। इससे चलने में भी सुविधा हो रही थी।

काले फ़र का कोट आरामदेह व गर्म था। पोशाक लगभग नयी ही थी और इस कड़ाके की ठण्ड में काफ़ी सहायक सिद्ध हुई थी। इसके बिना कुछ कर पाने की बात भी वह नहीं सोच सकता था। यह हल्की थी और गर्म भी—वह पहनने का भी और रात में ओढ़ने का भी काम आ सकता था। इसके लिए वह वृद्ध अख़्रेम का शुक्रगुज़ार था। वृद्ध ने बड़ी उदारता से पोशाक उसे भेंट कर दी थी। बेशक, उसका यह उपहार अकारण न था। इस के पीछे सबसे बड़ा कारण ज़ोस्या थी। ज़ोस्या उसे (पूरे यक़ीन के साथ वह कह सकता था, बहुत चाहने लगी थी और जोड़ा भी शानदार ही था—हालाँकि क्षणिक—उनके प्यार को युद्ध की नज़र लग गयी थी।

काश, यह मुलाक़ात युद्ध के दौरान नहीं हुई होती। लेकिन अगर युद्ध नहीं होता तो वह ज़ोस्या से मिल ही कैसे पाता? पैदल सेना का सार्जेण्ट रिबाक जंगल के पास के उनके सूना-सा लगनेवाला गाँव कोर्चेव्का पहुँचता कैसे? शायद वह जीवन में इसके आसपास भी कभी नहीं आता—हाँ,

पतझड़ की मोर्चेबन्दियों के दौरान पास की सड़क से शायद गुज़रता ज़रूर। लेकिन जैसी कि स्थिति पेश आयी थी, रिबाक ज़ख़्मी पैर लिये वहाँ घिसटता हुआ पहुँचा था। ज़ख़्म पर गन्दी-सी क़मीज़ बँधी थी। उसने उनसे आश्रय की माँग की थी क्योंकि उसे भय था, दिन का उजाला होने पर जर्मन फिर कार्रवाई शुरू कर देंगे और खुली सड़क पर उसे जा पकड़ेंगे। और सच में ही वे आये। सुबह में मोटर-सायकिलों व घोड़ों पर आकर उन्होंने रणभूमि की छानबीन शुरू कर दी थी। रणभूमि लाशों से पटी थी। लेकिन वह सुरक्षित रूप से बखार में मटर के डण्ठलों के ढेर में छुपा था। रात-दिन रखवाली करते हुए ज़ोस्या व अख़्रेम ने हर तरह के ख़तरों से उसकी हिफ़ाज़त की। थोड़े समय बाद स्थिति शान्त पड़ गयी, नयी जर्मन व्यवस्था स्थापित कर दी गयी और तोपों की आवाज़ भी सुनाई देनी बन्द हो गयी। यह बात दिल तोड़नेवाली थी मानो जिस उद्देश्य के लिए वह ज़िन्दा रहा था, काम किया था, वह उद्देश्य ही ख़तम हो गया था। यह उसके लिए अवसादकारी दिन थे। इस गुपचुप जीवन में उसकी एकमात्र तसल्ली थी कोमल, गुदाज ज़ोस्या—हालाँकि यह तसल्ली भी क्षणिक थी।

स्वास्थ्य ने हमेशा उसका साथ दिया था और दूध-दही की कोई कमी न थी। उसके पैर का ज़ख़्म तो लगभग एक-आध महीने में ही भर गया था लेकिन चलते समय हल्की-हल्की पीड़ा होती थी। वह अपने आगामी कार्यक्रम के बारे में अधिकाधिक सोचता रहता। ख़ास तौर से जब उसने सुना कि ग्रीष्म के दौरान अपनी सफलताओं के बाद जर्मन अब मास्को जानेवाली सड़कों में जा फँसे थे और सब तरह के शोर-शराबे के बाद कि बोल्शेविक राजधानी किसी भी क्षण दुश्मनों के हाथों चली जानेवाली है, रिबाक को यह बात असम्भव प्रतीत हुई। मास्को कोई कोर्चेव्का गाँव नहीं था और उसकी रक्षा के लिए ज़रूर शक्ति बटोर ली जायेगी।

फिर उसी की तरह घेरेबन्दी के दौरान गुम अन्य लोग प्रकट होने लगे—कुछ ज़ख़्मों के भरने के बाद प्रतीक्षा कर रहे थे, कुछ खलिहानों व गाँवों में सफ़ाये से पहुँचे सदमों पर क़ाबू पाने के बाद। वे एकत्र होकर विचार करने लगे कि आगे क्या किया जाये, अपने-अपने हथियार किस तरह निकाले जायें। सबने जंगलों में जा छुपने का फ़ैसला किया क्योंकि वे कब तक उदार स्थानीय छोकरियों एवं अपनी अविवाहिता पत्नियों के साथ हाथ पर हाथ धरे समय बर्बाद करते रह सकते थे।

कोर्चेव्का से उसकी विदाई बड़ी कारुणिक थी। न तो अन्य लोगों की तरह उसने किसी चीज़ का वायदा किया था और न ही वहाँ से चुपके से खिसक जाने जैसा घटिया काम किया था। उसने सारी परिस्थिति उन्हें समझा दी थी और आश्चर्यजनक रूप से उन्होंने परिस्थिति को ठीक-ठीक समझ भी लिया था। उन्हें उसकी बात तनिक बुरी नहीं लगी थी। बेशक, ज़ोस्या थोड़ा रोयी ज़रूर थी लेकिन अब्रेम बोला था: "जब तुम्हें जाना है तो जाना है। यह लड़ाई है।" हालाँकि उनके कभी कोई बेटा नहीं था, उसने और चाची गानुल्या ने उसे बेटे की तरह विदा किया और रिबाक ने मौका मिलने पर उनसे सम्पर्क करने या उनके यहाँ आने का वायदा किया था। पिछली पतझड़ में वह उनसे मिलने गया भी था लेकिन चूँकि अब वह गाँव बहुत दूर था और मिलने की उसकी इच्छा भी बाक़ी नहीं रही थी, वह बाद में नहीं गया था। उसका विश्वास था, ऐसी आदत छोड़ देनी चाहिए। या शायद दिल का सच्चा लेना-देना तो हुआ नहीं था, बस एक आग-सी लगी और बुझ गयी। उसे कोई दुख नहीं था और वायदे नहीं करने के लिए उसे सन्तोष था। उसने उन्हें धोखा नहीं दिया था, झाँसे नहीं दिये थे, वह उनके साथ ईमानदारी व खुले दिल से पेश आया था! लोग चाहे जो सोचें लेकिन ज़ोस्या के बारे में उसका मन लगभग एकदम साफ़ था।

चाहे जानबूझकर या अनजाने में ही किसी को चोट पहुँचाना या परेशान करना उसे पसन्द न था। किसी के मन में अपने प्रति दुर्भाव देख उसे पीड़ा होती थी। हाँ, यह सच था कि कभी-कभी सेना में इससे बचा नहीं जा सकता था लेकिन जब कभी उसे अनुशासनात्मक कार्रवाइयाँ करनी होतीं, वह हमेशा सब का ख़्याल रखता, इकाई का फ़ायदा ध्यान में रखता। अब ठण्ड से पीड़ित सोत्निकोव को ही देखो। वह इस बात से क्रुद्ध है कि मुखिया को छोड़ दिया गया था। लेकिन रिबाक करे तो क्या! मुखिया को सज़ा देने की उसकी इच्छा ही नहीं हुई थी। क्या नुक़सान है, जीने दो उसे! बेशक, दुश्मन के प्रति कोई दया नहीं दिखानी चाहिए लेकिन प्योत्र उसे एकदम निरीह, चिरपरिचित गँवई क़िस्म का आदमी लगा था। ज़रूरत हुई तो दूसरे उसे थोड़े ही छोड़ देंगे।

जब कमरे के अन्दर अप्रीतिकर बातचीत चल रही थी, मुखिया को सबक़ सिखाने की हल्की-सी इच्छा रिबाक को हो आयी थी लेकिन बाद में

जब वे दोनों भेड़ को मार रहे थे, उसकी यह इच्छा धीरे-धीरे ख़त्म हो गयी थी। सायबान में घास-फूस, खाद और पशुओं की जानी-पहचानी बू थी, तीन भेड़ें पगलायी-सी इस कोने से उस कोने में भाग रही थीं। भौंहों के पास सफ़ेद धब्बेवाली एक भेड़ को मुखिया ने बालों से पकड़ ही लिया। फिर रिबाक ने बड़ी कुशलता से भेड़ की गर्दन थाम ली और उसे शिकार पकड़ने की अर्द्ध विस्मृत प्रसन्नता की अनुभूति हो आयी। फिर जब रिबाक ने भेड़ की गर्दन पकड़ ली, मुखिया ने भेड़ की गर्दन अलग कर दी। भूसे पर गिरकर भेड़ छटपटाने लगी। गर्म ख़ून से भूसा गीला हो गया। रिबाक को वैसी ही भय मिश्रित प्रसन्नता महसूस हुई जैसी बचपन में होती थी जब पतझड़ में उसके पिता इसी तरह एक-दो भेड़ों की गर्दन काटते थे और वह उनकी मदद करता था। सब कुछ वैसा ही था: सायबान में फैली बू, मृत्युभय से दोड़ती-भागती भेड़ें और ताज़ा ख़ून की तीखी गन्ध से भरी कुहरामय हवा...

झाड़ियों से जिस खुले मैदान में रिबाक आ पहुँचा था, वह अप्रत्याशित रूप से लम्बा-चौड़ा प्रतीत हो रहा था। इसे कम से कम वे लोग घण्टे भर से तो पार कर ही रहे होंगे। रिबाक को पूरे यक़ीन के साथ तो नहीं लेकिन ऐसा ज़रूर महसूस हो रहा था कि उन्हें कहीं सड़क पार करनी होगी — वही सड़क जिस पर वह बाहर निकलने के बाद थोड़ी देर तक चलते रहे थे और फिर ढलान शुरू हो कर सोते तक चली जायेगी। लेकिन काफ़ी समय बीत चुका था और उन्होंने कोई मील भर या उससे भी ज़्यादा दूरी तय कर ली थी और सड़क का कहीं कोई पता न था। उसे चिन्ता सताने लगी: कहीं सड़क पर ध्यान दिये बिना वे आगे तो नहीं बढ़ गये। अगर ऐसी बात हुई तो वे आसानी से भटक जायेंगे और समय रहते खड्ड की ओर बायें नहीं जा पायेंगे। अफ़सोस कि उसे इस इलाक़े का कोई अधिक ज्ञान नहीं था और चलते समय गुरिल्लों से ख़ास-ख़ास बातें भी वह नहीं पूछ पाया था। हाँ, सच है कि उसे तब ख़्याल भी नहीं आया था कि इतनी दूर आना पड़ेगा।

रुककर रिबाक सोत्निकोव की प्रतीक्षा करने लगा। वह काफ़ी पीछे छूट गया था और अन्धेरे में दुर्बलतापूर्वक लड़खड़ाता चला आ रहा था। नीले-सलेटी बादल ने चाँद को छुपाकर अन्धेरा कर दिया था। थोड़ी दूर से ज़्यादा कुछ नहीं दिख रहा था। बर्फ़ पर भेड़ को पटक कर रिबाक

ने बन्दूक उससे टिका दी और दुखते कन्धों को सीधा किया। एक-दो मिनट बाद सोत्निकोव डगमगाती चाल से रास्ता तय करता उसके पास आ पहुँचा।

"क्या हाल है? ठीक है?"

"मुझे खेद है, तुम्हें सब कुछ ख़ुद करना होगा। फ़िलहाल मैं तुम्हारी कोई मदद नहीं कर सकता।"

"तुम चिन्ता न करो, मैं सब कर लूँगा।" यह कहते हुए रिबाक ने विषय बदल दिया। "तुम्हारा क्या ख़्याल है, हम ठीक रास्ते पर चल रहे हैं?"

सोत्निकोव खड़ा हो सोचते हुए अन्धेरे में झाँकने लगा।

"मुझे तो ठीक ही लगता है। वह रहा जंगल।"

"सड़क कहाँ रह गयी?"

"यहीं पर कहीं होगी। अगर कहीं मुड़ न गयी हो तो।"

दोनों ख़ामोशी से अन्धेरे बर्फ़ीले फासले को देखने लगे और उसी क्षण हवा के अचानक उठे झोंके के साथ उन्हें दूर से आती हल्की-सी आवाज़ सुनाई दी। दूसरे ही क्षण उन्होंने खुरों की अस्पष्ट टाप महसूस कर ली। फ़ौरन वे हवा की ओर पलट पड़े और उन्हें दिखाई तो कम ही दिया लेकिन अन्धेरे में लगभग अस्पष्ट-सी हरकत उन्होंने भाँप ली। पहले तो रिबाक को अपने पीछा होने की आशंका हुई लेकिन उसने फ़ौरन महसूस कर लिया कि चाहे जो भी हो, वह पीछे से आने के बजाय उस सड़क से आ रहा था, जिसे वे दोनों नहीं ढूँढ़ पाये थे। धड़कते दिल से उसने बन्दूक कन्धे से टाँग ली। फिर भी अपनी सहज बुद्धि से उसने जान लिया था, आनेवाले कहीं दूर जा रहे थे हालाँकि वह निश्चित रूप से नहीं कह सकता था कि वे आनेवालों की नज़रों में पड़ने से बचेंगे या नहीं। नीचे झुककर उसने भेड़ की लाश कन्धों पर रख ली। आगे टीला था और उन्हें जल्दी से जल्दी वहाँ पहुँच जाना चाहिए, तभी वे नज़रों में आने से बच सकेंगे।

"चलो, हम उधर दौड़ पड़ें!" सोत्निकोव को आवाज़ दे वह दौड़ पड़ा।

अचानक उसके पैरों में एक नया हल्कापन आ गया था और ख़तरे के क्षणों में हमेशा की तरह उसका शरीर लचीला व दृढ़ हो उठा था। सहसा पाँच गज़ आगे ही उसे सड़क दिखाई दे गयी, पदचिह्न बर्फ़ में सीधे आर-

पार चले गये थे। अब वह जान गया था, घुड़सवार उसी सड़क से आ रहे थे और ध्यान से देखने पर वे दूर में चलते-फिरते धब्बों की तरह दिखाई देते थे। वाहन की हल्की चूँ उसे सुना दे रही थी: कोई स्लेज गाड़ी निर्मम गति से उनकी ओर बढ़ी आ रही थी। पल भर की दहशत पर क़ाबू पाते हुए रिबाक सड़क के पार दौड़ पड़ा जो उन्हें इतनी अप्रत्याशित व असामयिक प्रतीत हुई थी मानो कोई विस्फोटक सुरंग हो और तभी फ़ौरन उसे अपनी ग़लती भी महसूस हो गयी। सड़क पार किये बिना उसे तेज़ी से पीछे खिसक जाना चाहिए था! लेकिन अब ऐसे सोच विचार के लिए समय नहीं था। बर्फ़ की जमी परत में पैर धसाते वह ढलान के ऊपर दौड़ पड़ा। उसका कलेजा मुँह को आ रहा था—उसे किसी भी क्षण मुक़ाबले की चुनौती की आशा थी।

ऊपर पहुँचने से पहले उसने मुड़कर पीछे की ओर देखा। स्लेज गाड़ी अब सड़क पर साफ़ दिखाई देने लगी थी—दरअसल एक नहीं दो स्लेजगाड़ियाँ थीं—दूसरी ठीक पहली गाड़ी के पीछे थी। लेकिन स्लेज हाँकनेवाले उसे अभी तक दिखाई नहीं दिये थे और शोर मचाने की भी कोई आवाज़ न थी। आशा की प्रिय झलक उसे दिखाई दी: शायद वे किसान ही थे। हाँ, अगर उन लोगों ने कुछ कहा नहीं तो ज़रूर किसान ही होंगे—देर से गाँव लौट रहे होंगे। तो शायद उसकी सारी आशंकाएँ निर्मूल थीं। मन में उठे इस अचानक विचार से उल्लसित हो उसने कई बार राहत की साँस ली। फिर वह मुड़कर सोत्निकोव की ओर देखने लगा। बदक़िस्मती से वह थोड़ी ही दूर पर लड़खड़ाती चाल से चला आ रहा था। वह इतनी भी ताक़त नहीं जुटा पाया था कि सौ गज़ की दूरी दौड़कर तय करके ऊपर ढलान पर आ पहुँचता।

और तभी ग़ुस्से से भरी, धमकाती आवाज़ ख़ामोशी को तोड़ गयी।

"वहीं रुक जाओ! जहाँ हो, वहीं रुक जाओ!"

"ख़ूब रुकूँगा!" यह सोचते हुए रिबाक और तेज़ी से बर्फ़ के बीच से चल पड़ा। थोड़ी ही देर में वह टीले के ऊपर पहुँचकर ओझल हो जायेगा—थोड़ा आगे जाते ही ढलान शुरू हो जाती थी और अगर वहाँ पहुँच गये तो भाग ही निकलेंगे। लेकिन तभी स्लेज गाड़ियाँ रुक गयीं और कई आवाज़ें एक साथ उनके पीछे-पीछे आयीं:

"रुक जाओ! रुक जाओ, वरना हम गोली चला देंगे। रुको!"

अचानक रिबाक के मन में एक सबसे बुरी बात कौंध गयी: "आखिर हम फँस ही गये!" एकाएक हर चीज़ सीधी-सादी व जानी-पहचानी लगने लगी। टीले की चौड़ी चोटी को रिबाक लथपथ ढंग से पार करता आगे बढ़ चला। अब उसे एक ही बात सता रही थी, यहाँ से यथासम्भव दूर भाग लेना चाहिए। घोड़ों पर तो वे शायद ही पीछा कर सकेंगे और गोलियाँ चाहे जितनी चला लें, अन्धेरे में गोली लगने का डर कम ही था। कन्धे पर लदी भेड़ अब उसे कष्टदायी बोझ लगने लगी थी लेकिन फिर भी वह उसे लिये जा रहा था—किसी तरह बच निकलने की क्षीण आशा वह छोड़ना नहीं चाहता था।

जल्दी ही टीले की चोटी पार करके वह गिरते-पड़ते दूसरी ओर ढलान की तरफ़ दौड़ पड़ा। उसकी टाँगें उसे इतनी तेज चाल से भगाये लिये जा रही थीं कि उसे भेड़ के साथ लड़खड़ाकर गिर पड़ने की आशंका हो आयी। जर्मन बन्दूक का मूठ कुन्दे से टकराकर चोट पहुँचा रहा था, जेबों में कारतूस खनखना रहे थे। कुछ आगे उसे एक बड़ा-सा काला धब्बा दिखाई दिया—शायद झाड़ियाँ होंगी और यह सोचकर वह उसी ओर बढ़ गया। पीछे से आनेवाली आवाजें बन्द हो गयी थीं और अब तक गोलियाँ भी नहीं दागी गयी थीं। लग रहा था, वह और सोत्निकोव, दोनों ही किसी न किसी तरह उन लोगों की नजरों से बच निकलने में सफल हुए थे।

रिबाक ढलान के एकदम नीचे पहुँच गया। वहाँ बर्फ़ गहरी थी। तभी एक नया खटका मन में हुआ और उसने मुड़कर पीछे की ओर देखा। सोत्निकोव बहुत पीछे छूट गया था और किसी भी क्षण उसके पकड़े जाने की आशंका थी। लग रहा था जैसे अब उसे कोई जल्दी न थी: वह दौड़ नहीं रहा था बल्कि बर्फ़ीले अन्धेरे में घोंघे की तरह रेंग रहा था। और रिबाक किसी भी तरह उसकी मदद करने में असमर्थ था, बस अपने कॉमरेड के आगे बढ़ते रहने की वह आशा भर कर सकता था। उन्हें काले धब्बे की तरह दिखाई दे रही झाड़ियों तक ज़रूर पहुँच जाना चाहिए।

"रुक जाओ, नीच, डाकू! रुको!" गालियों से मिली-जुली आवाज़ें फिर पीछे से गरज उठीं।

तो वे तोबा करने से बाज़ नहीं आये थे! पीछे मुड़कर देखे बिना—कन्धे पर भेड़ होने के कारण पीछे मुड़ना मुश्किल भी था—रिबाक ने आवाजों से अन्दाज़ लगा लिया कि वे टीले की चोटी पर पहुँच गये थे और उन्होंने शायद देख भी लिया था। इस समय उनकी स्थिति बड़ी असुरक्षित थी, ख़ास तौर से सोत्निकोव की—उसे झाड़ियों तक पहुँचने के लिए अभी भी लम्बा रास्ता तय करना था। ख़ैर, जो हो सो हो··· हमेशा की तरह ख़तरे के क्षणों में अपनी-अपनी रक्षा करनी थी। युद्ध शुरू होने के बाद से ही कई बार रिबाक को उसकी टाँगों ने बचाया था।

अन्धेरे में झाड़ियाँ जितनी दूर महसूस हुई थीं, वे उससे कहीं अधिक दूर थीं। रिबाक अभी आधी ही दूरी तय कर पाया था कि पीछे से गोली चलने की आवाज़ सुनाई दी। निशानेबाज़ बड़े घटिया थे, यह बात उसने पीछे मुड़कर देखे बिना महसूस कर ली थी क्योंकि गोली उसके सिर से काफ़ी ऊपर से निकल गयी थी। और वह ख़ुद को गोलियों की वर्षा के बीच से झाड़ियों की ओर दौड़ाने को बाध्य था।

कड़े बालों की तरह ओलंडर की पत्रविहीन डालियों को बाहर निकली देखकर और गीली बर्फ़ के तले लथपथाते घास-गुच्छ को महसूस कर रिबाक को लगा, वह दलदली भूमि पर पहुँच गया है। झाड़ियों के एकदम सिरे पर पहुँचकर रिबाक घुटनों के बल बैठ गया, भेड़ कन्धों से नीचे फिसल कर गिर पड़ी। निस्सन्देह उसे यहाँ से आगे की ओर दौड़ पड़ना चाहिए लेकिन वह पर्याप्त शक्ति ही नहीं जुटा पा रहा था। पीछे से गोलियों के ज़ोरशोर से चलने की आवाज़ें आ रही थीं और रिबाक को महसूस हुआ, सोत्निकोव पीछा करनेवालों को रोके था। यह सोचकर रिबाक ने सबसे पहले राहत की साँस ली: इसका मतलब था, वह आसानी से भागकर झाड़ियों में से रास्ता तय कर सकता था। लेकिन पहले उसे पीछे की ओर नज़र डालकर स्थिति का जायज़ा ले लेना चाहिए। बन्दूक हाथ में लिये वह उठ खड़ा हुआ और दूर में उसे सोत्निकोव ढलान के एकदम नीचे धीमे-धीमे सरकते दिखाई दिया। लेकिन रात के अन्धेरे में यह अन्दाज़ लगाना मुश्किल था कि वह किस दिशा में सरक रहा था या सिर्फ़ वहीं पर इधर-उधर कर रहा था। टीले के ऊपर से दो-तीन बार गोलियों के चलने के बाद एक गोली बहुत क़रीब से चली और रिबाक ने जान लिया, गोली सोत्निकोव ने चलायी थी। लेकिन इस स्थिति में पुलिस के साथ गोलीबारी शुरू करने की बात उसकी समझ से बाहर थी। पीछा करनेवालों से बचने के लिए झाड़ियों का फ़ायदा उठाते हुए उन्हें बच निकलने की भरसक को-

शिश करनी चाहिए। लेकिन ज़ाहिर था, सोत्निकोव की समझ में यह बात नहीं आयी थी। लगता था, वह लेट गया था, सरक भी नहीं रहा था। लेकिन अगर वह गोली नहीं चलाता, उसे मरा ही समझ लिया जाता। शायद घायल हो गया था?

इस ख़्याल के आते ही, रिबाक ख़ौफ़ से भर उठा लेकिन वह कुछ कर भी तो नहीं सकता था। टीले के ऊपर से पुलिसवाले उसे साफ़ तौर से देख सकते थे हालांकि वे नीचे की ओर दौड़ नहीं रहे थे, वे उस पर गोलियाँ ज़रूर चला रहे थे। अगर वह सोत्निकोव की मदद को जाये तो निस्सन्देह, वे दोनों को निशाना बना लेंगे। फ़िनिश युद्ध के दौरान वह कई बार यह देख चुका था जब छिप कर मार करनेवाले मिनटों में चार-पाँच आदमियों को मार डालते और यह बड़ा आसान भी था। जब किसी को गोली लगती, उसके पीछेवाला मदद के लिए फ़ौरन दौड़ पड़ता और ख़ुद शिकार हो जाता। और फिर यह जानते हुए कि गोली लग जायेगी, तीसरा भी दौड़ पड़ता–दम तोड़ते साथी की मदद की कोशिश किये बिना वह रह नहीं सकता।

इसलिए मौक़े का फ़ायदा उठाकर उसे भाग जाना चाहिए। सोत्निकोव के बचने की तो उम्मीद थी ही नहीं। यह फ़ैसला करके बिना अधिक मीन-मेख निकाले रिबाक बन्दूक कन्धे पर डाल, ज़ोर लगाकर भेड़ को कन्धे पर रख घास-गुच्छ पर लड़खड़ाता दलदल के किनारे सरपट भाग चला।

वह शायद काफ़ी दूर चला आया था और दुबारा रुकना चाहता था। गोलीबारी थम चुकी थी और कान लगाकर सुनने के बाद उसने राहत की साँस ली–अब तक सब ख़त्म हो चुका होगा। लेकिन एक या दो मिनट बाद ही दुबारा गोलियाँ चलने लगीं। तीन गोलियाँ चलीं और एक गोली सनसनाती हुई दलदल के ऊपर से निकल गयी। तो सोत्निकोव अभी भी जिन्दा था। और एकाएक चली इन गोलियों से रिबाक एक नयी चिन्ता में पड़ गया। उसका भागना रुक गया, मन और अधिक खटके से भर उठा। भेड़ के बोझ से वह अभी भी दबा था और इसका मुलायम, लचीला बोझ उसे बड़ा ही हेय व बेतुका लग रहा था। फिर भी वह मशीनी ढंग से उसे ढोये जा रहा था, दिमाग़ दूसरी बातों में उलझा था।

क्षण भर बाद ही आगे उसे एक गड्ढा नजर आया–शायद किसी जमे सोते का किनारा था। बेशक उसे इसके पार चल देना चाहिए लेकिन जैसे ही उसने कोशिश की, पैर फिसल गये, भेड़ कहीं गिर पड़ी और वह पीठ के बल ढलान में फिसलता चला गया। नीचे पहुँचकर गालियाँ देते हुए वह उछलकर उठ खड़ा हुआ और हाथों से बर्फ़ को टटोलता रेंगकर ढलान के पास पहुँचा। ऊपर पहुँचकर यह बात मन में बैठ गयी कि वह भाग कर नहीं जा सकता। अपने साथी को पीछे छोड़कर वह नाचीज़ भेड़ के लिए कैसे लगा रह सकता था? सोत्निकोव अभी भी ज़िंदा था और अपनी गोलियों से लगातार उसे इसकी याद दिला रहा था। जब हादसा पेश आ ही गया तो अपनी जान पर खेलकर वह रिबाक को लौट जाने में मददकर रहा था–हालाँकि उसकी हालत ख़ुद भी बड़ी बुरी थी। वह ख़ुद तो नहीं भाग सकेगा लेकिन रिबाक आसानी से बच निकलेगा–अब रिबाक को पकड़ना मुश्किल ही था।

लेकिन वापस पहुँचकर रिबाक क्या कहेगा?

उसका पहले का इरादा अभी भी स्पष्ट था और अपने ही आप को कोसते हुए, हड़बड़ाकर, गड्ढे के किनारे धँस गया। झाड़ियों से परे दूर में एक और गोली चली, फिर टीले के ऊपर ख़ामोशी छा गयी। "शायद वहाँ कुछ हो गया?" रिबाक ने सोचा। वह काफ़ी देर तक इसी स्थिति में चुपचाप पड़ा रहा। इस बीच उसका नया इरादा पक्का हो चुका था और वह उछलकर उठ खड़ा हुआ।

अब कुछ और न सोचने का फ़ैसला कर वह अपने ही पदचिह्नों को ढूँढ़ता तेज़ चाल से चल पड़ा।

६

गोलीबारी शुरू करने का सोत्निकोव का कोई इरादा न था। बात यह थी कि वह ढलान पर भहराकर गिर पड़ा था, उसका सिर घूम रहा था, आस-पास की हर चीज़ उसे तैरती-सी महसूस हो रही थी और उसे आशंका हो आयी कि वह फिर दुबारा नहीं उठ पायेगा।

यहाँ से उसे कन्धे पर भेड़ लिये झाड़ियों की ओर यथासम्भव तेज़ी से भागता रिबाक साफ़-साफ़ दिखाई दे रहा था। लेकिन सोत्निकोव ने उसे आवाज़ नहीं दी क्योंकि अब बच निकलना असम्भव था। थकान से चूर

वह बर्फ़ पर हाँफता तब तक पड़ा रहा जब तक उसे पीछे से आती आवा सुनाई नहीं देने लगीं। उसने महसूस कर लिया था कि पीछा करनेवाले अब उस तक पहुँचनेवाले ही हैं। चाहे एक ही मिनट को सही, सिर पर आते ख़तरे को टालने के लिए उसने हाथों से टटोलकर बन्दूक उठा ली और अन्धेरे में गोली दाग़ दी। पीछा करनेवाले कम से कम जान तो लेंगे कि वह आसानी से उनके हाथ आनेवाला नहीं!

उसकी गोली का थोड़ा असर दिखाई दिया। वे जहाँ के तहाँ रुक गये थे या उसे ऐसा ही प्रतीत हुआ। वह सोच रहा था, अवसर का लाभ उठाते हुए वह भाग निकलने की कोशिश करे! वह जानता था, बच निकलने की आशा कम ही थी। फिर भी अशक्तता पर क़ाबू पाने की कोशिश करते हुए वह बन्दूक़ के सहारे उठ खड़ा हुआ। तभी पीछा करनेवाले उसे अप्रत्याशित रूप से एकदम निकट में प्रतीत हुए टीले की चोटी पर स्थिर परछाँइयाँ दिखाई दीं। शायद उन्होंने भी उसको देख लिया था क्योंकि उनमें से एक कुछ बोला था और सोत्निकोव ने निशाना लेने की परवाह किये बिना दुबारा गोली चला दी। उसने देखा, तीनों के तीनों पलक झपकते ज़मीन पर लोट गये थे या घुटनों के बल बैठ गये थे जिससे सोत्निकोव की गोली उन्हें न लगे। उधर सोत्निकोव घिसटता हुआ ढलान के नीचे चल पड़ा, उसके नमदे के बुटों से बर्फ़ में हल रेखा-सी बन गयी थी और किसी भी क्षण मुँह के बल गिर पड़ने की आशंका उसे हो रही थी। रिबाक काफ़ी दूर जा चुका था – लगभग झाड़ियों तक। लग रहा था, वह ज़रूर बच निकलेगा। सोत्निकोव अपनी सारी शक्ति बटोरकर टीले से अधिक से अधिक दूर चला जाना चाहता था लेकिन वह सौ गज की दूरी भी नहीं तय कर पाया होगा जब पीछे से गोलियों की बौछार शुरू हो गयी।

अब गिरा या तब, यह महसूस करते हुए भी वह कुछ देर दौड़ता चला गया – दाहिने कूल्हे में उसे तेज़ टीसता दर्द महसूस हो रहा था और कोई गर्म व लसदार-सी चीज़ घुटनों से होकर बूट में टपक रही थी। एक या दो क़दम आगे बढ़ने के बाद ही उसका दाहिना पैर मन-मन भर का हो उठा, वह पैर एकदम संज्ञाहीन हो गया था। पल भर बाद ही वह भहराकर बर्फ़ पर गिर पड़ा। लेकिन उसे अब तेज़ पीड़ा नहीं महसूस हो रही थी, सिर्फ़ सीने में असह्य गर्मी व घुटने के ऊपर पैर में तेज़ जलन हो रही थी। पतलून एक ओर से बिलकुल गीली हो गयी थी। जहाँ गि-

रा था, वहीं लेटा-लेटा वह अपना निचला होंठ तब तक चबाता रहा जब तक होंठ दुखने नहीं लगा। पहले जैसी भय व दुख की अनुभूति अब उसे नहीं रही थी; आसन्न मृत्यु का साफ़, सुलझा व अजीब-सा निरासक्त बोध भर रह गया था। हाँ, इस तरह अचानक व अप्रत्याशित रूप से मौत के आ पहुँचने पर उसे थोड़ा-थोड़ा आश्चर्य ज़रूर था। एकदम निराशाजनक परिस्थितयों में भी वह प्रायः मौत को धोखा दे जाता रहा था। लेकिन अब धोखा नहीं दिया जा सकता था।

उसे फिर पीछे से आवाज़ें सुनाई दीं। निस्सन्देह, पुलिसवाले उसे ज़िंदा या मुर्दा पकड़ने के लिए अपना घेरा तंग करते आ रहे होंगे। पैर में निरन्तर बढ़ते दर्द के साथ अपनी कमज़ोरी पर क़ाबू पाने की भरसक कोशिश करते हुए वह बैठ गया। ओवरकोट, नमदे के बूट, आस्तीन व घुटने बर्फ़ की परत से जम गये थे और घुटने के ऊपर पतलून पर ख़ून का नम धब्बा फैलता जा रहा था। लेकिन उसने इस ओर अब ध्यान ही देना छोड़ दिया था। बन्दूक का बोल्ट खींचकर ख़ाली कारतूसों को फेंक उसने दुबारा बन्दूक में गोलियाँ भर लीं।

धूमिल परछाँइयों की तरह वह तीन व्यक्तियों को ढलान से नीचे की ओर हिचकिचाते हुए बढ़ते देख रहा था – एक आदमी थोड़ा आगे-आगे चल रहा था। दाँत भींचकर, ज़ख्मी पाँव को सावधानी से बर्फ़ पर फैलाने के बाद वह निशाना लेने लगा – अब वह पहले से अधिक सतर्कता से निशाना ले रहा था। जब दूर में गोली की आवाज़ धीरे-धीरे क्षीण पड़ गयी, उसे तीनों के तीनों ढलान पर लोटते दिखाई दिये और फ़ौरन ही रात की ख़ामोशी में उनकी बन्दूक़ों से गोलियों की मन्द आवाज़ें गूँज उठीं। उन्हें ज़मीन पर लोटने को मजबूर करके, अपने वजूद का अहसास कराके उसे सन्तोष महसूस हुआ। अपने पीड़ादायक भीम-प्रयास से थककर उसने बन्दूक के मूठ पर अपना ललाट टिका दिया। थकान के मारे वह उनकी हरकतों को देखते रहने या ख़ुद को बर्फ़ में छुपा लेने में असमर्थ था। वह ज़रूरत पड़ने पर दुबारा गोली चलाने के लिए शक्ति जुटाता बस ख़ामोशी से वहीं पर लेटा रहा। ढलान से उन तीनों ने अपनी बन्दूक़ों से फिर उस पर गोलियाँ चलायीं। कई बार उसे गोलियों की आवाज़ें सुनाई दीं – एक तो उसके सिर पर से सनसनाती निकल गयी और दूसरी उसकी कोहनी के पास बर्फ़ से आ टकरा-

यी – गोली ने उसके चेहरे पर बर्फ़ की वर्षा-सी कर दी। उसने उधर सिर उठाकर भी नहीं देखा। चलाते रहें गोली – वह बेकार की चिन्ता में पड़नेवाला नहीं था – मार डालेंगे तो मार डालें··· लेकिन जब तक वह ज़िन्दा रहेगा, उन्हें गिरफ़्त में नहीं लेने देगा।

लड़ाई में मौत का भय उसे न था – दर्जनों बार इससे भी अधिक निराशाजनक परिस्थितियों में वह काफ़ी भयभीत हो चुका था – अब क्या डर! दूसरों पर बोझ बनना तो और भी बुरी बात थी – जैसे एक बार उनका प्लाटून कमाण्डर भ्रमाचेंको बन गया था। किज़ोव्स्की जंगल में गत पतझड़ में उसके पेट में गोली लगी थी और उन लोगों को दलदलों के बीच से उसे ढोते ले जाने में बड़ी कठिनाइयाँ हुई थीं, ताज़ीरी पुलिस के चक्कर से भी बचते रहने की कोशिश उन्हें करनी पड़ी थी जबकि हर किसी को ख़ुद ही जान के लाले पड़े थे। और जब वे शाम को आख़िर किसी तरह सुरक्षित स्थान पर पहुँच गये तो भ्रमाचेंको चल बसा।

सोत्निकोव को सबसे ज़्यादा भय इसी का था, हालाँकि लग रहा था, ऐसी बात उसके साथ नहीं होगी। वह भागने में तो शायद सफल नहीं हो पायगा लेकिन अभी तक होश में था और सबसे बड़ी बात थी कि हाथ में हथियार था। उसका पैर नीचे से ऊपर तक एकदम बेजान हो गया था। अब उसे गर्म-गर्म ख़ून का बहना भी महसूस नहीं हो रहा था – हालाँकि ख़ून तो काफ़ी बह रहा होगा। कुछ गोलियाँ चलाने के बाद ढलान के ऊपरवाले लोग अब रुककर इन्तज़ार कर रहे थे। लेकिन तभी उनमें से एक उठ खड़ा हुआ। दूसरे जहाँ के तहाँ लेटे रहे। खड़ा होनेवाला आदमी बिजली की गति से किसी काली परछाँई की तरह ढलान से थोड़ा नीचे की ओर खिसक आया फिर ज़मीन पर लोट गया। सोत्निकोव ने बन्दूक पर अपनी जकड़ मज़बूत कर दी और उसे लगा, हाथ बड़े कमज़ोर हो गये थे। और फिर, पैर भी अब पहले से ज़्यादा दुखने लगा था। पता नहीं क्यों घुटने में और नीचे के कण्डरे में पहले से अधिक दर्द पैदा हो गया था जबकि गोली तो कूल्हे में लगी थी। दाँत भींचकर वह बायीं करवट हो गया जिससे ज़ख़्मी पैर पर बोझ कम हो जाये। तभी दूसरी परछाँई ढलान से नीचे खिसकी। तो बक़ायदा सेना के नियमों का पालन करते हुए वे थोड़ा-थोड़ा करके उसकी ओर बढ़ रहे थे! थोड़ी प्रतीक्षा के बाद जैसे ही तीसरा उठा, सोत्निकोव ने गोली चला दी। अन्धेरे में ठीक-ठीक

दिखाई देने की सम्भावना तो थी नहीं इसलिए निशाना अच्छी तरह लिये बिना उसने गोली चलायी थी। जवाब में कई गोलियाँ लगातार चलायी गयीं – कम से कम दस तो ज़रूर। जब गोलियों की आवाज़ें दब गयीं, जब से नये कारतूस निकालकर उसने फिर से बन्दूक भर ली। लेकिन उसे गोलियाँ हिसाब से ही चलानी होंगी क्योंकि अब उसके पास सिर्फ़ पन्द्रह बच रही थीं।

वह काफ़ी देर तक यूँ ही बर्फ़ पर पड़ा रहा होगा। उसका शरीर जमने लगा था, पाँव में दर्द भी पहले से अधिक हो रहा था। ठण्ड व ख़ून की कमी के कारण वह काँप भी रहा था। इस तरह इन्तज़ार करते रहना बड़ा पीड़ादायक था। अब वे एकदम ख़ामोश थे मानो उन्हें रात निगल गयी हो। ढलान पर फिर कोई परछाँई भी दिखाई नहीं दी थी। लेकिन वे उसे ज़िन्दा या मुर्दा पकड़ने की कोशिश ज़रूर करेंगे। उसे ख़्याल आया, कहीं वे उसकी ओर रेंगकर तो बढ़ नहीं आ रहे हैं। या शायद आँखें धोखा दे रही हों? कमज़ोरी के मारे आँखों के सामने काले-काले धब्बे नाचने लगे, उसे हल्की-सी उल्टी महसूस हुई। उसे बेहोशी का भय सताने लगा और कहीं वह सचमुच बेहोश हो गया तो आख़िर वही होगा जो उसे युद्ध में सबसे बुरा लगता था। उसे अपनी क्षीण शक्ति हर हालत में बरक़रार रखनी होगी – नहीं तो ज़िन्दा उनके हाथों में ज़रूर पड़ जायेगा।

सोत्निकोव ने सिर ऊपर उठाया। कुछ आगे अन्धेरे में कोई चीज़ हिली। कोई आदमी तो नहीं? लेकिन अगले ही पल यह जानकर उसे बड़ी राहत मिली कि हिलनेवाली चीज़ कुछ और नहीं, उसकी बन्दूक की नली के सामने हिलोरे लेती सूखी घास थी। फिर उसने अपना ज़ख़्मी पैर हटाया और दर्द के मारे निकलती चीख़ उसने किसी तरह गले में ही दबा ली – फिर थोड़ा-सा पैर को हिलाया। पंजे तो जैसे अपनी जगह अब थे ही नहीं। ख़ैर, गोली मारो पंजों को – फ़िलहाल उसे उनकी चिन्ता नहीं थी और फिर दूसरा पैर तो पूरी तरह सही-सलामत था।

शायद काफ़ी समय बीत चुका होगा – या शायद उतना नहीं – उसे समय का कोई अहसास ही नहीं रह गया था। अब उसे बस एक ही चिन्ता थी, कहीं ग़फ़लत में पकड़ा न जाये। इस आशंका से कि वे कहीं रेंगते हुए आगे बढ़े न आ रहे हों, उसने उन्हें दूर रखने के इरादे से बन्दूक उठाकर दुबारा गोली दाग दी। लेकिन किसी न किसी कारणवश पुलिसवाले समय जा-

या कर रहे थे और सोत्निकोव ने तय किया कि वे ढलान के नीचे खड्ड में पहुँच गये होंगे और फ़िलहाल उसे देख नहीं पायेंगे। उसने इससे फ़ायदा उठाने का फ़ैसला करके बड़े कष्टपूर्वक करवट बदली।

जमे बूटों को तो सामान्य स्थिति में भी पैरों से उतारना कठिन होता और इस समय तो लेटे-लेटे ही उसे यह काम करना था। पूरा ज़ोर लगाकर सोत्निकोव कूल्हों के बल बैठ गया और दाँतों पर दाँत जमाकर पूरी शक्ति से बूट उतारने की कोशिश करने लगा। लेकिन पूरा ज़ोर लगा देने के बावजूद कोई फ़ायदा नहीं हुआ और वह पल भर में ही थककर हाँफने लगा, ठण्डे पसीने से पूरा शरीर तर हो गया। थोड़ा सुस्ताने के बाद, इधर-उधर नज़र डालकर वह दुबारा बूट उतारने में लग गया।

पाँचवीं या छठी बार में उसे सफलता मिली: किसी तरह बूट उतर डालने के बाद पूरी तरह थककर वह बिना हिले-डुले कई मिनटों तक बर्फ़ पर पड़ा रहा। फिर अचानक यह महसूस करके कि बहुमूल्य समय बेकार जा रहा था, बूट नीचे फेंककर उसने सिर ऊपर उठाया। वहाँ कोई भी आदमी आगे नज़र नहीं आ रहा था। अब चाहें तो उस पर दौड़ पड़ें, वह ख़ुद को समाप्त कर डालने को तैयार था—नली ठुड्डी से लगाकर बस पंजे से बन्दूक का घोड़ा दबा देगा और काम तमाम। और ज़िन्दा उनकी पकड़ में न आने की बात सोचकर वह दुर्भावना से मुस्करा उठा। लेकिन उसके पास अभी भी दो राउण्ड गोलियाँ थीं: आख़िरी बार जमकर मुक़ाबला तो करेगा ही। उसने ख़ुद को थोड़ा ऊपर की ओर उठाया: दुश्मन कहीं वहीं पर ज़रूर होंगे। हवा में ग़ायब तो हो नहीं गये होंगे।

लेकिन पता नहीं क्यों वे दिखाई नहीं दे रहे थे। या शायद अन्धेरे में अब उसे कुछ दिखाई ही नहीं दे रहा हो। चाँद के फिर छुप जाने के कारण अब अन्धेरा चौगुना हो आया था। तो उसके जीवन का अन्त अन्धेरे में, इस खुले, बर्फ़ से ढके वीराने में, अकेले—बिना किसी संगी-साथी के होगा। निस्सन्देह, बाद में वे लोग उसे पुलिस स्टेशन ले जायेंगे और कपड़े उतारकर किसी ग़ैर मिसिल क़ब्र में दफ़न कर देंगे, किसी को कभी उसकी अस्थियों का भी पता नहीं चल पायेगा। जिस आम क़ब्र की बात कभी उसे ख़ौफ़ से भर देती थी, अब उसे एक अलभ्य स्वप्न, एक शानदार आरामगाह प्रतीत हुई। लेकिन यह सब तो छोटी-छोटी बातें थीं। मौत से पहले कोई अतृप्त इच्छा शेष न थी जिससे उसे दुख हो। हाँ, शायद इस बन्दूक का दुख ज़रूर होगा—इसने लड़ाई में हमेशा उसकी ईमानदारी से सेवा की थी। यह कभी जाम नहीं हुई थी, गोलीबारी के समय कभी भी इसके एक पुर्जे ने भी धोखा नहीं दिया था, हमेशा यह ठीक-ठाक ढंग से काम करती रही थी। कुछ के पास जर्मन सबमशीनगनें थीं जब कि वह कभी सेना में मिली अपनी बन्दूक का मोह नहीं छोड़ पाया था। लगभग आधे शरद तक इसने विश्वसनीय रूप से सुरक्षा प्रदान की थी और अब यह किसी न किसी पुलिसवाले के हाथ लग जायेगी।

उसका नंगा पाँव जमने लगा था। पाले से इसे बेजान नहीं होने देना चाहिए—नहीं तो बन्दूक का घोड़ा इससे कैसे खींच पायेगा? अपनी अशक्तता व पीड़ा से जूझते हुए उसने शरीर की स्थिति ठीक की और तभी उसे चोटी पर हरकत-सी दिखाई दी। हाँ, वह उसकी ओर बढ़ नहीं रही थी बल्कि पीछे लौट रही थी। दो हल्की परछाइयाँ धीरे-धीरे ढलान के ऊपर सरक रही थीं। थोड़ी ही देर में वे एकदम ऊपर जा पहुँचीं और सोत्निकोव की समझ में कुछ भी नहीं आया। उनके पीछे लौटने का कोई न कोई कारण तो ज़रूर ही होगा: वे स्लेज गाड़ियों की ओर लौट गये थे या मदद लेने गये थे। उसे इस बात का विश्वास तो हो नहीं सकता था कि उसे उसकी हालत पर छोड़ वे चलते बनेंगे। लेकिन इसमें कोई सन्देह भी नहीं था: वे सड़क की ओर लौट रहे थे।

तो वह अकेला रह गया था। लेकिन चाहे जो हो, वह खुले में ज़्यादा देर ज़िन्दा रहेगा भी नहीं और ठण्ड व ख़ून की कमी से धीरे-धीरे ख़ुद मौत की गोद में जा पहुँचेगा। मानो ऐसी यन्त्रणा से क्रुद्ध हो सोत्निकोव ने निशाना लगाकर गोली चला दी।

फ़ौरन उसे महसूस हो गया, उसके सन्देह अकारण थे। थोड़ी ही दूर पर जवाबी गोली गरज उठी। तो वे किसी को निगरानी के लिए छोड़ गये थे। अब इसमें कोई सन्देह नहीं रह गया था कि एक आदमी को उसकी निगरानी करने और भागने न देने के लिए छोड़कर व कुमक लाने चले गये थे। शायद उन्हें यह भी महसूस हो गया था कि वह घायल है और ज़्यादा दूर नहीं भाग पायेगा। तो उन्होंने सही-सही अन्दाज़ा लगा लिया था।

तो भी घटनाओं के इस नये मोड़ से उसे काफ़ी ख़ुशी हुई। एक को तो वह देख ले सकता था। हाँ, यह दुख की बात थी कि वह अपने प्रति-

द्वन्द्वी की स्थिति का जायज़ा नहीं ले सकता था—नीच बड़ी अच्छी जगह छुपा था। और रात के समय गोलियों की आवाज़ सुनकर उसकी सही-सही स्थिति का अन्दाज़ लगाना कठिन था। लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि पुलिसवाले ने उसे अपनी गोली की ज़द में ले रखा था। सोत्निकोव ने सिर उठाया नहीं कि गोली चली। तो उसे वहीं लेटे रहकर जम जाना था। उसका पूरा शरीर लगातार कँपकँपा रहा था और उसने समझ लिया, अब इस स्थिति में ज़्यादा देर तक रहा नहीं जा सकता।

लेकिन वह डटा रहा—हालाँकि उसकी आशा एक रहस्य ही थी जबकि क़िस्सा तमाम कर देना इतना आसान था। शायद भाग निकलने की नयी लालसा पैदा हो गयी थी? हाँ, बात तो यह थी—ख़ास तौर से अब जब कि उनका घेरा हल्का हो गया था। लेकिन कैसे? वह रेंग तो सकता नहीं था और सच तो यह था कि वह अपनी ज़ख्मी टाँग को हिलाने की भी कोशिश नहीं कर सकता था। इसके अलावा जो पैर ठीक-ठाक था, वह भी अब कड़ा पड़ने लगा था—यानी दरअसल अब वह बिना टाँगों वाला था—फिर भागा कैसे जा सकता था।

बर्फ़ पर अपनी बगल में बन्दूक रखकर, करवट ले वह सिर ऊपर उठाये बिना अपना बूट हाथों से टटोलने लगा। वह पास में ही बर्फ़ में दबा पड़ा था। बूट को अपनी ओर खींचकर, बर्फ़ झाड़ने के बाद वह उसे अपने बेजान पैर से टटोल-टटोलकर पहनने की कोशिश करने लगा। लेकिन उसे कोई सफलता नहीं मिली क्योंकि उसे पहनना उतारने से भी अब ज़्यादा मुश्किल था। उसने बूट में पैर डालने की कोशिश की ही थी कि सिर चकरा गया, कमज़ोरी व दर्द की लहर झेलने के प्रयास में पूरा शरीर तन गया। तभी बर्फ़ के जमी ज़मीन के पार से गोली की आवाज़ गूँज उठी। गोली फिर ढलान के नीचे से चलायी गयी थी। फिर दूसरी व तीसरी गोली भी चली। बर्फ़ीले कोच पर बल खाते, ऐंठते वह जूता पहनने की भरपूर कोशिश कर रहा था। जब बड़ी धकमपेल से बूट की औंगी में पैर थोड़ा-सा घुस गया, उसे बेहतर महसूस हुआ। ठुड्डी पर बर्फ़ के दंशकारी स्पर्श को कम करने के लिए उसने चेहरा दूसरी ओर फेर लिया।

अचानक उसे कहीं से कोई पुकारती आवाज़ सुनाई दी:

"सोत्निकोव! सोत्निकोव!"

पहले उसे मतिभ्रम प्रतीत हुआ। तो भी जब उसने पलट कर देखा,

अन्धेरे में सचमुच कोई चीज़ हिलती दिखाई दी मानो कोई रेंगता हुआ आगे बढ़ा आ रहा था और धीरे-धीरे लेकिन लगातार दुहराये जा रहा था:

"सोत्निकोव! सोत्निकोव!"

अरे, यह तो रिबाक है! अब सोत्निकोव उसकी चिन्तातुर धीमी आवाज़ साफ़-साफ़ पहचान गया था और फ़ौरन ही पीड़ादायक तनाव समाप्त हो गया। रिबाक का लौट आना अच्छा था या बुरा, वह तय नहीं कर पाया था (शायद अब उनके लौटने का मार्ग भी घेरा जा चुका है?) लेकिन सहसा उसे महसूस हुआ—चलो, एक मुहलत तो मिली।

७

वे रेंगकर घनी झाड़ियों तक पहुँचे। रिबाक आगे-आगे चल रहा था और सोत्निकोव पीछे-पीछे। यह फासला लम्बा, थकान भरा साबित हुआ क्योंकि सोत्निकोव बार-बार पीछे छूट जाता और किसी बर्फ़ीले गबड़े में धँस पड़ता। तब रिबाक उसके ओवरकोट का कॉलर पकड़कर आगे खींच। वह भी थककर चूर हो रहा था: उसे न सिर्फ़ सोत्निकोव की मदद करनी पड़ रही थी बल्कि दोनों बन्दूकें भी वही ढो रहा था। बन्दूकें बार-बार पीठ से गिरकर बर्फ़ में फँस जाती थीं। अन्धेरे कुहरे में चाँद के पूरी तरह घिर जाने के कारण रात अब पहले से अधिक अन्धकारमय हो गयी थी—शायद इसी कारण वे सकुशल यहाँ तक आ पहुँचे थे। हाँ, ढलान के नीचे से दो गोलियाँ ज़रूर चली थीं—शायद पुलिसवाले को अपने आगे कोई चीज़ हिलती-डुलती दिखाई दे गयी थी।

बहरहाल, किसी न किसी तरह वे घनी झाड़ियों के किनारे पहुँच गये और मुलायम बर्फ़ीले घास-गुच्छ पर लेट गये। ऑल्डर झाड़ियों की काली-काली डालें अन्धेरे में उन्हें अच्छी तरह छुपाये थीं। रिबाक पसीने से एकदम तरबतर था: उसकी आस्तीनों व कॉलर के पीछे बर्फ़ पिघल रही थी—रीढ़ के पास की जगह पसीने से चिपचिपी हो रही थी। उसे जीवन में शायद पहली दफ़ा इतनी थकान महसूस हुई थी। थकान के मारे सिर नीचे किये वह लेटा रहा। हाँ, वह जब-तब ढलान की ओर नज़र ज़रूर डाल लेता था—कहीं पीछा तो नहीं किया जा रहा। पुलिसवाले ने उन्हें देख

तो जरूर लिया था लेकिन पीछा करने की उसकी हिम्मत नहीं हुई थी: उसके खुद निशाना बन जाने का खतरा था।

"कैसी तबीयत है?" रिबाक ने पूछा। वह अभी भी हाँफ रहा था, अन्धेरे में भी उसके मुँह से निकलती गर्म भाप दिखाई दे रही थी।

"बहुत ख़राब," मुश्किल से सुनाई देती आवाज में सोत्निकोव बोला। सिर पीछे की ओर लटकाये वह पार्श्व के बल लेटा था, बर्फ़ से जमी टोपी कान तक कसी थी, जख़्मी पैर घुटने के पास से थोड़ा मुड़ा था और वह रह-रहकर काँप उठता। मन ही मन में रिबाक ने लानत भेजी।

"चलो, हम बढ़ते रहें। नहीं तो घेरकर वे हमें खड्ड में ही फाँस लेंगे।"

रिबाक घुटनों के बल बैठ गया लेकिन खड़ा होने से पहले उसने सोत्निकोव के गले से अपना मुड़ा-तुड़ा तौलिया निकालकर उसे थकान के मारे काँपते हाथों से अपने साथी के घुटने के ऊपर बाँध दिया। दर्द की अधिकता से सोत्निकोव ने कई बार झुरझुरी ली और चीख़ को गले से बाहर न निकलने देने के लिए साँस रोक ली। फिर पीठ के बल झुककर वह सोत्निकोव से बोला: "चलो, मुझे पकड़ लो।"

"ठहरो ज़रा, मैं शायद अपने ही आप चल लूं।"

बर्फ़ पर दुर्बलतापूर्वक बल खाते हुए, जख़्मी पैर को एक ओर रख एक घुटने के सहारे सोत्निकोव ने सतर्कता के साथ उठकर किसी तरह पैरों पर खड़ा होने की असफल कोशिश की।

"आओ, तुम्हें मदद की जरूरत है!"

बाँह के नीचे से पकड़कर रिबाक ने उसे सहारा दिया और आख़िर वह किसी प्रकार पैरों पर उठ खड़ा हुआ। जख़्मी पैर से वह लँगड़ाते और लड़खड़ाते हुए दो क़दम चला। रिबाक को बड़ी राहत महसूस हुई: अगर आदमी उठ खड़ा हो सकता है तो अभी भी आशा की जा सकती थी। जब वह रेंगकर सोत्निकोव के पास पहुँचा था, उसे घायल देखकर वह बहुत निराश हुआ था, वह उसकी मदद किस तरह कर पायेगा। अब धीरे-धीरे उसकी चिन्ता कम रही थी, वह पहले से अधिक आत्मविश्वास महसूस कर रहा था: शायद वे दोनों किसी न किसी तरह बच ही निकलेंगे।

रिबाक की मदद से सोत्निकोव धीरे-धीरे, कष्टपूर्वक एक-एक क़दम

करके बढ़ने लगा। अब वे गहरी गीली बर्फ़वाली अनघनी झाड़ियों से होकर गुज़र रहे थे। सोत्निकोव ने एक हाथ से रिबाक को और दूसरे से बर्फ़ की तरह ठण्डी ऑल्डर की डालियों को पकड़ते हुए, जख़्मी पैर से लँगड़ा-लँगड़ाकर यथासम्भव तेज़ चाल से चलने की कोशिश की। सीने में बुरी तरह खरखराहट हो रही थी और जब-तब वह खोखली, पीड़ादायक खाँसी खाँसने लगता, रिबाक भीतर ही भीतर उसकी खाँसी से ऐंठकर रह जाता। खाँसी की आवाज़ जरूर ही मीलों तक फैलती होगी! लेकिन वह बोला कुछ भी नहीं। अब वह सोत्निकोव से उसकी तबीयत के बारे में भी कोई सवाल नहीं कर रहा था–वह साँस लेने के लिए भी रुके बिना उसे घनी झाड़ियों के बीच से घसीट लिये जा रहा था।

झाड़ियों के परे ज़मीन सीधी ऊपर की ओर चढ़ती चली गयी थी। खड्ड और कुछ नहीं, बड़ी-सी जमी दलदल था। वे घिसटती चाल से उस पर आड़े-तिरछे चल पड़े और रिबाक को दम निकलता महसूस हुआ। अपने पर अधिकाधिक बोझ डालते सोत्निकोव को वह अब ज्यादा देर तक सहारा नही दे सकता था और थकान उसकी जान निकाले ले रही थी। दोनों के दोनों एक साथ बर्फ़ पर भहरा कर गिर पड़े। हर चीज से ग़ाफ़िल ज़ोर-ज़ोर से हाँफते हुए वे वहीं पड़े रहे। हां, रिबाक यह ज़रूर महसूस कर रहा था कि किसी भी पल पुलिसवाले उन्हें आ पकड़ेंगे और वह लगातार उनकी आवाज़ सुनने की प्रतीक्षा कर रहा था लेकिन उसका शरीर ज़र्रे-ज़र्रे में पैठ गयी थकान पर क़ाबू पाने में असमर्थ था।

पन्द्रह मिनट बाद जब उसकी साँस थोड़ी ठीक-ठीक चलने लगी, उसने करवट ली। सोत्निकोव उसकी बगल में पड़ा था, उसके दाँत बज रहे थे।

"कारतूस बचे हैं?"

"एक राउण्ड," सोत्निकोव खरखराती आवाज़ में बोला।

"पकड़ने की कोशिश करेंगे तो हम उन्हें दूर रहने पर मजबूर कर देंगे।"

"ज्यादा देर तक नहीं।"

रिबाक भी दरअसल यही सोच रहा था, बीस कारतूसों से ज्यादा देर तक मुक़ाबला नहीं किया जा सकता लेकिन कोई दूसरा चारा भी तो नहीं था। आत्मसमर्पण का तो सवाल ही नहीं उठता था, सो यथासम्भव मुक़ाबला करते रहेंगे।

"पुलिसवाले कहाँ से आ टपके?" विकट परिस्थिति के कारण उस पर गुस्से का नया दौरा पड़ गया था। "लोग ठीक ही कहते हैं: मुसीबतें ताँता लगाकर आती हैं।"

सोत्निकोव कुछ नहीं बोला, वह दर्द के कारण फूट पड़ती चीख़ को दबा रखने की भरपूर कोशिश कर रहा था। दाढ़ियों की खूँटियों पर जमे ओसकण व ठण्ड से नीले पड़े उसके पीड़ित चेहरे को देखकर रिबाक को वह किसी दूसरे लोक का प्राणी लगा और उसका माथा ठनक गया। उसके साथी की हालत सचमुच ही बुरी थी, उसने सोचा।

"तेज़ दर्द है?"

"हाँ, बहुत तेज़," सोत्निकोव बुड़बुड़ाया।

"अब तो हँसते-हँसते झेलना ही होगा," दया की बेमौक़े उभर आती अनुभूति को जबरन दबाते हुए रिबाक ने थोथा दिलासा दिया। फिर वह बर्फ़ पर उठ बैठा और आस-पास की स्थिति का ठीक से जायज़ा लेने लगा–जगह एकदम अपरिचित-ही लग रही थी। यहाँ से वहाँ तक खुला मैदान था। कुछ ही दूर पर पेड़-पौधे या झुरमुट थे। लेकिन जिस जंगल को वे इतनी बेताबी से ढूँढ़ते रहे थे, उसका कहीं कोई पता न था। झाड़ियों से भागते समय वे यहाँ से मुड़े थे, फिर वहाँ से और तभी उसे अचानक महसूस हुआ कि अपनी स्थिति से वे एकदम अनजान थे और कैम्प तक जाने का रास्ता भी उन्हें नहीं मालूम था।

इससे एक नयी चिन्ता पैदा हो गयी: अब अगर रास्ता भटक गये तो डूबते को तिनका का सहारा भी नहीं रह जायेगा। वह इस सम्बन्ध में सोत्निकोव से कुछ कहना चाहता था लेकिन सोत्निकोव तो हर चीज़ से, ठण्ड से भी बेख़बर पड़ा था। खुले में चलती हवा के कारण ठण्ड और भी असह्य होती जा रही थी। चलते समय गरमाये शरीर में अब पाला घुसने लगा था। थकान से ज़मीन पर लेटना पड़ गया था और यह सोचते हुए रिबाक निराशापूर्वक अपनी गन्तव्य दिशा की तलाश की कोशिश में चारों ओर घिरे अन्धेरे में झाँकने लगा।

इस जगह तक ला पहुँचानेवाले रास्ते को याद में लाने की बेकार कोशिश करते हुए, वह इस समस्या से जूझता रहा। जिन झाड़ियों के क़रीब पुलिस ने उन्हें देखा था, वहाँ से खिसक लेने को उसकी आत्मरक्षा की सहज प्रवृत्ति ने मजबूर किया था। यह आशा करने का प्रत्येक कारण था

कि पुलिस फिर उनके पदचिह्नों का पीछा करती वहीं से आयेगी, इसलिए उन्हें दूसरा रास्ता पकड़ना चाहिए।

जब यह इरादा पक्का हो गया, रिबाक ने उठकर दोनों बन्दूकें कन्धे पर टाँग लीं।

"क्यों, एक बार फिर चलें?"

सोत्निकोव पैरों पर खड़ा होने के लिए जूझने लगा और रिबाक ने फिर उसकी मदद की। लेकिन खड़ा होते ही सोत्निकोव ने अपनी कोहनी हटा ली।

"मेरी बन्दूक दे दो।"

"ख़ुद ले जा सकते हो?"

"कोशिश करूँगा।"

"ठीक है, कोशिश करो," थोड़ी राहत के साथ बन्दूक लौटाते हुए रिबाक ने सोचा। बन्दूक का सहारा लेते हुए सोत्निकोव ने क़दम आगे बढ़ाये और दोनों बहुत धीरे-धीरे बर्फ़ से ढके मैदान के पार चल पड़े।

घण्टे भर बाद दलदल काफ़ी पीछे छूट गयी थी और वे एक हल्की ढलान पर बिना कुछ देखे-समझे लथपथाते चले जा रहे थे। रिबाक ने महसूस कर लिया था, अब थोड़ी ही देर में उजाला हो जायेगा–रात ख़त्म हो रही थी और उनके पास समय कम था। अगर वे खुले में रहे और सुबह हो गयी तो भागने की कोशिश करने का भी मौक़ा नहीं मिलेगा।

फ़िलहाल, बर्फ़ गहरी नहीं होने के कारण उन्हें आगे बढ़ने में मदद मिल रही थी, अब उनके पैर पहले की तरह बार-बार धँस नहीं जाते थे। सब कहीं घास-गुच्छ झाँकते दिखाई दे रहे थे। कहीं-कहीं वे काफ़ी घने थे और रिबाक चौरस जगह से चलते हुए सावधानीपूर्वक उनसे बचने की कोशिश कर रहा था। हिमस्खलनों में भटक जाने के डर से उसने खड्ड में उतरने की कोई कोशिश नहीं की। सुरक्षा की दृष्टि से ऊपर रहना ही बेहतर था। लेकिन बर्फ़ पर उनके पदचिह्न एकदम स्पष्ट थे और जब रिबाक ने मुड़कर देखा तो उसे यह महसूस करके बड़ा धक्का-सा लगा कि इन पदचिह्नों के कारण तो उन्हें रात में भी आसानी से पकड़ा जा सकता था। उसने सोचा, चाहे सड़क कितनी भी ख़तरनाक हो और उन्हें चाहे उसके कारण जितना भी नुक़सान उठाना पड़ा हो, दुबारा उन्हें सड़क पर पहुँच जाना चाहिए। सिर्फ़ सड़क पर ही उनके पदचिह्न छुप सकते थे जिससे पुलिस पीछा करती कैम्प तक न पहुँच जाये।

यदाकदा झाड़ियों - निकुंजों तथा इक्के-दुक्के पेड़ोंवाला बर्फ़ीला मैदान घने अन्धेरे में छुपा था। एक जगह उसे कुछ हल्के काले धब्बे दिखाई दिये। रिबाक ने पास जाकर देखा। वह गोलाश्म था। सड़क का कोई नामोनिशान न था। ढलान के ऊपर की ओर उसने एक तेज़ मोड़ लिया। ऊपर की ओर जाना कठिन था लेकिन साथ ही यह उम्मीद भी थी कि ऊपर पहुँचने पर जंगल दिखाई दे जायेगा। वे जंगल में जा छुपेंगे क्योंकि पुलिसवाले एकाएक उसमें घुसने की हिम्मत नहीं कर पायेंगे बल्कि सोच-विचार के लिए रुक जायेंगे और इससे उन दोनों को पीछा करनेवालों से आगे-आगे भागते रहने का मौक़ा मिल जायेगा, थोड़ी दूरी बनी रहेगी।

यह पहला मौक़ा नहीं था जब रिबाक को ऐसी कठिन परिस्थिति से दो-चार होना पड़ रहा था लेकिन हर बार वह किसी न किसी तरह बच निकला था। यह उसकी गति व हिम्मत, तत्क्षण फ़ैसला लेने की उसकी योग्यता ही थी जो उसे हर बार बचा ले गयी थी। पता नहीं क्यों, पुलिस ने उसे एक बार फिर ऐसा मौक़ा दे दिया था और वह इसका सदुपयोग भी करता अगर सोत्निकोव साथ में नहीं होता। सोत्निकोव के कारण उसके हाथ-पाँव बंधे थे। ढलान पर पहुँचने से पहले ही सोत्निकोव को ज़ोरदार खाँसी का नौवीं बार दौरा पड़ा था। कई कई मिनटों तक वह लगातार खाँसता रहा था, उसका पूरा शरीर बुरी तरह खाँसी के झटकों के साथ-साथ हिल उठता मानो किसी चीज़ को वह जबरन खाँसकर बाहर निकाल डालना चाहता हो। रिबाक पहले ठहर गया फिर पलटकर उसने अपने साथी को बाँहों का सहारा देने की कोशिश की। लेकिन सोत्निकोव के पैर जवाब दे रहे थे, वह बुरी तरह कड़ी बर्फ़ पर झुका-सा जा रहा था।

"बहुत मुश्किल लग रहा है?"

"मुझे तो असम्भव लग रहा है।"

रिबाक कुछ भी नहीं बोला क्योंकि वह झूठा दिलासा या प्रोत्साहन नहीं देना चाहता था। ख़ुद उसे न तो यह मालूम था कि कैसे बचा जाये, न तो यह कि किस रास्ते से आगे बढ़ना चाहिए।

पल भर वह सोत्निकोव की ओर देखता खड़ा रहा जो पार्श्व के बल नीचे लेट गया था, ज़ख़्मी पैर मुड़ा था। उसके बारे में रिबाक के मन में मिली-जुली भावनाएँ उठ रही थीं: उसके दुर्भाग्य के प्रति स्वाभाविक दया (क्या बीमारी कम थी जो गोली भी लग गयी! और इसके साथ

ही परेशानी भरी झुंझलाहट कि सोत्निकोव ख़ुद तो मरेगा ही, उसे भी ले डूबेगा। अपने जीवन के प्रति भय की भावनाएँ इस भ्रान्तिजनक ऊहापोह में अधिकाधिक सबल हो रही थीं, कभी-कभी तो बाक़ी सभी भावनाएँ मिट ही जाती थीं। निस्सन्देह, वह इन भावनाओं से मुक्त रहकर यथासम्भव शान्तिपूर्वक आचरण की कोशिश कर रहा था। वह जानता था, यदि अपने जीवन के प्रति मोह ने उसे जकड़ लिया तो उसका संयम पूरी तरह जाता रहेगा। भय और ख़ौफ़ को उसने तरजीह दी कि एक के बाद दूसरी मुसीबत आयी। फिर तो सच में उनका काम तमाम होकर रहेगा। हालाँकि अभी परिस्थिति विकट थी, मौक़ा हाथ से शायद पूरी तरह निकल नहीं गया था।

"ठीक है। यहीं पल भर इन्तज़ार करो।"

सोत्निकोव को बर्फ़ पर जहाँ का तहाँ छोड़कर वह आसपास नजर दौड़ाने के लिए ढलान के ऊपर की ओर रेंग गया। उसे अभी भी टीले के परे जंगल के होने का पूरा यक़ीन था। रात में वे क़ाफ़ी दूरी तय कर चुके थे और अगर वे भटके नहीं हैं तो कहीं पास में ही जंगल होना चाहिए।

दुर्भाग्य से चाँद पूरी तरह विलीन हो गया था और साफ़ - साफ़ देखना कठिन था। रात तुहिनावृत कुहरे में डूबी थी और सुबह से पहले के घने अन्धेरे ने हर चीज़ अपने में समाहित कर ली थी। लेकिन एक बात निश्चित हो चुकी थी – आसपास कहीं भी कोई जंगल न था। टीले के परे गाँव का इलाक़ा था जहाँ बीच में हल्का भूरा सा धब्बा था। शायद कोई कुंज होगा लेकिन बहुत छोटा-सा। सर्वत्र घास-गुच्छ के काले-काले धब्बे फैले थे, झाड़ियों की धुँधली-सी परछाँइयाँ थीं। लेकिन बर्फ़ीले अन्धेरे में अचानक एक छोटी-सी सीधी रेखा पैदा होकर थोड़ी दूर जा कर विलीन हो जाती थी। रिबाक तेज़ी से, नये उत्साह के साथ उधर बढ़ गया और न जाने कब वह रेखा बर्फ़ में एक काली-सी सड़क बन गयी थी। स्लेज गाड़ियों व खुरों के चिह्नों से भरी सड़क काफ़ी घिसी-पिटी की। उसे देखकर तबीयत ख़ुश हो गयी। पलट कर रिबाक हल्के-हल्के दौड़ता ढलान में उस ओर चल पड़ा जहाँ सोत्निकोव बर्फ़ पर चक्कर खा कर गिरने के बाद लेटा था।

"सुन रहे हो, हम एकदम सड़क के नज़दीक हैं?"

टोपी में अस्वाभाविक रूप से गोलाकार व छोटा-सा प्रतीत होता सिर सोत्निकोव ने ऊपर उठाया। वह इस तरह हिला जैसे उठने की कोशिश कर रहा हो।

"सड़क पर हम चुपके से कहीं खिसक लेंगे। हमें जल्दी करनी चाहिए और मुक़ाबले से भी बचना चाहिए।"

साथ न देती बेजान अँगुलियों से बन्दूक पर अपनी पकड़ मजबूत करते हुए बिना कोई शब्द बोले सोत्निकोव रिबाक की मदद से पैरों पर उठ खड़ा हुआ।

वे धीरे-धीरे सड़क की ओर बढ़ चले। कहीं कोई आ न टपके, इस भय से चिन्तापूर्वक रिबाक लगातार आस-पास देखे जा रहा था। अपनी तीव्र दृष्टि से उसने आगे का जायज़ा लिया–उसकी दृष्टि ख़ास तौर से वहाँ पर टिकी थी जहाँ सड़क अन्धेरे में ग़ायब हो जाती थी। अचानक चौंकते हुए उसने देखा, आसमान हल्का नीला पड़ गया था, तारों की चमक सिमट गयी थी, सिर्फ़ बड़े-बड़े तारे ही टिमटिमा रहे थे। लोगों की नज़र में आने से भी ज्यादा सुबह की इस साफ़ पहचान ने उसे चिन्तित कर दिया था। कोई चीज़ अन्दर से कुलबुला-कुलबुलाकर उसे आगे बढ़ने को उकसा रही थी, इस खुले मैदान से भागने को कह रही थी। लेकिन थकान के मारे उसके पैर दुख रहे थे और सोत्निकोव भी साथ में था–पीछे-पीछे लड़खड़ाकर चलता। चाहे-अनचाहे, उन्हें इसी सड़क पर चलते रहना था।

लाचारी महसूस करते हुए उसने बेताबी दबा ली थी, दाँत भींच लिये थे। वह सोत्निकोव से कुछ भी नहीं बोला क्योंकि वह यथासम्भव लड़खड़ाता चल रहा था। अचानक उसे दिल में पूरी नाउम्मीदी का अहसास हो आया। रात ख़त्म होने को आ रही थी, उन पर से रात की सुरक्षा भरी चादर उठनेवाली थी। दिन का उजाला उनके लिए किसी भी तरह अच्छा न था। डूबते दिल से रिबाक मन्द-मन्द, निर्मम गति से आती जाड़े की सुबह को देख रहा था। आकाश साफ़ होने लगा था और लुप्त होते अन्धेरे से उभरकर बर्फ़ीला खुला मैदान अधिकाधिक दिखाई देने लगा था। आगे सड़क धीरे-धीरे रोशन हो रही थी, दूर तक देखना सम्भव हो गया था।

वे उस पर घिसटती चाल से कुंज की ओर बढ़ चले।

८

रिबाक की तरह ही सोत्निकोव भी रात ख़त्म होते देख रहा था और अपने दोनों के लिए इस बेतुकी सुबह का मतलब भी भली-भाँति जानता था।

लेकिन वह यथाशक्ति आगे बढ़ता रहा। अपने दुर्बल शरीर में बची-खुची सारी शक्ति बटोरकर वह बन्दूक का सहारा लेते हुए घिसट-घिसट कर आग की ओर चलता रहा। उसके कूल्हे में अभी भी भयानक पीड़ा थी, उसका पैर पूरी तरह बेजान था और ख़ून से तर बूट जमकर कड़ा पड़ गया था। दूसरे पैर का बूट ठीक से बन्द नहीं होने के कारण चलते समय अपने अन्दर बर्फ़ समेटे जा रहा था।

कुंज की ओर उनके बढ़ते-बढ़ते उजाला हो आया। अब चारों ओर का दृश्य दिखाई देने लगा था–सड़क से कुछ हटकर बायीं ओर झाड़-झंखाड़ व झाड़ियों के धब्बेवाली बर्फ़ से ढकी ढलानें थीं। स्पष्ट रूप से वे घनी झाड़ियों के बीच से गुज़रकर आये थे। जिस जंगल की उन्हें इतनी तलाश थी, उसका दूर-दूर, क्षितिज तक कहीं कोई पता न था मानो रात में उसे धरती निगल गयी थी।

हमेशा की तरह रिबाक दृढ़ संकल्प के साथ आगे बढ़ रहा था और यह बात समझ में आने लायक़ भी थी क्योंकि वे दोनों सच कहा जाये तो तलवार की धार पर चल रहे थे और किसी भी पल नज़रों में पड़कर पकड़े जा सकते थे। भाग्य से सड़क अभी भी सुनसान थी और आग दिखाई देता पाइन वृक्षों का छोटा-सा कुँज क़रीब आता जा रहा था–हालाँकि धीरे-धीरे। बुरी तरह लँगड़ाते और बन्दूक पर झुककर सहारा लेते हुए सोत्निकोव लगातार बेसब्री से कुंज की ओर देखे जा रहा था, वह वहाँ पहुँचने के लिए व्याकुल था लेकिन उसे वहाँ जा छुपने की उतनी चिन्ता न थी जितनी कि आराम करने की।

अभी उन्होंने कुंज की ओर आधी ही दूरी तय की थी कि रिबाक बद-दुआएँ देते जहाँ का तहाँ खड़ा हो गया।

"लो, स्सा... ला... यह तो क़ब्रगाह है!"

सोत्निकोव ने भी नज़र उठाकर देखा। सच में अब यह पूरी तरह साफ़ हो गया था कि पाइन वृक्षों के जिस झुण्ड को उन्होंने कुंज समझा था,

वह तो गाँव का क़ब्रिस्तान था। सनोबर की फैली डालियों के नीचे से उन्हें अब साफ़-साफ़ लकड़ी के बहुत से क्रॉस, बाड़ा और बीच में एक टेकरी पर ईंटों का बना स्मारक दिखाई देने लगा था। लेकिन सबसे बुरी बात यह थी कि गाँव की पुआल से बनी छतें पेड़ों के बीच से दिखाई देती थीं और किसी चिमनी से धुआँ टेढ़े-मेढ़े ढंग से आकाश की ओर उठ रहा था।

नाक झाड़कर रिबाक ने अन्यमनस्क ढंग से अँगुलियों से पोंछ लीं।

"तो अब हम कहाँ जायेंगे?"

वास्तव में यह एक समस्या थी लेकिन सड़क के बीच में तो वे खड़े रह नहीं सकते थे। सो, अब पहले से भी अधिक उदास व चिन्तित हो वे गाँव की ओर लथराथाते बढ़ चले।

भाग्य उनका साथ देता प्रतीत हुआ। गाँव अभी तक जागा नहीं था और वे बिना किसी की नजरों में पड़े क़ब्रगाह में पहुँच गये। सड़क पर और उसके नीचे भी बेशुमार पदचिह्न थे। बर्फ़ के बीच अस्पष्ट रूप से दिखाई देती एक सड़क पर वे बढ़ चले और नीचे झुकी सनोबर की शाखाओं के नीचे जा पहुँचे। इससे अधिक साधारण परिस्थितियों में सोत्निकोव इस उदासीन पनाह को देखकर खौफ़ से भर उठता और इसकी ओर देखे बिना फ़ौरन आगे बढ़ जाने की कोशिश करता। लेकिन इस समय क़ब्रगाह भगवान का वरदान लग रही थी क्योंकि जब सारा गाँव सामने था, वे इसके अलावा कहाँ छुप सकते थे?

वह किसी बच्चे की मिट्टी की बनी ताजा क़ब्र के ढूह के पास से जो अभी तक बर्फ़ से अछूती थी, जल्दी-जल्दी आगे बढ़ गये। चीड़ की घनी फैली डालियों तथा बेशुमार बाड़ों के कारण उन्हें गाँव की खिड़कियों से देख पाना मुश्किल था। अब चलना आसान था क्योंकि सोत्निकोव कभी किसी क्रॉस को, कभी तने को या बाड़े की लकड़ी को हाथ से पकड़-पकड़कर ख़ुद चल रहा था। जब वे सड़क से कुछ दूर आ गये, सोत्निकोव घिसटते हुए सनोबर के एक मोटे तने के पास भहराकर बर्फ़ पर बैठ गया। इस कष्टदायक रात की थकान व जानलेवा ठण्ड के कारण उसका शरीर अब बस एक दर्द ही दर्द बनकर रह गया था।

अपनी अशक्तता पर शोक करता वह सनोबर के खुरदरे तने से पीठ टिकाकर बैठ गया था। आँखें उसने बन्द कर रखी थीं क्योंकि वह रिबाक

की न तो दृष्टि झेल सकता था, न उससे बातें कर सकता था। बातचीत क्या मोड़ लेगी, वह जानता था और इसलिए उससे बचना चाहता था। अपनी दुखद स्थिति से साथी की जान ख़तरे में डाल देने के कारण वह ख़ुद को शर्मिन्दा महसूस कर रहा था। अगर वह नहीं होता तो रिबाक निस्सन्देह अब तक काफ़ी दूर जा चुका होता। वह चुस्त-दुरुस्त था और उसमें जीने की इच्छा भी उससे ज़्यादा थी और सोत्निकोव सोच रहा था, यही चीज़ थी जिसके कारण रिबाक दोनों के प्रति ज़िम्मेदार बन गया था। पिछली रात विकट परिस्थिति से उबारने के लिए रिबाक के भीम प्रयास पर तभी तो उसे कोई हैरानी न थी। वह इस बात का श्रेय सिपाहियों के भाईचारे को दे रहा था और रिबाक से मदद लेने में उसे बुरा भी नहीं लगा था। लेकिन जहाँ तक उसका सवाल था, घायल होने के बावजूद वह यह मानने से इनकार कर रहा था कि वह अशक्त है और उसे मदद की ज़रूरत है। वह किसी पर निर्भर करने का आदी न था और निरीहता की अनुभूति को दिल में जगह नहीं देना चाहता था। जहाँ तक शारीरिक रूप से सम्भव होता, वह अपनी मदद ख़ुद करने की कोशिश करता और जब इसमें असफल रहता, किसी दूसरे पर अपनी निर्भरता को कम से कम करने की इच्छा रखता।

रिबाक के साथ भी यही बात थी।

लेकिन अपने साथी के मन में उठते विचारों को तनिक भी भाँपने की कोशिश किये बिना रिबाक लगातार उसके प्रति चिन्ता प्रकट करता रहा। जब थोड़ा आराम मिल गया, वह फ़ौरन बोल उठा:

"तुम यहीं इन्तज़ार करो और मैं आस-पास का जायज़ा ले आता हूँ। पास में ही एक झोंपड़ा है। ज़रूरत पड़ी तो खलिहान में छुप सकते हैं।

"इन्तज़ार... बहुत अच्छा," सोत्निकोव ने सोचा। "जितना कम चलना पड़े, उतना अच्छा।" अगर कोई आशाजनक नतीजा निकले तो वह बेहिसाब इन्तज़ार करने को तैयार था। क्लान्तिपूर्वक खड़ा हो रिबाक ने बन्दूक उठा ली। जिससे कि मील भर से दिखाई न दे, उसने बन्दूक को किसी छड़ी की तरह नली की ओर से पकड़ लिया। फिर लम्बे-लम्बे डग भरते वह बर्फ़ से लदे क़ब्र के ढूहों के बीच से चल पड़ा। सोत्निकोव ने करवट बदलकर अपनी आँखें खोलीं और बन्दूक क़रीब में खींच ली। थोड़ी ही दूरी पर ख़स्ताहाल कोठरीवाला गाँव का आख़िरी झोंपड़ा दिखाई

दे रहा था। झुके हुए बाड़े पर एक पुराना कपड़ा हवा के झोंकों से फड़फड़ा रहा था।

वहाँ आस-पास कोई भी प्रतीत नहीं होता था।

थोड़ी ही देर में रिबाक नज़रों से ओझल हो गया और गाँव पहले की तरह ही ख़ामोश व वीरान नज़र आ रहा था। अपने ज़ख़्मी पैर को आराम से रखने के लिए सोत्निकोव ने बाड़े का एक मोटा-सा काइयोंवाला खम्भा खींच लिया। खम्भा धीमे से कड़कड़ाकर टूट गया। क़ब्र पुरानी थी और शायद अर्से से उसकी देखभाल नहीं की गयी थी। बाड़े के अन्दर बर्फ़ के बीच एकाकी समाधि प्रस्तर खड़ा था, वहाँ कोई क्रॉस भी नहीं लगा था। इस धरती पर किसी व्यक्ति के अन्तिम अवशेष के प्रतीक स्वरूप सड़ा बाड़ा अभी भी मौजूद था। क़ब्रों के बाड़ों, समाधि-प्रस्तरों व सड़ते, मुड़े-तुड़े क्रॉसों के बीच गाँव की इस क़ब्रगाह में सोत्निकोव को अचानक बड़ी मायूसी का अहसास हो आया। उन्हें देखते हुए वह अत्यन्त कटु विडम्बना के साथ सोचने लगा: "यह सब क्यों? यह सब किस लिए है, यह स्मारक बनवाने की सदियों पुरानी परम्परा? मृत्यु के बाद भी धरती पर बने रहने की यह सीधी-सादी कोशिश नहीं तो क्या है? लेकिन इससे कोई फ़ायदा नहीं और फिर इसमें तुक ही क्या है?"

नहीं, मनुष्य सहित सभी प्राणियों के लिए जीवन ही एकमात्र वास्तविक महत्व की चीज़ है। पूर्ण विकसित मानवीय समाज में एक दिन यह एकमात्र मुद्दा, सभी बातों का पैमाना बन जायेगा। फिर प्रत्येक जीवन, मनुष्य का सर्वाधिक मूल्यवान अधिकार समग्र रूप से समाज के लिये किसी भी तरह कम मूल्यवान नहीं रहेगा, इसके सभी सदस्यों की ख़ुशी द्वारा ही इसके बल व ऐक्य का निर्धारण किया जायगा। जहाँ तक मृत्यु का सवाल है तो उससे बचने का कोई उपाय नहीं। महत्वपूर्ण बात है जबरन मृत्यु, अकाल मृत्यु को समाप्त करने की और मनुष्य को धरती पर क्षणभंगुर जीवन को बुद्धिमतापूर्वक उपयोग में लाने के लिए समर्थ बनाने की। तभी शारीरिक रूप से क्षणभंगुर होने के बावजूद मनुष्य अपनी हैरतअंगेज़ शक्तियों के साथ निस्सन्देह लम्बे समय तक रह पायेगा जबकि आज धातु का छोटा-सा टुकड़ा भी उसके एकमात्र, अनमोल जीवन को समाप्त कर देने के लिए काफ़ी है।

हाँ, मनुष्य की शारीरिक शक्तियाँ सीमित हैं लेकिन उसकी आत्मिक

शक्ति को कौन माप सकता है? युद्ध में उसके शौर्य को, दुश्मन के सम्मुख उसकी दृढ़ता व हिम्मत को कौन माप सकता है जब पूर्णतया अशक्त व्यक्ति में साहस की एक लहर उठती है और बाक़ी सभी चीज़ों को अपने साथ बहा ले जाती है?

सोत्निकोव जीवन भर नहीं भूल पायेगा कि किस तरह जर्मनों ने मोर्चे के एक बन्दी शिविर में एक बूढ़े कर्नल को सताया था। कर्नल लड़ाई में बुरी तरह विकलांग हुआ था, उसके दोनों हाथ भुर्ता बन गये थे और सच कहा जाये तो वह मौत की दहलीज़ पर था। इसके बावजूद वह नहीं जानता था, भय क्या चीज़ है और गेस्टापो अफ़सर के सामने उसने हिटलर, फ़ासिज़्म और उसके पूरे जर्मन देश पर गालियों की झड़ी लगा दी थी। जर्मन ख़ाली हाथों उसे मौत के घाट उतार दे सकता था या कम से कम गोली तो मार ही सकता था जैसा कि घण्टे भर पहले वह पैदल सेना के दो राजनीतिक कर्मियों के साथ कर चुका था लेकिन उसने धमकियों और गालियों से उस कर्नल को अपमानित भी नहीं किया। ऐसा लग रहा था मानो यह सब बातें वह जीवन में पहली दफ़ा सुन रहा हो और पूरी तरह हक्का-बक्का हो गया हो। आख़िर जब उसकी समझ में कुछ भी नहीं आया, उसने बड़े अफ़सरों को फ़ोन किया जिससे ऊपर से निर्देश मिले। बेशक, उस कर्नल को बाद में गोली मार दी गयी लेकिन उन कुछ पलों में जब उसे फ़ायरिंग स्क्वाड को सौंपा गया, निस्सन्देह उसकी जीत हुई थी। उसका यह अन्तिम शौर्य-कार्य था और एक-एक क्षण उतना ही कठिन था जितना युद्ध में। उसे इसकी भी आशा नहीं थी कि उसकी बातें अपनी ओर का कोई आदमी सुन भी पायेगा या नहीं (यह एकदम संयोग ही था कि बैरक की दीवारों से उसकी बातें उन्होंने सुन लीं)।

धीरे-धीरे ठण्ड से जमते हुए सोत्निकोव धैर्यपूर्वक क़ब्रगाह के आख़िरी छोर की ओर देखे जा रहा था। इसी पल रिबाक नज़र आया। गाँव से किसी की दृष्टि उस पर न पड़े, इसलिए रिबाक सीधे न आकर बाड़े का चक्कर लगाकर आया। कुछ ही मिनटों में वह उसकी बग़ल में भहराकर बैठ गया और हाँफने लगा।

"सब ठीक-ठाक लगता है। देख रहे हो, वहाँ पर एक झोंपड़ा है, दरवाज़े पर सिटकनी लगी है। मैंने कान लगाकर सुनने की कोशिश की थी, कोई वहाँ लगता नहीं।"

"तो?"

"तो देख रहे हो, तुम... अरे हाँ, मैं तुम्हें वहाँ ले चलूंगा, हम थोड़ा गरमा लेंगे और फिर..."

हिचकिचाते हुए रिबाक ने बेचैनी से खुले मैदान की ओर देखा जो सुबह के उजाले में दूर-दूर तक साफ़-साफ़ दिखाई दे रहा था। उसकी आवाज़ लड़खड़ा उठी थी – किसी कसूरवार की तरह और सोत्निकोव ने फ़ौरन उसके मन की बात भाँप ली।

"ठीक है, मैं यहीं रहूँगा।"

"देखो, जो मैंने कहा, वही ठीक रहेगा," ज़ाहिरी तौर पर थोड़ा अकड़ते हुए रिबाक बोला। "और मुझे... भगवान ही जाने, वह स्साला जंगल कहाँ है। हम पूरी तरह से रास्ता भटक गये हैं।"

"हम पूछ सकते हैं।"

"हाँ, वह तो ठीक है। और अब तुम बस परेशान मत होओ। बाद में हम शायद तुम्हें निकाल लें और कहीं सुरक्षित जगह भेज दें।"

"ख़ूब, बहुत अच्छा," जबरन उल्लास का प्रदर्शन करते हुए सोत्निकोव बोला।

"तुम फ़िक्र न करो। मैं सब कर लूँगा। उन्हें तुम्हारी देखभाल करने कहूँगा और वह..."

सोत्निकोव कुछ भी नहीं बोला। दरअसल, कहने को कुछ था भी नहीं: सब कुछ ठीक-ठाक व एकदम तर्कसंगत था। तो भी उसे थोड़ी शर्मिन्दगी महसूस हुई और फ़ौरन ही उसने अपनी कमज़ोरी व रात की घटनाओं को इसका कारण मान लिया। और फिर बुरा मानने की कोई बात भी तो न थी। दोनों ही आज़ाद कारिन्दे थे और एक-दूसरे के प्रति कोई बन्धन भी न था। जहाँ तक रिबाक का सम्बन्ध था, उसने उसकी हर तरह से मदद की कोशिश की थी और सोत्निकोव उसके प्रति कृतज्ञ था। उसने एकदम ही निराशाजनक परिस्थितियों में उसे बचाया था और अब उस पर बोझ हल्का करने का समय था।

"जब तक आस-पास कोई नहीं, हम यहाँ से निकल लें।"

सोत्निकोव ने पहले अपने आप उठ खड़ा होने की कोशिश की लेकिन ज़ख़्मी पैर को हिलाते ही इतना भयानक दर्द शुरू हो गया कि वह धड़ाम से बर्फ़ पर गिर पड़ा। कुछ देर उसी स्थिति में रहने के बाद

अपनी सारी शक्ति बटोरकर, दाँतों को भींच वह पैरों पर उठ खड़ा हुआ।

छोटे-छोटे सनोबरों के बीच टेकरी की ढलान की ओर से उतरते हुए वे क़ब्रगाह से चल पड़े और थोड़ी ही देर बाद काफ़ी सारे पदचिह्नोंवाले रास्ते पर आ पहुँचे जो एक खुले, बिना बाड़वाले प्रांगण की ओर जाता था। गाँव से कुछ हटकर एक बड़ा-सा पुराना, टूटा-फूटा झोंपड़ा था, उसके कोनों में मिट्टी की पुताई थी और एक टूटी खिड़की में कपड़ा ठूँस दिया गया था। दरवाज़े पर एक काले शिकंजे में एक लकड़ी की कील ठुकी थी मानो कोई पल भर को यहीं कहीं पास में गया है और शायद घर पर कोई भी नहीं था। सोत्निकोव ने सोचा, चलो, फ़िलहाल यही सबसे अच्छा है क्योंकि कम से कम जवाब-सवाल से तो वे बच जायेंगे, अभी यही सबसे अच्छा होगा।

कील हटाकर रिबाक ने अपने साथी को ड्यौढ़ी में आने दिया और दरवाज़ा भीतर से बन्द कर दिया। वहाँ अन्धेरा था और लकड़ी के बहुत से टब व काठ-कबाड़ दीवार के पास ढेर के ढेर पड़े थे; वहाँ लोहे के जंगदार कल पुर्जोंवाला एक बहुत बड़ा सन्दूक पड़ा था और कोने में चक्की के कुछेक पाट रखे थे। आटा पीसने के लिए गाँव में काम आनेवाले इस अद्भुत यन्त्र को सोत्निकोव एक बार पहले भी देख चुका था: एक खोखले बक्से के अन्दर दो पत्थर के पाट रखकर कहीं ऊपर में एक घूमनेवाली छड़ लगा दी जाती थी। मकड़ों के जालों से भरी एक छोटी-सी खिड़की से काफ़ी रोशनी आ रही थी। उस रोशनी से दरवाज़ा ढूँढ़ने में उन्हें मदद मिली।

दीवार का सहारा लेते हुए सोत्निकोव घिसटती चाल से दरवाज़े तक चला आया। वहाँ रिबाक ने ऊँची दहलीज़ पार करने में उसकी मदद की। अन्दर मिली-जुली गन्ध उनकी नाकों से टकरायी – कुछ-कुछ गर्म व दमघोंट। सोत्निकोव ने एक हाथ अँगीठी के टूटे-फूटे हिस्से की ओर बढ़ा दिया। अँगीठी हाल में ही जलायी गयी थी और उसे छूते ही सोत्निकोव के शरीर में पूर्ण आनन्द की ऐसी लहर दौड़ गयी कि वह अपनी आह रोक नहीं पाया – भयानक रात के शुरू होने के बाद से पहली दफ़ा यह आह निकली थी। कुछेक बर्तनों को लगभग धकियाते हुए वह एक कम ऊँची बेंच पर अँगीठी के पास बैठ गया। जब वह अपना पैर ठीक से रख रहा था, उधर रि-

बाक झोंपड़े के आधे हिस्से को अलग करनेवाले पर्दे के परे झाँकने की कोशिश में लगा था। तभी पलंग की कमानियों के चरमराने की आवाज़ सुनाई दी। सोत्निकोव ने भी कान लगा दिये: उनके लिए अगले कुछ पल निर्णायक साबित होनेवाले थे।

"घर में अकेले हो?" पर्दे की इस तरफ़ से ही रिबाक ने ठोस लहजे में पूछा।

"हाँ।"

"पिता कहाँ हैं?"

"बाहर गये हैं।"

"और माँ?"

"माँ चाचा ऐमेल्यान के यहाँ धान कूटकर रोटी का इन्तज़ाम करने गयी है। उसे चार प्राणियों का पेट पालना होता है।"

"देखता हूँ, अभी से काफ़ी दुनियादारी सीख ली है। वही चारों प्राणी हैं जो सो रहे हैं? तो उनको सोने ही दो," रिबाक आवाज़ धीमी करके बोला। "हमें कुछ खाने को दे सकते हो?"

"माँ आज सवेरे कुछ आलू उबाल तो रही थी," छोटे लड़के की गुस्ताख़ आवाज़ में स्वेच्छा थी।

फ़र्श पर नंगे पाँवों की आहट हुई और पर्दे के पीछे से लम्बी, फटेहाल सूती पोशाक पहने एक दस साल की थोड़ी अस्त-व्यस्त-सी लड़की ने झाँक कर देखा। अपनी छोटी-छोटी काली आँखों से उसने सोत्निकोव की ओर देखा लेकिन उसके चेहरे पर भय का कोई चिह्न न था। घर की मालकिन की पूरी भाव-भंगिमा के साथ चलते हुए वह अँगीठी के पास आयी और अन्दर की ओर जाने के लिए पंजों के बल खड़ी हो गयी। सावधानी से अपना कमबख़्त पैर हटाकर सोत्निकोव ने उसके जाने के लिए जगह छोड़ दी।

खिड़की के नीचे बिना मेज़पोश की एक मेज़ रखी थी और उसके नीचे एक बेंच पर एक कटोरा पड़ा था। मेज़ के एक सिरे पर कटोरा रखकर लड़की ने किसी बर्तन से कुछ आलू निकालकर रख दिये। उसके छोटे-छोटे हाथों की हरकतें कुछ भोंड़ी व रूखी-सी थीं लेकिन वह अपनेतया मेहमानों की आवभगत की पूरी कोशिश कर रही थी। वह आलमारी से निकालकर एक चाकू ले आयी, फिर कोने से ढूँढ़कर एक प्लेट में मोटे-मोटे

सूखे खीरे लाकर मेज़ पर रख गयी। फिर अँगीठी के पास जाकर उनकी ओर जिज्ञासा भरी दृष्टि से देखती खड़ी हो गयी। दोनों बड़ी-बड़ी दाढ़ियोंवाले सशस्त्र व्यक्ति उसे कुछ भयानक तो लगे थे फिर भी उन्हें देखना दिलचस्प था।

"तो आओ, हम थोड़ा खा लें," मेज़ के पास जाते हुए रिबाक बोला।

सोत्निकोव अभी तक पूरी तरह गर्म नहीं हो पाया था और ठण्ड से ठिठुरा उसका शरीर बेचैनी से काँप उठता था लेकिन हल्की, अद्भुत गन्धवाली भाप मेज़ पर रखे आलुओं से उठ रही थी और वह बेंच पर से उठ खड़ा हुआ। मेज़ के पास उसे बैठने में मदद देने के बाद रिबाक ने उसका पैर बेंच पर आराम से रख दिया। एक थोड़ा जला, गर्म आलू उठाकर सोत्निकोव ने लकड़ी की सफ़ेदी की गयी दीवार से पीठ टिका दी। लड़की पहले की तरह सम्मानपूर्वक खड़ी थी। हाथ से पर्दे को मुड़े-तुड़े ढंग से पकड़े वह अपनी काली-काली आँखों से उन पर तीव्र दृष्टि डाल रही थी।

"क्यों, रोटी नहीं है?" रिबाक ने पूछा।

"लेकिन कल ही सारी खा गया था। हम मम्मी के आने की प्रतीक्षा में थे।"

कोट के अन्दर टटोलकर उसने मुखिया के घर से हथियायी रोटी का टुकड़ा बाहर निकालकर उसे तोड़ा। दूसरा टुकड़ा तोड़कर उसने लड़की की ओर बढ़ा दिया। उसने टुकड़ा तो ले लिया लेकिन खाने के बजाय वह पर्दे के पीछे चली गयी और लौटकर दुबारा अँगीठी के पास खड़ी हो गयी।

"क्या तुम्हारी माँ काफ़ी समय से अनाज-कुटाई कर रही है?" रिबाक ने पूछा।

"परसों से। एक हफ़्ते तक करेगी।"

"हूँ। क्या तुम सबसे बड़ी हो?"

"हाँ, मैं बड़ी हो चुकी हूँ। कात्या व लेनिक अभी छोटे हैं। मैं नौ साल की हूँ।"

"ओह, यह भी कोई बड़ी होने की उम्र है। यहाँ जर्मन नहीं हैं?"

"एक बार आये थे। तब जब मैं मम्मी के साथ येलेना चाची के यहाँ गयी थी। वे लॉरी पर रखकर हमारा सूअर ले गये थे।"

किसी तरह सोत्निकोव ने कुछ आलू खा डाले और फिर उसकी जान-

लेवा खाँसी शुरू हो गयी। दौरा पाँच मिनट तक रहा। खाँसी इतनी ज़ोर-दार थी मानो फेफड़ों को फाड़ डालेगी। फिर वह धीरे-धीरे कम हो गयी लेकिन अब उसकी दिलचस्पी खाने में न थी। आधा जग पानी पीकर उसने आँखें बन्द कर लीं। वह ख़ुद को झूलता, हवा में तैरता महसूस कर रहा था और एक पीड़ादायक किन्तु मृदु निश्चेष्टता उसकी आँखें बन्द किये डाल रही थी। अजीब ढंग से गड्ड-मड्ड होतीं रिबाक व लड़की की बातें उसकी भ्रान्तिपूर्ण चेतना में तेज़ी से गुम हो रही थीं।

"तुम्हारी माँ का क्या नाम है?" एक खीरा चबाते हुए रिबाक ने पूछा।

"दयोमचिखा।"

"अच्छा, तो तुम्हारे पिता का नाम देम्यान है?"

"हाँ। माँ को अवगिन्या नाम से भी बुलाया जाता है।"

रिबाक की बेंच चरमरायी, शायद उसने आलू के लिए हाथ बढ़ाया था। मेज़ के नीचे उसके बूटों के घिसटने की आवाज़ सुनाई दी। पल भर को बातचीत थम गयी और फिर लड़की फितरती जिज्ञासा से भरे कूटे लहजे में बोली।

"तो आप लोग गुरिल्ले हैं?"

'तुम जैसी बच्ची को यह जानने से कोई मतलब नहीं।"

"लेकिन मैं जानती हूँ, आप लोग गुरिल्ले हैं।"

"तो फिर ज़बान बन्द रखो।"

"और मेरे ख़्याल से आपका साथी घायल है?"

'शायद हाँ। लेकिन इस बारे में मुँह बन्द रखो। ठीक?"

लड़की कुछ न बोली। थोड़ी देर ख़ामोशी रही।

"मैं जाकर माँ को ले आऊँ?"

"बस बैठी रहो, मुँह बन्द रखो नहीं तो हमारा सर्वनाश करा डालेगी!"

"आप लोगों का सर्वनाश! हम आदमी हैं या महामारी!"

"हम आदमी थे..."

लेकिन अब वर्तमान समाप्त हो चुका था, अब अतीत की आवाज़ें थीं। सोत्निकोव अभी तक विस्मृति में इस लगभग अबोधगम्य संक्रमण को समझने में समर्थ था और तब अचानक ही पैर से घायल लेफ़्टिनेंट उसे दिखाई दि-

या। सहारे के लिए एक मज़बूत साथी पर झुका था और कॉलम के साथ-साथ बड़ी मुश्किल से चल पा रहा था। लेफ्टिनेंट के सिर पर भी पट्टियाँ बँधी थीं। सूखे होंठों व रक्तरंजित आँखों से निकलती अनिष्टकारी चिनगा-रियों के कारण उसकी दुर्बल आकृति अर्द्ध विक्षिप्त-सी लग रही थी। उसके जख़्मी पैर की दुर्गन्ध से सोत्निकोव को मितली महसूस हो रही थी। सड़क के किनारे दूर-दूर फैले सनोबरों के कुंज में उन्हें पेड़ों के बीच से पाँत में ले जाया जा रहा था। सफ़ेद बालू पर बिखरे पाँइड पत्ते पैरों तले भुरक रहे थे और मध्याह्न सूर्य निर्मम धूप बिखेर रहा था। पैदल व घोड़ों पर सवार जर्मन क़ैदियों की पाँत की पहरेदारी कर रहे थे।

अफ़वाह थी कि उन्हें गोली मार देने के लिए ले जाया जा रहा है। बात सच भी लगती थी क्योंकि कैम्प में से जिन लोगों को चुना गया था। वे राजनीतिक कर्मी, कम्युनिस्ट, यहूदी या इसी तरह के दूसरे लोग थे और किसी न किसी कारण सोत्निकोव को भी इनमें शामिल कर लिया गया था। सनोबरों के जंगल में बलुई ढलान पर निस्सन्देह उन्हें गोली मार दी जायेगी। इसका अन्दाज़ा सड़क पर क़ैदियों के मुड़ने के बाद पहरेदारों के तनावपूर्ण व्यवहार व कर्कश स्वर में चीख़ने-चिल्लाने से लग रहा था। वे क़ैदियों को एक-दूसरे से सटते हुए चलने को विवश कर रहे थे। टेकरी के ऊपर बहुत से और भी सैनिक दिखाई देने लगे थे जो निस्सन्देह अपना काम कुशलतापूर्वक निबटाने की प्रतीक्षा में थे। लेकिन स्पष्ट रूप से जमात में गड़बड़ी फैलाने को जर्मन भी उन्मुख थे। टेकरी के ऊपर पाँत के पहुँचने से पहले वे कुँज के छोर पर खड़े लोगों से कुछ बड़बड़ाकर बोले और सब किसी को ढलान पर बैठ जाने का आदेश दिया गया। सबमशीनगनों की नलियाँ उनकी ओर निशाना लिये तनी थीं।

पिछले कुछ दिनों में सोत्निकोव पूरी तरह थक-हार गया था। भोजन-पानी की कमी के कारण कमज़ोर हो जाने से उसे भयानक-सा महसूस हो रहा था। सूखी चुभती घास पर बैठे लोगों की भीड़ के बीच वह एक तरह की निश्चेष्टता के वशीभूत बैठ गया। चूँकि वह कोई ख़ास चीज़ सोचने में नहीं लगा था, इसलिए उसे बग़ल से आती तेज़ बुदबुदाहट का कोई मत-लब फ़ौरन समझ में नहीं आ पाया। "और कुछ नहीं तो मरते-मरते एक को तो मैं ज़रूर ले जाऊँगा। फिर हमें कुछ खोने को तो है नहीं..." "हम इन्तज़ार करें और देखें आगे क्या होता है।" "एकदम साफ़ है।

इसमें शक है क्या?" सोत्निकोव ने एक गुपचुप नज़र उस ओर डाली। पाँत में उसकी बग़ल में चलनेवाला लेफ़्टिनेण्ट अपने पैर में बँधी पट्टी से एक मामूली-सा जेबचाकू चुपके-चुपके निकाल रहा था और उसकी आँखों में ऐसा प्रचण्ड कृतसंकल्प था कि वह सोचने लगा: "ऐसे आदमी को कोई भी चीज़ रोक नहीं सकती।" बिना चिह्नोंवाले अफ़सर का ट्यूनिक पहने जिस प्रौढ़-से व्यक्ति को उसने सम्बोधित किया था, वह चिन्तातुर दृष्टि से पहरेदारों की ओर देख रहा था। दो पहरेदार एक दूसरे के क़रीब पहुँच-कर लाइटर से सिगरेट जला रहे थे। जबकि कुछ आगे एक तीसरा पहरे-दार घोड़े पर सवार हो, क़ैदियों पर चौकसी से नज़र रखे था।

वे धूप में लगभग पन्द्रह मिनट बैठे रहे होंगे जब ढूह के ऊपर से एक नया आदेश दिया गया और जर्मन क़ैदियों को धकिया-धकियाकर पैरों पर खड़ा करने लगे। सोत्निकोव अपने बग़लगीर का इरादा जान गया था। पहरेदार के अधिक निकट पहुँचने के लिए वह धीरे-धीरे खिसककर क़ैदि-यों की पाँत के आख़िरी सिरे पर जाने की कोशिश करने लगा था। जिस पहरेदार को वह दबोचना चाहता था, वह एक मोटा तगड़ा जर्मन था, उसकी फ़ौजी क़मीज़ की बग़लें पसीने से तर थीं और बाक़ी पहरेदारों की तरह उसके हाथ में भी सबमशीनगन थी। उसने एक चुस्त ट्यूनिक पहन रखा था, काँख के पास ट्यूनिक पर पसीने का दाग़ था। आर्यों से एकदम भिन्न एक काली लट उसकी टोपी के गीले किनारे से नीचे लटक रही थी। जल्दी-जल्दी सिगरेट ख़त्म कर वह जर्मन पिच से थूक फेंका, निस्सन्देह, क़ैदियों को डाँटने के इरादे से पाँत की ओर कुछेक क़दम बढ़ आया। तभी पीछे की ओर से वह लेफ़्टिनेंट उस जर्मन पर चील की तरह झपट पड़ा और मूँठ तक चाकू उसने उसकी धूप से सँवलायी गर्दन में घुसेड़ दिया।

हल्की गुर्राहट के साथ जर्मन ज़मीन पर गिर पड़ा। कुछ दूरी पर कि-सीने चिल्लाकर कहा "भागो!" और कई लोग तीर की तरह सनसनाते हुए पाँत से निकल भागे। सरपट भागने की कोशिश करता लेफ़्टिनेंट अचा-नक लड़खड़ाया और ठीक सोत्निकोव के पास पार्श्व के बल गिर पड़ा। सोत्निकोव ने देखा, नीचे गिरते ही लेफ़्टिनेण्ट ने उसी चाकू से अपना पेट आर-पार चीर डाला। सोत्निकोव उसके शरीर के ऊपर से छलाँग लगाते हुए उसके फड़फड़ाते हाथ पर गिरने से बाल-बाल बचा। उसके हाथ से

अँगुली जितना बड़ा चाकू बालू पर गिर पड़ा, उसकी गीली धार मन्द-मन्द चमक रही थी।

जर्मन अधिक से अधिक पाँच सेकेण्ड तक उलझन में पड़े रहे होंगे और फिर कई जगहों से गोलियों का राउण्ड हुआ। पहली गोलियाँ उसके सिर के ऊपर से झन्नाकर निकल गयीं। लेकिन सोत्निकोव दौड़ता रहा। इससे पहले जीवन में वह कभी इतना तेज़ नहीं दौड़ा था और कुछ ही लम्बी छलाँगों में वह सनोबर वृक्षोंवाली ढलान के ऊपर जा पहुँचा। गोलियों की तेज़ बौछार चारों ओर से हो रही थी लेकिन उनकी परवाह किये बिना वह दौड़ता ही रहा – उसके दिमाग़ में बस अधिक से अधिक दूरी तय करने की बात थी। वह जब तब उल्लासपूर्वक अपने आप से कह उठता! "मैं ज़िन्दा हूँ! ज़िन्दा हूँ!"

बदक़िस्मती से सनोबरों का वह कुंज बड़ा सँकरा-सा साबित हुआ और सौ गज़ आगे जाकर अचानक ही समाप्त हो गया। सामने पुआलों के ढेरों-वाला एक खुला खेत था। आगे बढ़ने के अलावा कोई चारा न था और वह फ़सल काटी गयी खेत के परे हरे-भरे आल्डर कुंज की ओर दौड़ पड़ा।

फ़ौरन ही वह देख लिया गया और पीछे से चीख़ के साथ-साथ गोली चलने की भी आवाज़ आयी। गोली उसकी पतलून पर चाबुक बरसाती जेब के अन्दर ख़ाली सिगरेट की डिबिया से जा टकरायी। सोत्निकोव धक्का महसूस कर चक्कर खा गया: एक घुड़सवार उसके पीछे-पीछे चला आ रहा था, घोड़े के अयाल पर झुका वह पिस्तौल से सोत्निकोव का निशाना लगा रहा था। सोत्निकोव साफ़ तौर पर यह समझकर कि पैदल घोड़े को मात देना मुश्किल था, प्रतिद्वन्द्वी का सामना करने के लिए पलट पड़ा। घोड़े ने उसे पैरों तले रौंद ही दिया था लेकिन किसी तरह बचकर वह पास के पुआलों के ढेर में गच्चा दे गया। घोड़े पर तेज़ी से झुकते हुए जर्मन ने गोली चला दी: गोली गट्ठर की ऊपर पूली पर लगी और पुआल बिखरकर नीचे ठूँठों पर गिर पड़ा। लेकिन सोत्निकोव अभी तक सुरक्षित था और अपने निराशा भरे प्रयास में उसने पैर के तले से एक मुट्ठी जितना बड़ा पत्थर उठा लिया। घोड़े से बचने के लिए दुबारा चक्कर खाते हुए उसने पत्थर पूरी शक्ति से घुड़सवार के चेहरे पर दे मारा। घुड़सवार ने बिना निशाना लिए गोली चला दी और दुबारा गोली बेकार गयी। पत्थरों को एकमात्र आशा महसूस कर सोत्निकोव पैरों तले उठा-उठाकर उन्हें

जर्मन पर फेंकने लगा। घुड़सवार इधर-उधर पलटते हुए ठीक-ठीक निशाना लेने की कोशिश करने लगा। उसने दो गोलियाँ चलायीं लेकिन दोनों ही बेकार गयीं। उधर भगोड़ा सोत्निकोव अपनी सफलता पर खुश होता पुआलों के दूसरे ढेरों के पीछे से पत्थर फेंकता रहा।

उधर जब जर्मन अपने कुदान भरते घोड़े को क़ाबू में लाने की कोशिश कर रहा था, सोत्निकोव ढेरों की दूसरी क़तार तक दौड़कर जा पहुँचा और प्रतिद्वन्द्वी का सीधा मुक़ाबला करने के इरादे से इधर-उधर चक्कर खाने लगा। इस बार उसने घोड़े के सिर को निशाना बनाया और जर्मन की गोली फिर चूक गयी। घोड़े के पैरों तले रौंदे जाने से बचते हुए, एक ढेर से दूसरे ढेर तक दौड़ लगाते सोत्निकोव ने एक के बाद एक तीन पत्थर फेंके। लेकिन अब वह क़तार के अन्तिम सिरे पर पहुँच गया था, केवल एक ही ढेर बाक़ी रहा था। ढेर के पीछे घुटनों के बल गिरकर सोत्निकोव ने एक पत्थर कसके हाथ में पकड़ लिया। इस बार जर्मन सीधे अपने घोड़े को ढेरों की ओर दौड़ाता ला रहा था—स्पष्ट रूप से वह अपने शिकार को कुचल डालना चाहता था। पिछली टाँगों पर उठकर घोड़ा उछल पड़ा, पूलियाँ उसके धक्के से सोत्निकोव पर बिखर पड़ीं। सोत्निकोव पूलियों के साथ गिरते हुए ख़ुशी से चिल्ला पड़ा क्योंकि जर्मन के हाथों की पिस्तौल का घोड़ा दब गया और कारतूस नीचे गिर पड़े। अपनी ग़लती महसूस करते हुए जर्मन ने घोड़े को रोक लिया और उधर सोत्निकोव उछल कर पैरों पर उठ खड़ा हुआ और यथाशक्ति पास ही ऑल्डर की झाड़ियों की ओर भाग चला।

उसका पीछा करनेवाले जर्मन को पिस्तौल भरने में कई बहुमूल्य क्षण लगाने पड़े क्योंकि पहले उसे घोड़े पर क़ाबू करना पड़ा। तब तक सोत्निकोव ऑल्डरों के बीच पहुँचने में सफल रहा। अब उसे घोड़े से डरने की कोई ज़रूरत न थी। पीछे से आती गोलियों की आवाज़ों या चेहरे को खुरच डालती डालियों की ओर कोई ध्यान दिये बिना वह तब तक भागता रहा जब तक एक दलदल के पास नहीं पहुँच गया। चूँकि कोई दूसरा उपाय न था, वह घास-गुच्छ से भरे सड़े पानी में घुस गया। उसने तुरन्त ही यह भी महसूस कर लिया कि अगर डूबा नहीं तो बच ज़रूर जायेगा। वह ठुड्डी तक पानी में जाकर खड़ा हो गया और कहीं डूब न जाये, इस डर से उसने अँगुली जितनी बड़ी नरकुल की एक डाल पकड़ ली लेकिन डाल

टूटी नहीं और उसे पानी में डूबने से बचाये रही। धीरे-धीरे जब साँस क़ाबू में आयी और गोलियों की आवाज़ थम गयी, वह रेंगकर ज़मीन पर चला आया।

अन्धेरा घिर आया था और उत्तरी तारे की ओर देखते हुए वह अपनी ख़ुशक़िस्मती पर मुश्किल से विश्वास करता पूर्व की ओर बढ़ गया।

६

मेज़ के पास बेंच पर सोत्निकोव बिना हिले-डुले लेटा था, शायद सो गया था। सतर्कतापूर्वक ख़ुद को छुपाते हुए वह रास्ते पर नज़र रखने के उद्देश्य से खिड़की के पास बैठकर बाहर की ओर झाँक रहा था। आलू से भूख मिट चुकी थी और वहाँ ज़्यादा देर तक ठहरे रहना व्यर्थ ही था। लेकिन वह अभी तक जा नहीं पाया था, उसे इन्तज़ार करना था। और जैसा कि सभी जानते है, इन्तज़ार से बुरी कोई दूसरी चीज़ नहीं।

शायद इसीलिए वह अकारण ही अधिकाधिक बेचैन व कुपित हो रहा था। वह सोत्निकोव को बच्चों के भरोसे छोड़ नहीं जा सकता था और इसका दोष यक़ीनन वह सोत्निकोव को नहीं दे सकता था। गृहस्वामिनी के वापस लौटने का कोई संकेत नहीं था और उसे बुला लाने के लिए वह किसी को भेजने को इच्छुक नहीं था क्योंकि बच्चे पर विश्वास करने को वह तत्पर न था।

चुनाँचे, बाहर से आती अजीबोग़रीब आवाज़ों को सुनता पता नहीं किस बात की प्रतीक्षा में वह खिड़की के पास बैठा था। पर्दे के पिछले हिस्से में बच्चे जाग चुके थे और रिबाक को खाट पर उनके कूदने-नाचने से उठता दबा शोर गुल सुनाई दे रहा था। जब-तब पर्दा थोड़ा-सा हटता और गन्दा-सा उत्सुक चेहरा बाहर झाँककर फिर ग़ायब हो जाता। पर्दे से बाहर न जाने के लिए सबको आगाह करते हुए लड़की तेज़ आवाज़ में आदेश दे रही थी।

खिड़की के पास बैठा-बैठा रिबाक रास्ते का शुरू से आख़िर तक अवलोकन कर रहा था—टूटे शीशे की जगह लगा काड़ा उसे अच्छी तरह छुपाये था। खिड़की की देहली की नम सड़ी लकड़ी पर दवाइयों की बहुत-सी

ख़ाली शीशियाँ, लिनेन के रेशों का एक गोला व चीथड़ों की बनी एक गुड़िया पड़ी थी। स्याही से गुड़िया की आँखें व मुँह बनाया गया था। सोल्तिकोव मेज़ के दूसरे सिरे के पास लेटा था। वह नीन्द मे घरघराहट भरी साँस ले रहा था। उसे अधिक सुविधा व सुरक्षा मिलनी चाहिए लेकिन इसके लिए गृहस्वामिनी के लौटने की प्रतीक्षा करनी होगी। बेसब्री से खीजते, परेशान होते रिबाक को अपने साथी के गले से निकलती घरघराहट के कारण थोड़ी चिढ़ हो रही थी और वह अपने दुर्भाग्य पर अधिकाधिक खिन्न हो रहा था। और यह सब सोल्तिकोव के कारण हुआ था। रिबाक हृदयहीन नहीं था लेकिन चूँकि वह ख़ुद हमेशा काफ़ी स्वस्थ रहा था, बीमार लोगों के प्रति उसे कोई बहुत अधिक सहानुभूति न थी। वह समझ नहीं पाता था कि लोग ठण्ड लगकर बीमार कैसे हो जाते हैं। "लड़ाई के समय बीमार पड़ने की बात सोचना सचमुच बहुत अजीब है," वह सोचता।

सेना में अपने लम्बे सेवाकाल के दौरान उसमें कमज़ोर, बीमार व आम तौर से क़िस्मत के मारे उन लोगों के प्रति थोड़ी उपेक्षा आ गयी थी जो इस या उस कारण से कुछ कर पाने में असमर्थ थे। वह ख़ुद अपनी ओर से हमेशा सफल होने का दावा कर सकता था। निस्सन्देह, लड़ाई से पहले बात ऐसी न थी—ख़ास तौर से पढ़ाई के बारे में। पढ़ाई में धैर्य व अध्यवसाय की ज़रूरत थी और रिबाक का मन उसमें रमता न था। वह मेहनत, मुसीबत व विघ्न-बाधाओंवाले व्यावहारिक काम ज़्यादा पसन्द करता था। इसी कारण तो उसने कम्पनी सार्जेण्ट मेजर का काम तीन सालों तक किया था: उसमें चरित्र बल था ही और शक्ति-स्फूर्ति भी पर्याप्त थी। एक तरह से लड़ाई में उसे और आसान जीवन, कम से कम बहुत अधिक सीधा-सादा प्रतीत हुआ: लक्ष्य एकदम स्पष्ट था और दूसरे मामलों पर वह अधिक सोच-विचार नहीं करता था। गुरिल्ला जीवन काफ़ी कठिन ज़रूर था लेकिन मोर्चे पर बितायी गयी पिछली गर्मी से तो आसान ही था और रिबाक सन्तुष्ट था। अब तक भाग्य ने उसका साथ दिया था, बुरी से बुरी आपदाएँ उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं पायी थीं और अपने अनुभव से उसने जान लिया था कि उनके युद्धकौशल की मुख्य बात थी निर्भीकता, सक्रियता तथा फ़ैसला लेने में शीघ्रता। निस्सन्देह, गुरिल्ला युद्धनीति की सारी विशेषता इसी में निहित थी कि ज़िन्दा रहा

जाये और जहाँ भी मौक़ा मिले, दुश्मन पर आघात किया जाये। और इस सम्बन्ध में वह ख़ुद को एक अच्छा गुरिल्ला महसूस करता था।

"मम्मी! मम्मी आ रही है!" पर्दे के पीछे से बच्चे उल्लसित स्वर में चिल्ला पड़े।

रिबाक ने तेज़ी से खिड़की के बाहर नज़र डाली और एक औरत को जल्दी-जल्दी झोंपड़े की ओर आते देखा। उसका लम्बा काला स्कर्ट, भेड़ की खाल का ख़स्ताहाल कोट, बालों के कारण उभरे सिर पर बँधा रूमाल —इनसे पता चलता था कि वह जवान नहीं लेकिन वह बूढ़ी भी न थी। उस पर नज़र रखते हुए रिबाक सावधानीपूर्वक खिड़की के पास से हट आया। बच्चों के शोर से सोल्तिकोव जाग उठा था लेकिन रिबाक को पास में ही देखकर वह फिर बेंच पर पसर गया।

जब ड्योढ़ी से कुण्डी की खटखटाहट आयी, रिबाक बेंच के सिरे पर बैठकर ख़ुद को शान्त व भलामानस दिखाने की कोशिश करने लगा। उसे यथासम्भव शालीनता के साथ गृहस्वामिनी के साथ पेश आना चाहिए जिसके वह भयभीत न हो। वह किसी भी तरह उसके प्रति कठोरता नहीं दिखाना चाहता था क्योंकि उसके यहाँ सोल्तिकोव के ठहरने की व्यवस्था करनी थी।

उसके दरवाज़ा खोलने से पहले ही बच्चे धक्कम-धक्का करते पर्दे के पीछे से निकल आये। पर्दा उठाकर दो लड़कियाँ खुले में आ खड़ी हुई थीं और पाँच साल का एक लड़का फटी पैण्ट पहने नंगे पाँव दरवाज़े की ओर दौड़ते हुए चिल्लाकर बोल उठा: "मम्मी, मम्मी! यहाँ गुरिल्ले हैं।"

अन्दर आते ही माँ ने आगे बढ़कर बच्चे को बाँहों में उठा लेना चाहा लेकिन उसके शब्द सुनकर उसके चेहरे पर तनाव आ गया और उसने खटके के साथ अजनबी की ओर देखा।

"शुभ दिन!" अपने स्वर में अधिकाधिक चाशनी घोलते हुए रिबाक बोला।

लेकिन औरत के थके चेहरे से क्षणिक आश्चर्य के भाव मिट चुके थे। उसने मेज़ पर रखी ख़ाली प्लेट की ओर सख़्त नज़र से देखा।

"शुभ दिन," वह सर्द लहजे में बोली। "देखती हूँ, अपना ही घर बना लिया है।"

"हाँ, देख ही रही हो। हम तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे थे।"

"आप लोगों की मैं और क्या सेवा कर सकती हूँ?"

नहीं, यह रिबाक की आशा के विपरीत था। स्पष्ट रूप से औरत उसके दोस्ताना लहजे पर ध्यान देने को इच्छुक न थी। उसकी आवाज़ कुछ रुष्ट व कर्कश थी।

वह कुछ भी नहीं बोला और ध्यान से औरत को ख़स्ताहाल मेषचर्म के कोट के बटन खोलते, सिर का रूमाल उतारते देखता रहा। उसके उलझे बाल नीचे लटकने लगे थे, कान की लौरें गन्दी थीं और उसका खिंचा, फीका चेहरा जवान होने के बावजूद मुँह के पास अकाल झुर्रियों से घिरा था। इन सब से उसके निरन्तर मेहनत-मज़दूरी करने, कठिनाइयों व चिन्ताओं से ग्रस्त जीवन भोगने का पता चलता था।

"तुम्हें और क्या चाहिए? रोटी? सूअर की चर्बी? या फिर ऑमलेट के लिए तुम्हें अण्डे चाहिए?" एक खूँटी पर सिर का रूमाल फेंकते हुए उसने कहा और एक बार फिर मेज़ पर रखी प्लेट की ओर देखा।

"हम जर्मन नहीं हैं," रिबाक शान्तिपूर्वक बोला।

"और तुम कौन हो सकते हो? लाल सैनिक? सैनिक तो मोर्चे पर लड़ रहे हैं और तुम लोग घरों के पिछवाड़ों में छिपते फिर रहे हो। और तुम्हें आलू चाहिए, खीरे चाहिए! गेल्का! लेनिक को ले जाओ!" उसने बड़ी लड़की को आवाज़ दी और कोट उतारे बिना वह अँगीठी के पास रोटी सेंकने और खाना पकाने के बर्तनों को अपनी ख़ास जगह पर बॉल्टी को दरवाज़े के पास और झाड़ू को कोने में रखती व्यस्तता का दिखावा करने लगी।

सोत्निकोव ज़ोर-ज़ोर से खाँसने लगा था। कनखियों से उसकी ओर देख वह अप्रसन्न तो दिखी लेकिन कुछ बोली नहीं। वह अपना कुछ काम करती रही, गन्दे पर्दे को उसने अँगीठी के नीचे आलों में खोंस दिया। अपनी भूल महसूस करते हुए रिबाक उठ खड़ा हुआ। इस नीच, चिड़चिड़ी औरत के साथ उसे कठोर लहजा अपनाना चाहिए था।

"अच्छा हो अगर सोच-विचार से काम लो! हम तुम्हें कोई नुक़सान पहुँचानेवाले नहीं हैं। और तुम बुरा मानने लगी, किस लिए?.."

"क्यों ऐसी बात करते हो कि मैं बुरा मानने लगी हूँ! अगर मैं बुरा मानती, तुम सिर पर पाँव रख इस घर से भाग खड़े होते। मुँह बन्द ही रखो, अहमक़ो! जैसे पहले मुसीबतें कम थीं!" बच्चों की ओर पलटते हुए वह चिल्लायी। "गेला, मैं तुम से कह रही हूँ न, लेनिक को यहाँ से उठाओ! लेनिक, अभी तुझे मज़ा चखाती हूँ!"

"मैं गुरिल्लों को थोड़ा देखना चाहता था!" बच्चे ने कहा।

"तुझे अभी दिखाती हूँ!" पर्दे की ओर बढ़ते हुए वह धमकाकर बोली और बच्चे पल भर में पर्दे के पीछे ग़ायब हो गये। "गुरिल्ले!"

रिबाक ध्यान से उसकी ओर देखता हुआ सोच रहा था, यह द्योमचिख़ा इतनी नीच क्यों थी। इसके कई सम्भावित कारण उसके दिमाग़ में कौंध गये – शायद किसी पुलिसवाले की बीवी हो या गाँव के मुखिया की रिश्तेदार हो या फिर सोवियत अधिकारियों से उसकी कुछ ठनी हो। लेकिन पल भर सोचने के बाद उसे अपना हर विचार असंगत प्रतीत हुआ क्योंकि इस औरत की हालत देखकर कोई भी कारण ठीक नहीं लगता था।

"तुम्हारा द्योम्का कहाँ है?" उसने अचानक सवाल किया।

चेहरे पर तनाव लाते हुए लगभग भयभीत, चौकस दृष्टि से उसने रिबाक की ओर देखा।

"तुम द्योम्का को कैसे जानते हो?"

"बस जानता हूँ।"

"फिर पूछते क्यों हो? औरतों को कहाँ मालूम कि इन दिनों उनके मर्द कहाँ हैं? हमें अपने हाल पर छोड़ वे चलते बने हैं।"

कोने से झाड़ू उठाकर वह अँगीठी के पास बुहारने लगी। उसकी अस्वाभाविक मुद्रा इन बिन बुलाये मेहमानों के आ धमकने से उत्पन्न उसके प्रचण्ड रोष को प्रकट करती थी। मुख्य बात कैसे शुरू की जाये, अपने आने का मक़सद कैसे समझाया जाये, रिबाक अभी तक तय नहीं कर पाया था।

"देखो, बात यह है। मेरा साथी बीमार है..."

सीधी खड़ी हो उसने सन्देह भरी नज़रों से सोत्निकोव की ओर देखा। सोत्निकोव हिला और कराह रोकते हुए उठने की कोशिश करने लगा। झाड़ू हाथ में लिये द्योमचिख़ा पल भर को बिना हिले-डुले खड़ी रही। रिबाक उठ खड़ा हुआ।

"देख रही हो न, बड़ी बुरी हालत है।"

पैर में दर्द के कारण सोत्निकोव ने झुरझुरी ली, दोनों हाथों से घुटना पकड़े हुए कराह निकलने से रोकने के लिए उसने दाँत भींच लिये थे।

"साली, नासपीटी कूल्हे में जा घुसी है!"

"चिन्ता न करो। लेट जाओ, तुम्हें कोई परेशान नहीं करेगा।"

रिबाक जब बेंच पर सोत्निकोव का पैर ठीक से रख रहा था, दयोमचिख़ा भौंहें ताने अभी भी खड़ी थी लेकिन धीरे-धीरे उसके चेहरे के भाव कोमल होने लगे थे।

"पैर के नीचे कुछ रख देना चाहिए," यह कहते हुए वह अन्दर गयी और पल भर बाद ही एक पुराना गद्देदार जैकेट ले आयी। "इससे आराम रहेगा।"

"हाँ, यह ठीक रहेगा!" रिबाक ने सोचा। शायद झगड़ालू बुढ़िया थोड़ी दया दिखा ही दे। जैकेट रखते समय सोत्निकोव ने सिर ऊपर उठा लिया और फिर उस पर सिर रखकर खाँसने लगा। उसकी साँस तेज़ व अटक-अटककर चल रही थी।

"यह तो बीमार है," दयोमचिख़ा एकदम ही भिन्न, कोमल स्वर में बोली। "इसे तो तेज़ बुख़ार है!"

"सब ठीक हो जायेगा," रिबाक हाथ झटक कर बोला। ज्यादा बीमार नहीं।"

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं," वह ग़ुस्से से बोल उठी, "तुम लोगों के लिए तो कुछ भी ज्यादा नहीं! तुम्हें इससे क्या फ़र्क पड़ता है कि गोली लग जाये या चिन्ता से तुम्हारी माँ मरती हो। मैं काढ़ा उबाल दूँगी जिससे वह पी ले और पसीना आ जाये। नहीं तो क़ब्रगाह यहाँ से एकदम दूर नहीं है, समझे!"

"क़ब्र में होना इतना भयानक चीज़ नहीं," सोत्निकोव खाँसते हुए बोला।

नींद से जागने के बाद से वह कुछ ज्यादा वाचाल हो गया था। उसके गाल लाल हो उठे थे, आंखों में व्याकुलताभरी चमक थी और वह अस्वाभाविक रूप से झटके लेता हिल रहा था।

"इससे बदतर क्या हो सकता है?" मेज़ पर से कटोरे उठाते हुए दयोमचिख़ा ने जिज्ञासा से पूछा। "तुम दोज़ख़ पर विश्वास नहीं करते?"

"हम जन्नत पर विश्वास करते हैं," आंखों में चमक लाते हुए रिबाक ने कहा।

"तुम्हारे वहीं पहुँचने की उम्मीद है।"

चरमराती आवाज़ के साथ उसने अँगीठी खोल, झँझरी के पास कुछ तलाशते हुए गर्म चिनगारियों पर एक बर्तन रख दिया। लेकिन उसकी मनोदशा अब पहले से सुधरी प्रतीत होती थी, अब वह शान्त, कुछ-कुछ खुश भी दिखाई देने लगी थी। यह देखकर रिबाक ने सोचा, शायद आख़िर में सब ठीक-ठाक निबट जाये।

"क्या हमें घाव धोने के लिए थोड़ा-सा गर्म पानी मिल सकता है, प्यारी? देखती हो, घायल हो गया था।"

"मेरी आँखें हैं। मैं जानती हूँ, कुत्ते ने नहीं काटा है! स्तारोसेल्य के पास रात भर गोलियाँ चलती रही थीं," अँगीठी के काँटेदार दाँते पर झुकते हुए वह बोल उठी। "कहते हैं, किसी पुलिसवाले को गोली लगी है।"

"पुलिसवाले को?"

"हाँ।"

"तुम्हें किसने बताया?"

"गाँव की औरतों ने।"

"हाँ, औरतों ने बताया, तो ठीक ही होगा," दाँत निपोड़ते हुए बेंच के सिरे पर बैठकर रिबाक बोला। "वे सब कुछ जानती हैं।"

दयोमचिख़ा ग़ुस्से से पलट पड़ी। "जानती हैं, जरूर जानती हैं! वे तुम से ज्यादा जानती हैं, नहीं तो तुम पूछते नहीं।"

एक केतली में पानी लाकर उसने दे दिया। फिर वह पर्दे के पीछे बच्चों के पास चली गयी।

"मैं यहाँ से हट जाती हूँ जिससे कि तुम घाव साफ़ कर लो। मेरा ख्याल है, तुम मुझसे अपनी पतलून उतरवाने की आशा नहीं रखते।"

"ठीक है, ठीक है," हामी भरते हुए रिबाक सोत्निकोव के पास चला आया। "चलो। तुम्हारा बूट उतार दूँ।"

सोत्निकोव ने दाँत भींचकर दोनों हाथों से कसकर बेंच पकड़ ली और रिबाक ने उसका गीला, ख़ून से सना बूट उतार डाला। अब पतलून उतारनी होगी और बेचैन हो सोत्निकोव अकस्मात बोल उठा, "मैं ख़ुद उतार लूँगा।"

हालाँकि दर्द के मारे जान निकली जा रही थी, सोत्निकोव ने ख़ून से सनी पतलून खोलकर घुटने तक सरका दी। उसके शरीर पर जमे

ख़ून के थक्कों के बीच रिबाक ने आख़िर ज़ख्म को ढूँढ़ ही निकाला। यह बहुत छोटा-सा था, थोड़ा सूजा-सूजा, चारों ओर से नीली-नीली धारियाँ पड़ी थीं। घाव देखने में ख़तरनाक नहीं लगता था। और ठीक गोली के घाव की तरह ही वह अभी भी थोड़ा-थोड़ा रिस रहा था। कूल्हे की दूसरी तरफ़ कोई छेद नहीं था यानी गोली अभी भी अन्दर में ही थी। यह बात थोड़ी ख़तरनाक ज़रूर थी।

"हाँ, यह अन्दर ही है," रिबाक चिन्तापूर्वक बोला। "इसे बाहर निकालना होगा।"

"कोई बात नहीं। तुम तो नहीं निकालोगे? फिर मुँह फाड़कर देखते रहने से कोई फ़ायदा नहीं," सोत्निकोव खीजते हुए बोला। "बस ऊपर से पट्टी बाँध दो। बाँध रहे हो?"

"ख़ैर, हम कुछ सोचेंगे। क्या पट्टी बाँधने के लिए कुछ मिल सकता है?" रिबाक आवाज़ दे एक गीले तौलिये से सूखा ख़ून पोंछने लगा।

दर्द की अधिकता से सोत्निकोव का पर लरज़ उठता लेकिन मन कड़ा करके उसने सहन कर लिया और रिबाक सोच रहा था कि घाव ज्यादा गम्भीर नहीं, हाँ, गोली अगर हड्डी तक न पहुँची हो। गोली निकाल ली जाय तो घाव को भरने में एक महीना लगेगा। ज़रूरत थी बस एक महीने तक कहीं छुपकर पड़ा रहा जाये जहाँ जर्मन न पहुँच पायें।

शीघ्र ही द्योमचिख़ा लिनेन का एक साफ़ टुकड़ा लिये आ पहुँची और सोत्निकोव लजाकर सिकुड़ गया।

"मुझसे लजाने की कोई ज़रूरत नहीं। यह लो, इससे बाँध दो!"

जब रिबाक घाव पर पट्टी बाँध रहा था, सोत्निकोव दाँत भींचे किसी तरह से ख़ुद को चिल्लाने से रोके रहा और जैसे ही रिबाक ने पट्टी बाँधना ख़त्म कर लिया, वह पूरी तरह भहरा कर बेंच पर लेट गया।

"ऑपरेशन पूरा हुआ, प्यारी!"

"मैं कोई अन्धी नहीं!" दरवाज़े के पास आकर द्योमचिख़ा बोली।

"अब क्या किया जाये? असली बाधा तो यही है।" स्पष्ट रूप से उलझन में पड़ते हुए रिबाक टोप को सिर के पीछे करके गृहस्वामिनी से बोला।

"मैं क्या कह सकती हूँ?"

"वह चल नहीं सकता, यह तो निश्चित है।"

"यहाँ तो चलकर ही आया है!"

ज़ाहिरी तौर पर वह रिबाक की बात का आशय भाँप चुकी थी और जब उनकी नजरें मिलीं, दोनों ने एक-दूसरे की ओर चौकसी से देखा। शब्दों से कहीं ज्यादा उनकी आँखें कह रही थीं। एक बार फ़िर रिबाक को अनिश्चितता महसूस हुई। वह इस बात को भी अच्छी तरह समझ रहा था कि जो बोझ वह उस औरत के कन्धों पर डालना चाहता था, उसके लिए काफ़ी भारी था। उसकी बात मान लेने से जो ख़तरा था, वह उसे भी भली-भाँति जानती थी।

तभी उनकी यह छिटपुट, टाल-मटोलवाली बातचीत थम गयी। नतीजे की प्रतीक्षा करता सोत्निकोव ख़ामोश था और रिबाक ने पलटकर खिड़की से बाहर की ओर देखा।

"जर्मन!"

वह दरवाज़े की ओर इस तरह उछल पड़ा मानो बिच्छू ने डंक मार दिया हो। पल भर में ही उसने क़ब्रगाह में कई सशस्त्र लोगों को देख लिया। वे बिना हिले-डुले खड़े थे—यह बात तो स्पष्ट थी लेकिन वह यह नहीं देख पाया था कि उनके मुँह किस ओर थे। पीठ के पीछे बन्दूकें लटकाये परछाइयों की उसे क्षणिक झलक भर मिली थी।

सोत्निकोव उठ खड़ा आ और बन्दूक उठाने की कोशिश में उसने हाथ को लरज़ाते ढंग से आगे बढ़ाया। औरत तो जैसे ज़मीन में गड़कर ही रह गयी थी, उसके चेहरे का रंग उड़ गया था—मौत की तरह पीला। खिड़की से बाहर दुबारा देखने के लिए रिबाक वापस वहाँ लौट आया।

"आ रहे हैं! उनमें से तीन इधर ही आ रहे हैं!"

निस्सन्देह, क़ब्रगाह से तीन आदमी उनके पदचिह्नों का अनुसरण करते पगडंडी पर चले आ रहे थे। यह देखते ही रिबाक का दिल डूबने को हो आया। इतना अधिक वह कभी भयभीत नहीं हुआ था—पिछली रात में भी नहीं। निस्सन्देह, यहाँ से भाग निकलने की कोशिश सबसे बड़ी बुद्धिमानी होती लेकिन बन्दूक हाथ में लिये बेंच पर गड्ड-मड्ड हुए सोत्निकोव को देखकर उसने महसूस कर लिया, इसका सवाल ही नहीं उठता था। द्योमचिख़ा भी साफ़ तौर पर सब कुछ समझ गयी थी और भयग्रस्त स्वर में बुदबुदाकर बोल उठी:

"अटारी पर! जल्दी से अटारी पर चढ़कर छुप जाओ!"

बेशक, किसी किसान के घर में अटारी के अलावा छुपने को और कौन-सी जगह मिल सकती थी! छत के एक कोने में अटारी पर चढ़ने के लिए एक काला-सा मुँह बना था। सीढ़ी थी नहीं, इसलिए पत्थर की चक्की पर उछलकर खड़ा होते हुए रिबाक ने बन्दूक अन्दर घुसेड़ दी और सोत्निकोव से कहा:

"अपनी बन्दूक मुझे दे दो!"

अपनी बाँहें फैलाये सोत्निकोव द्योमचिख़ा का सहारा लिये लड़खड़ाती चाल में दरवाज़े की ओर बढ़ आया। उसने बन्दूक रिबाक को थमा दी और रिबाक ने अन्धेरे मुँह में उसे घुसेड़कर चक्की के ऊपर लगभग गिरते पड़ते सोत्निकोव को उस पर खड़ा कर दिया। अटारी का मुँह अभी भी दूर था लेकिन दीवारों पर पैर रगड़ते हुए वह किसी तरह बल खाकर ऊपर चढ़ ही गया। उसने ऊपर चढ़कर सोत्निकोव के फैलाये हाथ थाम लिये और नीचे से द्योमिचिख़ा उसे धकेलकर चढ़ने में मदद करने लगी। भरपूर कोशिश करते हुए सोत्निकोव घिसट-घिसटकर ऊपर चढ़ने लगा और आख़िर अटारी के सिरे पर चढ़ ही गया।

"वहाँ सन का रेशा पड़ा है। उसके पीछे चले जाओ!" नीचे से द्योमचिख़ा ने आवाज़ दी। अटारी की मुलायम मिट्टीवाली ज़मीन पर रिबाक दौड़ पड़ा। ड्योढ़ी की तरह यहाँ भी काफ़ी अन्धेरा था हालाँकि ओलतियों व ढलुआ छत में बाहर को निकली खिड़की से थोड़ी-थोड़ी रोशनी आ रही थी जिससे ईंटों की बनी मोटी चिमनी, एक लम्बी लकड़ी पर बेकार कपड़े व उसके नीचे पड़े चरखे का टूटा पता उन्हें चल गया। कुछ दूर, ओलतियों के नीचे सन के रेशों का एक बड़ा-सा ढेर दिखाई दे रहा था।

"जल्दी से यहाँ आ जाओ!"

बन्दूक को पास में थामे हुए सोत्निकोव हाथों-पैरों के सहारे रेंगकर रिबाक की बताई जगह पर चला आया। अपने बूट से रिबाक ने रेशों का ढेर सोत्निकोव के ऊपर उछाल दिया और वह ख़ुद उसके पीछे ढलुआ छत के नीचे दुबक गया।

वे चुपचाप लेटे रहे, उन्हें साँस लेने की भी हिम्मत नहीं हो रही थी। पटसन की तीखी गन्ध उनकी नाकों में घुस गयी और उसके सिरे उनके

चेहरों को खरोंचते हुए कॉलर के पीछे चुभ रहे थे। रिबाक कान लगाकर सुनने की भरपूर कोशिश कर रहा था कि जर्मन वास्तव में उनके पदचिह्नों का अनुसरण करते यहाँ तक आ पहुँचे थे या इस रास्ते से यूँ ही गाँव की ओर जा रहे थे। अगर उनके पदचिह्नों का पीछा करते वे यहाँ तक आ पहुँचे थे तो ज़रूर ही यहाँ की तलाशी लेंगे और आनन-फानन में दोनों को पकड़ लेंगे। सोत्निकोव के गले से निकलती ज़ोरों की घरघराहट के कारण सुनने में थोड़ी दिक़्क़त हो रही थी तो भी दोनों बाहर से आते एक-एक शब्द को सुनने की कोशिश में थे। अब आवाज़ें इतना क़रीब से आ रही थीं कि रिबाक अन्देशा से भर उठा: जर्मन द्योमचिख़ा से बातें कर रहे थे।

"हलो, प्यारी! आजकल जीवन कैसा कट रहा है?"

यह पुलिसवाले थे: उनके पहले शब्दों से ही रिबाक ने पहचान लिया। वे सीधे अहाते से होकर दरवाज़े की ओर बढ़ रहे थे। किसी कारणवश द्योमचिख़ा चुप थी और रिबाक बेचैनी के साथ उनके यहाँ से चले जाने की दुआ कर रहा था।

"इतना मुँह क्यों फुलाये हो? हमें अन्दर नहीं बुलाओगी?" नीचे से हल्की आवाज़ सुनाई दी।

"तुम जैसों के लिए क़ब्रगाह ही सबसे अच्छी जगह है," जवाब सुनाई दिया।

"यह बात करने का उचित ढंग नहीं," रिबाक खिन्न होते हुए सोच रहा था। "मुसीबत मोल लेने में कोई तुक नहीं।" औरत की धृष्टता से वह भयभीत हो उठा, कहीं कोई उल्टी-सीधी बात मुँह से निकली और मुसीबत टूटी।

"तो फिर क्या बात है? हमें देखकर तुम्हें ख़ुशी नहीं हुई?"

"ज़रूर, बहुत ख़ुशी हुई!"

"ज़रा देखो इसे! वोद्का है?"

"क्या इसे भठियारखाना समझ रखा है?"

"तो फिर हमें थोड़े सासेज ही खिलाओ।"

"बहुत बड़ी चीज़ चाहते हो? अगर चाहो तो बिल्ली को मारकर सॉसेज तुम्हारे लिये बना दूँगी। ज़रा देखो इन लोगों को सूअर तो ले गये और अब सॉसेज चाहते हैं!"

"वाह," क्या अच्छा स्वागत है!" दूसरी कड़वी आवाज़ सुनाई दी। "मैं शर्त लगाकर कह सकता हूँ तुम अपने गुरिल्ला दोस्तों के लिए फ़ौरन स्वादिष्ट चीज़ तैयार कर दोगी!"

"पिछले छह महीनों से मेरे बच्चों को ही अच्छा खाना नहीं मिला है!"

"हम ख़ुद इसकी तसदीक़ कर लेंगे।"

उसे उन लोगों के साथ इतनी इज्ज़त नहीं करनी चाहिए थी। अब वे अपनी राह चले जाने की जगह यहाँ रुक गये थे। ड्योढ़ी में उनके भारी पद्चाप सुनाई देने लगे थे। लेकिन मकान के अन्दर का दरवाज़ा अभी तक नहीं खुला था और अचानक ऐसी परिस्थिति देखकर रिबाक सर्द पड़कर स्वाभाविक रूप से सोचने लगा: कहीं अटारी पर चढ़कर वे भोजन-सामग्री की तलाश करने लगे तो? लेकिन नहीं, फिलहाल व ओसारे में ही इधर-उधर कर रहे थे। शायद उन्होंने सन्दूक का ढक्कन खोला था क्योंकि कोई भारी-सी चीज़ ठनठनाते हुए फ़र्श पर गिरी थी। हिलने-डुलने से भी भयभीत रिबाक चुपचाप लेटे-लेटे एक सूखे, काले शहतीर की ओर देखते हुए सोच रहा था: नहीं, उनके यहाँ आने की कोई सम्भावना नहीं थी, जैसा कि गाँवों में आम तौर से पुलिसवाले करते थे, वे लोग भी भोजन की तलाश में ही आये होंगे! शायद सड़क पर नज़र रखने के लिए क़ब्रगाह में पुलिसवालों ने कोई चौकी बना रखी होगी।

पुलिसवाले अभी तक ओसारे में ही तलाशी में लगे थे और इधर उसकी बग़ल में लेटा सोत्निकोव बड़े अजीब ढंग से सिकुड़ गया था और उसके सीने की घरघराहट बड़ी भयानक हो उठी थी। भय के मारे रिबाक की तो जान ही निकल गयी: कहीं उसे खाँसी तो नहीं आनेवाली! खाँसी को किसी तरह दबाते हुए वह खाँसा नहीं और नीचे दरवाज़ा धड़ाम से बन्द हुआ और बैठकवाले कमरे से दबी-दबी आवाज़ें सुनाई दीं।

"तुम्हारा बुढ़ऊ कहाँ है? मास्को में?"

"मुझे कहाँ से मालूम?"

"तुम्हें नहीं मालूम? हमें मालूम है। स्टास, इसका बुढ़ऊ कहाँ है?"

"बेशक, मास्को चला गया है।"

"छिनाल उसे छुपा रखने की कोशिश कर रही है। उसे इसके लिए मज़ा तो चखाओ!"

"आह! दोगलो!" द्योमचिख़ा बड़े ज़ोरों से चीत्कार कर उठी। "आज ही तुझे नरक नसीब हो! तेरी बेशर्म आँखें फूट जायें। अपने बच्चों की सूरत फिर न देख सको!"

"तो ऐसी बात है? क्यों? स्टास!"

बच्चे बिसूरने लगे और लड़की एक बार चीख़ने के बाद शान्त हो गयी। और अचानक ही तोप के गोले की तरह सोत्निकोव खाँस उठा। रिबाक को अपने अन्दर कुछ फूटता-सा महसूस हुआ, उसके हाथ अपने आप रेशों के नीचे सोत्निकोव की ओर बढ़ गये लेकिन वह फिर खाँस उठा। घर में अचानक ही शान्ति छा गयी मानो सब के सब उड़नछू हो गये हों। पूरी शक्ति से रिबाक ने अपने हाथ से सोत्निकोव का मुँह दबा दिया और सोत्निकोव अतिशय पीड़ा को झेलने की निराशाजनक कोशिश में बेदम हो रहा था। लेकिन तब तक बड़ी देर हो चुकी थी: उसकी आवाज़ सुन ली गयी थी।

"यह कौन है?" आख़िर एक आवाज़ सुनाई दी।

"कोई भी नहीं। मेरी बिल्ली को ठण्ड लग गयी है, वही खाँसती रहती है," भयभीत आवाज़ में द्योमचिख़ा कह रही थी। अब उसका रोना थम गया था।

लेकिन उसकी आवाज़ में निश्चित रूप से प्रभावकारी दृढ़ता न थी और एक ज़ोरदार आवाज फ़ौरी तौर पर चीख़ उठी: "स्टास!"

यह महसूस करके कि खेल ख़त्म हो चुका था, रिबाक की साँस अटक गयी थी। निस्सन्देह, उसे लग रहा था, अब लड़ने के अलावा कोई चारा न था और गोली चलाकर कम से कम किराये के इन टट्टुओं को तो मार डाला जाये लेकिन कहीं अन्तरतम में आशा की हल्की-सी किरण अभी भी टिमटिमा रही थी: शायद सब ठीक-ठाक ढंग से गुज़र जाये!

दीवार से दरवाज़ा इतने ज़ोरों से टकराया कि पूरा झोंपड़ा ही हिल उठा और सरपट भागते जानवरों के ढोर की तरह पुलिसवाले ओसारे की ओर दौड़ पड़े। धक्का देकर बाहर का दरवाज़ा खोल दिया गया और अटारी थोड़ी रोशन हो उठी। सूनी-सूनी आँखों से रिबाक काले शहतीर की ओर देख रहा था जिसके पीछे एक पुरानी ज़ंगदार हँसिया टँगी थी। छत के अन्दर पुआल पर परछाँइयाँ पड़ रही थीं।

"सीढ़ी! एक सीढ़ी ले आओ!" तेज गम्भीर स्वर ने आदेश दिया।

"सीढ़ी नहीं है। अटारी पर कोई भी नहीं, मैं कह रही हूँ न! तुम लोग चाहते क्या हो?" द्योमिचिखा चिल्लायी, उसके आँसू फिर फूट निकले थे।

दीवार से कोई चीज टकरायी, लकड़ी पर बूटों की रगड़ती आवाजों के बीच बिलकुल पास से एक बेदम आवाज आयी: "अन्दर एकदम अन्धेरा है। कुछ भी दिखाई नहीं देता!"

"देख नहीं सकते? फिर ऊपर चढ़ जाओ! यह आदेश है!"

"ऐ, कौन है वहाँ? बाहर निकल आओ, नहीं तो हम हथगोले से उड़ा देंगे।" ठीक छत के नीचे से एक अप्रत्याशित आवाज सुनाई दी।

लेकिन छत पर चलते क़दमों की आहट अभी तक नहीं सुनाई दी थी—पुलिसवाला अभी तक ऊपर आ चढ़ने की हिम्मत नहीं जुटा पाया था।

"उनके बाहर निकल आने की आशा करते हो? इस तरह तो हम दिन भर यहीं फँसे रहेंगे," फिर गम्भीर स्वर सुनाई दिया। "वहाँ छुपा जा सकता है?"

"हाँ, घास-फूस जैसी कोई चीज़ है।"

"बन्दूक से कोंचकर देखो।!"

"बन्दूक पहुँचती ही नहीं।"

"वाह, क्या खूब सिपाही हो तुम! यह लो सबमशीनगन। इससे गोली बरसाकर देखो।"

"यह तो अन्त है," गर्म-गर्म गोलियों को अपनी धज्जियाँ उड़ाते हुए महसूस करता-सा रिबाक मन ही मन में सोच रहा था। इन कुछ क्षणों का फ़ायदा उठाने के बारे में सोचते हुए उसने इधर-उधर देखा लेकिन बेकार, कोई रास्ता नज़र नहीं आ रहा था: वे भली-भाँति फँस चुके थे। तो क़िस्सा खत्म हो चुका था और अब बाहर निकलकर आत्मसमर्पण करना होगा। सहसा उसकी इच्छा हुई कि आगे बढ़कर सोत्निकोव को ही पहले आत्म समर्पण करना चाहिए था। वही बीमार व घायल था और उसी के खाँसने के कारण दोनों को आत्मसमर्पण करना पड़ रहा था। लेकिन सोत्निकोव बेजान, सिकुड़ा पड़ा था, उसका पूरा शरीर कड़ा पड़ा था, शायद वह साँस भी नहीं ले रहा था।

"आहा, तो तुम बाहर नहीं आओगे! हम भी देखेंगे!"

कोई धातु की चीज़ खटकी और रिबाक इस आवाज से भली-भाँति परिचित था। सबमशीनगन की लिबलिबी गोली बरसाने को तैयार की जा रही थी। सबसे भयानक, अन्तिम हादसा पेश आनेवाला था—उसके बाद कुछ भी नहीं रह जायेगा। जीवन व मृत्यु के बीच पल भर का अन्तर था लेकिन सोत्निकोव निस्पन्द पड़ा था, वह खाँस भी नहीं रहा था। और भय-स्तब्ध रिबाक ने रेशे के ढेर को पैर के झटके से एक ओर उछाल दिया।

"हाथ ऊपर!" पुलिसवाला चिल्लाया।

पुलिसवाला पगलाकर कहीं गोली न चला दे, इसकी दुआ करते हुए रिबाक उठ बैठा। हाथ-पैर के सहारे रेंगते हुए बाहर आकर वह उठ खड़ा हुआ। अटारी के मुँह से फ़र की टोपीवाला सिर झाँक रहा था, वह चौकस, पूरी तरह सावधान था और सबमशीनगन की नली सीधी उसकी ओर तनी थी। रिबाक के लिए सबसे अधिक खतरनाक वही नली थी: यह हर चीज का वारा-न्यारा कर देती थी। आँखों के कोनों से नली की ओर देखते हुए उसने हाथ उठा लिये। चाहे जो भी हो, फिलहाल कोई गोली नहीं चलने जा रही थी और यही बात मुख्य थी।

"अहा, मेरे साँवले-सलोनो, हाथ लग ही गये!" पुलिसवाले ने व्यंग्यात्मक शिष्टाचार से उनका स्वागत किया और अटारी पर चढ़ते हुए अच्छे छुपाव के लिए गालियों की बौछार भी कर दी।

१०

कहीं से एक सीढ़ी लाकर तीनों अटारी पर चढ़ गये। उन्हों ने कोनों की तलाशी ली, सन के रेशे को उलट-पलटकर देखा और बन्दूकें उठा लीं। दो आदमी तलाशी ले रहे थे और तीसरा चिमनी के पास खड़े क़ैदियों को कवर किये था।

सोत्निकोव चिमनी के सहारे झुका खाँस रहा था, उस का नंगा पाँव मुड़ा था। अब वह आराम से खाँसते रह सकता था। विचित्र बात थी कि उसे पुलिस का कोई भय न था; उसे उनके हाथों मारे जाने का भी कोई डर न था: वह अपने को दोषी समझते हुए इस बात से कहीं अधिक शर्मिन्दा था कि उसके कारण ही रिबाक और द्योमचिखा को फँसना पड़ा

था। वह सोच रहा था कि द्योमचिख़ा से आमना - सामना हो, इससे पहले ही धरती फट पड़े और वह उसमें समा जाये। द्योमचिख़ा पर जो मुसीबत उनके कारण आयी थी, वह अगर उनकी आँखें भी निकाल लेती तो यह भी कम ही होता। और इसके साथ ही वह निराशापूर्वक यह भी सोच रहा था कि उन्हें आत्मसमर्पण नहीं करना चाहिए था, पुलिसवाले गोली चलाते तो चलाते: बेशक, इससे उनकी जानें जातीं लेकिन सिर्फ़ दो की ही तो।

गाली-गलौज के साथ पुलिसवाले उन्हें धकिया कर सीढ़ियों से नीचे ले चले। नीचे दहलीज़ के पास द्योमचिख़ा ज़ोरों से सुबक रही थी और पर्दे के पीछे से छोटे लड़के के रोने की आवाज़ आ रही थी। रिबाक चुस्ती के साथ जल्दी-जल्दी सीढ़ी के नीचे उतर आया लेकिन सोत्निकोव को देर लग रही थी क्योंकि वह सिर्फ़ हाथों के सहारे उतरने की कोशिश कर रहा था और यह देखकर रेलवे का काला कोट पहने, शोहदों-सी शक्लवाला भीमकाय सीनियर पुलिसमैन आग-बबूला हो उठा। उसने सोत्निकोव का कॉलर पकड़कर नीचे की ओर इतने जोरों से खींच लिया कि वह सीढ़ी के साथ-साथ ही चक्कियों के ऊपर गिर पड़ा। हालाँकि वह नीचे बहुत ज़ोरों से नहीं गिरा था, उसके ज़ख़्मी पैर में काफ़ी चोट आयी थी और उसकी आँखों के सामने अन्धेरा छा गया। किसी तरह बड़ी तेज़ी से अपनी साँस पर क़ाबू पाते हुए थोड़ी देर बाद ही वह ज़मीन पर से उठ खड़ा हुआ।

"क्या कर रहे हो, हैवानो! देखते नहीं, वह घायल है। आदमख़ोर कहीं के!" द्योमचिख़ा चिल्लायी।

सीनियर पुलिसमैन फ़र टोपवाले से मुख़ातिब हुआ: "स्टास!"

स्टास जैसे इसका मतलब साफ़ समझता था: बन्दूक से स्वच्छन शलाका निकालकर उसने तड़ाक से औरत की पीठ पर प्रहार किया।

"आह!"

"हरामियो!" ख़ुद को नियन्त्रण में रख पाने में असमर्थ सोत्निकोव भर्राई आवाज़ में चीख पड़ा। "औरत पर हाथ उठाने के लिये सचमुच बड़ी मर्दानगी चाहिए!"

क्रोध के विस्फोट से उसमें थोड़ा-सा बल आ गया। दीवार को हाथों से पकड़े हुए वह पैरों पर उठ खड़ा हुआ और काँपते हुए स्टास की ओर

पलट पड़ा। उसके दिमाग़ में यह बात भी नहीं आयी कि उसका क्रोध उसके लिए अन्तिम भी सिद्ध हो सकता है और गोली उसके आर-पार हो जायेगी। वह द्योमचिख़ा की तरफ़दारी किये बिना नहीं रह सका – आख़िर उसकी इस दुःस्थिति का ज़िम्मेदार वही तो था। इसके बावजूद, धड़ाक से गोली चला देने में माहिर स्टास, अभी गोली चलाने को इच्छुक न था और जवाब में सिर्फ़ दाँत निपोड़कर सधे अन्दाज़ में उसने स्वच्छन शलाका बन्दूक के अन्दर डाल ली।

"अपने आप से मतलब रखो!"

सोत्निकोव का क्रोध धीरे-धीरे शान्त होने लगा। अपनी तेज़ चलती साँस पर भी उसने क़ाबू पाने की कोशिश की। अब सब कुछ सीधा-सादा, एकदम जाना-पहचाना था। अगर फ़ौरन गोली नहीं मारी जाती है तो इसका मतलब है, उनसे सवाल-जवाब किया जायेगा, उन्हें सताया जायेगा। चाहे जो भी हो, अन्त में मृत्यु निश्चित थी। अब उसे किसी तरह के बचाव की कोई आशा न थी।

गलियारे में ही आनन-फानन में उनकी तलाशी ले ली गयी। पुलिसवालों ने उनकी जेबें उलट दीं और कारतूसों के साथ-साथ बहुत-सी छोटी-मोटी चीज़ें ज़ब्त कर लीं, चमड़े की पट्टियों से उनकी कलाइयाँ बाँध दीं – रिबाक की पीछे से और सोत्निकोव की आगे से। फिर दोनों को मिट्टी के खुरदरे फ़र्श पर बैठा दिया। यह सब करने के बाद सीनियर पुलिसमैन घर के अन्दर द्योमचिख़ा के पास चला गया और दूसरा यानी स्टास दहलीज़ के पास ही उनकी निगरानी करने रुक गया।

गलियारे की बर्फ़ीली हवा सोत्निकोव के बीमार सीने से टकराने लगी और उसे घुमरी व मितली महसूस हुई। पाला ग्रसित उसके कानों में जैसे डंक चुभ रहे थे – उसकी ट्यूनिक कहीं गुम हो गयी थी – शायद अटारी पर ही छूट गयी थी। इसलिए वह नंगे सिर बैठा था। उसका नंगा पैर भी जमने लगा था और इसके कारण पहले से अधिक पीड़ा उसमें हो रही थी। घुटने में सूजन के कारण उसे मोड़ना मुश्किल था। पाँव खुला होने के कारण बैंगनी होकर सूजने लगा था। उसे उनसे अपने बूट मँगवा लेने चाहिए थे लेकिन उन्हें पहनना कितना कष्टदायक होगा, यह सोचकर वह चुप रह गया था। चाहे जो भी हो, क्या फ़र्क़ पड़ता था, अब वह पैर को काम में तो ला नहीं पायेगा। लगातार खाँसते हुए वह फ़र्श पर

बैठा-बैठा पहरेदार को देखे जा रहा था—वह एक ज़िन्दादिल नौजवान था, उसने चमकदार काले रंग का शानदार टोप पहन रखा था। उसके ख़ूबसूरत से चेहरे पर अप्रत्याशित रूप से प्राय: एक सजीव व सुन्दर उज्ज्वल मुस्कान आ जाती थी। सोत्निकोव के ख़्याल से उसके मन में कोई यौवन-सुलभ स्वत: स्फूर्त चीज़ आती-जाती रहती थी और उसकी यह लगभग सैनिकों-सी परिचित मुस्कान थी। सैनिक इसलिए क्योंकि वह नौजवान गद्देदार सैनिक जाकेट व बछड़े के चमड़े का दानेदार पीला बूट पहने था। काले रंग की अपनी असैनिक पतलून उसने बूट के अन्दर खोंस रखी थी। चमड़े की पट्टी के सहारे बन्दूक उसने कन्धे पर टाँग रखी थी। दूसरा कन्धा दरवाज़े के खम्भे से टिका कर वह कद्दू के बीज कुतरता बार-बार छिलके को थू-थू करके फेंकता जा रहा था। उसकी आँखें किसी गाड़ी के आगमन की प्रतीक्षा करतीं सड़क पर टिकी थीं। लेकिन गाड़ी का कोई ठिकाना न था और थोड़ी देर तक एक पाँव का भार दूसरे पर बेसब्री से बदलते हुए वह बन्दूक को घुटनों के बीच जकड़कर दहलीज़ के पास बैठ गया। वहाँ बैठा-बैठा वह उन्हें ध्यान से देख रहा था। उसकी दृष्टि में दुर्भावना न थी, हाँ, उपहास ज़रूर था।

"अहा, सनई के पीछे जा घुसे थे। हा-हा! तिलचटों की तरह!" उस पर नज़र डालकर रिबाक ने फिर सिर झुका लिया।

"अब तुम लोगों की अच्छी तरह धुलाई-पोंछाई होगी, फिर तुम्हें सूखने के लिए छोटी-सी पुरानी रस्सी से लटका दिया जायेगा!" वह हँसते हुए बोला। वह इतने सहज व शालीन ढंग से बोला था कि सोत्निकोव सोचे बिना नहीं रह सका: "वाह, कैसा ख़ुशमिज़ाज आदमी है।" लेकिन उसकी हँसी उतनी ही अप्रत्याशित रूप से लुप्त हो गयी और अब अपनी भाव-भंगिमा बिलकुल बदलकर वह गालियों की बौछार करने लगा था। "ग़लीज़ कीड़ो! तो तुम्हीं लोगों ने ख़ोदोरोनोक को मारा है! तुम्हें इसकी क़ीमत अदा करनी होगी! खोदोरोनोक के एवज़ में हम तुम्हारा कस-बल निकाल डालेंगे!"

"हम किसी ख़ोदोरोनोक को नहीं जानते," रिबाक उदास स्वर में बोला।

"नहीं जानते? तो रात में शायद और लोग गोली चला रहे थे?"

"कम से कम हम तो नहीं चला रहे थे।"

"ख़ैर, कोई भी हो, उसकी मौत की क़ीमत तुम्हें अदा करनी होगी समझे?"

अब स्टास गम्भीर हो गया था, उसकी आँखें अनिष्टकारी ढंग से भाव-शून्य थीं, उसके चेहरे की सम्पूर्ण मानवीय भावुकता एवं युवकोचित उदारता विलुप्त हो चुकी थी और इनका स्थान दूषित, निर्मम कृतसंकल्प ने ले लिया था।

"क्या तुम सेना में थे?" रिबाक ने शान्तिपूर्वक पूछा।

"कौन-सी सेना?"

"जैसे—लाल सेना।"

"तुम्हारी सेना ठेंगे पर!" स्टास ग़ुस्से से अचानक फट पड़ा, उसकी अभिव्यंजनापूर्ण आँखों में क्रोधाग्नि जल उठी। फिर उसका चेहरा धीरे-धीरे बदलने लगा, उस पर दुबारा कोमलता आ गयी। एक बार फिर उसके चेहरे पर पहले जैसी चित्ताकर्षक मुस्कान खेलने लगी। एक टाँग आगे की ओर फैलाकर वह मिट्टी के फ़र्श पर बूट के सोल से लयपूर्वक ताल देने लगा।

"तो फिर यह कोट तुम्हें कहाँ से मिला?"

"कोट? एक कमिस्सार से। उसे इसकी ज़रूरत नहीं रह गयी थी," रिबाक पर एक लम्बी नज़र डालने के बाद वह आगे बोला: "हम तुम्हारा मेषचर्म का कोट भी ले लेंगे। बुदिला लेगा, उसी की बारी है। समझे?"

"यह बोलते हुए तुम्हारा गला नहीं बैठता?" ख़ुद पर क़ाबू न पाते हुए सोत्निकोव बोल उठा।

स्टास ने उस पर तीक्ष्ण दृष्टि डाली।

"क्या मतलब?"

"मैंने कहा, इन सब से तुम्हें दम घुटने का भय नहीं होता? यानी कोट और बाक़ी दूसरी चीज़ों से?"

"दम क्यों घुटने लगा? हमारे पीछे जर्मनी है, समझे, मन्दबुद्धि? और यारो, जहाँ तक तुम लोगों का सवाल है, अपना काम तमाम ही समझो और शायद तुम लोग इसे अच्छी तरह समझते भी हो!"

ख़ैर, यह बात तो एकदम सीधी-सादी थी, इसके अलावा किसी दूसरी चीज़ की वे उम्मीद भी नहीं कर सकते थे। उदासी की तस्वीर बने

रिबाक ने सिर नीचे लटका लिया। पार्श्व के सहारे अधलेटे सोत्निकोव ने सावधानीपूर्वक हिलने की कोशिश की—कूल्हा लकड़ी का कुन्दा-सा बन गया था और चमड़े की मोटी पट्टी कलाइयों में चुभ रही थी।

एक पुलिसवाला आखिर दो स्लेज गाड़ियाँ लेकर आ पहुँचा। एक गाड़ी सड़क पर ही रुक गयी और दूसरी प्रवेश-द्वार की सीढ़ियों तक आ पहुँची। स्टास उठ खड़ा हुआ। पहले उसने रिबाक को स्लेज पर धकिया दिया और फिर सोत्निकोव को कॉलर से पकड़कर झटके के साथ पैरों पर खड़ा कर दिया। सोत्निकोव किसी तरह स्लेज के पास चलकर पहुँचा और अपने साथी की बगल में गिर पड़ा। पीछे पुलिसवाला बैठ गया। स्लेज चलानेवाला एक भयभीत बूढ़ा था। उसने टखने तक लम्बा, ख़स्ताहाल फ़र का कोट पहन रखा था। वह सहमा-सिकुड़ा-सा अपनी सीट पर बैठा था। दर्द से जूझते हुए सोत्निकोव ने ठण्ड से जमे अपने नंगे पाँव को सिकोड़कर ग्रेटकोट के नीचे कर लिया। उसे बेहोशी-सी महसूस हो रही थी और वह अशक्तता व पीड़ा पर क़ाबू पाने की भरसक कोशिश में लगा था।

पता नहीं क्यों, सीनियर पुलिसमैन अभी तक घर से बाहर नहीं आया था और स्लेज गाड़ियाँ लानेवाला आदमी उसे बुलाने अन्दर चला गया। फ़ौरन ही कई तरह की आवाज़ें व द्योमचिख़ा के सुबकने की आवाज़ें सुनाई दीं। द्योमचिख़ा को यहीं छोड़ देंगे या साथ ले जायेंगे, यह सोचते हुए सोत्निकोव चिन्तापूर्वक उधर ही कान लगाये था। पल भर को ऐसा लगा जैसे वे वहाँ पर किसी चीज की तलाश कर रहे थे। खम्भे से सीढ़ी के टकराने, बच्चों की चीख़-पुकार व फिर द्योमचीख़ा के निराशा भरे क्रन्दन की आवाज़ सुनाई दी।

"यह क्या कर रहे हो, कमीनो! तुम्हें अपनी माँ की सूरत देखने को फिर कभी न मिले!"

"चलो, चलो, चहकती दिखाई दो। मैंने कहा, चहकती दिखाई दो!"

"मेरे बच्चों की देख-भाल कौन करेगा, निष्ठुरो!"

"मुँह न बनाओ!"

सोत्निकोव ने बग़ल की ओर बैठे रिबाक पर नजर डाली। दुख के कारण उसका दाढ़ियों के कड़े ठूठों से युक्त चेहरा बिगड़ा था। और यह वाजिब भी था।

वे उसी रास्ते से आगे बढ़े और क़ब्रगाह के परे मुड़कर सड़क पर जा पहुँचे। सोत्निकोव ने अपना सिर कोट के कॉलर में सिकोड़ लिया था, उसका कन्धा हल्के से रिबाक की पीठ से टिका था, आँखें उसने बन्द कर रखी थीं। स्लेज हिचकोले खा रहा था, उसके नीचे लगी लकड़ी की पट्टी फिसल रही थी। स्टास अभी भी चपर-चपर करके बीज चबा रहा था। उन्हें या तो पुलिस स्टेशन या एस डी ले जाया जा रहा था। यानी अब बहुत थोड़े समय में ही उन्हें अपने होश सम्भालकर सबसे बुरी स्थिति का सामना करना था। निस्सन्देह, वे सच-सच नहीं बतायेंगे लेकिन अपने जंगल से आने की बात कैसे छुपा सकेंगे। यह तो कठिन था। मुख्य बात थी बेचारी द्योमचिख़ा को बचाना। घर पहुँचने पर क़िस्मत क्या गुल खिलायेगी, इससे एकदम अनजान बेचारी हड़बड़ाती हुई आयी थी। पीछे से उसके कुछ चीख़ने-चिल्लाने, बद्दुआएँ देने और सुबकने की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं और ख़ूँख़्वार पुलिसवाला उस पर गन्दी-गन्दी गालियों की बौछार कर रहा था। लेकिन द्योमचिख़ा उससे किसी तरह कम न थी।

"कमीनो! जर्मनों के दुमछल्ले चूहो! मुझे कहाँ ले जा रहे हो? मेरे बच्चों का, मेरे नन्हे-मुन्नों का मेरे बिना क्या होगा! मेरी नन्ही गेलेच्का, तू कैसे रह पायेगी!"

"इसके बारे में तो पहले सोचना चाहिए था!"

"हरामी कहीं का! तू मेरी मलामत की हिमाक़त करता है, जर्मनों का ग़ुलाम! मैंने तेरा क्या नुक़सान किया है?"

"तुमने मुजरिमों को पनाह दी!"

"मुजरिम तो तुम लोग हो, उन्होंने तो ठीक व्यवहार किया। आये और अपनी राह चलते बने। मैं कहाँ से जान पाती कि वे अटारी में जा छुपे हैं? क्या मैं जान-बूझकर बच्चों को मुसीबत में डालती? कमीनो! ख़ून के प्यासे, फ़ासिस्ट हरामियो!"

"चुप, नहीं तो गला घोंट दूँगा!"

"गला तो तुम लोगों का घोंट देना चाहिए, फाँसी पर लटका देना चाहिए!"

"ठीक है। स्टास! पल भर रुकना," पीछे से चीख़ती आवाज़ आयी और दो पतले भूर्ज वृक्षों के बीच में स्लेज गाड़ी रुक गयी।

रिबाक और स्लेजवालक पलटकर देखने लगे। सोत्निकोव किसी भया-

वह घटना की प्रतीक्षा में सिकुड़ गया। द्योमचिखा अचानक आर्तनाद करते हुए धड़ाम से स्लेज पर गिर पड़ी। घोड़े का पट्टा चर्र-चूँ कर उठा, घोड़ा भी घबड़ा कर बर्फ़ पर पाँव पटकने लगा। फिर एकदम ख़ामोशी छा गयी। स्टास स्लेज से उछल कर उठ खड़ा हुआ था लेकिन फ़ौरन ही सन्तोषपूर्वक दमकता अपनी जगह पर आ बैठा।

"मुँह में दस्ताना डाले अब चुप रहेगी, चुड़ैल कहीं की!" वह ख़ुशी से उसकी ओर देखते हुए बोल उठा।

सायास सिर घुमाकर सोत्निकोव ने उधर देखा तो नज़रें पहरेदार से जा टकरायीं।

"वहशी हत्यारो!"

"ऐ, घुसपैठी! थूथन उधर रखो नहीं तो थूड़ दूँगा!" स्टास गुस्से से गरज उठा।

लेकिन अपने प्रतिवादी को सोत्निकोव भली-भाँति जान चुका था, इस-लिए उसने अत्यन्त उपेक्षा से कहा:

"थूड़ के देखो, कमीने कहीं के!"

"हा-हा, थूड़ के देखो! मन में आया तो थूड़ के रख ही दूँगा और कोई पूछेगा भी नहीं। जानते हो न, यहाँ कोई सोवियत नहीं।"

"तो फिर शुरू हो जाओ!"

"जो कह रहा हूँ, कर भी सकता हूँ!" वह चेतावनी देते हुए बोला और दिखावे के लिए बन्दूक उठा ली मानो गोली मार देगा लेकिन बस नली से उसकी पसलियों में धक्का देकर ही रह गया।

सोत्निकोव ने पलकें भी नहीं झपकायीं – वह इस नीच व्यक्ति से तनिक भी भयभीत नहीं था। वह जानता था, ऐसे लोगों को ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहिए, ऐसे लोगों की समझ में वैसी ही भाषा आ सकती थी।

"याद रखो, उस औरत का हमसे या हमारे मामले से कोई मतलब नहीं," वह ख़ास तौर से रिबाक को यह संकेत देने के लिए बोला कि सवाल-जवाब के दौरान इसी तरह का उत्तर देना ठीक रहेगा। "उसकी जानकारी के बिना हम अटारी में जा घुसे थे।"

"अपनी मनगढ़न्त किसी और को सुनाना," बन्दूक नीचे करते हुए स्टास बोला। "बुदिला आनन-फानन में तुमसे सब कुछ उगलवा देगा। थोड़ी और प्रतीक्षा कर लो!"

"तुम्हारे बुदिला पर मैं थूकता हूँ!"

"थूकोगे, जल्दी ही थूकोगे। बस ख़ून ही थूकोगे!"

"इस तरह से बातचीत करके वह मुसीबत क्यों बुलाना चाहता है?" पुलिसवाले के साथ सोत्निकोव की गरमागरम बातचीत सुनते हुए रिबाक रोषपूर्वक सोच रहा था।

सुबह में जिस रास्ते से वे गाँव की ओर आये थे, उसी रास्ते से उन्हें ले जाया जा रहा था लेकिन अब वह खुली ज़मीन उतनी असीम व सपाट नहीं लग रही थी। घोड़ा तेज़ी से आगे बढ़ रहा था, उसकी बर्फ़ से जमी कड़ी पूँछ स्लेज से ज़ोरों की आवाज के साथ टकरा रही थी। इस तेज़ गति से रिबाक की चिन्ता निरन्तर बढ़ रही थी और वह उनकी गति कम हो जाने की कामना कर रहा था। वह दिल ही दिल में महसूस कर रहा था कि आज़ादी के आख़िरी पल समाप्त होनेवाले हैं और इसके साथ ही बच निकलने की सम्भावना भी ख़त्म हो रही थी – यक़ीनन, अब बचने का कोई मौक़ा हाथ आनेवाला न था। अटारी में जा छुपने की अपनी मूर्खता पर वह ख़ुद को कोस रहा था। उसे उस आख़िरी झोंपड़े से दूर ही रहना चाहिए था – यह बात वह भली-भाँति जानता था कि जर्मन आम तौर से वहीं जाते हैं। बिना समझे-बूझे, मज़े से इस बदक़िस्मत गाँव में घुस आने के लिए वह ख़ुद को कभी माफ़ नहीं कर पायेगा। अच्छा होता अगर वह दिन भर कहीं झाड़ियों में पड़ा रहता। दरअसल, शुरू से ही सब कुछ गड़बड़ चल रहा था, जब वह अपने मिशन पर निकला था, सारी बातें इसका संकेत दे रही थीं कि सफल होकर लौटने की आशा कम ही है। लेकिन जो कुछ हुआ, उसके बारे में तो सोचा भी नहीं जा सकता था।

और यह सब सोत्निकोव के कारण हुआ था। अपने साथी के प्रति लगातार बढ़ते जिस रोष को वह ज़बर्दस्ती दबाये था, अब बेक़ाबू हुआ जा रहा था। अगर ठण्ड का मारा सोत्निकोव न होता और अगर उसे गोली न लगी होती तो वे निश्चित रूप से जंगल तक पहुँच जाते। कम से कम पुलिस उन्हें कभी पकड़ नहीं पाती। उनके पास बन्दूकें थीं और वे अपनी रक्षा कर सकते थे। लेकिन बच्चों से भरे घर में अटारी में जा घुसने के बाद बन्दूक को काम में लाने की बात सोचना मुश्किल है।

रिबाक झुंझलाहट के साथ ख़ुद को कोसे जा रहा था। वह जंगल में

बेसब्री से इन्तज़ार कर रहे अपने साथियों की साफ़-साफ़ कल्पना कर सकता था। वे शायद कब के अपनी जेबों में बचे रोटी के आख़िरी टुकड़े खा चुके होंगे। वे इस उम्मीद से वहाँ अटके होंगे कि अब दोनों साथी गाय लेकर लौटनेवाले ही होंगे। ज़रूर ही एक क्या, दो-दो गायें मिल सकती थीं। वह आज तक कभी ख़ाली हाथ नहीं लौटा था। हमेशा वह अपने साथ कुछ न कुछ ज़रूर लाया था—चुराकर या अदला-बदली करके। इस बार भी वह ख़ाली हाथ नहीं लौटता लेकिन सोत्निकोव ने सब चौपट कर दिया।

कोई दस दिन पहले संयोगवश सोत्निकोव से उसकी यारबाशी तब हुई थी जब यूनिट बोर्कोव जंगल में घेरेबन्दी तोड़ने के बाद मुख्य सड़क से आगे बढ़ी थी। उस रात भी उनके साथ हादसा पेश आया था और जब वे सड़क पर पहुँचे उजाला हो चुका था। तिस पर वे मोर्टरों से लैस जर्मनों से जा टकराये थे। जर्मनों ने गोली चलानी शुरू कर दी और गाड़ियों से उतरकर वे उनका पीछा करने लगे। कमाण्डर ने यथासम्भव जर्मनों को अधिक से अधिक देर तक रोके रखने के लिए तीन व्यक्तियों—उसको, सोत्निकोव को और गास्तिनोविच नामक एक दूसरे आदमी को वहाँ तैनात कर दिया था जिससे बाक़ी इकाई वहाँ से खिसक ले। लेकिन मशीनगनों से लैस दर्जनों जर्मनों को सिर्फ़ तीन व्यक्तियों द्वारा बहुत देर तक रोके रखना असम्भव ही था। जर्मनों ने उन्हें पीछे खिसकने पर मजबूर कर दिया और तीनों यदाकदा गोलियाँ चलाते लौट पड़े। जर्मन लगातार गोलीबारी तेज़ किये जा रहे थे और रिबाक को लगा, अन्त क़रीब आ गया है। बदक़िस्मती को क्या कहिये, सड़क के दूसरे सिरेवाली जगह बड़ी छोटी साबित हुई और वे शीघ्र ही बर्फ़ से आच्छादित खुले खेत में जा पहुँचे जिसके आख़िर में छोटे-छोटे चीड़ के वृक्ष थे। उनकी छोटी-सी ख़स्ताहाल यूनिट के बचे-खुचे लोग हड़बड़ाते हुए जल्दी से जल्दी उसे पार करने में लगे थे। दर्जनों जर्मनों की गोलीबारी में से वहाँ से बच निकलने की थोड़ी ही उम्मीद थी और रिबाक व भोंडी चाल से चलनेवाला प्रौढ़-सा स्थानीय व्यक्ति गास्तिनोविच, रुक-रुककर उसे पार करने लगे। उधर सोत्निकोव ने जर्मनों पर ऐसी तेज़ व अचूक गोलियाँ चलानी शुरू कर दी थीं कि उन्हें एक-एक करके आड़ में होना पड़ा। निस्सन्देह, उसने कई जर्मनों को धराशायी कर दिया था। इसके बाद जब रिबाक व गास्तिनोविच पत्थरों के

एक ढेर की आड़ में पहुँच गये, उन्होंने झाड़ियों की ओर गोलियाँ दागनी शुरू कर दीं।

वे पाँच मिनट तक गोलियाँ चलाते रहे जिससे कि सोत्निकोव सुरक्षापूर्वक लौट आये। किसी न किसी तरह जर्मनों की सबमशीनगनों से गोलियों की होती बौछार के बीच से वह सबसे ख़तरनाक जगह से बचकर निकल आया फिर रेंगता हुआ पत्थरों के ढेर के पास पहुँचकर उसने पीछे छलाँग लगायी फिर उन्हें आगे बढ़ने कहा। सौभाग्य से उनके पास तब गोलियों की कमी न थी। सोत्निकोव ने देखते ही देखते एक ज़रूरत से ज़्यादा फ़ुर्तीले जर्मन को मौत के घाट उतार दिया जो बाक़ी जर्मनों से आगे बढ़कर सुरागी गोलीबारी कर रहा था। दूसरों का जोश भी थोड़ा ठण्डा पड़ता प्रतीत हो रहा था, उनका आगे बढ़ना रुक गया था। फिर भी एक गोली गास्तिनोविच को अचानक आ लगी और वह भोंड़े ढंग से पार्श्व के बल बर्फ़ पर गिर पड़ा। सोत्निकोव दौड़कर उसके पास पहुँचा लेकिन उसका काम तमाम हो चुका था और सोत्निकोव उसकी बन्दूक झपटकर रिबाक के पीछे हो लिया।

दोनों एक छोटे से ढूह के पीछे जा छुपे। वह थोड़ी सुरक्षित जगह थी और वहाँ आराम करके आगे भागने से पहले वे अपनी साँसों पर क़ाबू पाना चाहते थे। लेकिन तभी रिबाक को सहसा याद हो आया कि गास्तिनोविच के झोले में एक दिन पहले का डबल रोटी का टुकड़ा बचा था। वे हफ़्ते भर से भूखे थे और रोटी का वह टुकड़ा उसके मन पर इस तरह चढ़ गया कि पल भर हिचकिचाने के बाद रिबाक रेंगकर मृत व्यक्ति के पास जा पहुँचा। रिबाक को सुरक्षा प्रदान के विचार से सोत्निकोव थोड़ा ऊपर उठकर जर्मनों पर गोली चलाने लगा। रिबाक पूरे सौ मीटर दूरी पर लेटे गास्तिनोविच तक पहुँचकर वापस लौट आने में सफल रहा। फ़ौरन डबल रोटी का टुकड़ा आपस में बाँटकर वे बाक़ी यूनिट तक जा पहुँचने के लिए चल पड़े।

तब सब कुछ ठीक-ठाक रहा था। यूनिट ने गोर्ली दलदल के पास पड़ाव डाला और उसकी व सोत्निकोव की—एक-दूसरे से अनजान होने के बावजूद यारबाशी हो गयी: वे पास-पास सोये, एक ही कटोरे से उन्होंने खाना खाया और अब अपने मिशन पर दोनों इकट्ठे ही जीवन की अन्तिम घड़ियाँ गिन रहे थे।

अब निश्चित रूप से बचने का कोई मौक़ा न था। इस बात से कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता था कि उन्होंने किसी तरह का प्रतिरोध नहीं किया था—उनके पास से बन्दूकें व गोलियाँ मिली थीं और यही काफ़ी था कि उन्हें गोली मार दी जाये। जब उन्हें सनई के ढेर के पीछे से निकल आने पर मजबूर होना पड़ा था, तभी से रिबाक इसके अलावा किसी चीज़ की आशा नहीं करता था लेकिन इसके बावजूद...

लेकिन इसके बावजूद उसमें जीने की बड़ी इच्छा थी। अभी तक वह पूरी तरह नाउम्मीद नहीं हुआ था और किसी प्रकार क़िस्मत को धोखा देकर बच निकलने के लिए मौक़े की हर पल आशा कर रहा था। अब उसे सोत्निकोव की कोई परवाह न थी। जब वह क़ैद हुआ था, उसके पूर्ववर्ती बटालियन ने उसे हर प्रकार के प्रतिबन्ध से मुक्त कर दिया था। काश, क़िस्मत ने साथ दिया होता तो सोत्निकोव के प्रति उसकी अन्तश्चेतना निरसन्देह निर्मल रहती। इसके अलावा, किसी घायल व्यक्ति को ऐसी परिस्थितियों में बचा लाने की आशा उससे नहीं की जा सकती थी। आत्मसमर्पण के समय से ही वह मौक़े की तलाश में रहा था: पहले अटारी में, फिर गलियारे में। लेकिन वहाँ कोई मौक़ा था ही नहीं और फिर उसके हाथ भी बाँध दिये गये थे, चमड़े की पट्टियों से लाख कोशिशों के बावजूद हाथ छुड़ाना असम्भव था। साली पट्टियाँ, वह सोच रहा था: सिर्फ़ उन्हीं के कारण मैं मौत को गले नहीं लगाने जा रहा हूँ?

शायद बँधे हाथों के बावजूद क़िस्मत आज़माने की कोशिश की जा सकती थी? लेकिन इसके लिए ठीक-ठीक जगह चुननी चाहिए—खुला मैदान नहीं बल्कि झाड़ीदार दर्रे या चढ़ाई या शायद जंगल में। बदक़िस्मती से यहाँ सिर्फ़ खुला मैदान ही था, एक छोटा-सा टीला था और फिर सड़क सपाट मैदान से गुज़रती थी। एक जगह वे पुल के ऊपर से गुज़रे लेकिन दर्रा बड़ा छिछला था, पेड़-पौधे नहीं थे, कहीं छुपना असम्भव था। अपना सिर ज़्यादा इधर-उधर मोड़ने की कोशिश किये बिना रिबाक आँखों के कोने से दोनों तरफ़ देखे जा रहा था—शायद कोई उपयुक्त जगह मिल ही जाये। लेकिन बेकार। समय बीत रहा था, मंज़िल के क़रीब वे पहुँच रहे थे और इसके साथ ही रिबाक की चिन्ता भी बढ़ती जा रही थी, वह लगभग निराशा हो चुका था। अब उन्हें अपना अन्त अधिकाधिक स्पष्ट दिखाई देने लगा था।

जहाँ तक सोत्निकोव का सवाल था, अपने दोनों के अन्त का निमिष मात्र को भी सन्देह नहीं हुआ था। वह तनावपूर्ण स्थिति में ख़ामोश बैठा था। दुहरी क़सूरवारी की भावना उसे कुचले डाल रही थी—रिबाक के प्रति और द्योमचिख़ा के प्रति। द्योमचिख़ा के बारे में वह ख़ास तौर से परेशान था। वह रात के समय पुलिस के साथ हुई गोलीबारी के बारे में भी सोच रहा था जिसके दौरान कोई ख़ोदोरोनोक नामक आदमी उसकी गोली का शिकार हुआ था। ज़ाहिर था, गोली उसी ने मारी थी।

उनकी स्लेज गाड़ियाँ एक गाँव से गुज़रीं। सड़क की दोनों ओर मुड़े-तुड़े बेंतों की क़तारें थीं और फिर वे सहसा ही मुख्य सड़क पर आ पहुँचे। सुबह काफ़ी बीत चुकी थी लेकिन कुछ चिमनियों से अभी भी धुआँ उठ रहा था और अनुष्ण सूरज पालासिक्त छतों के ऊपर सर्द कुहरे के बीच से झाँक रहा था। उनसे कुछ दूर पर एक औरत कन्धों पर बहंगी उठाये जल्दी-जल्दी चली जा रही थी। रास्ते से होकर जब वह अपने बाहरी दरवाज़े के पास पहुँची, उसने पुलिसवालों से भरी स्लेज गाड़ियों की ओर मुड़कर गुपचुप नज़रों से देखा। बग़ल के झोंपड़े से खुले लटकते बालोंवाली एक नौजवान लड़की बिना जूतों के गलोश पहने बाहर आयी और जूठन फेंक, डरते-डरते दरवाज़े से अन्दर लौट जाने से पहले जिज्ञासापूर्वक सड़क की ओर देखने लगी। कहीं कोई कुत्ता भौंक रहा था और मायूसी से गौरेये फुदक रही थीं, उनके पंखों की फड़फड़ाहट सुनाई दे रही थी। कठिनाइयों व बाधाओं के बावजूद यहाँ सामान्य, रोज़मर्रे का जीवन अपनी गति से चल रहा था—जिस जीवन से सोत्निकोव और रिबाक लम्बे अर्से से बिछुड़े थे।

एक पुल पार करके स्लेज गाड़ियाँ दुछत्तीवाले लकड़ी के एक मकान के पासवाली सड़क पर मुड़ गयीं। गाड़ियाँ अपनी मंज़िल तक आ पहुँची थीं। अजीब बात थी कि सोत्निकोव गाड़ियों के मंज़िल पर पहुँचने की बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहा था क्योंकि स्लेज में बैठे-बैठे ठण्डी हवा के कारण उसकी हड्डियाँ तक जम गयी थीं। मंज़िल पर पहुँचकर पनाह तो मिलेगी, सिर पर छत तो होगी—हालाँकि इस बार पनाह से किसी तरह की सुख-सुविधा

की उम्मीद न थी। इसके बावजूद वह किसी छत के नीचे पहुँचने को तरस रहा था—कम से कम बदन में थोड़ी गर्मी तो आयेगी।

सोत्निकोव को नये, लम्बे-चौड़े फाटक दिखाई दिये। उनके पास ही सन्तरियों का लम्बा कोट पहने एक पुलिसवाला खड़ा था। बन्दूक बाँह के तले दबी थी। अभी वे उससे कुछ दूरी पर थे। पास ही में पत्थरों से बनी एक सुदृढ़ इमारत थी जो शायद पहले कोई दूकान या कार्यालय रही होगी क्योंकि उसके अगवाड़े में चार सलाखेदार खिड़कियाँ थीं। पहरेदार को शायद उन्हीं की प्रतीक्षा थी और स्लेज गाड़ियों के पहुँचते ही उसने बन्दूक कन्धे पर टाँग, फाटक खोल दिये। दोनों स्लेज गाड़ियाँ एक कुशादा अहाते में जा पहुँचीं। वहाँ बर्फ़ साफ़ कर दी गयी थी। बाड़े के पास एक पुराना, जंगाली से जर्जर पगहा था, खलिहान जैसा एक उपभवन था और कोने में लकड़ी का बाहरी गुसलखाना बना था। आस्तीन पर पुलिस का सुचिक्कण बिल्ला लगाये, जर्मन ट्यूनिक पहने एक बड़ा ही चुस्त-सा नौजवान फ़ौरन सीढ़ियों पर आ पहुँचा।

"तो ले आये उनको?"

"बिलकुल ले आये हैं?!" स्टास ने शेखी भरे अन्दाज़ में जवाब दिया। भला हम उन्हें साथ लाये बिना लौटनेवाले थे! यह रहे तुम्हारे खरहे!"

लापरवाही से बन्दूक कन्धे पर लटकाये वह हलकी छलाँग लगाकर स्लेज से कूद पड़ा। अहाते के चारों ओर ऊँचा बाड़ा था: यहाँ से भाग निकलने की कोई गुंजाइश न थी। स्लेज से जब रिबाक व चालक उतर रहे थे, सोत्निकोव ने इमारत का एक जायज़ा लिया—निस्सन्देह, यहीं उनकी सहनशक्ति की चरम परीक्षा होती थी। इसकी दीवारें पोख्ता थीं, एक पोर्च था और सीढ़ियाँ एक तहख़ाने के द्वार तक जाती थीं। सलाखदार खिड़कियों में से एक को प्लाईवुड के टुकड़ों से बन्द कर दिया गया था। लकड़ियों के टुकड़ों पर गोथिक अक्षरों में कुछ अंकित था। यहाँ हर चीज़ साफ़-दुरुस्त थी और जर्मन शासन के दृढ़ स्थानीय सत्ता केन्द्र—इस थाने में मौजूद व्यवस्था उसी का एक नमूना थी। तब तक ट्यूनिकवाला आदमी जेब से एक चाबी निकालकर नीचे सीढ़ियों से तहख़ाने के द्वार तक जा पहुँचा था। द्वार पर आड़े बाड़े के साथ एक बड़ा-सा ताला लगा था।

"नीचे लाओ उनको!"

स्टास, रिबाक व चालक—सब स्लेजों से नीचे उतर रहे थे। कुछ आगे द्योमचिख़ा एकदम मायूस खड़ी थी—उसकी स्थिति इतनी दयनीय थी कि सोत्निकोव का कलेजा फटने को हो आया। हाथ पीछे की ओर बंधे होने के कारण वह कुबड़ों-सी झुकी थी, सिर का रूमाल फिसलकर मुड़ी-तुड़ी स्थिति में गर्दन के पीछे आ गया था। कपड़े का एक दस्ताना उसके मुँह में ठूँसा था और पुलिसवालों को उसे उसके मुँह से निकाल लेने की कोई जल्दी न थी।

बिना किसी सहारे के स्लेज से नीचे उतरने में सोत्निकोव को थोड़ी दिक़्क़त हुई। उतरने के लिए मुड़ने पर पैर में तेज़ दर्द की लहर-सी दौड़ गयी। फिर भी दाँतों पर दाँत जमाकर वह नीचे बर्फ़ पर उतर आया और स्लेज के पास वह फलाँगते हुए थोड़ा आगे बढ़ गया। कुछ सोचकर वह वहीं पर द्योमचिख़ा के आने की प्रतीक्षा करने लगा और द्योमचिख़ा जैसे ही आँखें चुराते उसके क़रीब आ गयी, अपने बंधे हाथों को ऊपर उठाकर उसने उसके मुँह में ठुँसे दस्ताने को बाहर खींच लिया।

"ऐ, औंधी खोपड़ी, जानते हो, तुम क्या कर रहे हो!" पीछे से चीख़ने की आवाज़ें आयीं और अगले पल ही एक पुलिसवाले के बूट के ज़ोरदार प्रहार से सोत्निकोव बर्फ़ पर भहराकर गिर पड़ा।

उसके शरीर में जानलेवा दर्द की लहर दौड़ गयी, आँखों के सामने अन्धेरा छा गया। दाँत भींचकर उसने ख़ामोशी से दर्द सहन कर लिया, उसने न तो हैरानी, न परेशानी दिखायी। ऐसे प्रहार की उसे पहले से ही आशा थी। खाँसते हुए जब वह एक घुटने के सहारे धीरे-धीरे खड़ा हुआ, कहीं पास से सोनियर पुलिसवाला गुर्राकर बोला:

"अबे, नीच कमीसार! इस दख़लन्दाज़ी के लिए हम तुम्हें सबक़ सिखायेंगे! स्टास, इसे बुदिला के पास ले जाओ!"

फुर्तीले स्टास को दो बार कहने की ज़रूरत न थी। वह गोले की तरह सोत्निकोव पर उछल पड़ा और सोत्निकोव फिर अपने बँधे हाथों के बल बर्फ़ पर गिर पड़ा। लेकिन वह हृदयहीन नौजवान पुलिसवाला उसे गिरेबान से पकड़, धकियाता हुआ अहाते के पार, सीढ़ियों से ऊपर, दरवाज़े से अन्दर ले गया। अपने ज़ख़्मी पैर को बचाने की कोशिश में सोत्निकोव का कन्धा दरवाज़े के चौखट से ज़ोरों से टकरा गया। स्टास सोत्निकोव को गलियारे से घसीटते हुए ले गया और पैर की ठोकर से एक दरवाज़ा खोल-

कर उसे अन्दर फ़र्श पर उछाल फेंका। फ़र्श पर गीले पदचिह्न थे। फिर सोत्निकोव पर गालियों की बौछार करते हुए बाहर जाकर उसने धड़ाम से दरवाजा बन्द कर दिया।

गलियारे से आती पदचापों और बग़ल के कमरे से आती लगातार दबी-दबी गुनगुनाहट की आवाज़ों के अलावा वहाँ एकदम शान्ति छा गयी थी। ऐसा लगता था जैसे बग़ल के कमरे में किसी को हल्के स्वर में डाँटा जा रहा हो। पैर में होते भयानक दर्द से जूझते हुए सोत्निकोव ने फ़र्श से सिर ऊपर उठाया। कमरे में किसी को भी न देखकर उसे थोड़ी उलझन हुई और मन में सहसा उठती आशा की किरण के साथ उसने खिड़की की ओर देखा। खिड़की में लोहे का भारी-भरकम चौकोर मोखा लगा था। नहीं, यहाँ से भागना असम्भव था। यह बात मन में बैठा लेने के बाद फ़र्श पर भहराते हुए उसने लापरवाही से कमरे का जायज़ा लिया। यह किसी ऑफ़िस का ठेठ कमरा था और मेज़ पर भूरे रंग के ऊनी मेज़पोश के बिछे होने के बावजूद यह पूरी तरह निरानन्द, अनलंकृत था। मेज़ के पीछे एक गन्दी घिसी-पिटी कुर्सी थी और एक नाज़ुक-सी कुर्सी जर्मन अँगीठी के पास रखी थी और उसके काले गोलाकार हिस्सों से सुखद गरमाहट बिखर रही थी। लेकिन दरवाज़े के नीचे से आता हवा का ठण्डा झोंका फ़र्श को शीतल बनाये था। कँपकँपाते हुए, मुँह से निकलती चीख़ को दबाकर उसने पहलू बदला।

"तो सड़क यहाँ ख़त्म होती है!" वह सोचने लगा। "अब तो बस डटे रहना है।" इसे वह अपना आख़िरी मोर्चा महसूस कर रहा था जहाँ वह लड़ाई के दौरान कई बार पहुँच चुका था और अब उसमें शक्ति बाक़ी नहीं रही थी। उसे अपनी शारीरिक सहनशक्ति के जवाब दे जाने का भय था, कहीं वह हार न मान ले। बस उसे मात्र इसी का भय था। गर्म हवा में साँस लेने के कारण उसने हमेशा की तरह खाँसना शुरू कर दिया। वह तब तक खाँसता रहा जब तक सीना ज़ोरदार खिंचाव से फूल न उठा और सिर दो टुकड़ों में होता प्रतीत होने लगा। यह जानलेवा खाँसी उसे पिछले दो दिनों से लगातार परेशान कर रही थी। जब वह छोटा-सा बच्चा था, तब भी उसे ऐसी भयानक खाँसी कभी भी नहीं हुई थी हालाँकि जब कभी उसे मामूली-सी ठण्ड भी लगती थी तो माँ आशंकित हो उठती थी क्योंकि सोत्निकोव के कमज़ोर फेफड़ों की चिन्ता उसे हमेशा सताती रहती

थी। लेकिन कभी कुछ नहीं हुआ और कमोबेश स्वस्थ रहते हुए वह छब्बीस साल की उम्र तक पहुँचा था। और अब उसकी नज़रों में स्वास्थ्य उतना महत्वपूर्ण रहा भी नहीं था। उसे दुख सिर्फ़ इस बात का था कि यह निष्ठुर ठण्ड तब उन्हें दुर्बल बना रही थी जबकि उन्हें शक्ति की पहले से कहीं अधिक दरकार थी। अपनी खाँसी की आवाज़ों के कारण वह कमरे में किसी के आने की पदचाप नहीं सुन पाया और उसे अचानक ही अपनी आँखों के सामने बूटों का जोड़ा दिखाई दिया—बूट ज़्यादा नये तो नहीं लेकिन काफ़ी अच्छी तरह साफ़-सुथरे थे, नये सोल लगे थे, ऊपर से चकाचक पालिश लगा था उसने ऊपर की ओर देखा।

उसके सामने अधेड़ आयु का एक आदमी खड़ा था। उसने काले रंग का जैकेट पहन रखा था। बेरंग धारियोंवाली थोड़ी-थोड़ी तेलही क़मीज़ पर उसने टाई बाँध रखी थी। वह सैनिक बिरजिस में था। उसकी छोटी-छोटी, बेधती आँखों में ढीठ हाकिमाना भाव थे। नाक तले छोटी-छोटी कड़ी-सँवरी हिटलरकट मूँछें थीं। सोत्निकोव सोच रहा था कि वह निश्चित रूप से बुदिला नहीं क्योंकि उसकी भावभंगिमा में ऐसी कोई भी अनिष्टकारी बात न थी जिसकी आशा उसे पुलिसवाले की बातें सुनकर हुई थी। लेकिन इसके साथ ही, सामने खड़ा आदमी निश्चित रूप से कोई उच्च पदाधिकारी था और पैर में भयानक दर्द के बावजूद वह यथासम्भव सीधा होकर बैठ गया।

"किसने यह गत बनायी है? गमान्युक?" उस आदमी ने पूछा।

"आपके स्टास ने," सोत्निकोव बीच में ही बोल उठा। उसका लहजा अनपेक्षित रूप से शिकायती था। फिर तुरन्त ही उसे अपने लहजे पर खेद महसूस हुआ।

उस आदमी ने धड़ाम से दरवाज़ा गलियारे की ओर खोल दिया।

"गमान्युक को फ़ौरन मेरे पास भेजो!"

सोत्निकोव की खाँसी थमने लगी थी। अब सिर्फ़ दर्द के साथ कमज़ोरी रह गयी थी। बँधे हाथों के सहारे फ़र्श पर से उठ खड़ा होना बड़ा कठिन था। चुनाँचे, सोत्निकोव चुपचाप दर्द झेलता रहा। उस आदमी को अपनी ख़ैरख़्वाही करते देख उसे तनिक भी हैरानी नहीं हुई थी।

स्टास तेज़ी से कमरे में आया और अन्दर आते ही उसने बूट खटखटाकर जी-हुज़ूरी की।

"सर!"

उस आदमी के सल्वाट ललाट पर बल पड़ गये जो उसके झुर्रीदार चेहरे के लिए बहुत ज्यादा थे।

"मैं यह क्या सुन रहा हूँ? तुम फिर मार-पीट से काम लेने लगे? यह फ़र्श पर क्यों पड़ा है? जब मैं यहाँ नहीं था, तुम उसे क्यों लाये?"

"माफ़ कीजिए, सर!" पहले से भी अधिक सजगता दिखाते हुए स्टास बोला।

लेकिन जिस ढंग से उसने ग़लती स्वीकार करते हुए अपने हाकिम के प्रति शान्तचितता का प्रदर्शन किया था, सोत्निकोव उन दोनों द्वारा जान-बूझकर दिखाई जा रही नाटकीयता को फ़ौरन भाँप गया।

"क्या तुम्हें इसी तरह पेश आने को कहा गया था? तुम्हें जर्मन अधिकारियों ने यही सिखाया है?" पुलिस चीफ़ उसे जवाब देने का मौक़ा दिये बिना बोलता गया और उसका मातहत अपनी अधीनता के भोंड़े प्रदर्शन के साथ-साथ अधिकाधिक सीना फुलाता गया।

"माफ़ कीजिए, सर! अब दुबारा ऐसा नहीं होगा!"

"जर्मन अधिकारी इस बात पर पूरा ध्यान देते हैं कि क़ैदियों के साथ वाजिब, मानवीय व्यवहार हो..."

हद हो गयी! क़ैदियों के साथ जर्मन कैसा व्यवहार करते थे, सोत्निकोव भली-भाँति जानता था और वह बीच में बोल उठने से ख़ुद को नहीं रोक सका।

"किसे झाँसा देना चाहते हैं?"

पुलिस अफ़सर इस तरह तेज़ी से उसकी ओर पलट पड़ा जैसे बात सुन नहीं पाया हो। उसकी त्यौरी चढ़ी थी।

"क्या कहा?"

"तुमने सुन तो लिया। मेरे हाथ खोल दो। मैं इसके कारण ठीक से बैठ नहीं सकता।"

पुलिस चीफ़ थोड़ा हिचकिचाया, उसपर सरोष दृष्टि डाली, फिर कोई नुक़सान महसूस न कर जेब से चाकू निकाल उसके हाथों के बन्धन एक झटके में काट डाले और चाकू वापस रख लिया।

सोत्निकोव ने सुन्न हाथों को आगे किया, कलाइयों पर गहरे निशान पड़ गये थे।

"हम तुम्हारे लिए और क्या कर सकते हैं?"

"मुझे कुछ पीने को दो," सोत्निकोव बोला।

जब तक वे भलमनसियत दिखा रहे थे, सोत्निकोव ने उससे फ़ायदा उठाकर प्यास बुझा लेनी चाही जिससे बाद में उनकी यन्त्रणा भली-भाँति झेल सके।

पुलिस चीफ़ ने गमान्युक की ओर सिर से इशारा किया।

"थोड़ा पानी ले आओ।"

गमान्युक दरवाज़े से निकलकर तेज़ी से गलियारे में ओझल हो गया और पुलिसचीफ़ मेज़ के पीछे जाकर धीरे से अपनी कुर्सी पर जा बैठा। वह अतिशय आत्मसंयम व चौकसी के भाव धारण किये था। इसके साथ ही उसकी भावभंगिमा ऐसी थी मानो वह क़ैदी के लिए कोई बड़ी ही महत्वपूर्ण एवं आशाप्रद बात छुपाने की कोशिश कर रहा हो। उसकी तीव्र चिन्तनयुक्त दृष्टि पल भर को भी सोत्निकोव से नहीं हटी थी।

"तुम कुर्सी पर बैठ सकते हो।"

सोत्निकोव किसी तरह लड़खड़ाते हुए उठ खड़ा हुआ और पहलू के बल कुर्सी पर बैठ गया। एक टाँग आगे को उसी तरह निकली रही। कुर्सी पर बैठने के बाद एक गहरी साँस ले वह अपनी नज़रें दीवारों पर फेरने लगा, अँगीठी से होती उसकी नज़र खिड़की पर जा पहुँची। ऐसा करते समय वह भूल गया कि यहीं उसे यन्त्रणा दी जायेगी और यन्त्रणा के उपकरण यहीं कहीं होंगे। उसे बड़ी हैरानी थी कि कमरे में कोई भी ऐसी चीज़ नहीं दिखाई दे रही थी जिससे लोगों को यन्त्रणा दी जाती थी। इसके बावजूद सोत्निकोव महसूस कर रहा था कि पुलिसचीफ़ के साथ उसके सम्बन्ध आम सलाम-बन्दगी से काफ़ी आगे जा चुके थे और अब उसे गम्भीर बातचीत का सामना करना होगा जो किसी भी तरह सुखद न होनेवाली थी।

तभी स्टास एक बड़े से तामचीनीवाले जग में पानी ले आया और सोत्निकोव गटागट पी गया। उसकी हर हरकत को ध्यान से देखते हुए, कुछ सोचते हुए या किसी निश्चय पर पहुँचने की कोशिश करते हुए पुलिस चीफ़ धैर्य के साथ सोत्निकोव से बातचीत शुरू करने की प्रतीक्षा में था।

"अच्छा तो अब हम एक-दूसरे से परिचित हो लें। क्यों, ठीक है न?" स्टास के कमरे से बाहर जाते ही वह थोड़ी शालीनता से बोला। "मेरा नाम पोर्तनोव है। मैं पुलिस का निरीक्षण अधिकारी हूँ।"

"मेरा नाम आपके लिए कोई मतलब नहीं रखता।"

"शायद, लेकिन फिर भी ?..."

"अगर मैं इवानोव कहूँ," सोत्निकोव बोला। उसके पैर में दर्द होने लगा था।

"जैसी तुम्हारी मर्ज़ी। ठीक है, हम इवानोव लिखेंगे," पोर्तनोव बोला, हालाँकि उसने लिखा कुछ भी नहीं। "किस यूनिट से?"

तो समय बर्बाद किये बिना सीधे असली सवाल पर आ पहुँचा है, सोत्निकोव सोच रहा था। जवाब देने से पहले वह पल भर सोचता रहा और पोर्तनोव मेज़ पर से स्याही के धब्बोंवाला लकड़ी का सोख़्ता हाथों में उठाकर उससे खेलता हुआ लगातार उसे देखे जा रहा था। सोत्निकोव एकटक उसकी अँगुलियों की ओर घूर रहा था। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि क्या कहे, क्या करे: साथ देने का दिखावा करे या कुछ भी बताने से फ़ौरन इनकार कर दे जिससे झूठ न बोलना पड़े और झूठ पकड़ने का मौक़ा ही न मिले। ख़ास तौर पर ऐसी स्थिति में जब उसकी कहानी पर वे विश्वास करनेवाले नहीं थे।

"क्या आप को पूरी आशा है कि मैं निश्चय ही सच-सच बताऊँगा?"

"हाँ, मुझे पूरी आशा है," पोर्तनोव कोमल लहजे में इतने विश्वासपूर्वक बोला था कि पल भर को हक्का-बक्का होते हुए सोत्निकोव प्रश्न भरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगा।

"हाँ, बताओगे।" पोर्तनोव ने दोहराया।

यह अच्छी शुरुआत न थी। निस्सन्देह, वह यूनिट के बारे में नहीं बतायेगा लेकिन दूसरे सवाल भी तो आसान नहीं होते थे। लकड़ीवाले सोख़्ते से खेलते हुए पुलिस अधिकारी इन्तज़ार कर रहा था। उसकी पतली, नाज़ुक अँगुलियों की हरकतें शान्त, विश्वासपूर्ण व पूर्णतया उत्तेजनाहीन थीं लेकिन इसके बावजूद उसके इस सहिष्णुता में फ़ौरीपन का एक भाव था जिसे फ़िलहाल सावधानीपूर्वक छुपाने की कोशिश की जा रही थी। यह सोचना भी विचित्र लगता था कि अहानिकर-सा लगनेवाला यह व्यक्ति निस्सन्देह ही सैकड़ों लोगों को मौत के घाट उतारे जाने के लिए ज़िम्मेदार था। वह किसी पेशेवर हत्यारे से कहीं ज़्यादा गाँव का एक मामूली, क्षुद्र किरानी लगता था। लेकिन इसके साथ ही उसकी सादगी की इस सतह से छलकता प्रछन्न कपट का भाव भी था जो क़ैदी को हमेशा अनिष्टकारी

प्रतीत होता। सोत्निकोव उसके इस प्रछन्न कपट-भाव के खुलकर सामने आने की प्रतीक्षा कर रहा था—हालाँकि वह नहीं जानता था कि सामने बैठे इस आदमी की धैर्यशक्ति की क्या सीमा है और अपने चेहरे से नक़ाब उतारने से पहले वह कितने सवाल पूछेगा।

"तुम्हें किस मिशन पर भेजा गया था? तुम कहाँ जा रहे थे? वह औरत तुम्हारे लिए कितने समय से काम कर रही थी?"

"वह हमारे लिए काम नहीं करती। संयोग से हम उसके घर में जा घुसे और अटारी पर छुप गये। उस समय वह घर पर नहीं थी," शान्तिपूर्ण लहजे में सोत्निकोव ने समझाया।

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं। सब यही कहते हैं। और मेरे ख़्याल से तुम-मुखिया लेसिनी के घर भी उससे मिलने "संयोगवश" ही चले गये थे?"

तो यह बात थी—तो उन्हें मुखिया के बारे में पहले से ही मालूम हो चुका था। निश्चित रूप से उसने उसी शाम रिपोर्ट कर दी थी। दया दिखाने का अच्छा फल मिला था उन्हें! तो जितना वे सोचते थे, पुलिसवालों को उनकी गतिविधि की उससे कहीं अधिक जानकारी थी। सोत्निकोव पल भर के लिए थोड़ी उलझन में पड़ गया। तो जाँच अधिकारी की पूछताछ की बुनियाद निस्सन्देह यही बात थी। पोर्तनोव बड़े ध्यान से अपने सवाल का असर देख रहा था, फिर लकड़ी के सोख़्ते को मेज़ पर झटक उसने एक सिगरेट सुलगा ली। कुछ पलों के बाद सावधानी से सिगरेट केस व लाइटर को मेज़ पर से उठाकर सिगरेट की राख एक-दो बार फ़र्श पर झाड़कर धुएँ के बीच से जवाब की प्रतीक्षा करते हुए वह सोत्निकोव की ओर निहारने लगा।

"हाँ, उसके पास भी हम संयोगवश ही जा पहुँचे," कुछ देर के बाद सोत्निकोव ने गंभीरता से कहा।

"हूँ, यह कोई नयी बात नहीं। तुम बेवकूफ़ नहीं हो। तुम यक़ीनन साफ़ तौर पर तोता-मैना की कहानी सुनाकर विश्वास दिलाने की कोशिश नहीं करोगे? अच्छा होता, अगर कुछ और सुनाते जो इससे कहीं दिलचस्प हो! इससे काम नहीं चलेगा।"

नहीं, इससे तो शायद काम नहीं चलेगा। लेकिन न चले, तो न सही! उसे इस बात की आशा भी तो न थी। सच बात तो यह थी कि उसने किसी चीज़ की कोई उम्मीद नहीं बाँध रखी थी। उसे दुख था तो

सिर्फ़ द्योमचिखा का और वह किसी न किसी तरह उसकी मदद करना चाहता था लेकिन कैसे, यह तो मालूम हो।

"देखो, जो तुम्हारे जी में आये, हम लोगों के साथ करो," सोत्निकोव बोला। "लेकिन उस औरत को हमारे मामले में न घसीटो। उसका इससे कोई वास्ता नहीं। गाँव के किनारे उसका मकान पहला था और उससे आगे हम जा नहीं सके।"

"तुम जख़्मी कहाँ हुए थे?"

"पैर में।"

"मेरा यह मतलब नहीं। तुम जख़्मी किस जगह पर हुए थे?"

"जंगल में। दो दिन पहले।"

"मेरे ख़्याल से, यह कहने से काम नहीं चलेगा," जाँच अधिकारी तीव्र दृष्टि से उसकी ओर देखते हुए बोला। "यह घटना जंगल में नहीं हुई थी, यह पिछली रात को मेन रोड पर हुई थी।"

"उसे सच में मालूम है या मुझे फाँसने की कोशिश कर रहा है?" सोत्निकोव सोचने लगा। जवाब उसे सूझ नहीं रहा था। अगर वह तथ्यों को झुठलाने लगा तो उसकी सच बातों पर भी उन्हें विश्वास नहीं आयेगा। और द्योमचिख़ा के बारे में जाँच अधिकारी को वास्तविकता का विश्वास दिलाना ज़रूरी था हालांकि उसे महसूस हो रहा था, किसी सफ़ेद झूठ के मुक़ाबले इस सिलसिले में उसका विश्वास पाना कहीं ज़्यादा कठिन था।

"मान लो, मैं तुम्हें सब कुछ बता देता हूँ तो क्या तुम उस औरत को छोड़ दोगे? क्या तुम ऐसा वायदा करोगे?"

सहसा पोर्तनोव की आँखें ग़ुस्से से जल उठीं और वे सीधे उसे बेधती-सी महसूस हुईं।

"मैं तुम्हें कोई जवाब देने को बाध्य नहीं! मैं सवाल पूछता हूँ, तुम जवाब दो!"

तो इससे भी काम नहीं चलने को—सोत्निकोव उदास हो सोचने लगा। बात ठीक भी थी। एक बार कोई उनके हाथ में आ जाये तो उसकी चलती बन्द। यह तो पुरानी बात थी। उनका ढंग ही यही था। लगता है, द्योमचिख़ा के बचने की कोई आशा नहीं।

"एक बेक़ुसूर औरत को सज़ा देंगे। उसके तीन बच्चे भी हैं।"

"इसके लिए तुम ज़िम्मेदार हो न कि हम! तुमने उसे अपने गिरोह में शामिल कर लिया है। उसके बच्चों के बारे में तुम्हें पहले ही सोचना चाहिए था," गर्दन अकड़ाते हुए पोर्तनोव ने जवाब दिया। "अब काफ़ी देर हो चुकी है। तुम महान जर्मनी के क़ानूनों से वाक़िफ़ हो?"

"क़ानून? ख़ुद तुम्हें उनसे वाक़िफ़ हुए कितना समय गुज़रा है, कमीनो?" सोत्निकोव ने सोचा। "शर्तिया, बहुत समय नहीं गुज़रा जब तुम कुछ और ही क़ानून सीख रहे थे"! बहरहाल, जाँच-अधिकारी का आख़िरी सवाल उसे बड़ा अटपटा-सा लगा था। ऐसा लग रहा था कैसे पोर्तनोव अपने कन्धों से कुछ दोष महान जर्मनी पर लाद देना चाहता था।

सोत्निकोव कुछ देर तक ख़ामोश रहा और जाँच अधिकारी खड़ा हो, कुर्सी पीछे की ओर खिसकाकर खिड़की के पास चला आया। वह वहाँ खड़ा हो जंगले से बाहर सूनी-सूनी निगाहों से देखता रहा। वहाँ से पुलिस-वालों की आवाज़ें आ रही थीं। एक बार फिर वह कुछ छुपाता-सा प्रतीत होता था और पूछताछ के बारे में ख़ास तौर से किसी तरह की चिन्ता प्रकट नहीं होने देना चाहता था लेकिन दरअसल वह सोत्निकोव को फाँसने की कोई चतुर युक्ति सोच रहा था या फिर शायद किसी निजी मामले की सोच में पड़ा था।

गलियारे में बूटों की भारी आवाज़ों के साथ शोर व गालियों की आवाज़ें भी सुनाई दीं। शायद किसी को जबरन लाया जा रहा था या फिर घसीट कर ले जाया जा रहा था।

जब बाहर का शोर थम गया, पोर्तनोव लेड़े ज़ोरों से फट पड़ा: "यह लुका-छिपी बन्द करो! सुनते हो? बन्द करो यह सब! बकबक छोड़ो और सब कुछ बता दो: यूनिट का नाम, कमाण्डर का नाम, सम्पर्क एजेंण्टों के नाम, नम्बर, अड्डा कहाँ है! और देखो, अब चालबाज़ी न करो! इससे कोई फ़ायदा नहीं होगा।"

"तुम बहुत ज़्यादा जानना चाहते हो, है न?" सोत्निकोव बोला। हमेशा की तरह मूर्खों व उजड्डों को समझाते हुए उसका लहजा स्वाभाविक रूप से व्यंग्यात्मक हो उठा। निस्सन्देह, स्टास या उस जैसे लोगों के साथ बातें करते हुए ऐसे व्यंग्यों का बेअसर होना लाज़िमी था लेकिन जाँच-अधिकारी पर उसका तीर ठीक निशाने पर लगता प्रतीत हुआ। फिलहाल

जाँच अधिकारी ने अपने सूखे हाथों को सिर्फ़ सिकोड़ते हुए इस तरह अपनी बात जारी रखी मानो ध्यान देने की कोई ज़रूरत ही न हो।

"तुम कहाँ जा रहे थे?"

"हम रास्ता भटक गये थे।"

"इससे काम नहीं चलेगा। कुछ और बोलो! सोचने के लिए मैं तुम्हें दो मिनट का समय दूँगा।"

"मैं तुम्हारा समय बर्बाद नहीं करना चाहता। मेरे ख़्याल से तुम बड़े व्यस्त आदमी हो।"

तीर ठीक निशाने पर लगा था। पोर्तनोव के चेहरे की झुर्रियाँ गहरी हो गयीं लेकिन वह खुद पर क़ाबू पाने में सफल रहा। उसने आवाज़ भी ऊँची नहीं की।

"ज़िन्दा रहना चाहते हो?"

"यानी तुम मुझे माफ़ कर दोगे"

जाँच-अधिकारी की छोटी-छोटी आँखें सिकुड़ गयीं, उसने खिड़की से बाहर झाँककर देखा।

"नहीं। हम डाकुओं को माफ़ नहीं करते," खिड़की के पास से तेज़ी से घूमते हुए वह सहसा बोल उठा। उसकी सिगरेट से राख भुरककर उसके बूट की नोक पर गिर गयी: शायद वह अपना सब्र खो चुका था। "हम उन्हें गोली मार देते हैं। हम कोई दूसरा तरीक़ा अख़्तियार नहीं करते। लेकिन गोली मारने से पहले हम तुम्हारा भुर्ता बनाते हैं। हम तुम्हारे जवान शरीर का क़ीमा बना देते हैं। हम तुम्हें थोड़ा मृदु बना देंगे! हम धीरे-धीरे, बड़े सलीक़े से तुम्हारी हड्डियाँ तोड़ते हैं। फिर एलान करते हैं कि तुमने दूसरों के अते-पते बता दिये हैं। जिससे कि जंगल में छिपे तुम्हारे दोस्त, तुम्हारी मौत पर ज़्यादा शोक न करें।"

"तुम्हें यह ख़ुशी हासिल नहीं होगी। मैं किसी का अता-पता बतानेवाला नहीं।"

"तुम नहीं तो कोई दूसरा बता देगा। हम तुम्हारा नाम लगायेंगे। समझे? क्या ख़्याल है तुम्हारा?"

सोत्निकोव कुछ नहीं बोला लेकिन अचानक उसने ख़ुद को बीमार-सा महसूस किया। भौंहों के पास पसीने की बूँदें चुहचुहा आयीं और व्यंग्य की भावना हवा हो गयी। उसने समझ लिया था, यह थोथी धमकी नहीं

थी, न थोथा ब्लैकमेल था: वे कुछ भी कर सकते थे। हिटलर ने उन्हें उनके विवेक से, उनकी मानवीयता से, यहाँ तक कि बुनियादी मानवीय लोकाचार से भी मुक्त करा दिया था और इसके कारण उनकी बर्बरता निस्सन्देह बढ़ गयी थी। वह एक मामूली इनसान भर था। अपने देश, अपनी जनता के प्रति उसके कन्धों पर असंख्य ज़िम्मेदारियाँ थीं, छिपाव-दुराव, छल-प्रपंच के लिए चालबाज़ियों की ओर उसका झुकाव न था। इस मुठभेड़ में स्पष्ट रूप से बड़ी विषमताएँ थीं: प्रतिद्वन्द्वी इसमें हर तरह से आगे था। बड़ी आसानी से पोर्तनोव उसके प्रतिरोध को समाप्त कर सकता था।

पाँवों को फ़र्श पर एक-दूसरे से अलाहदा करके मज़बूती से जमाये पोर्तनोव खड़ा-खड़ा इन्तज़ार कर रहा था। घुटनों के पास बिरजिस झोलंग दिखाई दे रहा था। अब स्पष्ट रूप से शत्रुतापूर्ण हो उठी उसकी तीव्र दृष्टि सोत्निकोव पर टिकी थी। सोत्निकोव को अत्यन्त दुस्सह्य प्रतीत हो रहा था। मस्तिष्क जवाब दे गया था और प्रत्युत्तर में शब्दों को तलाशते हुए वह ठण्डे पसीने से नहा गया था क्योंकि वह महसूस कर रहा था, यह उसका आख़िरी जवाब होगा। पोर्तनोव का दाहिना हाथ धीरे-धीरे मेज़ पर रखे लकड़ीवाले सोंख़्ते की ओर बढ़ रहा था।

"तो?"

"नीच, कमीने कहीं के!" कुछ और न सूझ पाने के कारण सोत्निकोव ग़ुस्से से फट पड़ा।

बड़ी तेज़ी से लकड़ीवाले सोंख़्ते को झटके से उठाकर उसने मेज़ पर ज़ोरों से दे मारा मानो इस रक्तहीन किन्तु भयावह जाँच-पड़ताल की समाप्ति कर रहा हो।

"बुदिला को बुलाओ!" वह चीख़ा।

"बुदिला को जाँच-अधिकारी बुला रहे हैं!" किसी सन्तरी की आवाज़ गलियारे से आयी और पोर्तनोव मेज़ का चक्कर लगाकर शान्तिपूर्वक अपनी कुर्सी पर जा बैठा। अब वह सोत्निकोव की ओर देख भी नहीं रहा था मानो सोत्निकोव का वहाँ अस्तित्व ही न हो। उसने एक सिगरेट सुलगा ली थी। ज़ाहिरी तौर पर उसका काम ख़त्म हो चुका था और अब जिरह का दूसरा दौर शुरू होनेवाला था।

शान्त दिखाई देने की कोशिश करता सोत्निकोव तब तनावपूर्ण हो उठा जब दरवाज़ा खुला और बुदिला दहलीज़ पर आ खड़ा हुआ।

निस्सन्देह, क़ैदियों को यातना देने के लिए पुलिस द्वारा पाला वह कोई स्थानीय गुण्डा था–घोड़ों-सा मुँहवाला, भैंसे-सा हट्टा-कट्टा। उसका पूरा का पूरा ख़ूख़ार, जाहिलाना स्वरूप नितान्त भयावह था लेकिन आस्तीनों के पास से झाँकते उसके अत्यन्त शक्तिशाली प्रतीत होते बड़े-बड़े रोयेंदार हाथ ख़ास तौर से भय पैदा करते थे। बेशक, अन्दर घुसते ही स्वाभाविक रूप से एक अनिष्टकारी गुर्राहट के साथ उसने थोड़ी-थोड़ी भेंगी आँखों से अपने शिकार पर वहशियाना दृष्टि डाली।

पूर्ण अशक्तता महसूस करते हुए सोत्निकोव जहाँ का तहाँ बैठा रहा। फिर धीमे-धीमे, चौकन्ने क़दमों से चलता बुदिला कुर्सी की ओर बढ़ आया। धँसे सीने पर झोलंगते सोत्निकोव के कोट का कॉलर शक्तिशाली पंजे से जकड़कर बुदिला ने झटके के साथ उसे पैरों पर खड़ा कर दिया।

"ठीक से रहो, बोल्शेविक कूड़े!"

१२

"ख़ुद ही मुसीबत मोल ली है।" जब स्टास सोत्निकोव को अहाते से घसीटकर ले गया, रिबाक ने लगभग आक्रोश से भर उठते हुए सोचा। उसका ख़्याल था, पुलिस उसे और द्योमचिख़ा को भी सोत्निकोव के बाद ले जायेगी लेकिन इसके विपरीत, उनके लिए तहख़ाने का दरवाज़ा खोल दिया गया। उन्हें धकेलकर नीचे ले जाने से पहले पुलिसवालों ने रिबाक के हाथ खोल उसकी पतलून से बेल्ट निकाल ली। द्योमचिख़ा को उन्होंने पहले की तरह ही बँधे हाथ व मुँह में कपड़ा ठूँसा रहने दिया।

"नीचे चलो! चेहरे पर मुर्दनी न लाओ!"

तहख़ाने में घुप अन्धेरा था या उजाले से अन्दर आने के कारण रिबाक को ऐसा प्रतीत हुआ था। शुरू में वे एक अन्धेरे गलियारे में आ पहुँचे। आगे-आगे चलते पुलिसवाले ने लोहे की सिटकनी खोली और पीछे से आता रिबाक द्योमचिख़ा की पीठ से टकरा गया और रुककर वह अपनी सूजी, खुजलाती कलाइयों को रगड़ने लगा।

"जल्दी आगे बढ़ो! क्या बात है?" पीछे से एक धक्का देते हुए पुलिसवाला बोला। अन्धेरे में आगे की ओर कोई दूसरा दरवाज़ा अभी-अभी खोला गया था।

चूँकि रुके रहना उचित न होता, रिबाक सिकुड़ते हुए पुलिसवाले द्योमचिख़ा के बीच से निकल गया और चौकसी से सिर अन्दर की ओर बढ़ाते हुए एक छोटे-से दुर्गन्धयुक्त कमरे में जा पहुँचा। पल भर को उसे कुछ भी दिखाई नहीं दिया: दीवार में बहुत ऊँचाई पर बनी खिड़की से मद्धिम-मद्धिम रोशनी छत पर आ रही थी लेकिन नीचे काफ़ी अन्धेरा था। लगभग असह्य गुमसाइन, बदबूदार हवा उसकी नाक से टकरायी और वह आगे बढ़े या न बढ़े, यह सोचते हुए जहाँ का तहाँ खड़ा हो गया।

पीछे से सिटकनी खटकने की आवाज सुनाई दी और द्योमचिख़ा बाहर ही रही। उसे पुलिसवाले कहीं दूसरी जगह ले गये। गलियारे से क्रमशः धीमी पड़ती आवाजें उसे सुनाई दीं।

"इस औरत को हम कहाँ रखेंगे? कोनेवाली कोठरी में?"

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं?"

"यह आज शायद ख़ाली है।"

"हाँ, कल ही जर्मनों ने इसे ख़ाली कर दिया था। बस कोई यहूदी चुड़ैल कहीं बच रही है।"

जब आँखें अन्धेरे की कुछ-कुछ अभ्यस्त हो गयीं, रिबाक को कोने में एक आदमी दिखाई दिया। वह कुछ व्यस्त-सा था, शायद कपड़े उतार रहा था, कोट बिछा रहा था, लगता था, लेटने की तैयारी कर रहा था। घने अंधेरे के कारण उसे देख पाना असम्भव था, जिस ओर हल्की-सी रोशनी आ रही थी, वहीं से उसके सफ़ेद बाल व कन्धे जब-तब दिखाई दे जाते थे।

"बैठ जाओ। खड़ा रहने में कोई तुक नहीं।"

रिबाक चौंक पड़ा लेकिन इसके साथ ही उसे थोड़ी प्रसन्नता भी महसूस हुई क्योंकि आवाज़ कुछ जानी-पहचानी-सी थी। उसे अगले ही पल आवाज याद भी हो आयी: निस्सन्देह, यह आवाज़ मुखिया की थी। तो यह बात थी: उनका नव परिचित, ल्येसिनी का मुखिया प्योत्र कोने में लेटने की तैयारी कर रहा था।

"तुम भी यहाँ आ पहुँचे?" रिबाक आश्चर्य से बोल उठा।

"हाँ, मुझे भी फाँस लाये हैं। भेड़ पहचान ली..."

तो यह बात थी! बड़ी विचित्र बात थी कि वह उस मनहूस भेड़ के

बारे में बिलकुल ही भूल गया था और अब दिन में कहीं उसे भेड़ के मालिक के हश्र का ख़्याल हुआ था।

"लेकिन इससे तुम्हारा क्या वास्ता? हमने तो तुमसे जबरन छीना था।" कुछ-कुछ कृत्रिम आश्चर्य के साथ रिबाक चिल्ला पड़ा ।

"आह, इससे क्या? अगर तुमने जबरन छीना था तो मुझे उसकी रिपोर्ट तो करनी चाहिए थी न? लेकिन उसकी जगह मैं... ख़ैर, अब इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है!"

हाँ, बात तो सच थी, अब इससे बच निकलना मुश्किल था। अब पुलिस पूरी तरह जान चुकी थी। रिबाक सोचता रहा।

कोट के बटन खोले बिना वह उदास हो पुआल के खुरदरे गद्दे पर धम से बैठ गया, पीठ उसने दीवार से टिका ली। उसे अपने अगले क़दम के बारे में कुछ भी सूझ नहीं रहा था लेकिन इन्तज़ार करते रहने के अलावा शायद कुछ किया भी नहीं जा सकता था। उत्तेजनापूर्ण रात की बेहिसाब थकान अब उसे अनुभूत हुई थी, उसे तन्द्रा-सी हो आयी लेकिन दिमाग़ में धमाचौकड़ी मचाते विचार उसे सोने से रोके थे। अचानक उसके दिमाग़ में यह ख़्याल आया कि मुखिया के साथ इस बात पर सहमत हो जाना अच्छा रहेगा कि वे लेसिनी गये नहीं थे और प्योत्र को इसके लिए राज़ी कर लेना चाहिए कि लेसिनी आनेवाले लोग दूसरे थे। अब जब इतना हो ही चुका था तो उस पर इससे कोई फ़र्क़ पड़नेवाला न था, हाँ, शायद उन्हें कुछ फ़ायदा हो जाये। प्योत्र के सम्बन्ध में उसे न तो किसी तरह का पछतावा था, न कोई परेशानी महसूस हुई थी: खाद्य सामग्री की तलाश में कोई पहली दफ़ा उसके साथ ऐसी घटना नहीं हुई थी। और फिर उन्होंने सिर्फ़ एक भेड़ ही तो हथियायी थी और वह भी किसी बाल-बच्चोंवाले बड़े परिवार से नहीं बल्कि मुखिया से—यानी इसमें कोई ग़लत बात न थी। इस मामले में वह पुरसुकून था और उसे उस बात की हैरानी थी कि मुखिया पुलिस को समझाने में असफल हो इस बदबूदार तहख़ाने में बन्द हो गया था।

घण्टा भर या उससे भी ज्यादा समय बीत गया और सोत्निकोव अभी तक नहीं लौटा था। शायद पुलिस ने उसकी हत्या कर दी, रिबाक दुख की हल्की टीस महसूस करते हुए सोचने लगा। बात करने की उसकी कोई इच्छा नहीं हो रही थी। उसे महसूस हो रहा था, किसी भी पल उसे

ले जाने पुलिस का कोई आदमी आ पहुँचेगा और इस तरह वास्तविक दुःस्वप्न की शुरुआत होगी। इस तरह मीन-मेख करते हुए वह पुलिस को झाँसा देने की बात निराशापूर्वक सोचने की कोशिश कर रहा था जिससे या तो वह एकदम बच निकले या आख़िरी फ़ैसला कुछ समय को टल जाये। फ़ैसले को टालने का साफ़ तौर पर बस एक ही उपाय था—जाँच के काम को यथासम्भव ज्यादा से ज्यादा समय तक टाला जाये (आख़िर किसी न किसी तरह की जाँच तो की ही जाती होगी)। ऐसा करने के लिए पुलिस को लुभानेवाली कुछ ठोस दलीलें उसे तलाशनी होंगी क्योंकि अगर पुलिसवालों को हर बात आईने की तरह साफ़ लगी तो वे उन्हें जीवित रखने की ज़रूरत ही नहीं समझेंगे और इसके साथ ही उनका क़िस्सा तमाम हो जायेगा।

तहख़ाने में पूरी ख़ामोशी थी—सिर्फ़ इमारत के ऊपरी हिस्से से ही कहीं से बातचीत व पदचापों की हल्की-हल्की आवाजें आ रही थीं। पदचापों की आवाजें कभी-कभी काफ़ी ज़ोरदार होतीं, किसी तरह के आघातों की दबी-दबी व कर्णकटु चीत्कार की आवाजें भी सुनाई देतीं। ऊपर से सुनाई देती इस सारी खलबली के बावजूद रिबाक सोत्निकोव को भूल नहीं पा रहा था और उसका हृदय डूबने को हो आया—बेचारा, अभागा सोत्निकोव। लेकिन निस्सन्देह, ख़ुद उसके साथ भी वैसा ही कुछ होगा। ऐसे विचारों को दिमाग़ से निकाल बाहर कर देने की कोशिश करते हुए वह सोच रहा था कि शायद उसका ऐसा हश्र न हो और वह सोत्निकोव की मदद भी करने में सफल हो जाये। लेकिन बेशक, यह सोचना भी बेकार ही था। किसी बाहरी आड़े के कारण छोटी-सी खिड़की से मद्धिम धुँधलका झाँक रहा था और मसले पुआल व खिड़की के नीचे बैठे मुखिया के झुके सिर पर एक रोशन धब्बा धीमे-धीमे टिमटिमा रहा था। दीवार के सहारे झुका और अपने उदासीन विचारों में खोया मुखिया भी निस्पन्द बैठा था। अब दोनों ही अपने-अपने ख़्यालों से पीड़ित थे।

"उनका कहना है, किसी ने पिछली रात एक पुलिसवाले को घायल कर दिया है—पता नहीं वह जिन्दा भी है या नहीं," काफ़ी देर की चुप्पी के बाद प्योत्र बोला।

रिबाक के लिए यह कोई नयी ख़बर न थी लेकिन वह इस सम्बन्ध

में एकदम ही भूल चुका था। अब वह और भी अधिक चौकस हो उठा। तेज़ी से उसने विषय बदलने की कोशिश की।

"तो तुम्हें ऊपर पेश किया जा चुका है?" क्षीण आशा के साथ उसने पूछा, शायद अभी उसे जिरह के लिए नहीं बुलाया जाये।

लेकिन प्योत्र ने फ़ौरन ही उसकी आशा भंग कर दी।

"जिरह के लिए न? हाँ! खुद पोर्तनोव ने मुझसे जिरह की थी?"

"कौन-सा पोर्तनोव?"

"जाँच अधिकारी।"

"हूँ, तो जाँच कैसी रही? क्या तुम्हारे साथ बुरी तरह पेश आये थे?"

"नहीं। मेरे साथ क्यों बुरी तरह पेश आयेंगे?"

रिबाक उसकी बात साँस रोके सुन रहा था। उसका क्या हश्र होने वाला है, वह पहले से इसका कुछ-कुछ अन्दाज़ लगा लेना चाहता था।

"मैं तुम्हें बता देता हूँ, पोर्तनोव बड़ा धूर्त है। वह सब कुछ जानता है," वृद्ध मायूसी से बोला।

"लेकिन तुम किसी तरह सही-सलामत निकल आये।"

"कहाँ से निकल आये? मैंने कोई ग़लत काम तो किया नहीं है। मेरा ज़मीर साफ़ है।"

"मेमनों की तरह निर्दोष हैं, है न?"

"मैं पूछ सकता हूँ, मेरा क़सूर क्या है? भेड़ की रिपोर्ट फ़ौरन दर्ज नहीं करवायी, यही न? मैं बूढ़ा आदमी हूँ, रात में ज़्यादा भाग-दौड़ नहीं कर सकता। तुम्हें मालूम होना चाहिए, मेरी उम्र सड़सठ साल है।"

"हूँ ऽऽ," रिबाक बोला। "बिना शक तुम गले में फन्दा डाल लोगे। इसका मतलब होगा, गुरिल्लों के साथ साँठ-गाँठ। पुलिसवाले इसके अलावा कुछ नहीं मानेंगे।"

पहले की ही तरह भावरहित स्वर में प्योत्र बोला "हाँ, ऐसा तो होना ही है, भाग्य में लिखा कौन मिटा सकता है..."

"ओह, कैसा बुज़दिल है!" रिबाक ने सोचा। सड़सठ साल की उम्र में भी धन का मोह सताता है। खुद उसकी उम्र छब्बीस थी और वह अभी जीना चाहता था।

नहीं, उसे ज़रूर संघर्ष करना चाहिए!

मान लो, अगर वह सारे मामले में प्योत्र को फँसा दे तो? अगर वह उसे गुरिल्लों का एजेण्ट बताने की कोशिश करे और कहे कि वह पहले भी कई बार यूनिट की मदद कर चुका है। जाँच अधिकारी शायद इससे चक्कर में पड़ जाय? उन्हें फिर से जाँच-पड़ताल करनी होगी, नये गवाहों को बुलाना पड़ेगा और आख़िरी फ़ैसला कुछ समय के लिए तो ज़रूर ही टल जायगा। शायद जर्मनों की आँखों में इससे प्योत्र का क़सूर बहुत न बढ़े और उन दोनों को भी फ़ायदा हो जाये!

वह पूरी तरह इन्हीं विचारों में खोया था कि तभी पास में पुआल पर किसी तरह की सरसराहट महसूस कर चौंक उठा और कोई जीवित, मुलायम-सी चीज़ तेज़ी से उसके बूट पर से गुज़र गयी। मुखिया ने भी अपना पैर चिड़चिड़ाते हुए झटक दिया: "श ऽऽ, स्साला कहीं का!" और तभी रिबाक को दीवार के पास एक चूहा दिखाई दिया। चूहा फ़र्श पर रेंगता अन्धेरे कोने में ग़ायब हो गया।

"चूहों ने घर बना रखा है," प्योत्र बोला। "लोगों का उन्हें कोई भय नहीं, ऐसे चहलक़दमी करते हैं जैसे यहाँ के मालिक हों। ज़रूर ही इत्सेक के समय से रहते आ रहे होंगे। यहाँ कोई दूकान थी—इत्सेक की मिठाइयों की दूकान। फिर यहाँ किराना दूकान खोली गयी थी। इतने फेर-बदल के बावजूद चूहे यहाँ लेने ही रहे।"

"ऐसे समय में और क्या आशा की जा सकती है?"

"बिलकुल ठीक। कौन उनको भगायेगा? आदमी आदमी का शिकार करने में इतना लगा है कि उसे चूहों की चिन्ता ही नहीं। उससे मन नहीं उकताता तुम्हारा।"

अभी उसने अपनी बात ख़त्म ही की थी कि बाहर गलियारे से भारी बूटों व सिटकनी की जानी-पहचानी आवाज़ें सुनाई दीं। फ़ौरन ही शरद् का दिवाकालीन उजाला उनकी आँखें चौंधिया गया। उसी चौंधियाहट में कन्धे पर कार्बाइन लटकाये बेल्टदार आर्मी जैकेट पहने हृष्ट-पुष्ट स्टास दिखाई दिया।

"दूसरा दस्यु कहाँ है! जाँच-अधिकारी के पास चलो!"

स्टास अरुचिकार ढंग से थोड़ा हँसा और रिबाक को भीतर ही भीतर बड़ा अजीब-सा अनुभव हुआ। शायद आवाज़ सुनते ही वह अत्यन्त उतावलेपन से उछलकर उठ खड़ा हुआ। सोतनिकोव कहाँ था—वह अचानक चिन्तित हो सोचने लगा। निश्चित रूप से पहले उसे यहाँ लाना चाहिए था

फिर जिरह के लिए रिबाक को बुलाना चाहिए था। या कहीं सच में सोलित-कोव को पुलिसवालों ने ठिकाने तो नहीं लगा दिया?

वह विनम्रतापूर्वक सीढ़ियों के पास जाकर इन्तजार करने लगा। स्टास दरवाज़ा बन्द करने के बाद तेजी से पहरेदार के आगे बढ़ गया। अपने आस-पास की हर चीज़ से बेपरवाह वह लगभग मशीनी अन्दाज़ से चल रहा था। रिबाक स्वयं निष्प्रभ-सा महसूस कर रहा था। नहीं, यह भय की भावना नहीं बल्कि लाचारी थी, बलप्रयोग के विरुद्ध किसी इनसान की तरह अपनी रक्षा कर पाने में असमर्थता की भावना यह भयानक निरीहता उसे साल रही थी, मुखिया के बारे में उसका विचार मात्र इरादा ही रह गया था। वह उसे ठीक-ठीक अमल में लाने में असफल रहा था। किसी भी निश्चय पर पहुँचे बिना पूर्ण उलझन की स्थिति में वह अब जाँच-अधिकारी का सामना करने जा रहा था।

"तो जल्दी ही तुम अपने मेषचर्म के पुराने कोट का त्याग करोगे," बड़े दिली अन्दाज़ में रिबाक के कन्धे पर धौल जमाते हुए स्टास बोला। "और यह बड़ा शानदार भी है! और यह बूट भी तो हैं! बूट मेरे क़ब्ज़े में आयेंगे। उन्हें बेकार ही घसीटना लाज की बात है, ठीक है न?" रिबाक के सामने अपना शानदार चमचमाता बूट आगे करते हुए वह आत्मविश्वासपूर्वक बोला। "तुम्हारे पैर का साइज़ क्या है?"

"उन्तालीस," अपनी चाल धीमी करते हुए रिबाक झूठ बोला। बदबूदार तहख़ाने से बाहर निकलने के बाद अब वह कम से कम थोड़ी ताज़ा हवा ले लेना चाहता था।

"धत्त तेरे की यह तो बहुत छोटा है! ऐ, अपने-आप आगे बढ़ते चलो, या आगे बढ़ने के लिए धकम-पेल करूँ!" स्टास अत्यन्त धृष्टतापूर्वक फट पड़ा।

चेतावनी पाकर रिबाक ने बिना हिचकिचाये आदेश का पालन किया। वह चुस्ती से सीढ़ियों से ऊपर चढ़ा और दरवज़ा पारकर धीमे-धीमे रोशन गलियारे से गुजरता वहाँ जा पहुँचा जहाँ एक छोटी-सी मेज़ के पास भारी जबड़ोंवाला एक सन्तरी बैठा था। बड़ी नम्रता के साथ स्टास ने एक दरवाज़े पर दस्तक दी।

"क्या अन्दर आ सकता हूँ?"

जैसे कोई सपना देख रहा हो और उसका पूरा जीवन अब अन्तिम रूप

से अस्त-व्यस्त होनेवाला हो, कमरे के अन्दर क़दम रखते हुए रिबाक ने बड़ी-सी काली जर्मन अँगीठी की ओर देखा जो उसे अपने प्रारब्ध की राह में अग्रदूत की तरह प्रतीत हुई थी। उसके काले-काले ढलवाँ पार्श्वों को देखकर किसी की क़ब्र के बेतुके सूच्याकार स्तम्भ की याद हो आती थी। एक मेज़ के पीछे खिड़की के पास सामान्य जैकिट पहने एक बौना-सा आदमी इन्तजार करता खड़ा था। रिबाक दहलीज़ पर खड़ा हो सोच रहा था कि शायद यह वही जाँच-अधिकारी है जिसके बारे में मुखिया ने बताया था।

"क्या नाम है?" वह बौना आदमी चिल्लाया।

निश्चय ही वह किसी कारण अत्यन्त कुपित था और क़ैदी पर तीव्र दृष्टि डालते समय उसके छोटे से झुर्रीदार चेहरे पर क्रोध के भयानक भाव छाये थे।

"रिबाक," पल भर सोचने के बाद वह बोला।

"जन्म का साल?"

"उन्नीस सौ सोलह।"

"जन्म-स्थान?"

"गोमेल।"

जाँच-अधिकारी खिड़की के पास से हटकर कुर्सी पर बैठ गया। उसके चेहरे पर सतर्कता के भाव थे लेकिन वह पहले की तरह अब रिबाक को दुर्भावनापूर्ण नहीं प्रतीत हो रहा था।

"बैठ जाओ।"

तीन क़दम आगे बढ़कर रिबाक बड़ी सावधानी के साथ मेज़ के सामने रखी चरमराती वियेना कुर्सी पर बैठ गया।

"जीना चाहते हो?"

एकाएक पूछे गये इस विचित्र सवाल से तनाव कुछ-कुछ कम हो गया। रिबाक को उसकी बात में मज़ाक़ का हल्का-सा पुट भी महसूस हुआ और वह कुर्सी पर बेचैनी से कुलबुलाया।

"बेशक, कौन जीना नहीं चाहता है?.."

बहरहाल, जाँच-अधिकारी जाहिरी तौर पर किसी तरह का मज़ाक़ करने के मूड में नहीं था। वह लगातार सवालों की झड़ी लगाये था।

"ठीक है तब। तुम कहाँ जा रहे थे?"

जिस तेज़ी से वह सवाल पूछ रहा था, निस्सन्देह, उसी तेज़ी से जवाब देने की ज़रूरत थी लेकिन चूँकि जाँच-अधिकारी के शब्दों में किसी तरह का प्रपंच न था, रिवाक चौकन्ना हो उठा और वह कुछ देर के लिए सोचने लगा।

"हम भोजन की तलाश में निकले थे। हमें रसद की ज़रूरत थी।" वह बोला और सोचने लगा: "यही कहना ठीक है! कौन नहीं जानता, छापामारों को भी दूसरे लोगों की तरह ही भोजन की ज़रूरत होती है। इसमें कोई रहस्य नहीं!"

"ठीक है। हम इसकी जाँच करेंगे। तुम्हारी मंज़िल किधर थी?"

चेहरे पर स्पष्ट रूप से तनाव के भाव लाते हुए जाँच अधिकारी क़ैदी की भाव-भंगिमा में आनेवाले हल्के से हल्के परिवर्तन का अध्ययन कर रहा था। लेकिन रिवाक चेहरे पर कोई भाव लाये बिना बस घुटने पर सिकुड़े कोट को सीधा करने के बाद किसी धब्बे को खुरचने में लगा रहा। वह सावधानीपूर्वक अपने जवाब पर ग़ौर कर रहा था।

"हम गाँव की ओर जा रहे थे लेकिन उसे जला दिया गया था। उसके बाद हम बस यूँ ही तलाश में भटकते रहे।"

"किस गाँव को जला दिया गया था?"

"क्या नाम है उसका कुलगायेव नामक गाँव या कुछ उसी तरह। वही जो जंगल के क़रीब है।"

"ठीक। कुलगायेव के गाँव को जर्मनों ने जला दिया था और कुलगायेव को सारे दलबल समेत गोली मार दी गयी थी!"

"चलो, मैंने कम से कम उनका तौहीन तो नहीं किया," राहत महसूस करते हुए रिवाक ने सोचा।

"तुम लेसिनी कैसे आ गये थे?"

"हमने रात वहीं बितायी और मुखिया से मिलने चले।"

"अच्छा, अच्छा," जाँच-अधिकारी सोचते हुए बोला, "तो तुम लोग मुखिया से मिलने जा रहे थे?"

"नहीं, नहीं। बात ऐसी नहीं। हम गाँव की ओर जा रहे थे जैसा कि हमने पहले बताया था..."

"अच्छा, तो गाँव की ओर जा रहे थे। और तुम्हारे दल का अगुवा

कौन है?" उसने अचानक सवाल किया। वह उसकी ओर ऐसी तीक्ष्ण दृष्टि से देख रहा था जिस से कुछ भी छुपाना मुश्किल था।

रिवाक ने अब झूठ बोलने की ठानी क्योंकि इसकी तसदीक़ नहीं हो सकती थी। हाँ, अगर सोत्निकोव ने नहीं...

"यूनिट कमाण्डर के बारे में पूछ रहे हैं? अरे, क्या नाम है उसका—हाँ, दुबोवोय।"

"दुबोवोय?" प्रकटतः चकित होते हुए जाँच-अधिकारी बोल उठा।

रिवाक ने जाँच-अधिकारी की आँखों में सीधे झाँककर देखा इसलिए नहीं कि वह उसे अपने झूठ को सच होने का विश्वास दिलाना चाहता था बल्कि इसलिए कि वह देख सके, उसे यक़ीन हुआ या नहीं। यह जानना ज्यादा ज़रूरी था।

"बदमाश! तो दुबोवोय से साँठ-गाँठ कर रखी है। मैं जानता था। पिछली पतझड़ में गिरफ़तार नहीं किया था और अब..."

वह किसके बारे में बोल रहा था, रिवाक नहीं समझ पाया। मुखिया के बारे में? इसका क्या मतलब था? शायद उससे कहीं कोई भूल हुई थी। लेकिन इसके बारे में सोचने का समय नहीं था। पोर्तनोव जल्दी-जल्दी सवाल किये जा रहा था।

"यूनिट किस जगह है?"

"जंगल में।"

बिना किसी हिचकिचाहट के जवाब देने के बाद उसने सीधी, अबोध दृष्टि से जाँच-अधिकारी की सर्द, चौकस आँखों में झाँककर देखा जिससे उसे उसकी बात पूरी तरह सच प्रतीत हो।

"बोर्कोव के जंगल में?"

"हाँ।"

(जैसे कि वे पागल हैं जो बोर्कोव जंगल में अटके रहेंगे। जंगल तो बहुत बड़ा था लेकिन इस्ल्यान्का पुल के उड़ा दिये जाने के बाद उसे चारों ओर से घेर लिया गया था! बेशक, दुबोवोय अपनी यूनिट के साथ वहाँ कभी ठहरा था लेकिन अब वह अपने बचे-खुचे लोगों के साथ दस मील दूर गोर्ली दलदल में पहुँच चुका था।)

"यूनिट में कितने लोग हैं?"

"तीस।"

"झूठ बोलते हो! हमारी जानकारी के मुताबिक़ तो ज़्यादा लोग होने चाहिए।"

जाँच-अधिकारी की ग़लत जानकारी के प्रति मानो हिक़ारत का भाव दिखाते हुए रिबाक नम्रतापूर्वक मुस्कराया।

"ज़्यादा थे लेकिन अब सिर्फ़ तीस बच रहे हैं। आप जानते ही हैं–लड़ाई में, मुठभेड़ में मरनेवालों के..."

जाँच के दौरान पहली बार अधिकारी प्रसन्नता के साथ कुलबुलाया।

"अहा, तो हमारे जवानों ने उनका सफ़ाया कर दिया है? वाह, वाह! जल्दी ही हम तुम सब का क़ीमा बना देंगे।"

रिबाक कुछ नहीं बोला। वह काफ़ी चुस्ती दिखा रहा था। सोत्निकोव से वे या तो बहुत थोड़ा या कुछ भी नहीं जान पाये थे। चुनाँचे, वह उनके लिए ऐसे सुहावने ताने-बाने बुन सकता था जिनकी असलियत जानना मुश्किल हो। इसके अलावा, जाँच-अधिकारी अब उसके प्रति कम आक्रामक रुख़ बरत रहा था और रिबाक उसके इस रुख़ को बनाये रखने या फ़ायदा उठाने की भी सोच रहा था।

"तो यह बात है!" जाँच-अधिकारी बोला और कुर्सी पर पीछे की ओर टिक गया। "अब यह बताओ कि रात में तुम दोनों में से किसने गोली चलायी थी? हमारे जवानों ने एक को भागते और दूसरे को गोली चलाते देखा था। क्या गोली तुम चला रहे थे?"

"नहीं, मैं नहीं चला रहा था," रिबाक बोला लेकिन उसके स्वर में पर्याप्त दृढ़ता न थी।

ख़ुद को बेक़ुसूर साबित करते हुए सारा दोष सोत्निकोव पर डाल देने में उसे अनुचित-सा महसूस हो रहा था लेकिन वह क्या कर सकता था, अपने पर दोष तो ले नहीं सकता था?

"यानी गोली दूसरे ने चलायी थी?"

उसके प्रश्न को अनुत्तरित छोड़ रिबाक सोच रहा था: "लानत है, मक्कार कहीं का! तो बड़ी चालाकी से फाँसने की कोशिश की जा रही है।" बात भी सच थी, वह और क्या कहता?

फ़िलहाल पोर्तनोव ने इस पर ज़्यादा ज़ोर भी नहीं डाला।

"अच्छा, अच्छा। उसका नाम क्या है?"

"किसका?"

"तुम्हारे साथी का।"

उसका नाम! उसे उसके नाम की क्या ज़रूरत थी? लेकिन अगर सोत्निकोव ने अपना नाम नहीं बताया था तो उसे भी नहीं बताना चाहिए। कोई बात बतानी होगी लेकिन क्या?

"मुझे नहीं मालूम," वह आख़िर बोल उठा। "मैं यूनिट में नया-नया ही आया था।"

"मालूम नहीं है?" पोर्तनोव ने मलामत से सवाल किया। "और क्या मुखिया उल्लू है? उसे क्या तुम लोग नहीं जानते?"

रिबाक याददाश्त पर ज़ोर लगाने लगा। उसे याद ही नहीं आया कि कभी नाम सुना भी था या नहीं।

"मुझे नहीं मालूम। गाँव में लोगों को उसे प्योत्र कहते सुना था मैंने।"

"अच्छा, प्योत्र।"

पोर्तनोव उसे थोड़ा सनकी लगा लेकिन तभी उसने महसूस कर लिया कि जानबूझकर उसे फाँसने की कोशिश की जा रही थी।

"अच्छा, अच्छा। हाँ, तो बताओ तुम कहाँ पैदा हुए थे? मोगिलेव में?"

"गोमेल में। ठीक-ठीक कहें तो रेचित्सा इलाक़े में," बड़े धैर्यपूर्वक रिबाक ने उसे सही किया।

"उपनाम?"

"किसका?"

"तुम्हारा।"

"रिबाक।"

"यूनिट के बाक़ी लोग कहाँ हैं?"

"बो–बोर्कोव जंगल में।"

"कितनी दूर है वह?"

"कहाँ से?"

"यहाँ से, और कहाँ से।"

"मुझे ठीक-ठीक नहीं मालूम। मेरे ख़याल से लगभग अठारह मील की दूरी होगी।"

"तुम्हारा ख़याल सही है। पास में कौन-कौन से गाँव हैं?"

"गाँव? देग्त्यार्ना, उल्यानोव्का और क्या कहते हैं–, द्रागुनी।"

पोर्तनोव ने मेज़ पर अपने सामने पड़े कागज़ों पर एक नज़र डाली।

"और उस औरत से... ओकुन अवगिन्या से तुम लोगों के क्या ताल्लुक़ात हैं?"

"दयोमचिख़ा से? हमसे उसके कोई ताल्लुक़ात नहीं। हम वहाँ बस जा छुपे और हाँ, थोड़ा-सा हमने वहाँ खाया भी था। और फिर आपके जवान वहाँ आ गये..."

"हमारे जवान आ गये! बहुत ख़ूब। तो तुम लोगों के उससे ताल्लुक़ात नहीं हैं?"

"नहीं, सच कह रहा हूँ, क़तई नहीं। वह एकदम बेक़ुसूर है।"

कोहनियों के बीच नीचे सरकते बिरजिस को ऊपर खींचते हुए वह उछल खड़ा हुआ और मेज़ के पीछे से सामने चला आया।

"बेक़ुसूर? हूह! उसने तुम्हारी ख़ातिरदारी की, तुम्हें अटारी पर छुपाया और इसके बावजूद वह बेक़ुसूर है? यानी तुम कहना चाहते हो कि वह तुम्हें जाने बिना तुम्हें छुपाने की कोशिश कर रही थी? वह भली-भाँति जानती थी! यानी उसने लुटेरों को छुपाया! जानते हो, युद्धकाल में उसकी क्या सज़ा है?"

रिबाक इसकी सज़ा अच्छी तरह जानता था और निराशापूर्वक उसने तय कर लिया, अब दयोमचिख़ा को बचाने की वह कोई निष्फल कोशिश नहीं करेगा। स्पष्ट रूप से जाँच-अधिकारी इस तरह की हर कोशिश से लाल-पीला होगा और वह उसे बेकार ही भड़काना नहीं चाहता था। जहन्नुम में जाये दयोमचिख़ा, उसे तो अपनी ही जान बचानी मुश्किल लग रही थी!

"ठीक है, शाबाश!" जाँच-अधिकारी खिड़की के पास जाकर तेज़ी से एड़ियों के बल पलटा। हाथ उसने जेब में घुसेड़ रखे थे और जैकेट के बटन पूरे खुले थे। "हम तुमसे दुबारा बाद में बातें करेंगे। मानना पड़ेगा, तुम काफ़ी होशियार हो! हो सकता है, हम तुम्हारी जान बख़्श देंगे। तुम्हें मेरा यक़ीन नहीं?" वह व्यंग्य से खीं-खीं कर उठा। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि हम तुम्हारी जान भी बख़्श सकते हैं। हम सोवियतों की तरह नहीं हैं और हम जो चाहें, कर सकते हैं। हम सज़ा दे सकते हैं, माफ़ कर सकते हैं। यह सब सम्बन्धित आदमी पर निर्भर करता है। मेरी बात भेजे में घुस रही है!"

वह रिबाक के बहुत निकट आ खड़ा हुआ था और पूछताछ का काम समाप्त समझकर रिबाक आदरपूर्वक उठ खड़ा हुआ। जाँच-अधिकारी क़द में सिर्फ़ उसके कन्धों तक था और रिबाक सोच रहा था, इस छोटे क़द-वाले का गला घोंटना कितना आसान था। लेकिन विचार के दिमाग़ में कौंधते ही उसे उसकी असामयिकता का अनुभव भी हो आया। उसने पुलिस अधिकारी की जोशीली आँखों में देखा जिनमें प्रभुता की चमक और कपट-पूर्ण अनुरक्ति की भावाभिव्यंजना थी।

"तो फिर ठीक है! जो हम चाहेंगे, तुम बताओगे। सिर्फ़ हमें बेवक़ूफ़ बनाने की न सोचो क्योंकि तुम जान लो, हम तुम्हारी बात की सचाई जान सकते हैं। अगर तुम सच साबित हुए, हम तुम्हारी जान बख़्श देंगे और तुम्हें पुलिस की नौकरी, महान जर्मनी की सेवा में लगा देंगे।"

"मुझे?" अपने कानों पर विश्वास न करते हुए रिबाक बोला।

उसे पैरों तले भूकम्प-सा महसूस हुआ और लगा कि इस घिनौने कमरे की दीवारें पिघल गयी हों। पल भर की उलझन के बाद ही उसे आज़ादी और खुले खेत की ताज़ा हवा की अनुभूति हो आयी।

"हाँ, तुम्हें। क्या तुम्हें किसी तरह की आपत्ति है? ख़ैर तुम्हें अभी अपना फ़ैसला बताने की कोई ज़रूरत नहीं। वापस जा कर इस पर विचार करो। लेकिन याद रखो, इसी पर तुम्हारा सब कुछ निर्भर करता है। गमान्यक!"

अभी वह अपने आश्चर्य पर क़ाबू पाने की कोशिश करते हुए अगली घटना की प्रतीक्षा में था कि दरवाज़ा खोल कर भीमकाय स्टास दहलीज़ पर आ खड़ा हुआ।

"तहख़ाने में ले जाओ!"

हक्का-बक्का स्टास जाँच-अधिकारी की ओर देखने लगा।

"लेकिन... बुदिला बाहर इन्तज़ार कर रहा है।"

"मैंने कहा न, तहख़ाने में वापस ले जाओ!" जाँच-अधिकारी चीख़ पड़ा। "तुम बहरे हो!"

स्टास फ़ौरन सकते में आ गया।

"जो आज्ञा, चलो तहख़ाने! इधर से आओ।"

रिबाक जैसे अन्दर आया था, वैसे ही बाहर निकल गया। पहले की ही तरह वह अभी भी चकराया था लेकिन इस बार उसके चकराने का

कारण कुछ और ही था। हालाँकि अब तक पेश आयी उलझनों को समझने में वह बिलकुल विफल रहा था और आगे की घटनाओं का अनुमान भी नहीं लगा पा रहा था, इसके बावजूद वह जान बख़्श दिये जाने की बात से काफ़ी ख़ुश था। अब मुख्य बात यह थी कि उसे जीने का मौक़ा मिल गया था। बाक़ी बातें बाद में देखी जायेंगी।

"तो इन्तज़ार करना होगा!" अपने कोट की आस्तीनों को झटकते हुए स्टास अहाते में पहुँच कर बोला।

"हाँ, इन्तज़ार तो करना ही होगा!" रिबाक दृढ़ स्वर में बोला और पहली बार उसने व्यंग्य भरी मुस्कान से खिल उठे स्टास के ख़ूबसूरत चेहरे की ओर चुनौती से देखा।

स्टास बकरे की तरह मेमियाते हुए हँस पड़ा।

"लेकिन फ़िक्र न करो, इससे तुम्हें मुक्ति मिलने को नहीं। चाहे जो हो, तुम्हें इसे त्यागना ही होगा! जैसे भी होगा, मैं तुम्हारे गले में फंदा डाल कर रहूँगा!"

"क्या सच में यह कमीना इतना ख़ूँख़ार है या सिर्फ़ दिखावा करता है?" रिबाक सोच रहा था। बहरहाल, स्टास का भय उसे न था, उसे एक सरपरस्त मिल गया था।

१३

शक्तिहीनता ने सोत्निकोव की जान बचा ली। बुदिला ने जैसे ही उसे यातना देनी शुरू की, वह बेहोश हो गया, उन्होंने उस पर पानी डाला लेकिन उसका असर भी क्षणिक ही रहा। दुबारा उसकी आँखों तले अन्धेरा छा गया और चमड़े की पट्टियों से हुई ठुकाई व विशेष ढंग के फ़ौलादी प्लास से बुदिला द्वारा नाख़ूनों के खींचे जाने का भी उसे भान न हुआ। आधा घण्टे के इन निष्फल प्रयासों के बाद दो पुलिसवाले उसे उठाकर उस काल कोठरी में फेंक आये जहाँ मुखिया पहले से ही बन्द था।

गीले कपड़ों व ख़ून से लथपथ हाथों के साथ वह कुछ देर तक पुआल पर पड़ा रहा। वह धीरे-धीरे कराह रहा था और लहरों की तरह चेतना आ-जा रही थी। गलियारे में सिपाहियों की पदचापों के विलीन होते ही प्योत्र रेंगकर उसके पास आ पहुंचा।

"हे भगवान, मैं तो तुम्हें पहचान ही नहीं पाया! क्या गत कर दी है तुम्हारी..."

सोत्निकोव को अपने पास एक नयी आवाज़ सुनाई दी जो कुछ हद तक परिचित-सी लगती थी—हालाँकि उसका आतंकित मस्तिष्क सही-सही पहचानने में असफल रहा था। लेकिन चाहे जिसकी भी हो, आवाज़ में हमदर्दी का अहसास था और वह किसी तरह बड़बड़ा उठा: "पानी!"

सोत्निकोव को वह आदमी उठ कर दरवाज़ा खटखटाते सुनाई दिया। वह बहुत ज़ोर से तो नहीं लेकिन लगातार दरवाज़ा खटखटा रहा था।

"कोई सुनता भी नहीं, लानत है!"

सामान्य ढंग से सोच पाने में असमर्थ होने के बावजूद सोत्निकोव ने समझ लिया, मदद की कोई आशा नहीं की जा सकती और कुछ माँगे बिना वह अपनी पीड़ाओं को अकेला भोगता विस्मृति में खोया रहा। उसे बेहद प्यास लगी थी। उसके इर्द-गिर्द की हरेक चीज़ गहरे, दग्ध कुहरे में आच्छादित थी और सोत्निकोव रूई की टाँगों से घिसटता तब तक आगे बढ़ता रहा जब तक उसे एक कुआँ दिखाई नहीं दिया और पास में ही बाड़ में ज़ंजीर के सहारे बाल्टी बँधी थी। उसने रूई के उन्हीं हाथों से बाल्टी कुएँ में उतार दी लेकिन तभी कुएँ की अन्धेरी गहराइयों से बिल्लियों का झुण्ड भयभीत किलकारियाँ मारता बाहर फलाँग आया। ख़ुद को सम्भालने में सोत्निकोव को काफ़ी समय लगा। फिर अचानक ही वह ख़ुद को युद्ध से पहले के अपने छोटे-से शहर की एक सड़क पर पाता है और उसे अपना बहुत समय पहले का अर्दली रेदकिन दिखाई देता है। रेदकिन पानी से भरे बहुत से फ़्लास्क लिये जा रहा था। उससे एक फ़्लास्क छीन कर सोत्निकोव ने जैसे ही पानी पीना चाहा, फ़्लास्क गैस मास्क में बदल गया...

आख़िर उसे मेज़ में पानी से भरा टिन मिल जाता है और वह बड़ी पीड़ा के साथ गटागट पानी पी डालता है। लेकिन पानी गर्म व बेज़ायक़ा था और उसकी प्यास नहीं बुझी, बस पेट अरुचिकर ढंग से फूल उठा। जिस पानी के लिए वह तरस गया था, उसे उससे कोई राहत नहीं मिली थी, हाँ, उसकी तकलीफ़ ज़रूर बढ़ गयी थी, अब वह ख़ुद को बीमार महसूस करने लगा था। सूखी, चुभती घासों के ढेर के साथ-साथ यहाँ-वहाँ से

लुढ़कती, गर्म रेतवाली ख़न्दक़ दोपहर की धूप से जल रही थी। अभी वह अपनी प्यास भी नहीं बुझा पाया था कि उसे अचानक ही फ़ाइरिंग इंस्ट्रक्टर कर्नल लोगिनोव की चीख़ती आवाज़ सुनाई दी: "ऐ, धीरज रखो!" फ़ौरन ही चौंककर वह चिन्तित हो उठा: कैसी अजीब बात है कि निशानेबाज़ी के अभ्यास के दौरान वह पानी पीने के लिए रुक गया था! उसे निशानेबाज़ी में पिछड़ जाने का डर लगा क्योंकि छह से दस सेकेण्ड की जगह अब शायद एक मिनट से ज्यादा हो गया था।

फिर मस्तिष्क में सब कुछ धूमिल व गड्ड-मड्ड होने लगा, अपार्थिव, भ्रान्तिकारी प्रतिमाएँ उसकी असह्य यातनाओं को काफ़ी बढ़ा चुकी थीं...

जब रिबाक को कोठरी में वापस लाया गया, सिर से पाँव तक ओवरकोट से ढका सोत्निकोव किसी लाश की तरह पुआल पर पड़ा था। घुटने के बल झुककर रिबाक ने ओवरकोट हटाकर उसकी बाँह आरामदेह ढंग से रख दी। सोत्निकोव की क्षत-विक्षत अगुलियाँ चिपचिपे ख़ून से एक साथ चिपक गयी थीं और रिबाक यह सोचकर ही भयभीत हो उठा कि पुलिसवाले उसके साथ भी इसी तरह पेश आ सकते थे। पहली बार में तो वह शारीरिक यन्त्रणाओं से बच गया था लेकिन कल क्या होगा?

"लड़के, सुनो, इसे पानी चाहिए," जब स्टास दरवाज़े पर ताला लगा रहा था, प्योत्र कोने में बैठे-बैठे ही बोला।

"मैं तुम्हारे लिए लड़का नहीं, हेर पोलिज़े हूँ!" स्टास ग़ुस्से से बोल उठा।

"ख़ैर, पोलिज़े हो, माफ़ करो। यह आदमी मर रहा है।"

"चोर-लुटेरों को मरना ही चाहिए। तुम्हें भी।"

ज़ोरदार आवाज़ के साथ दरवाज़ा बन्द हो गया और दुबारा अन्धेरा छा गया। प्योत्र दीर्घ निःश्वास ले कोने में पुआल में धँस गया।

"हैवान!"

"ख़ामोश! कहीं सुन न लें," रिबाक फुफकार उठा।

"सुन लें, परवाह किसे है?"

धड़ाके के साथ बाहर का दरवाज़ा बन्द हुआ और सिपाही की पदचाप धीरे-धीरे क्षीण पड़ गयी, अत्यन्त निस्तब्धता छायी थी और कहीं से किसी बच्चे या औरत के रुक-रुक कर सुबकने की आवाज़ सुनाई दे रही थी।

असंगत ढंग से बड़बड़ाता सोत्निकोव अभी तक अर्द्धचेतनावस्था में पुआल पर पड़ा था।

"इसकी तो दुर्गत कर दी है। मुझे तो इसके बचने की कोई उम्मीद ही नहीं," प्योत्र बोला।

"हाँ, शायद ही बच पाये," रिबाक कुछ बोले बिना सोच रहा था। और उसे सहसा आह्लादकारी प्रतीति हुई: अगर सोत्निकोव मर जाता है तो उसके बचने की उम्मीद काफ़ी बढ़ जायेगी। जो मन में आयेगा वह कहेगा—कोई दूसरा गवाह तो होगा ही नहीं।

अपने इस ख़्याल की भयावहता का अहसास उसे स्वभावतः फ़ौरन ही हो गया लेकिन हर पहलू से सोच-विचार करने के बाद वह फिर इसी निष्कर्ष पर पहुँचा कि सोत्निकोव की मृत्यु से सिर्फ़ उसे ही नहीं बल्कि सोत्निकोव को भी फ़ायदा होता क्योंकि वह अधमरा तो था ही। जबकि वह ख़ुद इस स्थिति में था कि भाग निकलने की कोशिश कर सकता था और अपनी जान के इन दुश्मनों, कमीनों से हिसाब चुकता कर लेता। गुरिल्लों के राज़ बताकर उनके साथ विश्वासघात करने का उसका कोई इरादा न था, पुलिस में काम करने का तो सवाल ही नहीं उठता था—हालाँकि इससे बच निकलने के मुश्किलात वह अच्छी तरह जानता था। लेकिन किसी न किसी तरह समय टालना ज़रूरी था क्योंकि इसी पर सब कुछ निर्भर था कि इस कोठरी में वह ज़्यादा से ज़्यादा कितने दिनों तक टिके रहने में सफल होता है।

हल्के-हल्के कराहते हुए, खरखराहट के साथ सोत्निकोव साँस ले रहा था और रिबाक सोचने लगा: नहीं, यह तो एकदम मरणासन्न है। यहाँ तो भले-चंगे का ज़िन्दा रहना मुश्किल है और भला इसके बचने की क्या आशा की जा सकती है?

"देखता हूँ, तुम ख़ुशक़िस्मत रहे हो," कुछ-कुछ चुभते अन्दाज़ में बूढ़ा साभिप्राय बोला।

उसके शब्दों को सुनकर रिबाक बेचैनी से कसमसाया। बूढ़े का भला इससे क्या वास्ता था? फिर भी उसने जवाब शान्तिपूर्वक ही दिया:

"मुझे अभी नहीं तो बाद में ही सही।"

"यह तो पक्का ही समझो। वे इतनी आसानी से नहीं छोड़नेवाले।"

रिबाक ने कोने की ओर तीव्र विद्वेषपूर्ण दृष्टि डाली जहाँ से बूढ़ा अन-

वाही भविष्यवाणियाँ कर रहा था। उसे कहाँ से मालूम कि पुलिसवाले उसे छोड़ेंगे या नहीं? यह उसका निजी मामला था और वह अपने अगले कार्यक्रम के बारे में ठीक ढंग से सोचना चाहता था।

लेकिन गम्भीर चिन्तन के लिए उसे यह जगह उपयुक्त नहीं लग रही थी। वह अपनी परेशानियों पर ग़ौर करना ही चाहता था कि सीढ़ियों पर दुबारा पदचाप सुनाई दी। कोठरी के बाहर आकर आहट ख़त्म हो गयी, कुण्डी खुली और दहलीज पर फिर से स्टास दिखाई दिया।

"यह रहा पानी! लो जल्दी से! और देखो, इस उचक्के को कल तक ठीक-ठाक हो जाना चाहिए। और तुम, बूढ़े-खसूटे, आगे बढ़ो! तुम्हारी बुदिला से मुलाक़ात होगी!"

सहसा जकड़ लेनेवाले भय से रिवाक को मुक्ति मिली और उसने स्टास के हाथों से ठण्डे पानी का गोलाकार डिब्बा ले लिया। कोने में बैठे ही बैठे प्योत्र ने स्टास की ओर सूनी-सूनी नजरों से देखा।

"वह मुझे क्यों बुलायेगा, तुम्हें मालूम है?"

"बेशक, ताश खेलने के लिए," वास्तविक आह्लाद के साथ स्टास ठहाका लगाकर हँस पड़ा। "चलो, जल्दी से!"

गड्डमड्ड ढंग से बूढ़ा उठ खड़ा हुआ और कोट उठाकर सिर झुकाते हुए दरवाज़े से बाहर निकल गया। पहले की ही तरह धड़ाम की आवाज़ के साथ दरवाज़ा फिर बन्द हो गया।

रिवाक घुटनों के बल झुककर सोत्निकोव को झँझोड़ने लगा। लेकिन सोत्निकोव बस कराहता ही रहा। तब एक हाथ में पानी का डिब्बा लेकर, दूसरे हाथ से उसने सोत्निकोव का सिर ऊपर उठाया और थोड़ा-सा पानी उसके मुँह में उँड़ेल दिया। सोत्निकोव पहले थोड़ा चौंका लेकिन फिर डिब्बे के किनारे से मुँह लगाकर मुश्किल से कई घूँट गटागट पी गया।

"कौन है यह?"

"मैं हूँ। क्या हाल है? बेहतर है?"

"रिवाक, तुम हो? आह! थोड़ा पानी और दो!"

रिवाक ने उसका सिर ऊपर की ओर उठा दिया और सोत्निकोव ने थोड़ा-सा पानी और पी लिया, उसके दाँत डिब्बा के किनारे से टकरा रहे थे। पानी पीने के बाद वह दुबारा पुआल में धँस गया।

"लगता है, तुम्हें सच में बड़ी यातना झेलनी पड़ी है?"

"मत पूछो, काफ़ी बुरी तरह पेश आये," सोत्निकोव ने आह भरी।

रिवाक कोट से उसे ढककर, पीठ के सहारे दीवार से टिक गया और अपने साथी के साँस लेने की खरखराहट भरी आवाज़ सुनने लगा। धीरे-धीरे साँस ठीक हो रही थी।

"कैसी तबीयत है तुम्हारी?"

"अब ठीक है। बेहतर। तुम पर क्या बीती?"

"क्या मतलब?"

"क्या तुम्हारी भी मरम्मत की?"

सवाल सुनकर रिवाक बबड़ा उठा। पुलिसवालों ने क्यों उस पर रहम की थी, अपने साथी को ठीक-ठीक समझाना उसे मुश्किल लग रहा था।

"नहीं, उतनी नहीं। इतनी बुरी तरह नहीं।"

सोत्निकोव ने आँखें बन्द कर लीं। बड़ी दाढ़ियोंवाला उसका थकित, पीताभ चेहरा अन्धेरे में मुश्किल से पहचाना जा सकता था। उसके सीने से अभी भी घरघराहट की आवाज़ आ रही थी। और तभी अचानक रिवाक के दिमाग़ में यह बात आयी कि इस एकान्त का लाभ उठाते हुए आपस में अगली पूछताछ के लिए जवाबों पर विचार-विमर्श कर लेना चाहिए।

"सुनते हो, मेरे ख़याल से—मैं उन्हें उल्लू बना सकता हूँ," अपने साथी के कान के पास झुकते हुए वह बुदबुदाया। चौंककर सोत्निकोव ने आँखें खोल दीं: वर्तिकाओं से आती रोशनी का उजला प्रतिबिम्ब फैला था। "हमें सिर्फ़ एक-सी कहानी सुनानी है। पहले तो यह कि हम रसद की तलाश में निकले थे। गाँव जला दिया गया था, सो, हम लेसिनी चले गये और..."

"मैं उन्हें एक भी शब्द बताने नहीं जा रहा," सोत्निकोव ने उसकी बात बीच में ही काट दी।

रिवाक ने कान लगाकर टोह ली कि कोई आस-पास तो नहीं लेकिन सब कहीं पूर्ण निस्तब्धता थी। हाँ, कोठरी के ठीक ऊपर, सीढ़ियों से पदचापों की आवाज़ें ज़रूर आ रही थीं। लेकिन ऊपर सीढ़ियों से उसकी बातें कोई नहीं सुन पायेगा।

"इसे छोड़ो भी, मूर्ख मत बनो! हमें कुछ न कुछ तो कहना ही पड़ेगा। अब मेरी बातें ज़रा ध्यान से सुनो। हम बोर्कोव जंगल के दुबो-

वाय की टुकड़ी से आये हैं। वे लोग इसे ग़लत साबित नहीं कर सकते।"

सोत्निकोव ने साँस रोक ली:

"लेकिन दुबोवोय तो सचमुच वहाँ है!"

"तो इससे क्या?"

रिबाक थोड़ा उत्तेजित हो उठा था। कैसी औंधी खोपड़ी है! यह ख़ास मुद्दा थोड़े ही है। निस्सन्देह, दुबोवोय अपने आदमियों के साथ वहाँ बोर्कोव जंगल में था लेकिन जाँच अधिकारी को यह बता देने से उसपर क्या फ़र्क़ पड़नेवाला था। पुलिस उन्हें कभी पकड़ नहीं पायेगी। जब कि उनकी बची-खुची टुकड़ी कहीं अधिक ख़तरनाक जगह पर थी।

"सुनो भी तो! बस तुम सुनते जाओ! अगर हम उन्हें छलने या धोखा देने में असफल रहे तो एक या दो दिनों में हमारा काम तमाम हो जायेगा। क्या तुम ऐसा नहीं समझते? हमें उनका साथ देने का दिखावा करना होगा। दीवार से सिर टकराने से कोई लाभ नहीं!"

सोत्निकोव स्पष्ट रूप से तनावग्रस्त प्रतीत हो रहा था—वह साँस रोके ख़ामोशी धारण किये था। तो वह इस पर विचार कर रहा था।

"इससे काम नहीं बनेगा," आख़िर वह बोला।

"क्यों नहीं बनेगा? तब क्या होगा? सब सोचेंगे, तुम मरना चाहते हो!"

"कैसा अड़ियल है," रिबाक सोच रहा था। उसे ऐसे ज़िद्दीपन की उम्मीद न थी। ख़ैर छोड़ो, उसकी तो एक टाँग क़ब्र में है—इससे ज्यादा क्या हो सकता है। उसे अपना दिमाग़ काम में लाने की भी फ़िक्र नहीं कि कम से कम साथी की जान तो बच जाये!

"ज़रा मेरी बात तो सुनो!" थोड़ी देर की ख़ामोशी के बाद जबरन फुफकारते हुए रिबाक बोला। "हमें उन्हें प्रलोभन देना होगा जैसे किसी बड़ी मछली को फंसाया जाता है—चारा देकर। लेकिन अगर धागा को हठपूर्वक खींचा, मछली से हाथ धोना पड़ेगा। हमें साथ देने का दिखावा करना ही होगा। क्या तुम सोच भी सकते हो कि उन्होंने मुझे पुलिस में नौकरी का लालच दिया है" रिबाक अनचाहे कह गया।

सोत्निकोव की पलकें काँपीं, आँखों में गहन चिन्ता की झलक आ गयी।

"सचमुच?" वह बोला। "और तुम ख़ुशी-ख़ुशी क़बूल लोगे?"

"नहीं, मैं नहीं क़बूलूँगा, तुम इसकी चिन्ता न करो। मैं उनसे मोल-तोल करूँगा।"

"देखो, कहीं बिकना न पड़े!" सोत्निकोव व्यंग्यपूर्वक बोला।

"तो फिर तुम क्या सलाह देते हो? मौत क़बूल लूँ?" सहसा क्रुद्ध होते हुए रिबाक लगभग चीख़-सा पड़ा। फिर रुक कर ख़ुद को मन ही मन में कोसने लगा। जहन्नुम में जाये। अगर साथ नहीं देना चाहता तो यह उसका अपना मामला है। लेकिन रिबाक अपनी जीवन-रक्षा के लिए लगातार जूझता रहेगा।

बीमारी से या फिर मन में मची खलबली के कारण सोत्निकोव की साँस फिर अटक-अटककर चलने लगी थी। सीने की ख़राश कम करने के लिए उसने खाँसने की कोशिश की और उसके गले से अँगीठी में लहकते कोयले-सी पटपटाहट भरी आवाज़ निकली। उस आवाज़ से रिबाक भयभीत हो उठा: कहीं मर तो नहीं रहा? लेकिन नहीं, फिलहाल वह ज़िन्दा था। साँस पर क़ाबू पाने के बाद वह बोला:

"जानते हो, इस तरह प्राणदान की भीख माँगना सचमुच उचित नहीं। तुम लाल सेना को कलंकित कर रहे हो। पुलिसवाले हमें कभी ज़िन्दा नहीं छोड़ेंगे।"

"तुम्हें कैसे मालूम? छोड़ सकते हैं लेकिन हाँ, अगर कोशिश करोगे तब।"

"कोशिश! किस के लिए?" घुटी-सी आवाज़ में सोत्निकोव ज़ोर से ग़ुस्से से बोल उठा और अगले ही पल उसे जानलेवा खाँसी का दौरा पड़ गया। लगभग एक मिनट तक खाँसने के बाद वह खरखराहट के साथ साँस लेते हुए लेट गया और रूखेपन से बोला: "जानते हो, वे तुम्हें पुलिस की नौकरी आराम से बैठ कर समय बिताने के लिए नहीं दे रहे हैं।"

रिबाक मन ही मन में सोच रहा था कि बात तो शायद काफ़ी सच थी। लेकिन इसके बावजूद वह अवसर से लाभ उठाकर अपनी जान बचाना चाहता था। कोई भी बड़ा से बड़ा साहसिक क़दम उठाना इसके लिए अनुचित न था। जब तक वे उसकी जान नहीं लेते, सता-सता कर मार नहीं डालते, वह निराश नहीं होगा। इस क़ैद से वह ज़िन्दा

तो निकल जाये। वह अपना नुक़सान नहीं होने देगा, वह ख़ुद अपनी जान का दुश्मन नहीं बन जायेगा।

"तुम चिन्ता न करो" वह बोला। "मुझे कोई उल्लू नहीं बना पायेगा।" सोत्निकोव अस्वाभाविक रूप से क्षीण रूखी हँसी हँस पड़ा।

"बेवक़ूफ़" उसने कहा। "तुम स्वयं अपना आचरण नहीं समझ पा रहे हो।"

"बस तुम देखते जाओ। तुम्हें पता चल जायेगा!"

"तुम नहीं समझते यह एक चालबाज़ी है? या तो उनका साथ दो या फिर वे मार-मारकर तुम्हारा भुर्ता बना देंगे!" वह गुर्रा उठा। उसका दम फिर घुटने लगा था।

"हुह मैं उनकी अच्छी सेवा करूँगा!"

"एक बार शुरू कर दिया तो लौटना मुश्किल है।"

और रिबाक सोच रहा था कि इस मूढ़मति से बात करना बेकार है। वह कभी समझ नहीं पायेगा। अब जब कि मौत के कगार पर है, तब भी हमेशा की तरह वही अड़ियलपन, सिद्धान्तों के प्रति वही अन्ध भक्ति। यह सब और कुछ नहीं, चरित्र की बात है, रिबाक ने निष्कर्ष निकाला लेकिन कौन नहीं जानता कि जीवन के खेल में आम तौर से वही जीतता है जो ज्यादा धोखा दे पाता है। कोई दूसरी बात हो ही कैसे सकती? निस्सन्देह, फ़ासिज़्म एक कपट ही तो था जिसने आधी दुनिया को अपने पैरों तले रौंद दिया था। तो फिर कोई इसके सामने सिर्फ़ हाथ हिलाते खड़ा होकर रोकने की आशा कैसे कर सकता था? इसके पीछे से आकर इसके चक्कों के बीच आड़ देकर रोकना यक़ीनन अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण था। इस तरह अपने लोगों तक लौट जाने का मौक़ा पा लेना क्या बुद्धि की बात न थी?

सोत्निकोव के पास आगे कहने को कुछ न था या शायद वह बेहोश हो गया था और रिबाक ने उसे समझाने की कोशिश छोड़ दी। जैसा उसके मन में आये करे लेकिन रिबाक जो ठीक समझेगा वही करेगा।

टाँगों को समेट, कोट के कॉलर को कानों तक ऊपर उठा कर रिबाक पार्श्व के बल लेट गया। मौक़े का फ़ायदा उठा कर वह सो लेना चाहता था क्योंकि निकट भविष्य में उसे सोने का मौक़ा शायद ही मिल सके इससे दिमाग़ भी थोड़ा साफ़ हो जायेगा। इसके बावजूद उसे अपनी ख़ुशक़िस्मती का विश्वास था और धीरे-धीरे यह बात उसके मन में बैठ गयी कि पुलिस के साथ उसके सम्बन्ध ठीक दिशा में आगे बढ़ रहे थे और उसे इसी तरह बढ़ाते जाना चाहिए। लेकिन हाँ, कहीं सोत्निकोव मूर्खतापूर्ण अड़ियलपन के कारण उसका सारा खेल न बिगाड़ दे! लेकिन यह बात भी साफ़ थी कि सोत्निकोव की मौत की घड़ियाँ गिनी-चुनी ही थीं। अपने साथी की मृत्यु की कामना विचित्र तथा परेशान करनेवाली थी। लेकिन वह ऐसा सोचने से ख़ुद को रोकने में असमर्थ था। उसकी मृत्यु में ही उसे अपनी मुक्ति दिखाई दे रही थी।

ख़्यालों में डूबे रिबाक को यह महसूस करने में देर लगी कि किस तरह कोई जीवित प्राणी उसके बूट पर बार-बार चढ़-उतर रहा था। उसने पैर खिसका लिया तो उसे एकाएक साफ़ तौर पर एक चूहा दिखाई दे गया। पुआल पर सकपकाये ढंग से पूँछ पटकते चूहा दीवार के पास जा कर रुक गया। झुरझुरी लेते हुए रिबाक ने बूट की एड़ी से चूहे पर वार कर दिया और हल्के से चीं-चीं करता चूहा तेज़ी से अन्धेरे कोने की ओर भाग गया। पुआल पर होती हल्की सरसराहट से रिबाक ने महसूस कर लिया कि चूहे बहुत से थे। उसे कुछ उनकी ओर फेंकना चाहिए लेकिन जब कोई चीज़ फेंकने को दिखाई न दी तो उसने अपना टोप ही उतारकर कोने की ओर दे मारा।

जब सरसराहट थम गयी, रेंग कर वह कोने से अपना टोप ले आया और दीवार से टिककर लेट गया। लेकिन अब उसे नीन्द ही नहीं आ रही थी। सो, वहाँ लेटे-लेटे वह चिड़चिड़ापन भरे ख़ौफ़ के साथ चूहों से बसे उस कोने की ओर घूरता रहा।

१४

शाम को प्योत्र को तब कोठरी में लाया गया जब अन्धेरा घना हो चुका था और ऊँची खिड़की से कुहरीले दिन की आती क्षीण रोशनी लगभग लुप्त हो चुकी थी। दरवाज़ा खुलने पर भी पहले जैसा उजाला नहीं हुआ। सिर झुकाये बूढ़ा अन्दर आ कर कोने में अपनी जगह पर चला गया।

जब पुलिस का सिपाही दरवाज़ा बन्द कर रहा था, दीवार से लग कर रिबाक तेज़ी से उठ बैठा। बदबूदार कोठरी के अन्धेरे में वह ख़ुद को

यथासम्भव अधिकाधिक छुपाये रखने की कोशिश कर रहा था। उसे अपने बुलाये जाने का भय था हालांकि वह महसूस कर चुका था कि यह बात पुलिस के सिपाही पर तनिक भी निर्भर न करती थी। लेकिन किसी को भी बुलाया नहीं गया था और आख़िर दरवाज़ा बन्द हो गया। इस बार स्टास नहीं बल्कि कोई दूसरा सिपाही आया था और वह बाहरवाले दरवाज़े की ओर लौटा भी नहीं था। उसके क़दमों की आहट विपरीत दिशा में जा कर विलीन हो गयी। शीघ्र ही तहख़ाने में किसी दूसरे ताले के खोले जाने की आवाज गूँज उठी और किसी के दबे-दबे रोने व सुबकियाँ लेने की आवाज़ भी सुनाई दी—निस्सन्देह, सुबकियाँ किसी औरत की थीं।

तो इस बार वे औरतों को ले जा रहे थे।

जब दुबारा सब कहीं ख़ामोशी छा गयी, रिबाक धीरे-धीरे आपे में आया। इस बार मुसीबत उसके पास से गुज़र गयी थी, वह दूसरे के सिर आयी थी और लड़ाई के जमाने में यह बात हमेशा की तरह सान्त्वनाकारी थी। जैसे दूसरों के सिर मुसीबत आने का मतलब था, अपने सिर से बला का टलना।

मुखिया से बात करने की रिबाक की तनिक भी इच्छा न थी। साफ़ तौर पर वह देख रहा था कि मुखिया को ज़्यादा मारा-पीटा नहीं गया था—कम से कम सोत्निकोव जितना नहीं। लेकिन बिना एक शब्द बोले कोने में तटस्थ भाव से उसका इस तरह बैठे रहना रिबाक में घबराहट पैदा कर रहा था।

"हाँ, तो वहाँ कैसा रहा? सब कुछ ठीक-ठाक?" जबरन स्वर में उल्लास भरते हुए रिबाक ने पूछा।

थोड़ा ख़ामोश रहने के बाद प्योत्र सपाट स्वर में बोला: "नहीं, क़तई ठीक नहीं। सच कहें तो मामला गम्भीर मालूम होता है।"

"हाँ, एकदम बुरा," रिबाक ने हामी भरी।

नाक सुड़ककर मुखिया ने ख़ास अन्दाज़ में मूँछों पर हाथ फेरे और जैसे किसी को सम्बोधित नहीं कर रहा हो, अनमनेपन से कहा: "कुरेद-कुरेद कर मेरी थाह लेने की कोशिश कर रहे थे और यूनिट के बारे में जानना चाहते थे।"

"सच में!" सोत्निकोव के साथ कुछ देर पहले हुई अपनी बातचीत

को याद करते हुए रिबाक बुरी तरह चौंक उठा था। "यानी तुमसे हमारी जासूसी कराना चाहते थे?"

"हाँ, कुछ-कुछ वैसी ही बात है। अब सड़सठ साल की उम्र में मेरे साथ यह सब पेश आ रहा है... नहीं, मुझ से यह नहीं होगा।"

सोत्निकोव मानो किसी भय के कारण अचानक सकते में आ गया और कुहनियों के बल उठकर उसने आवाज दी: "कौन है यह?"

"अरे, यह... क्या नाम है लेसिनी का मुखिया है," रिबाक बुझी आवाज में बोला।

बातचीत बन्द हो गयी और रिबाक व प्योत्र ख़ामोशी से अपने-अपने कोने में बैठे रहे। खिड़की से आती रोशनी एकदम मन्द पड़ चुकी थी—सिर्फ़ छत के इर्द-गिर्द जंगले की छड़ों से विभाजित हो प्रतिबिम्बित थी। कोठरी में अब लगभग एकदम अन्धेरा छा चुका था। किसी की बात करने की इच्छा न थी और सब के सब अपने ही खिन्न विचारों में खोये थे।

तभी एक बार फिर पदचाप सुनाई दी, बाहर का दरवाज़ा खोला गया और फिर अप्रत्याशित रूप से तेज़ आवाज़ में उनके दरवाज़े का ताला खड़क उठा। सब के सब बेचैन हो उठे और उस पल उन्हें बस एक ही सवाल परेशान कर रहा था: "अब किसकी बारी है?" लेकिन शीघ्र ही पता चल गया कि किसी को ले जाया नहीं जा रहा था बल्कि किसी को यहाँ लाया गया था।

"अन्दर चलो! चलो न!"

लगभग बेआवाज़, अन्धेरे में अदृश्य कोई दरवाज़े से अन्दर सरक आया और एकदम रिबाक के पैरों के पास घुटनों के बल बैठ गया। जब हमेशा की तरह सीटी बजाते हुए पुलिसवाला दरवाज़ा बन्द करके चला गया, रिबाक ने अन्धेरे में आवाज़ दी:

"कौन है?"

"मैं हूँ।"

साफ़ तौर पर किसी बच्चे की आवाज़ सुनाई दी। नये क़ैदी की छोटी-सी आकृति कहीं अन्धेरे में खोयी थी और कुछ ज़्यादा बताने की इच्छुक न थी।

"कौन है यह 'मैं'? नाम क्या है तुम्हारा?"

"वास्या।"

"बास्या? यह क्या नाम रहा--बास्या? यह तो निश्चय ही कोई यहूदी नाम है लेकिन यहाँ कहाँ से?" रिबाक हैरानी से सोच रहा था। "इस इलाके के सभी यहूदियों को तो पतझड़ में ही पकड़ कर मार डाला गया था फिर यह लड़की कैसे बच गयी? इसे क्यों यहाँ कोठरी में लाये हैं, द्योमचिखा को यहाँ क्यों नहीं लाये?"

"तुम्हारा घर कहाँ है?" रिबाक ने पूछा।

जब लड़की ने कोई जवाब नहीं दिया तो रिबाक ने दूसरा सवाल पूछने की कोशिश की।

"तुम कितने साल की हो?"

"तेरह।"

कोने में बैठा प्योत्र एक गहरी साँस छोड़कर थोड़ा हिला।

"यह मेयेर है–मोची की बेटी। क्या तुमसे सवाल भी पूछे गये थे?"

"हाँ," लड़की धीमी आवाज़ में बोली।

"मेयेर को बाक़ी यहूदियों के साथ मौत के घाट उतार दिया गया था। सिर्फ़ लड़की बच गयी थी। हम तुम्हें कैसे सहारा दे पायेंगे, बास्या?" प्योत्र ने कहा और फिर गहरी साँस छोड़ी।

एक नयी चिन्ता के आ घेरने से लड़की में रिबाक की दिलचस्पी अचानक ही जाती रही। "पुलिसवाले इसे यहाँ क्यों लाये थे? तहख़ाने में और भी तो कोठरियाँ होंगी–कहीं पास में ही किसी औरत को भी तो बन्द किया गया था–फिर मर्दों के साथ लड़की को बन्द करने में क्या तुक है?"

"वे तुमसे क्या चाहते थे?" कुछ देर ख़ामोश रहने के बाद प्योत्र ने लड़की से शान्तिपूर्वक पूछा।

"जानना चाहते थे कि मुझे छुपा रखनेवाले दूसरे लोग कौन-कौन थे।"

"अच्छा, तो यह बात है! तो तुमने उन्हें बता तो नहीं दिया?"

बास्या एकदम चुप हो गयी, कुछ भी न बोली।

"बिलकुल ठीक किया, कभी मत बताना!" कुछ देर बाद प्योत्र प्रशंसात्मक स्वर में बोला। "ऐसी बातें किसी को बतानी भी नहीं चाहिएं मेरा तो काम तमाम ही समझो लेकिन किसी और के बारे में मत बताना। मारें-पीटें तो भी नहीं। क्या इस समय भी तुम्हें मारा-पीटा?"

जवाब की जगह कोने से सुबकी उभरी जो दबे, पीड़ादायक रुदन में

बदल गयी। रुदन ज़्यादा देर तक जारी नहीं रहा लेकिन उसमें अकृत्रिम निराशा इतनी अधिक थी कि सब के सब बेचैनी से पहलू बदलने लगे।

सोत्निकोव ने पुआल पर साँस रोके लेटे रहने के बाद आवाज़ दी :

"रिबाक!"

"मैं यहाँ हूँ। क्या बात है?"

"डिब्बे में थोड़ा पानी बचा था।"

"प्यास लगी है?"

"लड़की को थोड़ा पानी दो। रुके किस लिए हो!"

अन्धेरे में दीवार के पास टटोल कर रिबाक ने डिब्बा उठा लिया और लड़की के हाथों में थमा दिया।

"रोओ मत। लो, थोड़ा पानी पी लो।"

कुछ घूँट पीकर बास्या ने डिब्बा वापस लौटा दिया।

"इधर आ जाओ," कुछ देर की चुप्पी के बाद प्योत्र ने कहा। "यहाँ जगह है। हम साथ-साथ बैठेंगे। दीवार टटोलती चली आओ।"

नंगे पाँव ख़ामोशी से चलती हुई लड़की प्योत्र की बात मान उसके पास चली आयी। थोड़ा खिसक कर प्योत्र ने बग़ल में उसके लिए जगह ख़ाली कर दी।

"तो हम सचमुच फँस गये हैं! पता नहीं हमारे साथ वे आगे क्या करना चाहते हैं?"

रिबाक चुप रहा। इस बातचीत को आगे बढ़ाने की उसकी तनिक भी इच्छा न थी। पास में ही सोत्निकोव धीरे-धीरे कराह रहा था। वे इन्तज़ार करते बैठे थे, सीढ़ियों से आनेवाली आवाज़ों पर उनके कान लगे थे : मुसीबत तो उधर से ही आनेवाली थी।

और सचमुच उन्हें ज़्यादा देर इन्तज़ार नहीं करना पड़ा।

लगभग पन्द्रह मिनट बाद ही गलियारे से ग़ुस्से भरी आवाज़ सुनाई दी : "इधर चल, चुड़ैल कहीं की!" जवाब भी उतना ही तीखा था : "तू दोज़ख़ की आग में जल, कमीने कहीं के!" "मैंने कहा न, आगे बढ़! या दूँ धक्का और तू इतनी तेज़ी से आगे बढ़ेगी कि जीवन में कभी नहीं उतनी तेज़ी से चली होगी!" कोई पुरुष स्वर गुर्राया। ज़ोर-ज़ोर से गाली बकने के साथ-साथ सीढ़ियों से भारी-भारी क़दमों की आवाज़ें सुनाई दीं। सन्देह की कोई गुंजाइश न थी। सवाल-जवाब के बाद द्योमचिखा को वापस लाया जा रहा था।

लेकिन किसी कारणवश उसे पुरानी कोठरी में नहीं ले जाया जा था। पुलिसवाले उनके दरवाज़े के बाहर रुके, खट् की आवाज़ के साथ ताला खुला और उनके पूर्व परिचित स्टास ने दहलीज़ से द्योमचिख़ा को ज़ोरों से अन्दर धकेल दिया। वह लड़खड़ायी और रिबाक के पैरों पर गिर पड़ी। इसके साथ ही वह अन्धेरे में ज़ोरों से कलप उठी:

"वहशियो, मुझे इस कोठरी में क्यों रख रहे हो! यहाँ पुरुष हैं! तुम्हें शर्म नहीं!"

"चल, चल! इससे कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता!" स्टास गरज उठा। "एक रात की तो बात है!"

"और सुबह में क्या होनेवाला है?" रिबाक अचानक पूछ बैठा क्योंकि स्टास के शब्दों में उसे परोक्ष संकट का अहसास हुआ था।

तब तक स्टास दरवाज़ा बन्द कर चुका था लेकिन दुबारा खोल कर जर्मन मिश्रित लहजे में वह गरज उठा:

"सवेरे फ़ारिग, काम तमाम! समझे?"

"काम तमाम? काम तमाम से क्या मतलब है?" रिबाक निराशापूर्वक सोच में पड़ गया। लेकिन उन छोटे-से शब्दों का भयावह अर्थ अत्यन्त पीड़ादायी था, इसमें सन्देह न था।

तो सवरे काम तमाम हो जायेगा!

भय से निर्वाक, यन्त्रवत रिबाक ने पैरों को पीछे खींच लिया जिससे औरत दहलीज़ के पास बैठ सके। वह सुबकती रही, फिर नाक सुड़क कर धीरे-धीरे शान्त पड़ गयी। पल भर की पूरी ख़ामोशी के बाद कोने में बैठे-बैठे प्योत्र विचारपूर्ण ढंग से बोल उठीं:

"पकड़ी जाने के बाद तुम और क्या उम्मीद करती हो? बस अब तो हिम्मत से सहना होगा। और यह तो बताओ, तुम कहाँ की रहनेवाली हो?"

"मैं? मैं पोद्‌ब्ये की हूँ लेकिन इससे तुम्हें क्या मालूम होगा?"

"क्यों? मैं यह जगह भली-भाँति जानता हूँ। किस परिवार से?"

"मैं द्योम्का ओकुन की बीवी हूँ।"

पीड़ादायक विचारों से ध्यान हटाने की कोशिश करते हुए रिबाक द्योमचिख़ा की बातें सुन रहा था। चूँकि अन्धेरे में द्योमचिख़ा उसे पहचान नहीं पायी थी, रिबाक बातचीत में हिस्सा लेकर अपनी उपस्थिति का

भान उसे नहीं कराना चाहता था। उसके झगड़ालू स्वभाव से वे पहले ही भली-भाँति परिचित हो चुके थे और चूँकि उस की इस दुःस्थिति के लिए वे ज़िम्मेदार थे, उन्हें यहाँ पाकर द्योमचिख़ा कहीं कोई बखेला न खड़ी कर दे। लेकिन धीरे-धीरे वह शान्त पड़ गयी। एक बार फिर से नाक छिड़क लेने के बाद उसकी आवाज़ भी सामान्य हो चली थी ठीक उसी तरह जैसी गाँव में उन्होंने सुनी थी।

"अच्छा, समझ गया," दुखी ढंग से आह भर कर प्योत्र बोला। "और द्योम्का तो सेना में कहीं है..."

"हाँ। द्योम्का तो कहीं टापें मार रहा है और मुझे यहाँ सताया जा रहा है! मेरे बच्चों को पुलिस ने एकदम बेसहारा बना दिया है। मेरे बिना बेचारे कैसे काम चला पायेंगे? आह, मेरे अभागे बच्चे!"

उसने फिर रोना शुरू कर दिया लेकिन इस बार किसी ने उसे समझाने या सान्त्वना देने की कोशिश नहीं की क्योंकि सब के सब कुछ और ही सोचने में लगे थे। उसके मस्तिष्क पर धमाकों-सी चोट करते, चेतावनी देते स्टास के धमकी भरे शब्द अभी भी कोठरी में गूँजते प्रतीत होते थे। सिर्फ़ प्योत्र पर उनका कोई असर न था, वह हमेशा की तरह शान्त, संयमित बैठा था। तभी द्योमचिख़ा अचानक चुप हो गयी और जैसे दिल से सब कुछ काढ़कर निकाल दिया हो, गहरी आह भरकर वह बोली:

"पुलिस में लोग भी चुन-चुनकर रखे हैं! एकदम वहशी! देखो तो ज़रा, वह पावका कैसा राक्षस बन गया है!"

"तुम्हारा मतलब पोर्तनोव से है?" प्योत्र ने पूछा।

"हाँ, हाँ, वही। मुझे याद है जब वह जवान था। लोग पाव्का-पाव्का कहकर उसे बुलाते थे तब। बाद में पढ़कर वह अध्यापक बन गया। उसकी माँ फ़ार्म में रहती थी और वह हर बार गर्मियों में घर आया करता था। सो, मुझे उसे कई बार देखने का मौक़ा मिलता था। कैसा अच्छा नौजवान था। सब किसी का अभिवादन करता था, मर्दों से हाथ मिलाता था।"

"मैं भी पोर्तनोव को जानता हूँ," प्योत्र ने कहा। "वह गाँव-गाँव में जाकर धर्म के विरुद्ध प्रचार करता था—बड़ी हृदयग्राही बातें करता था।"

"वह तो हमेशा से साँप था और आज भी साँप ही है। हाँ, सब लोग उसे साँप समझ नहीं पाते थे, बात करने में बड़ा माहिर था।"

"और वह ढपोरशंख भी उधर का ही है न?"

"स्टास? हाँ-हाँ। तब नन्हा फ़िलिप्योनोक था। किसी चाकूबाज़ी के मामले में वह सज़ा भुगत रहा था लेकिन लड़ाई शुरू होते ही फिर बाहर निकल आया। बड़ा दुष्ट आदमी था! यहूदियों पर तो उसने क़हर ही ढा दिया था—कहते हैं, कई को मौत के घाट उतार दिया। और लूट का माल तो उसने ख़ूब बटोरा! पूरा घर ही भर लिया। और अब अपना पंजा हम ईसाइयों की ओर बढ़ा रहा है।"

"सच कहती हो," प्योत्र बोला। "शुरू यहूदियों से किया था और ख़ात्मा हमसे करेंगे चाहो तो लिख लो मेरी बात।"

"इन ग़लज़ों को फाँसी पर चढ़ा देना चाहिए!"

"मैं हमेशा सोचता रहता हूँ," बेचैनी से पहलू बदलते हुए प्योत्र ने कहा, "अगर यह लोग जर्मन होते तो और ही बात थी। मेरा मतलब है कि वे लोग तो फ़ासिस्ट हैं, विदेशी हैं—उनसे तो ऐसी ही उम्मीद की जा सकती है। लेकिन हमारे अपने लोग उनसे मिल गये हैं, यही बात मुझे समझ में नहीं आती। मेरा मतलब है, यह वही लोग हैं जो हमारे साथ रहते थे, कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करते थे और अब गोली मारने को तैयार हैं। गोली मारते भी हैं। काफ़ी लोगों को मौत के घाट उतार चुके हैं।"

"उसकी तरह... क्या नाम है... हाँ—बुदिला," अपने को रोक पाने में असमर्थ रिबाक बोल उठा।

"अरे, उस जैसे बहुतेरे हैं। यहाँ के रहनेवाले तो है ही और भगवान जाने कहाँ-कहाँ से आ गये हैं। मार-काट करने में सब एक से एक बढ़कर हैं। और अब उन्हें मौक़ा भी अच्छा मिल गया है," लेसिनी का मुखिया गम्भीरता से बोला।

कुछ याद करके द्योमचिखा अचानक ही बोल उठी:

"कहते हैं, खोदोरोनोक नामक उनका आदमी जिसे पिछली रात गोली लगी थी, मर गया है। अच्छा ही हुआ। भगवान सबको दोज़ख नसीब दे, ग़लीज कहीं के!"

"सब कहाँ मरनेवाले हैं," प्योत्र ने गहरी साँस ली। "जब तक हमारे जवान उन्हें ठिकाने न लगा दें।"

पुआल पर लेटा सोत्निकोव थोड़ा हिला और भारी भारी साँस लेते हुए उसने दुबारा उठने की कोशिश की।

"और तुम कब से ऐसी बात सोचने लगे हो?" वह गुर्रा उठा।

"इसमें बहुत सोचने-विचारने की ज़रूरत नहीं, जवान, सब अच्छी तरह समझते हैं।"

"क्या सच कहते हो? तो फिर तुम मुखिया कैसे बन गये?"

कोठरी में अजीब-सी ख़ामोशी छा गयी। कोई कुछ नहीं बोल रहा था, इस दूरन्देशी सवाल से सब खटके में आ गये थे। आख़िर मन के उथलपुथल पर क़ाबू पाकर प्योत्र काँपती आवाज़ में अचानक बोल उठा:

"तुम पूछते हो—क्यों? मैं तुम्हें इसका कारण बताऊँगा! हालाँकि यह जगह उपयुक्त नहीं, फिर भी अब क्या फ़र्क़ पड़ता है... मैंने मुखिया न बनने की भरसक कोशिश की थी। हमेशा अलग-थलग रहा। मैं मूर्ख नहीं, मैं जानता था कितनी मुसीबत मोल लेनी पड़ेगी। तभी एक दिन शाम को मेरी खिड़की पर दस्तक पड़ी। आनेवाले लोग थे भूतपूर्व जिला सचिव, पुलिस का चीफ़ और दो हथियारबन्द सिपाही। सचिव मुझे जानता था। सामूहिकीकरण के दौरान एक सभा के बाद मैं उसे गाड़ी पर अपने साथ घर ले गया था। उसने मुझसे कहा—उसके शब्द मुझे अभी तक भली-भाँति याद हैं—'मैंने सुना है, लोग तुम्हें मुखिया के लिए मनोनीत कर रहे हैं। राज़ी हो जाओ। नहीं तो बुदिला को नियुक्त कर दिया जायेगा और तुम सबके लिए मुसीबत खड़ी हो जायेगी।' सो, मैंने उसकी बात मान ली। और उसी का फल अब मुझे भुगतना पड़ रहा है।"

"हूँ ऽ," रिबाक निर्विकार ढंग से बोला।

"छह महीनों तक मैं दोतरफ़ा आग से खेलता रहा और आख़िर फँस ही गया। और अब तो बचने की कोई उम्मीद ही नहीं। अब खेल ख़त्म हो चुका है।"

"ख़ामोशी से मौत को गले लगाने के लिए अधिक बुद्धिमानी की ज़रूरत नहीं होती," इस सर्वाधिक अप्रिय बातचीत को ख़त्म करने के उद्देश्य से रिबाक गुर्रा उठा।

मुखिया की बातें सुनकर उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ था—पोर्तनोव की पूछताछ के बाद मुखिया के बारे में उसका भी कुछ ऐसा ही ख्याल था। लेकिन इस समय वह अपनी चिन्ताओं में ही पूरी तरह डूबा था और भयभीत हो रहा था कि उसके इरादों की कुछ भनक कहीं पुलिसवालों को न मिल जाये और आशा की हल्की-सी अन्तिम किरण भी लुप्त हो जाये।

उधर आँखें खोले सोत्निकोव खामोशी से पुआल पर लेटा था। वह अब फिर पूरी तरह होश में था लेकिन उसे अत्यन्त कष्ट महसूस हो रहा था। नीचे से ऊपर तक उसके पैर में भयानक दर्द हो रहा था, अँगुलियाँ टीस रही थीं और सीने में जैसे आग फूँक दी गयी थी। मुखिया की बातें उसे सच प्रतीत हो रही थीं लेकिन उसकी बातों की सचाई के बावजूद मामले की गम्भीरता में कोई फ़र्क़ आनेवाला न था। इस प्योत्र के लिए वह अचानक ही खुद को कुसूरवार-सा महसूस करने लगा। लेकिन ग़लती किसकी थी? द्योमचिखा के साथ भी वैसी ही बात थी जो उनकी अक्षम्य लापरवाही की जीती-जागती मलामत करती प्रतीत होती। अब सोत्निकोव द्योमचिखा की बातें ध्यान से भयभीत हो सुनने लगा। उसे भय था, वह किसी भी पल उन्हें जोर-शोर से गाली-गलौज शुरू कर देगी। तब उससे जवाब देते भी नहीं बनेगा। लेकिन समय बीतता गया और द्योमचिखा के सारे क्रोध से भरे उद्गार पुलिस व जर्मनों के खिलाफ़ थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे उसे रिबाक व सोत्निकोव की कोई याद भी न हो, जैसे उसकी इस दुर्दशा में उनका हाथ ही न हो। न ही स्टास की धमकी भरी घोषणा के प्रति ही उसने कोई प्रतिक्रिया व्यक्त की थी—शायद उसकी बातों का मतलब वह पूरी तरह नहीं समझ पायी थी या फिर ध्यान देने की जरूरत नहीं समझती थी।

यहाँ तक कि हर हादसे से गुजरने को कटिबद्ध सोत्निकोव भी उसकी घोषणा पर विश्वास करने में असमर्थ था। वह भी यह समझने में असफल रहा था कि पुलिस सिपाही ने वह घोषणा उन्हें डराने के लिए की थी या सच में उन सब का काम तमाम करने की बात तय कर ली गयी थी। लेकिन रिबाक और सोत्निकोव—इन दोनों को मौत के घाट उतार देना ही काफ़ी था। बदनसीब द्योमचिखा, अभागे मुखिया और उस छोटी-सी लड़की की हत्या में क्या तुक था? यह अविश्वसनीय जरूर है लेकिन शा-

यद ऐसा ही होगा, सोत्निकोव ने सोचा। बिच्छू डंक मारेगा ही, नहीं तो बिच्छू क्या? तभी तो उन सब को एक ही कोठरी में बन्द कर दिया गया था—काल-कोठरी में।

१५

दीवार से आलथी-पालथी लगाये रिबाक सो गया। हालाँकि वह निद्रावस्था शायद ही थी: वह कोई घण्टे भर की थकान भरी मदहोशी थी। लेकिन बाद में जब चौंककर उसने आँखें खोलीं, उसे समझ ही नहीं आया कि वह कहाँ है। पास ही अन्धेरे में गुपचुप बातचीत चल रही थी। उसे बच्चे की जानी-पहचानी आवाज सुनाई दी और फ़ौरन बास्या की याद हो आयी। जब-तब बीच-बीच में मोटी-सी बुदबुदाहट सुनाई देती—यह सचमुच प्योत्र था। रिबाक रात्रिकाल की इस धीमी-धीमी बातचीत को कान लगाकर सुनने लगा। यह बातचीत हवा में खड़खड़ाती किसी पुआल की छत की याद दिलाती थी।

"जब उन लोगों को ले जाया जा रहा था, पहले तो मैं पीछे-पीछे दौड़ पड़ी थी। मैं दौड़कर फुलवारी से बाहर आ गयी थी लेकिन चाची प्रास्कोव्या ने मुझे चीखकर वापस भेज दिया "जा, भाग के छुप जा!" मैं शाक-सब्जीवाले बाग़ के पीछे भागकर बेंदों की झाड़ी में रेंगकर अन्दर चली गयी। आप समझ रहे हैं न, मैं किस झाड़ी के बारे में कह रही हूँ? वही जो शाक-सब्जियों के आख़िर में—सोते के क़रीब है। झाड़ी सच में काफ़ी घनी है। कपड़े धोनेवाले घाट की ओर जाती पगडण्डी वहाँ से कुछ ही गज दूर है लेकिन झाड़ी में अच्छी तरह दुबककर बैठ जाने से शायद ही किसी की नजर पड़ सकती है। सो, सूखे पत्तों में दुबककर मैं बच गयी और इन्तज़ार करने लगी। मैं सोच रही थी, लौटकर मम्मी जब आवाज लगायेंगी, मैं बाहर निकल आऊँगी। लेकिन मैं इन्तज़ार करते करते थक गयी और किसी ने आवाज नहीं दी। अन्धेरा घिर आया और मुझे डर लगने लगा। मुझे बार-बार लगता जैसे कोई पास में ही चल-फिर रहा हो, रेंगता हुआ मेरी ओर बढ़ रहा हो—वह बार-बार रुकता और टोह लेता। मैं सोच रही थी, कहीं भेड़िया न हो—मुझे भेड़ियों से बड़ा डर लगता है। और मुझे डर के मारे नीन्द भी नहीं आ रही थी।

जब थोड़ा-थोड़ा उजाला होने लगा, मुझे झपकी आ गयी। जब जागी, पेट में धमा-चौकड़ी मचाने लगे लेकिन डर के मारे मैं बाहर नहीं निकल रही थी। सड़क की ओर से काफ़ी शोर आ रहा था, गाड़ियों-छकड़ों की आवाजें सुनाई दे रही थीं—लगता था, उन पर सभी आस-पास के घरों से सामान लाद-लादकर ले जाया जा रहा था। पूरा दिन मैं उसी तरह बैठी रही, दूसरी रात भी उसी तरह बीत गयी और पता नहीं मैं कितनी देर उसी स्थिति में रही। सोते में कपड़े धोने के लिए जाती औरतों की टाँगें मुझे दिखाई देतीं। वे आती-जाती रहतीं। और भूख के मारे मुझसे बाहर भी नहीं निकला जा रहा था। वहाँ बैठी-बैठी मैं चुपचाप रोती रही। तब अचानक ही कोई आकर झाड़ियों के पास रुक गया। और नीचे की ओर दुबककर मैंने साँस भी रोक ली। फिर मुझे बड़ी धीमी-सी आवाज़ सुनाई दी "बास्या! ऐ बास्या!" और मैंने देखा चाची प्रमुस्कोव्या मेरी ओर झुकी थीं।"

"हमें नाम बताने की कोई ज़रूरत नहीं। कम जानना ही हमारे लिए बेहतर है," प्योत्र ने बीच में ही उसकी बात काटकर शान्त लहजे में कहा।

"हाँ, तो उस औरत ने मुझे थोड़ी-सी रोटी व थोड़ा सा सूअर का गोश्त दिया। और मैं वहीं बैठी-बैठी सब गटक गयी। हाँ, थोड़ा-सा चूरा ही गिरा होगा। फिर मेरे पेट में भयानक दर्द शुरू हो गया। दर्द के मारे मैं मरने की दुआ करने लगी।"

रिवाक काँप उठा। उसे लगा, यह बातें कोई तेरह साल की लड़की नहीं, कोई बुढ़िया कह रही हो। और उसे सहसा ही नब्बे साल की उस बुढ़िया की याद हो आयी जिससे उस की मुलाक़ात रेलवे से परे जंगल के एक गाँव में हुई थी। वे जर्मनों के बारे में जानकारी हासिल करने और थोड़ा खा-पीकर घण्टा भर आराम करने के ख्याल से वहाँ जा पहुँचे थे। झोंपड़ में कोई भी न था। सिर्फ़ इस दुनिया में अकेली वह बेचारी लेहरी बुढ़िया अँगीठी के ऊपरी हिस्से पर पैरों को नीचे झुलाही बैठी थी। वे बैठकर सिगरेट पीते रहे और बुढ़िया भगवान का रोना रोती दुनिया से न उठा लेने की शिकायत कर रही थी—भला इतनी लम्बी ज़िन्दगी की उसे क्या ज़रूरत थी। पिछली लड़ाई के लोद जले उसके सारे सगे-सम्बन्धी मारे गये, वह लगभग एकदम अनजान लोगों के साथ रहने चली आयी थी। वह उनके बच्चों व मकान की देखभाल कर देती थी। उनका ख्याल था, बुढ़िया ज्यादा से ज्यादा पाँच साल ज़िन्दा रहेगी और तब तक बच्चे भी थोड़े बड़े हो जायेंगे। फिर उसे दफ़न करके वे छुटकारा पा लेंगे। लेकिन बुढ़िया पाँच साल तो क्या—पन्द्रह साल में भी नहीं मरी और वह उन्हीं लोगों के साथ रहती रही। उधर बच्चे बड़े हो गये, बाप फ़िनिश लड़ाई में मारा गया और माँ के लिए दोनों शाम का खाना जुटा पाना भी मुश्किल हो गया। बुढ़िया की देखभाल का समय उसके पास न था। लेकिन फिर भी बुढ़िया ज़िन्दा रही। रिवाक ने अपने साथियों के साथ वहाँ से विदा होते समय हँसते हुए बुढ़िया की जीवन मुक्ति की कामना की क्योंकि मात्र इसी की दुआ वह करती रहती थी। और अब फिर वही बात उसे सुनने में आयी थी। हाँ, इस समय दुआ करनेवाली एक मोटी-सी लड़की थी।

वाह री दुनिया!

"फिर धीरे-धीरे पेट का दर्द थोड़ा कम हो गया। मुझे याद है, एक दिन सुबह में मैं तो एकदम डर ही गयी थी। थोड़ी-सी झपकी लेने के बाद जब मेरी आँखें खुलीं, मैंने एक जानवर को अपनी ओर रेंगकर बढ़ते देखा। वह सोते के किनारे की ओर से झाड़ियों के बीच रेंग रहा था। यह एक बिलार था। गाँव से यहाँ आ पहुँचनेवाला वह एक बहुत बड़ा बिलार था। मालिक छोड़ गये होंगे और वह भोजन की तलाश में यहाँ आ पहुँचा होगा। वह मछलियाँ पकड़ने की कोशिश कर रहा था। बिना हिल-डुले, टकटकी लगाये वह किनारे पर खड़ा था। फिर बिजली-सी गति से उसने झपट्टा मारा। पानी से तरबतर जब वह लौटकर आया तो उसके मुँह में एक मछली दबी थी। मुझे भी उससे ऐसी बुद्धि सीखनी चाहिए, मैं मन ही मन में सोचने लगी! मैं उसके मुँह से मछली छीन लेना चाहती थी लेकिन वह मुझसे ज्यादा तेज़ साबित हुआ। पास ही की झाड़ी में घुसकर उसने मछली खा डाली—पूरी तरह। लेकिन बाद में हमारे बीच दोस्ती हो गयी। वह दिन के समय आता और झाड़ियों के बीच रेंगकर मेरी बग़ल में लेट जाता, गुर्र-गुर्र करता रहता। मैं उसे थपकियाँ देते हुए थोड़ी सो लेती। और वह हमेशा बहुत चौकन्ना रहता। जैसे ही कोई झाड़ि ब के आस-पास आता, उसकी गर्दन के बाल खड़े हो जाते और मैं जान जाती कि मुझे ख़ामोशी से लेटे रहना है। जब बहुत भूख लगती थी, मैं शाक-सब्जियोंवाले बाग़ में जाकर कुछ तलाश करती थी। बीज का काम लेने

के लिए क्विोइ सलमान ने कुछ खीरे छोड़ रखे थे, कुछेक गाजर भी थीं। लेकिन बिलार गाजर नहीं खा सकता था। मुझे इसका अफ़सोस होता..."

"उसे चूहे पकड़ने चाहिए थे," द्योमचिखा बीच में ही बोल उठी। "पोद्ुख्ये के एक घर में एक बिल्ली थी जो छोटे-छोटे खरगोश पकड़ लाती थी। तुम विश्वास करोगे? एक बार तो वह काफ़ी बड़ा-सा खरगोश भी घसीट लायी थी लेकिन ऊपर अटारी पर नहीं ले जा सकी भारी जो होगा। सवेरे जब जिमतेर बाहर निकला तो कोने में खरगोश पड़ा था।"

"शायद उसके बच्चे होंगे," प्योत्र बोला।

"हाँ, हाँ—बच्चे थे।"

"तो फिर इसमें अचरज की कोई बात नहीं। वह अपने बच्चों के लिए ऐसा करती थी। ठीक किसी माँ की तरह... खैर... फिर तुम्हारे साथ क्या हुआ?"

"तो मैं वहाँ बैठी रही," बास्या धीमे से बोली। "चाची... मेरा मतलब है, वह औरत मेरे लिए कई बार रोटी लायी। फिर ठण्ड होने लगी और वर्षा शुरू हो गयी, पत्ते झड़ने लगे। एक दिन किसी आदमी ने मझे देख लिया। वह कुछ भी बोला नहीं, बस अपनी राह चलता बना। मैं तो इतनी डर गयी कि दिन भर काँपती रही। शाम को भी वही स्थिति रही। फिर जब शाम को वर्षा शुरू हो गयी, मैं रेंगकर बाहर निकल आयी। मैं दबे-दबे क़दमों से इधर-उधर भटकती रही। जब सुबह होने को आयी, मैं किसी के खलिहान में जा छुपी। मैं वहाँ तीन दिनों तक रही। वहाँ बड़ा आराम था लेकिन तभी किसी ने वहाँ पहुँचकर चारों ओर से कुछ गोदना शुरू कर दिया। उन्हें जौ की तलाश थी और मैं उनकी नजरों में आने से बाल-बाल बची। सो, मैं वहाँ से निकलकर एक सूअरखाने में सूअरों के बीच जा बैठी। एक सूअर-सूअरी के बीच सोकर मैंने रात बितायी। सूअरी तो काफ़ी पालतू थी लेकिन सूअर खौफ़नाक था। वह जब तब मुझे काट लेता ..."

"ओह, बेचारी! तुम्हें बड़ा कष्ट उठाना पड़ा!" ठण्डी आह भरते हुए द्योमचिखा बोल उठी।

"नहीं, ऐसी कोई बात नहीं। वहाँ ठण्ड नहीं थी।"

"और खाना क्या खाती थी? कोई तुम्हें खाने को कुछ देता था?"

"नहीं, मैंने किसी को मालूम ही नहीं होने दिया कि मैं वहाँ हूँ। मैं नाँद में से निकालकर कुछ खा लेती थी।"

"ओह, च्-च्—बेचारी! इनसान की ऐसी दुर्गत! और मकान मालिक तुम्हें नहीं देख पाये?"

"हाँ, देख लिया—नजर तो पड़नी ही थी। एक दिन मैं ज्यादा देर तक सोयी रह गयी। बर्फ़ गिर रही थी। मैं वहाँ से निकलकर सड़क के पारवाले मकान में दौड़कर जा छुपना चाहती थी। मकान खाली था। सड़क पार करके मैंने जब नजर दौड़ायी तो पाया कि एक दरवाजे पर खड़ा कोई आदमी मझे घूर रहा था। मैं एक मैपिल पेड़ के पीछे छुप गयी—वहाँ एक विशालकाय मैपिल का पेड़ था..."

"अरे, वही न जो केमिस्ट की दूकान के सामने है?" द्योमचिखा ने कहा। "वहीं तो इग्नाती सुप्रोन रहता था।"

"तुम्हें इससे क्या?" प्योत्र गुस्से से बोल उठा। "इससे क्या फ़र्क़ पड़ता है कि वहाँ कौन रहता था? इस तरह की बात पूछने से क्या फ़ायदा!"

साफ़ तौर से द्योमचखा को बुरा लगा था।

"मैं बस यूँ ही पूछ रही थी। अगर मैंने कह भी दिया तो इससे क्या?"

"तुम्हारे कहने से फ़र्क़ नहीं पड़ता लेकिन सुराग़ तो मिल सकता है! लेकिन खैर, अब क्या फ़र्क़ पड़नेवाला है? अब तो इसके मुताल्लिक़ अपने को छुपाना भी बेकार है। भला हो कि दुनिया में दयालु लोग भी हैं। गाँव में बास्या को मेरे पास लाया गया। उनका ख्याल ठीक ही था कि बास्या की तलाश में वे मुखिया के घर नहीं आयेंगे। फिर उस मनहूस पेड़ ने हमें डुबो दिया: मुझे वे बिस्तरे से उठाकर और बास्या को तहखाने से निकालकर ले आये।"

रिज़ाक को इस बात से कोई हैरानी नहीं हुई। वह बस इतना ही सोच रहा था: लड़की को ठीक से छुपाना चाहिए था। अगर लड़की अच्छी तरह छुपायी जाती तो पुलिसवाले नाक रगड़कर रह जाते। चाहे जो हो, अब इन सब बातों की चर्चा से क्या लाभ था? सब जानते हैं, कभी-कभी दीवारों के भी कान लग जाते हैं। छोड़ो, भाड़ में जायें सब। उनसे उसका क्या मतलब? और फिर अब शायद कुछ छुपाना भी बेकार था,

कोई सावधानी बरतने की उन्हें जरूरत न थी। अगर स्टास की बात सच है तो सुबह में सब के सब मरनेवाले थे।

एक चिन्तामग्न, चौकस ख़ामोशी कमरे में उतर आयी जिसे थोड़ी देर बाद वास्या ने तोड़ा।

"तहख़ाने में बड़ा आराम था। चाची अरिना ने मेरे लिए घास-फूस का बिस्तर तैयार कर दिया था। मैंने इन लोगों के कदमों की आहट सुनी थी। इनके जाने के बाद मैं तो सो गयी थी और जब आँखें खुलीं तो चीख़ने व गाली-गलौज की आवाजें सुनाई दीं। यह तो पुलिस थी!"

इसी क्षण वास्या ज़ोरों से चिल्ला उठी। उस की भयभीत चीख़ सुनकर प्योत्र उछलकर पैरों पर उठ खड़ा हुआ लेकिन रिबाक फ़ौरन समझ गया: चूहे होंगे! शायद भूखे होने के कारण चूहे बड़े साहसी हो गये थे, उन्हें लोगों का कोई भय न था। प्योत्र ने कोने में एड़ी से कई बार ठोका। वास्या उछलकर कोठरी के बीच में, खिड़की के पास खड़ी हो गयी थी। वह भय से काँप रही थी।

"ओय, यह तो काटते हैं! मेरी टाँगों में दाँत चुभो दिये! मुझे इनसे बड़ा भय लगता है, चाचा जी!"

"उनकी परवाह न करो, बिटिया। वे तो चूहे ही हैं! चूहों से डरने की कोई जरूरत नहीं। काटते हैं तो काटें। क्या होगा? इससे घबड़ाने की ज़रूरत नहीं। तुम इधर आ जाओ, कोने में मेरी जगह पर बैठ जाओ और मैं यहाँ बैठ जाऊँगा। मैं उन्हें मजा चखाऊँगा!"

फिर पाँव से फ़र्श पर ठोकर लगाकर प्योत्र दुबारा बैठ गया। वास्या पुआल पर प्योत्र की गर्म जगह पर बैठ गयी। सोत्निकोव नीन्द में प्रतीत होता था। द्योमचिख़ा सामने रुक-रुककर नाक सुड़कती, आह भरती बैठी थी।

"तो अब क्या किया जाये?" प्योत्र ने अन्धेरे में सवाल किया और ख़ुद ही जवाब दिया: "अब कुछ भी करना नहीं। बस धीरज रखो। ज्यादा देर नहीं।"

फिर ख़ामोशी छा गयी। टाँगे फैलाकर रिबाक ने ोने की कोशिश की लेकिन नीन्द थी कि आती ही नहीं।

वह एक कगार के किनारे खड़ा था।

रात के इस समय, ख़ामोशी के क्षणों में उसे यह बात ख़ास तौर से

साफ़-साफ़ महसूस हो रही थी। उसके ख़्याल से नजात की तलाश में अब देर हो चकी थी। वह हमेशा ही नाज़ुक से नाज़ुक हालात में भी बच निकलने में सफल रहा था। लेकिन इस बार नहीं बच पायेगा। इस बार बच निकलने का कोई रास्ता न था। लाख कोशिशों के बावजूद वह अपने अन्दर घर करते भय से छुटकारा नहीं पा रहा था। बचपन में हूबहू ऐसी ही बात हुई थी जब उसने एक छोटी-सी लड़की व घोड़े की जान बचायी थी। लेकिन तब भय का संचार बाद में, दुर्घटना से बच निकलने के बाद हुआ था। उस दुर्घटना के समय कोल्या रिबाक ने सहज प्रेरणावश काम किया था—बिना कुछ सोचे-विचारे। और निस्सन्देह, इसी कारण वह सफल रहा था। ख़ैर, यह तो बड़ी पुरानी बात थी, सामूहिकीकरण से भी पहले की जब वह एक गँवई लड़का था। अब उसकी याद से क्या लाभ? लेकिन इसके बावजूद, वह उस घटना को याद किये बिना नहीं रह पा रहा था मानो वर्तमान स्थिति से उसका कोई अप्रकट सम्बन्ध था। तब वे गाँव में रहते थे। उनका रहन-सहन और लोगों जैसा ही था—न बेहतर, न ख़राब। वे मध्यम वर्ग के किसान माने जाते थे। उसके पिता के पास एक शानदार कुम्मैत शावक था—काफ़ी तेज़, चुस्त। हाँ कभी-कभी थोड़ा सनक ज़रूर जाता था। लेकिन कोल्या उसे अच्छी तरह क़ाबू में रखना जानता था। गाँव में बच्चे बचपन से ही खेत के काम में हाथ बटाना सीख लेते थे और ग्यारह साल की उम्र में ही कोल्या को घास काटने, हल व हेंगा चलाने का थोड़ा-बहुत अनुभव हो गया था।

घटनावाले दिन वे लोग खेत से पूलियाँ ढो रहे थे।

यह काम बच्चों का खेल माना जाता था। आने-जाने का रास्ता उसे पूरी तरह याद था। वह आँखें बन्द करके भी भली-भाँति बता सकता था कि कहाँ पर थोड़ा मुड़ना है, कहाँ एकदम पहिये की लीक पर गाड़ी हाँकनी है, गहरे गड्ढे से कैसे बचना है। सब से ख़तरनाक रास्ता कुप्तसोवा पहाड़ी पर था—उस सीधी ढलान के पास से एक मोड़ सीधे खड्ड में जाता था। वहाँ रास्ते पर आँखें जमाये रहने व होश बनाये रखने की ज़रूरत थी। लेकिन अब तक कोई दुर्घटना नहीं हुई थी—सब ठीक-ठाक चल रहा था। उसके पिता ने खेतों से आख़िरी पूलियाँ भी जमा कर ली थीं। गाड़ी पर ज़रूरत से ज़्यादा लदाई की गयी थी—रस्सी भी ठीक से नहीं बाँधी

जा सकी थी। उसकी सात साल की बहन माग्या व पड़ोसी की लड़की ल्यूबा पूलियों के ऊपर उसकी बग़ल में आ बैठी थीं।

पूलियों के ऊपर बैठे-बैठे, कभी इस ओर, कभी उस ओर झूलते हुए वह बड़ी दृढ़ता के साथ गाड़ी को हाँककर ले जा रहा था। वे कुप्तसोवा पहाड़ी से आगे बढ़े और वहाँ से रास्ता गहरे खड्ड में चला जाता था। फिर पता नहीं घोड़े से बँधे साज में क्या हुआ, घोड़ा बेक़ाबू हो उठा, गाड़ी का बायाँ हिस्सा उछलकर ऊपर उठ गया और तेज़ी से दाहिनी ओर से गाड़ी रुक गयी। नीचे की ओर देखते हुए कोल्या फिसलकर ज़मीन पर उतर आया।

आगे क्या होगा, यह बात वह साफ़ तौर पर देख रहा था और सहज प्रेरणावश उसने अपना कमज़ोर कन्धा भारी-भरकम रूप से झुकी गाड़ी के किनारे लगा दिया। कन्धों पर पड़ता बोझ असह्य था और सामान्य स्थिति में वह शायद ही कभी ऐसा कर पाता लेकिन इस समय वह उस भयानक बोझ को भी झेल गया। लड़कियाँ भी फिसलकर ज़मीन पर उतर आयीं, पूलियाँ भी ज़मीन पर गिर पड़ीं लेकिन घोड़ा किसी न किसी तरह उस अनिष्टकारी जगह से गाड़ी को खींच ही ले गया।

बाद में गाँव में उसकी बड़ी प्रशंसा हुई थी और वह भी अपने आप से बड़ा ख़ुश था—आख़िर उसने अपनी, लड़कियों की और घोड़े की जान बचा ही ली थी। कोल्या ख़ुद को काफ़ी बहादुर और साहसी समझने लगा। मख्य बात थी घबड़ाये बिना होश पर क़ाबू बनाये रखना।

और अब वह एक फिर उसी तरह के कगार के किनारे खड़ा था। फ़र्क़ सिर्फ़ यह था कि यहाँ ठण्डे दिमाग़ से ही काम चलनेवाला न था। यहाँ कुछ और की ज़रूरत थी। यहाँ बेहिसाब साहस भी किसी काम का न था। यहाँ किसी और चीज़ की ज़रूरत थी जिसकी उसमें स्पष्ट रूप से कमी थी। यहाँ उसके हाथ-पाँव पूरी तरह बँधे थे और वह कुछ भी नहीं कर सकता था।

लेकिन जाँच-अधिकारी ने उसे भले ही फँसाने की चाल ही चली हो, वह झूठ नहीं बोला होगा। उसने झूठमूठ वायदा नहीं किया होगा? फ़ौरन बात न मानकर शायद उससे ग़लती हुई थी क्योंकि लगता था, कल होते न होते सारा क़िस्सा ख़त्म हो जायेगा। फिर भी बात समझ से बाहर न थी। आख़िर जाँच-अधिकारी के ऊपर भी तो अधिकारी होंगे और उनका

आदेश मिल चुका होगा। यही बात होगी। अब तक समय हाथ से निकल चुका था।

लेकिन नहीं, वह इस तरह, बुज़दिलों की तरह हाथ पर हाथ रखे मौत को स्वीकार नहीं करेगा। वह इन पुलिसवालों के टुकड़े-टुकड़े कर देगा, इन्हीं हाथों से पोर्तनोव और स्टास के गले घोंट देगा। ज़रा उसके क़रीब तो आयें...

१६

मुखिया के साथ पल भर की बातचीत के बाद सोल्तिकोव को इतनी कमज़ोरी महसूस हुई कि वह पुआल पर सिर टिकाकर थोड़ी देर के लिए सो गया। जागने पर उसने ख़ुद को पसीने से तरबतर पाया। लम्बे समय से उसे जकड़ रखनेवाले ऊँचे ज्वर ने अब ठण्डे पसीने के साथ उसे मुक्ति दे दी थी और नम कोट के अन्दर उसे ऐंठन भरी कँपकँपी महसूस हो रही थी। लेकिन उसे अब अपना मस्तिष्क साफ़ लग रहा था, मस्तिष्क को आच्छन्न बना रखनेवाली तेज़ तन्द्रा जा चुकी थी। कुल मिलाकर वह बेहतर महसूस कर रहा था। क्षत-विक्षत व सूजी अँगुलियों व ज़ख़्मी टाँग में दर्द न होता तो शायद वह ख़ुद को पूर्णतया स्वस्थ समझता।

तहख़ाने में अन्धेरा व ख़ामोशी थी लेकिन कोई भी सोया प्रतीत नहीं हो रहा था क्योंकि लोग भारी-भारी आहें भर रहे थे, अजीबोग़रीब ढंग से पहलू बदल रहे थे व साँसें रोके थे। सहसा सोल्तिकोव ने महसूस किया कि धरती पर उन सब की आख़िरी रात ख़त्म होनेवाली थी। सुबह का मुँह देखना उनकी क़िस्मत में न था।

ख़ैर, इस में अब सन्देह की कोई गुंजाइश न थी लेकिन फिर भी वह बची-खुची शक्ति बटोरकर सम्मानपूर्वक मौत को गले लगायेगा। इन कपूतों से इसके अलावा उसे किसी चीज़ की कोई प्रत्याशा भी न थी: वे उसे ज़िन्दा नहीं छोड़ेंगे—हाँ, बुदिला की यन्त्रणा शायद और झेलनी पड़े। लेकिन अन्त में सब शायद ठीक-ठाक ही रहेगा: कोई गोली फ़ौरन, बिना किसी पीड़ा के उसके प्राण हर लेगी। यह भी कोई बुरी बात नहीं, युद्ध के समय प्राण त्यागना प्रत्येक सिपाही के लिए सामान्य बात थी।

कितनी बेवक़ूफ़ी थी कि वह युद्ध में मरने से डरता आया है। लेकिन इस समय हाथों में हथियार लेकर मौत को गले लगाने की बात अलभ्य लालसा थी और यह सोचकर उसे उन हज़ारों ख़ुशक़िस्मत साथियों से कुछ-कुछ ईर्ष्या-सी हो आयी जो मोर्चे पर सम्मानजनक वीरगति प्राप्त कर रहे थे।

निस्सन्देह, एक गुरिल्ले के रूप में कुछेक महीनों में उसकी उपलब्धियाँ अकिंचन न थीं, बतौर एक नागरिक व सिपाही, उसने अपना कर्त्तव्य पूरा किया था। शायद इच्छानुरूप तो नहीं लेकिन परिस्थितियों के अनुरूप जरूर। चाहे जो हो, दुश्मन के बहुत से सैनिक उसके हाथों मारे गये थे।

और अब उसका अन्त आ गया था।

सब कुछ ठीक-ठाक और नियमानुसार ही हुआ था। और यह सोच कर उसे दो टूक अपना आख़िरी फ़ैसला करने का मौक़ा मिला। इस जीवन में अगर किसी अन्य चीज की उसे चिन्ता रही थी तो उन लोगों के प्रति अन्तिम दायित्व की जो संयोगवश या भाग्यवश इस समय उसके साथ जुड़ गये थे। उनसे अपने सम्बन्ध स्पष्ट किये बिना मरने का उसे कोई हक़ नहीं था क्योंकि इहलीला समाप्त करने से पहले उसके यह सम्बन्ध असन्दिग्ध रूप से उसकी अन्तिम आत्माभिव्यक्ति होंगे।

चाहे यह बात जितनी भी विचित्र प्रतीत हो लेकिन एक बार मृत्यु को अवश्यम्भावी मान लेने के बाद सोत्निकोव को दुश्मनों के पंजों से पूरी आज़ादी हासिल कर लेने का अहसास हो गया। अब वह ऐसी कारगुज़ारी भी अंजाम दे सकता था जो किसी दूसरे समय परिस्थितियों व आत्मरक्षा की चिन्ता के कारण असम्भव कही जा सकती थी। अब वह अपने अन्दर एक नयी शक्ति महसूस कर रहा था जो न तो उसके दुश्मनों, न परिस्थितियों और न ही दुनिया में किसी अन्य चीज के अधीन थी। उसे किसी भी प्रकार का भय न था और वह इस दृष्टि से दूसरों के मुक़ाबले अधिक अनुकूल स्थिति में पहुँच चुका था। मानो वर्तमान स्थिति में इससे अधिक बुनियादी व तर्कसंगत बात कोई हो ही नहीं सकती, उसने बिना किसी निरुद्विग्नता के अपना अन्तिम फ़ैसला लिया: वह सारा दोष ख़ुद स्वीकार कर लेगा। जाँच-अधिकारी को कल वह बता देगा कि वह टोह लेने निकला था, उसे एक मिशन पर भेजा गया था, गोलीबारी में पुलिसवाले को उसी ने गोली मारी थी, वह लाल सेना का एक कमाण्डर था और फ़ासिज़्म का दुश्मन था और वे चाहें तो उसे गोली मार दें। लेकिन बाक़ी लोग बेक़सूर थे।

हालाँकि दूसरों को बचाने के लिए वह ख़ुद को निश्चय ही शहीद कर रहा था, यह शहादत जितनी उनके लिए उतनी ही उसके लिए जरूरी थी। वह नहीं चाहता था कि हतबुद्धि विश्वासघातियों द्वारा उसकी मृत्यु निरर्थक बना दी जाये। युद्ध में मृत्यु की तरह इससे भी कुछ मूल्यों की रक्षा और दूसरे पक्ष की अवमानना होनी चाहिए और इस प्रकार ज़िन्दा रहते जो वह पूरा नहीं कर पाया, उसे मरकर यथासम्भव पूरा कर देगा। नहीं तो जीवन की सार्थकता क्या थी? जीवन के अन्त से निर्विकार ढंग से व्यवहार करना किसी भी आदमी के लिए असंभव है।

ठण्ड थोड़ी-थोड़ी बढ़ गयी थी और वह रह-रहकर काँप उठता, कोट में अधिकाधिक गहरे धँस जाता। हमेशा की तरह इस फ़ैसले पर पहुँचकर उसे राहत मिली: युद्ध में सर्वाधिक दुखदायी अनिश्चितता अब उसे सता नहीं रही थी। अब दुश्मन से आख़िरी लड़ाई का वक़्त और अपने प्रतिरोध की जानकारी उसे थी। अब वह इससे पीठ नहीं फेरेगा और इस लड़ाई में विजय आसान न थी, फिर भी वह पूरी तरह शान्त था। उसके दुश्मन शक्तिसम्पन्न थे लेकिन अन्त में उसने भी आत्मनिर्भरता की शक्ति पा ली थी। उसे उनका कोई भय न था।

कोट के अन्दर गर्मी महसूस कर वह सो गया और उसे एक भयावह, अस्तव्यस्तकारी स्वप्न दिखाई दिया।

धरती पर अपनी आख़िरी रात में ऐसा सपना देखना विचित्र था। घटना बचपन की थी। कई ऊलजलूल बातों के साथ उसे एक दृश्य ख़ास तौर से दिखाई दिया—उसका सम्बन्ध पिता की माउज़र पिस्तौल के साथ हुई एक घटना से था। सोत्निकोव ने उसे खोल से निकालने की चेष्टा करते-करते उसकी नली एक ओर मोड़ दी थी। सपने में पिस्तौल की नली फ़ौलादी नहीं बल्कि टिन की बनी थी। सोत्निकोव को काटो तो ख़ून नहीं—हालाँकि अब न तो बच्चा था, न कैडेट लेकिन पता नहीं क्यों स्वप्न में घटना शूटिंग रेंज के दौरान हुई। हाथ में पिस्तौल लिये वह स्तूप के पास हक्का-बक्का खड़ा था। पिता जी किसी भी क्षण आने ही वाले थे। वह स्तूप की ओर दौड़ पड़ा लेकिन सारी की सारी जगहें बन्दूकों से भरी थीं। फिर काँपते हाथों से एक अँगीठी का झरोखा खोलकर उसने पिस्तौल का-

ली-काली झँझरियों में फेंक दी। झँझरियाँ सिगरेटों के टुकड़ों से भरी पड़ी थीं।

अगले ही पल आग दहक उठी और लहकते कोयलों के बीच कोई चमकती-सी चीज़ पिघलने लगी और वह किंकर्तव्यविमूढ़ खड़ा-खड़ा देखता रहा। पिताजी उसके पीछे आ खड़े हुए थे। लेकिन पिताजी माउज़र के बारे में कुछ भी बोल नहीं रहे थे जबकि सोत्निकोव का ख़्याल था कि वह अभी कुछ देर पहले हुई घटना से पूरी तरह वाक़िफ़ थे। फिर अँगीठी के पास घुटनों के बल बैठकर पिताजी ने मानो खेद के साथ फटी आवाज़ में कहा: "आग थी और धरती पर यही सबसे बड़ी नियामत थी।"

सोत्निकोव को यह पंक्ति बाइबिल की लगी—माँ की कपड़े रखने की छोटी-सी आलमारी में बेलबूटों से सज्जित काली जिल्दवाली मोटी-सी बाइबिल पड़ी रहती थी और बचपन में वह कभी-कभी उसके पीले-पीले पन्नों को उलट-पलटकर देखा करता था। पन्नों से पुरानी किताबोंवाली ख़ास फफूँददार बू आती थी। लेकिन इस समय पिता को बाइबिल की पंक्ति बोलते देखकर उसे आश्चर्य हुआ था क्योंकि पिताजी ईश्वर में विश्वास नहीं करते थे और धर्माधिकारियों की खुले आम नुक्ताचीनी करते थे।

पता नहीं, अँगीठी में आग कब तक दहकती रही—उसका मस्तिष्क सुन्न हो गया और आँखों तले अन्धेरा छा गया। कुछ ही समय पहले वह दुबारा होश में आया था और उसे बिलकुल क़रीब से दबी-दबी आवाज़ें सुनाई दी थी, कुछ धावमाने व पुआल पर सरसराहट के साथ एकदम प्रौढ़-सी आवाज़। पूरी तरह होश में आने के बाद ही वह समझ पाया कि यह सारी आवाज़ें चूहों को खदेड़ने की कोशिश में पैदा हुई थीं। अब पूरी तरह होश में आने के बाद उसे दुबारा खाँसी शुरू हो गयी थी और खाँसते-खाँसते वह अपने सपने के बारे में सोचने लगा। और धीरे-धीरे विचार तिरते-तिरते सुदूर बचपन की उत्साहपूर्ण स्मृतियों में खो गये...

माउज़र की घटना विचित्र स्वप्न मात्र न थी। लाल सेना के एक भूतपूर्व कमाण्डर होने के नाते उसके पिता के पास सच में ऐसी पिस्तौल थी। उससे भी पहले वह ज़ार की अश्वारोही सेना में लेफ़्टिनेंट थे और उनके चौड़े सीने मर सेण्ट जॉर्ज के दो मेडल लगे रहते थे। मोर की डिज़ाइनवाली एक ख़ूबसूरत-सी पेटी में पिता की एक तस्वीर उसे प्रायः दिखाई दी थी। ख़ास-ख़ास मौक़ों पर, कभी-कभी उसके पिता दराज़ से पिस्तौल नि-

कालते थे और सोत्निकोव को तब पीली लकड़ी के बने होल्स्टर को पकड़ने के लिए कहा जाता था। लड़का होल्स्टर पकड़े रहता और पिता पिस्तौल खींचकर निकाल लेते। होल्स्टर से पिस्तौल को ख़ुद बाहर निकालना पिता के लिए मुश्किल था क्योंकि लड़ाई में घाव लगने के कारण उनकी बाँह धीरे-धीरे लकवा ग्रस्त होती जा रही थी। लड़के के जीवन में वे सर्वाधिक सुख के क्षण होते थे लेकिन उसके बाद वह खड़ा-खड़ा पिताजी को पिस्तौल साफ़ करते देखता रहता था, उसे पिस्तौल के साथ छेड़खानी करने की इजाज़त न थी। "बन्दूकों व मेडलों से खेलना मना है," उसके पिता कहते थे और बिना किसी विरोध के लड़के ने बात मान ली थी। उनके परिवार में पिता के शब्द क़ानून माने जाते थे और हर बड़े-छोटे मामले में उन्हीं का फ़ैसला आख़िरी होता था। और स्वाभाविक रूप से हर कोई उनकी बात मान लेता था क्योंकि गृह युद्ध के योद्धा होने के कारण हमारे छोटे से शहर में वह सुविख्यात थे। लड़ाई में घाव लगने और अत्यधिक अभिमानी होने के कारण ही वह अपनी आजीविका घड़ियों की मरम्मत से चलाते थे—माँ ने एक बार ऐसा ही बताया था।

लकड़ी के होल्स्टर में बन्द नीला फ़ौलादी माउज़र सोत्निकोव के बचपन का सपना था लेकिन वह माँ से उसे माँगने की हिमाक़त नहीं कर सकता था।

चुनाँचे, लड़के ने ख़ुद पिस्तौल निकाल लेने की ठान ली।

एक दिन सुबह में जब उसकी नीन्द खुली, घर में कोई भी न था। पिताजी अपनी छोटी-सी घड़ीसाज़ी की दूकान में हमेशा की तरह जा बैठे थे। वहाँ से घड़ियों की निरन्तर टिक-टिक की आवाज़ें घर में आती रहतीं। माँ सवेरे-सवेरे गिरजाघर को रवाना हो गयी थी—सुबह की प्रार्थना-सभा के लिए घण्टियों की आवाज़ें शहर के ऊपर गूंजती सुनी जा सकती थीं।

जल्दी-जल्दी पैण्ट डालकर और मुंह-हाथ धोने का काम बाद के लिए छोड़के वह चुपके से माँ-बापवाले कमरे में जा पहुँचा। मनबसी दराज़ तालाबन्द थी लेकिन निमन्त्रण देती चाबी उसके छेद से लटक रही थी और लड़के ने चाबी लगाकर चिकना पालिशदार होल्स्टर बाहर निकाल लिया। होल्स्टर उम्मीद से कहीं ज़्यादा भारी था। होल्स्टर की एक ओर अंकित था: "अश्वारोही सेना की क्रान्तिकारी परिषद की ओर से लाल सेना के स्क्वाड्रन कमाण्डर ए. सोत्निकोव को।" यह वाक्य उसे कण्ठस्थ था। लक-

ड़ी की हैण्डल छूते ही लड़के का दिल बल्लियों उछलने लगा। उसके हाथों ने फुर्ती से गुटका हटा दिया और माउज़र थोड़े कड़ेपन से लेकिन आसानी से बाहर निकल आया। उसका नीला फ़ौलादी हिस्सा रहस्यमय ढंग से चमक रहा था। उसे अभूतपूर्व भयावह उत्तेजना महसूस हो रही थी। लॉक को पीछे करने व नली में झाँकने की कोशिश करते हुए उसने एक मिनट तक पिस्तौल पर नज़र दौड़ाते हुए उसकी परीक्षा की। बेशक, सबसे ज़्यादा मज़ा तो इससे निशाना लगाने में था! लेकिन हैण्डल पकड़कर वह ट्रिगर पर अँगुली रखने की कोशिश ही कर रहा था कि सब कुछ गुड़-गोबर कर देनेवाली गरज के साथ अचानक एक गोली सनसनाती हुई कहीं मेज़ के नीचे घुस गयी।

पल भर को वह वज्राहत-सा खड़ा रह गया, कानों में पीड़ादायक घनघनाहट हो रही थी। कारतूसों का केस उछलकर दीवार से गिर पड़ा और पता नहीं मेज़ के नीचे कहीं से गोली के दाग़ वाला दीमक खाया लकड़ी का एक टुकड़ा भी लुढ़क पड़ा।

थोड़ा आपे में आने के बाद पिस्तौल को होल्स्टर में रख, दराज़ में उसे बन्द कर वह माँ की प्रतीक्षा करने लगा। उसे कलेजा मुँह को आता लगता। आते ही माँ को किसी न किसी तरह की गड़बड़ी का अहसास हो गया और ज़िद करने पर लड़के ने सारी बातें हूबहू बता दीं। बात माँ के हाथ के बाहर की थी और लड़के की चिन्ता में वह रो उठी—वह इससे पहले कभी नहीं रोयी थी। उसने लड़के से कहा कि बातें पिता से सारी साफ़-साफ़ कहकर माफ़ी माँग लेनी चाहिए।

यह काम बड़े जोखिम का था और साहस जुटा पाने में ही उसे घण्टा लग गया। आख़िर जान हथेली पर लिये उसने पिता की घड़ीसाज़ी के कमरे का दरवाज़ा खोला।

खिड़की की देहली पर झुके उसके पिता किसी घड़ी की मरम्मत में व्यस्त थे। काले दस्ताने पहने उनका दायाँ हाथ बेजान-सा घुटने पर टिका था और बायाँ हाथ बड़ी कुशलता से पेंचों को खोलता-कसता घड़ी को ठीक करने में लगा था। तरह-तरह की दीवार घड़ियों के अनेकानेक पेण्डलम अलग-अलग गति से हिल-डुल रहे थे—उनमें से कई घड़ियों के डायल बेरंग हो चुके थे। कई अलार्म घड़ियाँ भी टिक-टिक कर रही थीं। कोने में बहुत बड़ी घड़ी का लकड़ी का केस पड़ा था। यह भारी-भरकम दादा घड़ी

मरम्मत के लिए परसों प्रादेशिक समिति से यहाँ लायी गयी थी। उसे कमरे के अन्दर आते महसूस करके भी पिताजी ने मुड़कर नहीं देखा और बड़े ही अजीब से उल्लसित स्वर में पूछा:

"तो फिर क्या हाल है, मुन्ने? नाविकों के क़िस्से कैसे लगे?"

बड़ी मुश्किल से लड़के ने रुँधती आवाज़ पर क़ाबू पाया, एक दिन पहले उसने स्तान्युकोविच को पढ़ना शुरू किया था। विसेम्स्की के संग्रहों और स्तान्युकोविच की कुछेक किताबों को छोड़कर वह दादाजी के विशाल सन्दूक में पड़ी सभी पुस्तकों को पढ़ चुका था। दो दिन पहले पिताजी ने स्तान्युकोविच की एक किताब निकालकर उसे पढ़ने दी थी। लेकिन इस समय किताबों की बात बेकार थी, इसलिए वह बोल उठा:

"पिताजी, मैंने आपका माउज़र निकाला था।"

मानो हतप्रभ हो पिताजी ने उसकी ओर देखा, झुरझुरी ली, चिमटियाँ नीचे रख दी और चश्मे उतारकर बेधती नज़र उस पर टिका दी।

"तुम्हें इजाज़त किसने दी थी?"

"किसी ने भी नहीं, और उससे गोली निकल पड़ी," लड़के ने फँसी आवाज़ में कहा।

बिना एक शब्द बोले पिताजी उठ खड़े हुए और कमरे से बाहर चले गये। वह दरवाज़े के पास अकेला खड़ा रह गया, उसे अपने सिर पर तलवार लटकती महसूस हो रही थी। लेकिन उसे अपनी भूल का अहसास था और वह इसके लिए बड़ी से बड़ी सज़ा भुगतने को तैयार था।

थोड़ी देर बाद ही पिताजी लौट आये।

"शैतान कहीं का!" दरवाज़े से ही वह बोले। "बिना इजाज़त पिस्तौल छूने का तुम्हें क्या हक़ था? किसी चोर की तरह तुम्हें माँ की निजी दराज़ में तलाशी लेने की हिम्मत कैसे हुई?"

उसकी लापरवाही के लिए पिताजी ने लम्बी डाँट पिलायी और मलामत की कि गोली दगने के कारण काफ़ी नुक़सान हो सकता था, यह ख़तरनाक था और उसका आचरण घटिया था।

"बस एक ही बात है जिससे तुम्हारा क़ुसूर थोड़ा कम हो जाता है—वह यह कि तुमसे मुझसे अपना क़ुसूर कहकर माफ़ी माँग ली। बस इसी कारण मैं तुम्हें छोड़ रहा हूँ, समझे?"

"जी।"

"हाँ, लेकिन यह तभी हो सकता है, अगर तुमने अपनी मर्ज़ी से क़ुसूर क़बूल कर माफ़ी माँगी हो। क्यों, अपनी मर्ज़ी से तुमने ऐसा किया है न?"

जान निकली महसूस कर लड़के ने सिर हिला दिया और पिताजी ने राहत की साँस ली।

"तो फिर तुम्हें शुक्रिया, मुन्ने।"

हद हो गयी – झूठ बोलकर पिता का आभार उसने प्राप्त किया था। उसे आँखों के आगे हर चीज़ तैरती प्रतीत हुई और शर्म के मारे उसका रंग चटक नीला पड़ गया, वह जहाँ का तहाँ गड़ा सा रह गया।

"तो फिर जाओ, खेलो," पिताजी ने कहा।

तो गोया वह बड़ी आसानी से बच निकला था – पिटाई से बच गया था। लेकिन कायरों की तरह सिर हिला देना उसे सीने में चुभता-सा महसूस हो रहा था। यह उसे जीवन भर का सबक़ मिला था। उसके बाद वह न तो कभी पिताजी से, न किसी दूसरे से ही कभी झूठ बोला। लोगों की आँखों में आँखें डालकर वह अपने किये का सारा उत्तरदायित्व बेहिचक ले लेता था। पिताजी से माफ़ी माँगने की सूझ किसकी थी, माँ ने निस्सन्देह पिताजी को कभी मालूम नहीं होने दिया। और इस तरह रिसाला कमाण्डर, गृहयुद्ध के अपंग, घड़ीसाज़ उसके पिता जीवन के अन्तिम दिनों तक यह सुखद विश्वास बनाये रहे कि उनका बेटा लायक़, सुदृढ़ लड़का निकलेगा और उसका भविष्य उनसे कहीं ज्यादा उज्ज्वल रहेगा।

और यह रहा उसका उज्ज्वल जीवन...

१७

ऊपर सीढ़ियों से आती पदचापों, दबी-दबी बातों व दरवाज़ों के खोलने-बन्द करने की आवाज़ों से सुबह की तन्द्रिल निस्तब्धता अचानक भंग हो गयी। नीचे तहख़ाने में दरवाज़ों के ज़ोरों से बन्द किये जाने की आवाज़ें ख़ास तौर से साफ़-साफ़ सुनाई दे रही थीं। कभी-कभी दरवाज़ों के धमाकों से छत से कुछ-न-कुछ भसककर गिर पड़ता। रिबाक जगा था और इन सारी आवाज़ों को सुनता, टाँगों को मोड़े दीवार के पास पहलू के बल ख़ामोशी से लेटा था। उसका पूरा ध्यान आती आवाज़ों को सुनने में लगा था। खिड़की के पास धीरे-धीरे उजाला होने लगा था और बाहर साफ़ तौर पर रोशनी फैल चुकी थी। अन्दर कोठरी में भी रोशनी अब थोड़ी-बेहतर हो गयी थी। धुँधली, सिकुड़ी क़ैदियों की मानो निचोड़ी-सी आकृतियाँ रात के अन्धेरे से अब धीरे-धीरे उभर रही थीं – सामने अब चुप्पी साधे द्योमचिख़ा बैठी थी, दुख की मूर्ति बना प्योत्र कोने में बिना हिले-डुले बैठा था। अभी भी अन्धेरे में छुपी बास्या खिड़की के नीचे बैठी थी और पास में ही सोत्निकोव पहले की ही तरह पीठ के बल लेटा था। अगर वह ज़ोर-ज़ोर से साँसें नहीं ले रहा होता तो मृत समझा जाता। उनका मुश्किलों से भरा, शायद आख़िरी दिन शुरू हो रहा था और इसी अहसास के साथ वे ख़ामोश थे, हरेक अपने ही निजी ग़म में डूबा था।

ऊपर से आती पदचापें तेज़ हो गयीं और दरवाज़े लगातार खुलने व बन्द होने लगे। बातचीत की आवाज़ें अचानक बाहर अहाते से सुनाई दीं। पीछे दीवार से सिर टिकाकर रिबाक ने उसे ऊपर उठाया। क्या बातचीत हो रही थी, यह जानना हालाँकि मुश्किल था, लेकिन इसमें कोई सन्देह न था कि लोग बाहर इकट्ठा हो रहे थे। फिर नीचे कोठरी तक क्यों नहीं कोई आया था? लगता था मानो वे उन्हें एकदम भूल ही गये थे।

कोई ठीक उनकी दीवार के पास से गुज़रा था, बूटों के नीचे बर्फ़ के चरमराने की आवाज़ एकदम क़रीब से सुनाई दी थी। खिड़की से कुछ ही दूर पर कोई चीज़ ठनाक से बजी और एक मोटी, भर्रायी-सी आवाज़ किटकिटायी:

"यहाँ तो सिर्फ़ तीन हैं!"

"यहीं कहीं पर एक डोई पड़ी थी। देखो तो, शायद तुम्हें मिल जाये।"

"डोई से क्या फ़ायदा! हमें बेलचे चाहिए।"

लोहा खनकने और पदचापों की चरमराहट एक बार फिर सुनाई दी और फिर ख़ामोशी छा गयी। लेकिन उस छोटी-सी गुफ़्तगू ने रिबाक की तो जान ही सुखा दी। बेलचों की क्या ज़रूरत पड़ गयी? बेलचे खुदाई के काम में ही आ सकते थे और इस बर्फ़ में क्या खुदाई हो सकती थी? खाई खोदेंगे? या गड्ढा? या क़ब्र? शायद क़ब्र ही खोदेंगे। लेकिन किसके लिए?

फिर अचानक ही उसे याद आ गया: ज़रूर ही उस सिपाही के लिए जो पिछली रात घायल होने के बाद मर गया था।

सिर मोड़कर उसने आस-पास जिज्ञासा भरी दृष्टि डाली। द्योमचिखा ने भी अपने मुड़े-तुड़े स्कार्फ़ के अन्दर से उसकी ओर चिन्तातुर, वेधती दृष्टि से देखा और प्योत्र बुत बना कोने में बैठा था। कोई एक भी शब्द नहीं बोल रहा था, कानों पर बल देते सब के सब भय व उत्तेजना से सिहर रहे थे।

अनिश्चय की यह स्थिति ज्यादा देर नहीं रही। मिनट भर बाद ही बाहर से दुबारा पदचापें सुनाई दीं, व निश्चित रूप से उनकी ओर, तह-ख़ाने की ओर बढ़ती चली आ रही थीं। जब धड़ाम की आवाज़ के साथ पहला दरवाज़ा खुला, रिबाक तेज़ी से उठ बैठा, भय के कारण उसे अप-ना सीना बेतरह उछलता-सा महसूस हो रहा था। सोत्निकोव आँखें खोल खाँसने लगा। "दरवाज़ा खोलते ही उन पर हमला करके निकल भागना चाहिए," रिबाक क्षीण संकल्प के साथ सोच रहा था लेकिन तभी फ़ौरन ख़्याल आया: नहीं, इससे कोई लाभ नहीं होगा, मैं ज़रूर चूक जाऊँगा। उधर अब दरवाज़ा खोले जाने में कोई सन्देह नहीं रह गया था। कोठ-री में बर्फ़-सी ठण्डी ताज़ा हवा का झोंका आया और बाहर से आती फीकी रोशनी से पाँचों पीले, चिन्तातुर चेहरे रोशन हो उठे। चुस्त-दुरुस्त स्टास दहलीज़ पर दिखाई दिया और उसके पीछे हाथों में बन्दूक लिये किसी दूसरे आदमी की धुँधली आकृति थी।

"उठो, उठो!" स्टास ज़ोरदार आवाज़ में गरज पड़ा। "काहिलो, चलो उठो, मरने का समय आ गया!"

"तो हम ठीक ही समझ रहे थे, सच में अन्त आ पहुँचा," रिबाक सोच रहा था। "किसी एक को नहीं, हम सब को मरना होगा..." पल भर को उसे फालिज-सा मार गया, उसकी सारी शक्ति जाती रही। बेजान-से पैरों को मोड़ टोप को सिर पर सीधा रखकर पुआल पर हाथों का सहारा ले वह उठने को हुआ।

"चलो, उठो, बाहर निकलो! चाहो न चाहो, निकलो!" स्टास की कर्कश आवाज़ गूँजी।

सबसे पहले कोने में बैठा प्योत्र उठ खड़ा हुआ, फिर एक गहरी साँस छोड़ द्योमचिखा भी खड़ी होने लगी। उठ खड़ा होने की कोशिश में सो-

त्निकोव ने दीवारों की ओर हाथ बढ़ाये। रिबाक ने उसके पीले चेहरे पर एक चोर नज़र डाली, रात भर में उसका चेहरा और भी भयावह हो उठा था, धँसी आँखों के नीचे चमड़ा झूल गया था। उस पर नज़र डालने के बाद वह बदहवासी में दरवाज़े की ओर बढ़ गया।

"चलो-चलो, सच पूछो तो तुम्हारे जीवन के सिर्फ़ अन्तिम बीस मिनट बाक़ी रह गये हैं।" उनकी बदबूदार कोठरी के अन्दर जाकर पीछे से धकि-याते हुए स्टास बोला। "ऐ, तू है! एक टँगिया! चलो, आगे बढ़ो!"

"हाथ हटाओ! मैं ख़ुद उठ खड़ा होऊँगा!" सोत्निकोव गुर्रा उठा।

"ऐ, यहूदी छोरी, तू काहे को रुकी है? चल बाहर! बात नहीं करना चाहती न, ठीक है, अब फाँसी में झूलते तेरी ज़बान ढीली पड़ जायेगी!" मज़ा लेते हुए स्टास बोला और अचानक ही गुस्से से फट पड़ा: "बढ़ती चल, चुड़ैल कहीं की!"

वे अहाते की बर्फ़ से ढकी कंक्रीट की सीढ़ियों से ऊपर जा पहुँचे। रि-बाक ऐसे चल रहा था मानो उसमें जान ही न हो, कोट के बटन खुले थे, जान फूँक देनेवाले तुषार का भी उसे कोई अहसास नहीं था। बदबू-दार तहख़ाने में रात बिताने के बाद उसका सिर किसी नशेड़ी की तरह चकरा रहा था। अहाते के पार कोई आधा दर्जन सिपाही प्रतीक्षारत खड़े थे, उनकी बन्दूकें तनी थीं। तेज़ ठण्डी हवावाली यह एक कुहराच्छादित सुबह थी और चिमनियों से धुएँ के धूसर छल्ले उठकर अपार आसमान की ओर बढ़ रहे थे।

प्रवेश सीढ़ियों के सामने रिबाक अनिश्चय में खड़ा हो गया और द्योम-चिखा व बास्या उसके पीछे रुक गयीं। बास्या द्योमचिखा से यूँ लगी-लगी चल रही थी मानो वही अब उसकी माँ हो। सिपाहियों की ओर भयभीत दृष्टि से देखती वह बिवाईदार पैरों को एक-दूसरे पर टिकाये खड़ी थी। प्योत्र कुछ आगे जाकर खड़ा था, उसकी वृद्ध आकृति उदासीन, विरक्त की प्रतिमूर्ति बनी थी। उधर बेतरह गालियों की बौछार करता स्टास सो-त्निकोव को घसीटता बाहर ले आया और कुछ थके अन्दाज़ में उसने उसे बर्फ़ पर पटक दिया। साँस पर क़ाबू पाने में पल भर की भी कोशिश किये बिना सोत्निकोव किसी न किसी तरह उठ खड़ा हुआ और मुड़े-तुड़े ख़ून के धब्बोंवाले अपने कोट में वह बिलकुल सीधा तन गया।

"जाँच-अधिकारी कहाँ है? उसे बुलाओ!" मोटी, भर्राई आवाज़

में उसने चीख़कर कहने की कोशिश की। इसके साथ ही उसे दुबारा खाँसी शुरू हो गयी थी।

जाँच-अधिकारी से मिलने की बात रिवाक को भी सहसा याद हो आयी और सोत्निकोव के लहजे से विपरीत वह शान्तिपूर्वक बोला:

"हाँ, हमें जाँच-अधिकारी के पास ले चलो। कल उसने कहा था..."

"तुम फ़िक्र न करो, हमें मालूम है कि तुम्हें कहाँ ले जाना है," हाथों में एक रस्सा लिये उनकी ओर तेज़ क़दमों से आता भारी जबड़ोंवाला मुस्टण्डा सिपाही खिल्ली उड़ाता बोला। "अपने हाथ बढ़ाओ!"

आनाकानी बेकार थी, सो, रिवाक ने हाथ आगे बढ़ा दिये। बारी-बारी से गाँठ डालकर दूसरे सिपाही की मदद से उस सिपाही ने रिवाक के हाथ पीछे पीठ की ओर करके बाँध दिये। यह बड़ा ही बेहूदा, तकलीफ़देह व अपमानजनक था। रिवाक को झुरझुरी हो आयी लेकिन उसका कारण कलाइयों में होनेवाला दर्द नहीं बल्कि दिल को जकड़ता भय था। तो अब सचमुच अन्त आ ही गया था।

"जाँच-अधिकारी को ख़बर करो। हमें जाँच-अधिकारी से मिलना है," उसने कहा लेकिन उस के स्वर में दृढ़ता न थी। उसे अपने पैरों तले धरती खिसकती महसूस हो रही थी।

लेकिन पीछे से उस पर गालियों की बौछार के सिवा सिपाही ने कुछ भी नहीं किया।

"अब तो देर हो गयी, प्यारे! जितनी जाँच-पड़ताल होनी थी, हो चुकी।"

"क्या मतलब है तुम्हारा!" रिवाक ने चीख़कर कहा और पीछे की ओर मुड़कर देखा। लेकिन सफ़ेद खूँटियों से भरे उसके नृशंस चेहरे की ओर देखकर और उस की सँकरी, सूअरों-सी धूर्त आँखों में पूर्ण उदासीन भाव महसूस कर उसने समझ लिया कि इस आदमी के सामने आँखें तरेरने से कोई लाभ नहीं होगा। फिर उम्मीद का आख़िरी दामन थामते हुए उसने चिरौरी की: "मेहरबानी करके पोर्तनोव को बुलाइये। इनसानियत बरतिये, इसमें आपका कुछ जायेगा नहीं।"

पर रिवाक के लिए मौत का किनारा इतना दूर नहीं था जितना कि पोर्तनोव तक। किसी ने उसे जवाब देने की भी चिन्ता नहीं की।

पतले रस्से से कुशलतापूर्वक हाथ बाँधने के बाद व द्योमचिख़ा की ओर

बढ़ गये। रस्सा रिवाक की चमड़ी में धँस रहा था। रस्सा से हाथ बाँधने के बाद रिवाक को एक ओर धकिया दिया गया था।

"ऐ, सुनते हो, जाँच-अधिकारी को बुला लाओ!" सोत्निकोव ने स्टास से कहा जो कन्धे पर बन्दूक रखे द्योमचिख़ा के हाथ बाँधने में व्यस्त स्टास ने उसकी ओर मुड़कर भी नहीं देखा। दूसरे सिपाहियों की तरह ही उसने उनकी बातों की ओर से कान बन्द कर लिये थे मानो क़ैदियों को अब इन्सान नहीं समझा जा रहा था। रिवाक को मृत्यु का विश्वास हो गया था। मौत उन की प्रतीक्षा में थी। लेकिन अभी भी वह मौत को गले लगाने की बात पूरी तरह घुटने टेककर मानने को तैयार न था और वह ख़ुद को इस बात के लिए कोस रहा था कि जब हाथ आज़ाद थे, उसने बच निकलने की कोशिश क्यों नहीं की थी।

अपनी जानलेवा भूल के अहसास के साथ वह भीतर ही भीतर ताव खा रहा था। उसने क्रोधोन्माद के साथ आँखें इधर-उधर दौड़ायीं। लेकिन निश्चित रूप से भागने की कोई सम्भावना न थी। वास्तव में सब कुछ तेज़ी से निकट आती मौत का घोतक था। एक के बाद एक वरिष्ठ अधिकारी बाहर पोर्च में जमा हो रहे थे, उनमें से कुछ ने पुलिस की चकाचक नयी पोशाकें पहन रखी थीं। उन्होंने भूरे रंग के कॉलर व कफ़वाले छोटे काले ओवरकोट पहन रखे थे, कमर से पिस्तौल लटक रही थी। उनमें से दो ने जो शायद जर्मन थे, सैनिकों के ग्रेटकोट व ऊँचे छज्जेदार टोप पहन रखे थे। सामान्य नागरिकों-सी वेश-भूषा में भी कई लोग वहाँ खड़े थे। वे दूसरों से ज़ाहिरी तौर पर अलग-थलग दिखाई दे रहे थे मानो किसी पराये आदमी द्वारा आयोजित समारोह में मेहमान हों। सिपाहियों ने सम्मानपूर्वक बातचीत बन्द कर दी थी और वे चौकसी से खड़े हो गये थे। उनके पीछे से कोई जल्दी-जल्दी गिन रहा था:

"एक, दो, तीन, चार, पाँच..."

"सब ठीक-ठाक है!?" कमर में छोटा-सा होल्स्टर लगाये एक भारी-भरकम सिपाही ने सीढ़ियों से आवाज़ दी।

होल्स्टर व दूसरों के बीच दूर से दिखती उस आदमी की रोबदार क़द-काठी से ही रिवाक ने मान लिया कि वह चीफ़ है। अभी उसके दिमाग़ में यह बात आयी ही थी कि पीछे से सोत्निकोव भर्रायी आवाज़ में बोल उठा। "चीफ़, मैं एक बयान देना चाहता हूँ।"

सीढ़ियों पर खड़े हो चीफ़ ने क़ैदी की ओर आँखें गुरेर दीं।

"बताओ, क्या बयान है?"

"मैं गुरिल्ला सैनिक हूँ। आपका आदमी मेरी गोली से ही घायल हुआ था," शान्त स्वर में सोत्निकोव ने कहा और उसने सिर से रिबाक की ओर इशारा करके आगे कहा, "यह आदमी घटना के समय संयोगवश आ पहुँचा था। आप चाहें तो मैं पूरी बात स्पष्ट करूँगा। दूसरे सब एकदम बेक़ुसूर हैं। सारा क़ुसूर मेरा है, उन्हें छोड़ दीजिए।"

सीढ़ियों पर खड़े अफ़सर अब ख़ामोश हो गये थे। आगे-आगे चल रहे दोनों अफ़सरों ने उलझन के साथ एक दूसरे की ओर देखा। रिबाक को आशा की क्षीण-सी किरण टिमटिमाती महसूस हुई। शायद अफ़सर सोत्निकोव की बात मान लें? इस उत्साहपूर्ण अनुभूति ने उसके मन में सोत्निकोव के प्रति कृतज्ञता जगा दी।

लेकिन क्षण भर बाद ही चीफ़ के चेहरे की तवज्जह बेताबी से भरे गुस्से में बदल गयी:

"और कुछ कहना है?" उसने सर्द लहजे में पूछा और सीढ़ियों से नीचे की ओर बढ़ गया।

सोत्निकोव हैरान हो उठा।

"आप चाहें तो मैं अधिक विस्तार से बताने को तैयार हूँ।"

कोई गुस्से से गुर्राया, जर्मन में किसी ने किसी को कुछ कहा और हाथ झटककर चीफ़ बोल उठा:

"आगे ले चलो!"

"सुनना भी नहीं चाहता," दुबारा हताशा के गर्त में डूबते हुए रिबाक ने सोचा। निस्सन्देह, सब कुछ पहले से तय किया जा चुका था। लेकिन उसका फिर क्या होगा? जरूर ही उसकी ओर से सोत्निकोव का साहसिक निवेदन बेकार नहीं जायेगा?

लकड़ी की झुकी सीढ़ियों पर सावधानी से चलते हुए अफ़सर नीचे अहाते में उतर आये। सहसा उसे पुलिस की पोशाक में एक आदमी पोर्तनोव जैसा लगा। हाँ, बेशक, यह वही जाँच अधिकारी था जिसने कल अपने प्रस्ताव से उसमें जीवन की आशा पैदा कर दी थी और अब वह शायद सब कुछ भूल गया था। रिबाक का दिल उछलने को हो आया, वह

कठिनाई से आगे को बढ़ आया। जो हो सो हो, अब उसे किसी चीज़ का न भय था और न कोई चीज़ उसे बाधा दे रही थी।

"इंस्पेक्टर... श्रीमान इंस्पेक्टर! कृपया, एक मिनट! आपने कहा था... मैं आपकी बात मानने को तैयार हूँ। मैं क़सम खाकर कहता हूँ, मैं बेक़ुसूर हूँ! अभी इस आदमी ने इसकी पुष्टि की न..."

अहाते से बाहर निकलकर सड़क पर पहुँचते अफ़सर स्पष्ट रूप से क्रुद्ध हो एक के बाद एक रुक गये। पोर्तनोव भी रुक गया। उसकी वर्दी साफ़ तौर पर काफ़ी बड़ी थी और उसके ठिंगने शरीर पर ढीले-ढाले ढंग से झूल रही थी। टेढ़ी पहनी उसकी काली सैनिक टोपी उसे छैला बना रही थी। लेकिन अचानक ही उसने हाकिमों-सी, आडम्बरपूर्ण कठोरता की भावमुद्रा धारण कर ली। चुस्त बेल्टवाले ग्रेटकोट में एक लम्बा-सा जर्मन सवाली निगाहों से उसकी ओर देखने लगा और पोर्तनोव ने चिकनी-चुपड़ी जर्मनी भाषा में उसे कुछ समझाया।

"इधर आओ!"

दोनों ओर से सभी आँखें रिबाक पर टिक गयीं। वह उनकी ओर बढ़ गया, एक-एक क़दम उसने धड़कते दिल के साथ उठाया था। किसी भी पल आशा की क्षीण किरण हमेशा के लिए लुप्त हो सकती थी।

"यानी तुम पुलिस की नौकरी करने को तैयार हो?" जाँच-अधिकारी ने पूछा।

"हाँ," स्वर में यथासम्भव निश्छलता लाते हुए वह बोला।

उसने अधिकतम श्रद्धा से परिपूर्ण अपनी दृष्टि पोर्तनोव के थके, बूढ़े होते सफ़ाचट चेहरे पर अपलक टिका रखी थी। जाँच-अधिकारी और जर्मन में कुछ बातचीत हुई।

"क़ैदी के हाथ खोल दो!"

"हरामी कहीं का!" सोत्निकोव की गुस्से से भरी शांत चीख़ उसे पीठ पर पीछे से हुए प्रहार-सी लगी। उसके साथ ही जानी-पहचानी खाँसी की आवाज़ में स्वर दबा गया।

कहता रहे! जो ख़ौफ़ क्रूर ढंग से उसे दबोचे जा रहा था, अब सहसा ही कम होने लगा था। रिबाक ने गहरी साँस ली, उसे पीछे से ऐसा

खींचे जाने का अहसास हुआ। लेकिन उसने मुड़कर देखा भी नहीं। एक शक्तिशाली अनुभूति ने बाक़ी सारी बातें गौण कर दी थीं: वह जिन्दा रहेगा! उसके बन्धनमुक्त हाथ बेजान से दोनों ओर लटक गये और बड़े ही सहज रूप से एक डग ले वह एक ओर हो गया। उसका पूरा अस्तित्व उसे दूसरों से परे भगाय लिये जा रहा था—वह उन सबसे यथासम्भव अधिक से अधिक दूर चला जाना चाहता था। वह तीन डग उनसे परे हट गया और किसी ने उसे कुछ भी नहीं कहा। कुछ अफ़सर तो मुँह फेर फाटक से बाहर की ओर चले भी गये थे लेकिन तभी द्योमचिख़ा ने पीछे से चिल्लाना शुरू कर दिया:

"तुम लोग उसे छोड़ रहे हो! मुझे भी छोड़ दो! मुझे जाने दो, मेरे बच्चे हैं, मेरे बिना उनका क्या होगा!"

उसके करुण क्रन्दन से सब के सब दुबारा रुक गया और संयोगवश पोर्तनोव उसके सबसे क़रीब में था। लम्बा जर्मन गुस्से से कुछ बड़बड़ाया और जाँच-अधिकारी हाथ तेज़ी से झटककर बोला:

"उसे हटाओ यहाँ से!" फिर रिबाक से मुख़ातिब हो उसने कहा: "तुम उसकी मदद कर सकते हो," और उसने हाथ से सोत्निकोव की ओर इशारा किया। रिबाक को इससे तनिक भी ख़ुशी नहीं हुई क्योंकि अब वह सोत्निकोव से दूरी बनाये रखना चाहता था। लेकिन हुक्म था और वह तेज़ी से दौड़कर अपने साथी के पास जा पहुँचा। उसने सोत्निकोव की बाँह थाम ली।

पूरी तरह खुले फाटक से क़ैदियों को व बाहर सड़क पर ले आये। बन्दूकें ताने पुलिस उन्हें दोनों ओर से घेरे में लिये चल रही थी। रुककर अफ़सरों व अधिकारियों ने उन्हें अपने से आगे बढ़ जाने दिया। सीना ताने सबसे आगे-आगे प्योत्र चल रहा था, उसके सफ़ेद सिर पर टोपी नहीं थी हाथ पीछे की ओर बँधे थे। उसके पीछे लड़खड़ाती, सुबकियों से रुँधती द्योमचिख़ा थी। उसके पीछे ढीली-ढाली बाँहोंवाला काला कोट पहने, नंगे पाँव लड़खड़ाती बास्या चल रही थी।

रिबाक ने सोत्निकोव को बाँह पकड़कर सहारा दिया। सोत्निकोव स्पष्ट रूप से शिथिल पड़ गया था, वह पहले से ज्यादा झुक गया था और दूसरों से पीछे धीरे-धीरे घिसटता-सा चल रहा था खाँसता और ज़ख़्मी टाँगों से बुरी तरह लँगड़ाता। बर्फ़ में उसके नीले पड़े पैर बेजान-से

घिसट रहे थे और पँजों से बर्फ़ पर एक अजीब-सी रेखा बनती जा रही थी। उसने रिबाक से कुछ भी नहीं कहा और रिबाक को उससे बात करने की हिम्मत न थी। हालाँकि वे साथ-साथ चल रहे थे लेकिन उनके बीच दोस्त व दुश्मन में भेद करनेवाली दीवार खड़ी हो चुकी थी। क़ुसूरवारी के मोटा-मोटी अहसास के बावजूद रिबाक ख़ुद को क़ुसूरवार न होने की बात मन ही मन में समझा रहा था। आदमी क़ुसूरवार तब होता है जब वह कोई काम बुरे इरादे से या व्यक्तिगत लाभ के लिए करता है। उसे क्या लाभ हुआ था? बस जिन्दा रहने की थोड़ी उम्मीद ही तो बँधी थी। वह इसी के लिए चाल चल रहा था। लेकिन वह ग़द्दार नहीं था। चाहे जो हो, जर्मनों के जूते सहलाने का उसका कोई इरादा न था। बस वह मौक़े की तलाश में था और शायद जल्दी ही या फिर थोड़ा बाद में उसे मौक़ा मिल ही जायेगा और वह उन्हें दिखा देगा...

१८

सोत्निकोव ने महसूस कर लिया कि उसके प्रयास पूर्णतया निष्फल रहे थे। रात में जो इरादा उसने एकदम स्वाभाविक रूप से मन में बना लिया था और जिससे उसके दिमाग़को शान्ति मिली थी, वह पानी में बुलबुले की तरह लीन हो गया था। पुलिस जर्मनों के हाथों की कठपुतली थी और उनको आत्मस्वीकृति के प्रति पूर्णतया उदासीन थी। कौन क़ुसूरवार है, कौन नहीं, इससे पुलिस को कोई मतलब न था, उसे तो बस ऊपर से मिले आदेशों का पालन करना था या ज़रूरत पड़ने पर किसी को फाँसी पर लटका देना था।

वह दूसरों के पीछे-पीछे मुश्किल से पैरों को घसीटता चल रहा था। वह रिबाक से यथासम्भव सहारा न लेने की कोशिश करता क्योंकि अब वह उसके लिए घृणित व अप्रिय था। अहाते की घटना से वह एकदम हैरान था, वह घटना उसके लिए पूरी तरह अप्रत्याशित थी। निस्सन्देह, भय या घृणा के वशीभूत हो आदमी किसी भी तरह का विश्वासघात कर सकता है लेकिन रिबाक ग़द्दार शायद ही मालूम पड़ता था। वह ग़द्दारसे ज्यादा कायर था। पुलिस में जाने के अनगिनत मौक़े उसके सामने पेश आये थे और कायरता दिखाने के भी बहुत अधिक अवसर पैदा हुए थे ले-

किन उसने हमेशा अपने चरित्र की श्रेष्ठता ही दिखाई थी। इस मामले में वह किसी से कम न था। ज़रूर ही हर क़ीमत पर अपनी जान बचाने की इच्छा से ही वह इस तरह का काम करने को प्रेरित हुआ था और इसे ग़द्दारी के अलावा कुछ नहीं कहा जा सकता था।

अपनी निश्छल कल्पना पर सोत्निकोव को बड़ा दुख हुआ- मरते-मरते दूसरों की प्राणरक्षा की कल्पना उसने की थी। जो हर क़ीमत पर जान बचाना ही जीवन का एकमात्र उद्देश्य मानते हैं, उनके लिए किसी के बलिदान की कोई ज़रूरत नहीं। ईसा मसीह के समय से मानवजाति की बलिवेदी पर न जाने कितने लोग शहीद हो चुके हैं लेकिन उनका बलिदान मानवजाति को क्या कुछ सिखा सका? हज़ारों साल पहले की तरह आज भी आदमी केवल अपनी ही चिन्ता से प्रेरित होता है और भलाई व न्याय की सर्वाधिक उदात्त भावना से प्रेरित व्यक्ति को लोग एकदम गधा नहीं तो पागल ज़रूर समझते हैं।

सोत्निकोव जैसे-जैसे होश में आता गया, तेज़ ठण्ड उसे सताने लगी। पूरी कमज़ोरी के कारण उसकी भौंह पर पसीने की बूँदें चुहचुहा आयी थीं जो तुषारमय हवा में मुश्किल से सूख रही थीं लेकिन उसका सिर ठण्ड के मारे फटने को हो आया। रात के समय जो गर्मी शरीर में जमा हुई थी, अब काटती ठण्ड हवा उसे काढ़े ले रही थी और दुबारा उसका पूरा शरीर जोरदार कंपकँपी के कारण हिल उठा। लेकिन चाहे जान ही क्यों न निकल जाये, वह इस पीड़ा को सहने को कृतसंकल्प था।

सुनसान सड़क से आगे बढ़कर उन्होंने एक छोटा-सा पुल पार किया। उस पुल के परे एक छोटा-सा सार्वजनिक बग़ीचा था जहाँ पाले से जमे छरहरे पेड़ों की कई क़तारें थीं। उससे आगे ढाल की ऊँचाई पर एक दो मंज़िला मकान था जिस पर कोने में एक बड़ा-सा नाज़ी झण्डा फहरा रहा था। निश्चय ही यह स्थानीय प्रशासन का कार्यालय अथवा कमाण्डेण्ट का मुख्यालय था। इसके इर्द-गिर्द लोगों की एक भीड़ जमा थी। इतने लोगों के जमा होने का कारण सोत्निकोव बिलकुल नहीं समझ पा रहा था। उसे ख़्याल आया कि शायद आज हाट का दिन हो। या शायद कोई घटना हुई हो? या फिर ज़्यादा सम्भावना इस बात की थी कि लोगों को मजबूर करके यहाँ क़ैदियों को फाँसी पर चढ़ते देखने के लिए बुलाया गया हो। इससे उन्हें शान्तिपूर्वक चाकरी करने का सबक़ मिलेगा। इससे सोत्निकोव

को कोई चिन्ता न थी—लोगों की आँखों के सामने गोलियों का निशाना बनना अपेक्षाकृत आसान था। जहाँ तक लोगों को सबक़ सिखाने का सवाल था, लड़ाई के समय लोग ऐसे भी काफ़ी भयभीत रहते थे—फिर भी लड़ाई जारी थी। इन फाँसी पर चढ़ाये गये लोगों का स्थान दूसरे लोग ले लेंगे। दिल से मज़बूत लोगों की कभी कोई कमी नहीं होगी।

वे धीरे-धीरे मकान के पास पहुँच गये। किसी ठोस कृत्रिम अवयव की तरह सोत्निकोव का पैर स्लेज रनर व घोड़ों के खुरों तले भुरकी गीली बर्फ़ में अजीब-सा गड्ढा खोदता चल रहा था। उसका पैर तेज़, अनवरत पीड़ा से जल रहा था और उस से काम लेना मुश्किल होता जा रहा था। रिबाक से मदद लिये बिना चलने का फ़ैसला लेते समय वह निश्चित रूप से अपनी शक्ति का ठीक-ठीक अन्दाज़ नहीं लगा पाया था, चुनांचे, अब वह उसकी मज़बूत बाँहों पर अपना पूरा बोझ डाले चल रहा था। पुल के बाद से सड़क धीरे-धीरे हल्की चढ़ान की ओर बढ़ती चली जाती थी और उसे चलना अधिकाधिक कठिन लग रहा था। उसका दम घुट रहा था, आँखों के सामने जब-तब अन्धेरा छा जाता, सड़क उसे पैरों तले फिसलती प्रतीत होती। उसे रास्ता तय करने से पहले ही भहराकर गिर पड़ने का भय सता रहा है और तब वह समय से पहले ही कुत्ते की मौत मारा जायेगा। नहीं, वह कदापि ऐसा नहीं होने देगा। अपनी इस दुःस्थिति में भी वह वैसी मौत स्वीकार नहीं करेगा। चाहे जो भी हो, वह सैनिकों जैसे सम्मान से मौत को गले लगायेगा—इन आख़िरी क्षणों में यही उसका एकमात्र, मुख्य लक्ष्य था।

ढाल के ऊपर पहुँचकर वे रुक गये। अपने सामने खड़े लोगों की पीठों को सूनी आँखों से घूरता सोत्निकोव उनके आगे बढ़ने की प्रतीक्षा करता रुक गया। लेकिन उनको घेरे में ले चलनेवाले सिपाही भी रुक गये थे और आगे की ओर से जर्मन में बातचीत की आवाज़ें सुनाई देने लगी थीं। उस मज़बूत-से मकान के पास बहुत से अफ़सर इन्तज़ार कर रहे थे। सड़क के पार, सार्वजनिक बग़ीचे के बाड़े के पास लगभग पचास लोग निश्चल खड़े थे वे भी ज़ाहिरी तौर पर किसी घटना की प्रतीक्षा में थे। ऐसा प्रतीत होता था मानो उनका छोटा-सा जुलूस अपने गन्तव्य पर पहुँच चुका था—यहीं सड़क ख़त्म होती थी।

तभी सोत्निकोव को फाँसी के फँदे दिखाई दे गये।

सड़क के ऊपर फाँसी के पाँच मुलायम फन्दे इस तरह लटक रहे थे मानो सब के सब उनकी मोटी, कुशलतापूर्वक बाँधी गाँठों की पूरी मजबूती की जाँच-परख कर लें। फन्दे सड़क के आर-पार लड़ाई से पहले लगाये गये पुराने लकड़ी के तोरण के अर्गला से लटक रहे थे। 'अच्छा, इसका उपयोग किया है!" लगभग सभी इलाक़ाई केन्द्रों में पा जानेवाले ऐसे परम्परागत ढाँचों को फ़ौरन पहचान कर सोत्निकोव ने सोचा—उसके अपने नगर में भी एक ऐसा ही तोरण था। उत्सव-छुट्टियों के दिनों झाड़ियों की टहनियों, सनोबर की डलियों और दीवारी कागज पर स्याही से लिखे किसी नारे से ऊपरी हिस्से को सजाया जाता था। स्थानीय कार्यकारिणी समिति की इमारत के पास समारोह-सभाएँ की जातीं और दोनों स्कूलों के छात्रों, लिनेन कारख़ाने व दूसरे स्थानीय कारख़ानों व टाट मिल के मजदूरों की क़तारें तोरण के नीचे से मार्च करती गुजरती थीं। तोरण के शीर्ष पर आम तौर से प्लाइवुड का लाल सितारा लगा होता या एक छोटा-सा झण्डा फहराता रहता जिससे पूरी की पूरी इमारत समारोहपूर्ण लगने लगती। अब वहाँ काली पड़ी अर्गलाओं के नीचे से झाँकते कागज के टुकड़ों और हवा में कपड़ों के उड़ते चीथड़ों के अलावा कुछ भी न था। हमलावर उन नये रस्सों के रूप में अपनी सज्जा सामग्रियाँ लाये थे जो ख़ास तौर से इस अवसर के लिए आर्डर देकर बनवाये प्रतीत होते थे।

और उसने फ़ाइरिंग स्क्वैड को सौंपे जाने की बात सोची थी...

दो आदमी—एक सिपाही था व दूसरा भूरी प्लेटोंवाला कोट पहने था—एक पुरानी, जीर्ण-शीर्ण बेंच सड़क के पार ले जा रहे थे। सोत्निकोव ने समझ लिया यह बेंच उनके फाँसी पर झूलने से पहले, उनके असहाय, घृणा से परिपूर्ण और बिना आवाज़ निकाले, सिर एक ओर लटका खड़ा होकर अपने आख़िरी शब्द बताने के लिए लायी गयी थी। ख़ुद को इस तरह फाँसी पर चढ़ाये जाने के ख़िलाफ़ अचानक ही उसमें विद्रोह के भाव पैदा होने लगे और वह भी इस तरह अपमानजनक, नृशंसतापूर्ण समारोह के साथ पूरी लड़ाई में उसके मन में बम के टुकड़ों या किसी गोली का निशाना बनकर मरने के अलावा किसी दूसरे ढंग से मरने का ख़्याल तक नहीं आया था और अब फाँसी के फन्दे में दम तोड़ने की इस वीभत्स नियति के विरुद्ध सहज विरोधवश उसका पूरा अन्तर्मन उफन रहा था, उबाल खा रहा था।

लेकिन इस समय अपने लिए या किसी दूसरे के लिए कुछ भी कर पाने में वह असमर्थ था, सो, मन को बार-बार समझाने की कोशिश करता रहा कि उसमें कोई अशोभनीय नहीं। आख़िर यह उनका अधिकार था, यही उनकी नृशंस रीति, परम्परा थी, उनके हाथ में सत्ता थी। अब रंच मात्र भय या दुख के बिना इसे झेलना उसका अन्तिम कर्त्तव्य था। अब उसे घबड़ाना नहीं है।

बेंच ठीक जगह पर रखी जा चुकी थी। चुस्त-दुरुस्त, सर्वव्यापी स्टास, कमर के नीचे बेल्टदार ग्रेटकोट पहने हट्टा-कट्टा बुदिला तथा दूसरे सिपाही उन्हें तोरण के नीचे ले आये। अपने दुखते, कड़े पड़े पैर से सावधानीपूर्वक डग भरते सोत्निकोव रिबाक का सहारा छोड़े आगे बढ़ चला: पन्द्रह या बीस मीटर की दूरी ही बाक़ी थी और सोत्निकोव उसे अकेला, बिना सहारा लिये तय करना चाहता था। वे सिपाहियों के बीच आगे बढ़ चले और इमारत के बाहर बेसब्रीपूर्वक प्रतीक्षारत जर्मन व अफ़सरों के ग्रुप से भी आगे चले आये। तमाशा शुरू हो रहा था—स्थानीय पुलिस द्वारा जर्मन शैली का शो किया जाना। अन्तिम क्षणों को छोटी-छोटी रुकावटों को ठीक-ठाक करते तेज़ी से सिपाही इधर-उधर दौड़-फिर रहे थे। कुछ अधिकारियों की भौंहों में बल पड़े थे, कुछ पूरी ख़ुशी-ख़ुशी और बेफ़िक्री से गपशप कर रहे थे मानो कोई बड़ी मामूली, कुछ हद तक बोरिंग ड्यूटी अदा करने जमा हुए हों और जल्दी ही रोज़मर्रे के काम-काज पर लौटने को छुटकारा पा लेंगे। सिगरेट के धुएँ व यूडीकोलोन को ख़ुशबू के साथ-साथ बेमेल, छिटपुट बातें हवा में तैरती पहुँच रही थीं। लेकिन सोत्निकोव का ध्यान इन सब चीज़ों की ओर नहीं था: तोरण के पास घिसटती चाल से पहुँच कर खम्भे से कन्धा टिकाकर विश्रान्तिपूर्वक उसने आँखें बन्द कर लीं।

नहीं, इसमें कोई सन्देह नहीं कि मृत्यु न तो किसी चीज़ का समाधान करती है, न उसे उचित ही सिद्ध कर पाती है। सिर्फ़ जीवन ही इनसान को निश्चित अवसर प्रदान करता है जिनका या तो वह लाभ उठाता है या जिन्हें गँवा देता है और सिर्फ़ जीवन ही बुराई व नृशंसता का प्रतिरोध कर सकता है। मृत्यु आदमी को हर चीज़ से वंचित कर देती है। और चीड़ के जंगल में उस लेफ़्टिनेंट को मृत्यु से अगर कुछ हासिल हुआभी था तो वह आत्माश्रित था। उसने भेड़ की तरह जिबह किये जाने से इनकार कर दिया था। लेकिन उस स्थिति में क्या किया जाये जब हिम्मत

दिखाने की एकदम कोई गुंजाइश ही न हो? कोई आदमी मरने से मात्र पाँच मिनट पहले वैसी स्थिति में क्या कर सकता है जब वह अर्द्धमृत हो और इन कुत्तों को चिढ़ाने के लिए ज़ोरों से कोसने में भी असमर्थ हो?

जो प्रत्याशित नहीं, जो स्वार्जित नहीं, उसके लिए न तो किसी को इनाम मिलेगा, न उसकी प्रशंसा होगी। इसके बावजूद वह रिबाक की कार्रवाई को कभी भी उचित न मान सकेगा क्योंकि ऐसा सोचकर वह स्वयं अपनी प्रकृति, अपने विश्वासों और नैतिक मानदण्डों के विपरीत आचरण करेगा। हालाँकि उसके अवसर अधिकाधिक सीमित होते जा रहे थे, एक बात अभी भी उसके वश में थी। वह पीठ नहीं दिखायेगा। यह बात उसी पर, सिर्फ़ उसी पर निर्भर थी, पूरी तरह उसके अधीन थी क्योंकि आदमी के लिए अत्यावश्यक सम्मान के साथ, पाक-साफ़ अन्तश्चेतना के साथ इस दुनिया से विदा लेना उसी के हाथ में था। यह उसे मिलनेवाला अन्तिम सम्मान था, एक ऐसा पुनीत सुख था जो उसे जीवन ने बतौर पुरस्कार प्रदान किया था।

एक-एक करके उन्हें फाँसी की उनकी जगहों पर ले जाया गया। अब विनम्रतापूर्वक चुप्पी धारण किये प्योत्र को उस फन्दे की ओर ले जाया गया था जो अधिकारियों के क़रीब था। सोत्निकोव उसकी ओर देखा और सापराध ठण्डी आह भरी। एक दिन पहले ही बूढ़े को गोली न मारने के लिए उसे खेद हुआ था और अब वही बूढ़ा उनके साथ ही फाँसी पर चढ़ाया जा रहा था।

सबसे पहले प्योत्र को बेंच पर चढ़ने के लिए मजबूर किया गया और बेंच ख़तरनाक ढंग से उसके घुटनों के नीचे झुक गयी और गिरने-गिरने को हो आयी। गालियाँ बकता बुदिला जो यहाँ भी निस्सन्देह मुख्य वधिक की भूमिका अदा कर रहा था, वहाँ आ पहुँचा और बेंच पर चढ़कर उसने बूढ़े को ऊपर खींच लिया। मुखिया बेंच पर सीधा खड़ा हो गया, उसका सिर झुका था। जैसे गिरजाघर में किया जाता है, उसने भीड़ के सामने दुहरा होकर सिर झुकाया। उसके बाद बास्या को धकेलकर बेंच पर चढ़ा दिया गया। लड़खड़ाते हुए बेंच पर खड़ी हो वह भीड़ की ओर बाल-सुलभ सरलता से देखने लगी मानो जाने-पहचाने लोगों को तलाश रही हो।

चूँकि बेंच सब के लिए काफ़ी न थी, दूसरे फन्दे के नीचे प्लाइवुड का एक पीला बक्सा रख दिया गया। दो अन्य फन्दों के नीचे दो फ़ीट ऊँचे कुन्दे रख दिये गये। सोत्निकोव को अपने खड़ा होने के लिए बक्से की उम्मीद थी लेकिन वहाँ द्योमचिख़ा को ले जाया गया और रिबाक व एक सिपाही उसे घसीटते हुए आख़िरी कुन्दे की ओर ले चले।

अभी वह अपनी जगह पहुँचा भी नहीं था कि पीछे से द्योमचिख़ा की चीत्कार हवा में गूँज उठी और चौंककर उसने मुड़कर देखा। द्योमचिख़ा ज़मीन में पैर गड़ाये, बाँहों से पुलिस को झटकने की कोशिश कर रही थी। वह बक्से पर चढ़ ही नहीं रही थी।

"आह, हुज़ूर, दयालु लोग! मुझे माफ़ कर दो! मुझ बेवकूफ़ औरत को माफ़ कर दो! मैं ऐसा नहीं चाहती थी, मैंने सोचा भी नहीं था..."

अधिकारियों की गुस्से भरी चिल्लाहटों में उसकी करुण पुकारें दब गयीं। बुदिला ने कोई आदेश दिया और सोत्निकोव को रिबाक के सहारे छोड़ पुलिस झटके से द्योमचिख़ा की ओर बढ़ गयी। पुलिस के कई सिपाहियों ने दबाकर द्योमचिख़ा को बक्से पर चढ़ा दिया।

सोत्निकोव को अकेले सम्भालता रिबाक अप्रत्याशित हिचकिचाहट के साथ उसे आख़िरी कुन्दे के पास ले जाकर रुक गया। वहाँ अन्य फन्दों की तरह ही नया प्रतीत होता एक फन्दा लटक रहा था, वह कुछ सँकरा, ऊपर की ओर हल्का-सा मुड़ा था। "हम दोनों के लिए एक ही फन्दा है," सोत्निकोव ने सोचा, हालाँकि साफ़ तौर पर वह फन्दा उसी के लिए था। उसे कुन्दे पर चढ़ जाना चाहिए। वह पल भर हिचकिचाया ही था कि दिमाग़ में साहसपूर्वक किसी शपथ की तरह गूँज उठा "अरे जो कुछ होना है होने दो!" और "यह लो, हाथ थामो!" कहते हुए उसने उदासीन, संज्ञाहीन से खड़े रिबाक की ओर हाथ बढ़ा दिया। फिर कुन्दे पर स्वस्थ टाँग का घुटना रख वह ऊपर चढ़ने लगा। कुन्दे पर एक गन्दा-सा ताज़ा पदचिह्न पड़ा था। कुन्दे को हिलने-डोलने से रोकने के लिए रिबाक ने दोनों हाथों से पकड़ लिया और सोत्निकोव सन्तुलन बनाये रखने के लिए रिबाक की पीठ पर धीरे से हाथ रखकर दाँतों पर दाँत जमा कर बढ़ने लगा और लड़खड़ाता हुआ, आख़िर चढ़ ही गया।

छोटे-से गोलाकार कुन्दे पर दोनों पाँवों को एक-दूसरे से सटाये वह वहाँ पल भर को खड़ा रहा। गर्दन के पीछे उसे रीढ़ में कँपकँपी पैदा कर देने-

वाले फाँसी के फन्दे का स्पर्श महसूस हो रहा था। नीचे झुककर खड़े हुए रिबाक की चोड़ी पीठ थी। अपने मजबूत हाथ से रिबाक ने कुन्दे के बल्क को दृढ़ता से पकड़ रखा था। "तो बच निकला, कमीना कहीं का!" उबाल खाता सोत्निकोव सोच रहा था, उसे हल्की-सी ईर्ष्या भी थी लेकिन तभी उसे अपने विचार के औचित्य पर सन्देह भी हो आया। अब धरती पर अपने अन्तिम क्षणों में अचानक अपनी इस पूर्व निश्चितता से वह डगमगाने लगा था कि दूसरों से भी वह वैसी ही उम्मीद रख, जैसी खुद से रखता है। रिबाक एक अच्छा गुरिल्ला योद्धा था, सेना में उसे एक अनुभवी सार्जेण्ट-मेजर समझा जाता था लेकिन बतौर इनसान व नागरिक उसमें जरूर कुछ कमी थी। खैर, उसने हर क़ीमत पर प्राण-रक्षा का फ़ैसला किया था—बस, यही सीधी सी बात थी।

द्योमचिखा अभी भी पुलिस के हाथों से खुद को छुड़ा लेने के लिए संघर्ष करती रो रही थी और पीले दस्ताने पहने एक जर्मन ने किसी कागज से कुछ पढ़ना शुरू कर दिया था—शायद सजा सुनाई जा रही थी या जबर्दस्ती यह वीभत्स तमाशा देखने के लिए हाँक लाये गये स्थानीय बाशिन्दों के लिए यह कोई आदेश था। उसके जीवन के आखिरी पल खिसकते जा रहे थे और सोत्निकोव कुन्दे पर निश्चल खड़ा अपनी अन्तिम विदाई की लालायित दृष्टि से सीधे-सादे किन्तु, जीवन भर की परिचित छोटे-से शहर की सड़क को, दुख की मूर्तियाँ बने लोगों को गड्ड-मड्ड आकृतियों को, जीर्ण-शीर्ण व पुराने बाड़े और लोहे के वाटर-पम्प के पास बर्फ़ के ढह को देख रहा था। बगीचे के पेड़ों की पतली-पतली डालियों के बीच से उसे क़रीब में ही स्थित गिरजाघर की उधड़ी दीवारें दिखाई दे रही थीं। गिरजाघर की छत जंगदार टीन की थी और उसके बेरंग हरे दोनों गुम्बदों पर कोई भी सलीब नहीं था। लकड़ियाँ काटकर जल्दी-जल्दी में कुछेक खिड़कियाँ लगा दी गयी थीं...

लेकिन भारी क़दमों से चलता एक सिपाही उस तक पहुँचकर रस्से की ओर हाथ बढ़ा चुका था। भूरे कफ़ों के बीच से निकले खुरदरे हाथों ने फन्दे को खींचकर उसके सिर में डाल दिया था। "क़िस्सा खत्म हुआ!" ऐसा सोचते हुए सोत्निकोव ने चीड़ की ओर देखा। प्रकृति का उसके मन पर सदैव सहज प्रभाव पड़ता था जो उसमें भलाई व शान्ति की भावना भर देती थी लेकिन इस समय वह लोगों की ओर देखना चाहता था। उस-

की करुण आँखें चिन्तातुर आकृतियों की विषम क़तार पर कोमल ढंग से गुज़र गयीं। उनमें अधिकतर औरतें थीं—सिर्फ़ एक काफ़ी प्रौढ़ व्यक्ति व एक किशोर था। लम्बे भेड़ की खाल के कोट, गद्देदार जैकेट, सेना के पुराने कपड़े, शोल व धेर का बना स्कार्फ़ पहने वे सब के सब पूरी तरह क़स्बाई लोग थे। भयभीत भीड़ के बीच उसकी दृष्टि एक लगभग बारह साल के लड़के पर जा टिकी। लड़के ने ललाट तक झुका रखा सेना का हेलमेट पहने रखा था। उस लड़के ने अजीब-सी चुस्त पोशाक पहन रखी थी, बर्फ़ से जमे हाथ उसने आस्तीनों में घुसेड़ रखे थे। लड़का साफ़ तौर पर या तो ठण्ड से, या भय से काँप रहा था। मुरझाये चेहरे पर बालसुलभ आतंक की भावाभिव्यक्ति के साथ लड़का फ़ाँसी की कार्रवाई देख रहा था। इस कार्रवाई के बारे में उसके विचार को इतनी दूर से भाँपना मुश्किल था। लेकिन सोत्निकोव को उम्मीद थी, वह उन लोगों के बारे में कोई बुरी बात नहीं सोच रहा था। उसका ख़्याल वस्तुतः सच था क्योंकि पल भर बाद ही जब उससे उसकी आँखें मिलीं, लड़के की आँखों में उन सब के प्रति ऐसी असीम पीड़ा एवं सहानुभूति थी कि लड़के की ओर देखकर वह होंठों पर मुस्कान लाए बिना नहीं रह सका मानो कहना चाहता हो, "चिन्ता न करो, दोस्त।"

अब और अधिक देखने से उसे अनिच्छा हो गयी और अधिकारियों, जर्मनों, पोर्तनोव, स्टास और बुदिला की कुत्सित दृष्टि से बचने के लिए उसने आँखें झुका लीं। आँखों से देखे बिना ही वह उनकी शैतानी उपस्थिति महसूस कर सकता था। सजा पढ़कर सुनाई जा चुकी थी, रूसी व जर्मन में आदेश दिये जा रहे थे और उसे अपनी गर्दन में फन्दा कसता-सा महसूस हुआ जैसे फन्दा खुद जी उठा हो। फाँसी अर्गला के दूसरे छोर से गले से गरगराने की कुछेक आवाजें सुनाई देने लगी थीं और द्योमचिखा ने फ़ौरन ही पूर्ण विक्षिप्तता से आर्तनाद शुरू कर दिया था: "नहीं! मुझे फाँसी पर न चढ़ाओ! मुझे छोड़ दो!"

लेकिन उसका रुदन बीच में ही रुक गया, ऊपर की बर्फ़ीली अर्गला चरमरायी और भीड़ में कोई औरत सुबक उठी। उसका हृदय असह्य वेदना से कचोट उठा। उसके अन्दर की छुपी कोई शक्ति लबालब हो उठी जो उसे द्योमचिखा की भाँति चीखने-चिल्लाने को प्रेरित कर रही थी। लेकिन उसने किसी तरह खुद पर क़ाबू पा लिया, सिर्फ़ उसका हृदय मृत्यु-

पूर्व ऐंठन से पीड़ादायक ढंग से तनावपूर्ण हो गया। अब जब कि अन्त आ गया था, वह सारे बन्धन तोड़कर रो पड़ने की अदमनीय लालसा महसूस कर रहा था। लेकिन उसकी जगह वह आख़िरी बार मुस्करा उठा—वह निश्चय ही दयनीय एवं बलात मुस्कान थी।

अधिकारियों ने कोई आदेश दिया। यह अवश्य ही उससे सम्बन्धित था। उसके पैरों तले कुन्दा चरमरा उठा और वह लड़खड़ाकर गिरते-गिरते बचा। उसने आँखें नीचे घुमायीं तो भूतपूर्व गुरिल्ला साथी का निराश चेहरा अपनी ओर निहारता देखा। वह मुश्किल से सुनाई देनेवाले अल्फ़ाज में कह रहा था: "माफ़ करना, दोस्त!"

"भाड़ में जाओ!" सोत्निकोव का जवाब संक्षिप्त था।

अब सब समाप्त हो चुका था। अंतिम क्षणों में उस की आँखें लाल सेना के हेलमेटवाले लड़के की निश्चल आकृति देख लेने के लिए लालायित हो उठीं। वह पहले की तरह बाक़ी भीड़ से एक क़दम आगे खड़ा-खड़ा, फक चेहरा लिये विस्फारित आँखों से देख रहा था। भय एवं पीड़ा से आप्लावित उसकी आँखें फाँसी के फन्दों के नीचे स्थित लोगों में से किसी पर टिकी थीं। वह उसके क़रीब बढ़ता ही चला आ रहा था। सोत्निकोव बढ़नेवाले को नहीं जानता था लेकिन लड़के के चेहरे से वह सब कुछ समझ गया था जो समझना चाहिए था।

रिबाक के दुर्बल पड़े हाथों से सोत्निकोव के पैरों तले का कुन्दा एक बार फिर हिल उठा, कुन्दे को हटाने में वह झिझक रहा था और इसी कारण जो भयानक कार्य उसे करना था, वह नहीं कर पा रहा था। लेकिन तभी उसके पीछे से बुदिला ने गालियों की बौछार की और सोत्निकोव को पैरों तले का सहारा अचानक हो छूटता महसूस हुआ और वह अपने भारी-भरकम धड़ के साथ गहन, दमघोंट काले गर्त में डूब गया।

१६

कुन्दे को खिसकाकर रिबाक लड़खड़ाकर पीछे हट गया। सोत्निकोव के पैर एकदम उसके सामने झूलने लगे और उनके झटके से रिबाक की फ़र की टोपी बर्फ़ में गिर पड़ी। रिबाक पीछे तो हट गया लेकिन फ़ौरन ही झुककर धीरे-धीरे आगे-पीछे को झूलते, फाँसी पर चढ़े आदमी के पैरों

तले से अपनी टोपी उसने उठा ली। सोत्निकोव के चेहरे की ओर आँखें उठाकर देखने की हिम्मत रिबाक नहीं जुटा सका। उसे बस अपने आगे झूलते उसके पैर ही दिखाई देते रहे—एक पैर में घिसा-पिटा बूट था, दूसरे पैर में एड़ी निकला बूट था जिसके टखने पर सूखा ख़ून दिख रहा था।

अपनी क्षणिक घबड़ाहट से नजात पा रिबाक ने शीघ्र ही ख़ुद पर क़ाबू पा लिया। उसने इर्द-गिर्द नज़र डाली। पास में ही—सोत्निकोव व द्योमचिखा के बीच एक पाँचवाँ फन्दा लटक रहा था: कहीं यह उसकी गर्दन की प्रतीक्षा में तो नहीं?

लेकिन ऐसा कुछ भी प्रतीत नहीं हो रहा था। बुदिला द्योमचिखा के नीचे से पीले प्लाइवुड का बक्सा हटा रहा था और कुछ सिपाही तोरण के नीचे से बेंच उठाकर ले जा रहे थे। कुछ दूर से स्टास ने चिल्लाकर उससे कुछ कहा लेकिन फाँसी की कार्रवाई का दिमाग़ पर असर होने के कारण रिबाक कुछ सुन नहीं पाया और जहाँ का तहाँ खड़ा रहा। जर्मनों व अन्य अधिकारीगण एक-एक करके जाने लगे थे। गपशप करते, सिगरेटें सुलगाते वे धीरे-धीरे चले जा रहे थे, सब के सब इस तरह जोश में लग रहे थे मानो कोई काम सफलतापूर्वक पूरा करने के बाद जा रहे हों और वह काम उन्हें उबाऊ नहीं बल्कि दिलचस्प लगा था। तब कहीं रिबाक को विश्वास हुआ: कार्रवाई ख़त्म हो चुकी थी और वह ज़िन्दा बच गया था!

हाँ, यक़ीनन ऐसा लग रहा था कि अब वह फाँसी के फन्दे से बच निकला था और ज़िन्दा रहेगा। फ़ाँसी की कार्रवाई ख़त्म हो चुकी थी, पुलिस का घेरा हटा लिया गया था और लोगों की भीड़ को वहाँ से चलता होने का आदेश दे दिया गया था। स्तब्ध और ख़ामोश औरतें, नौजवान और बूढ़े सड़क की दोनों ओर चले जा रहे थे। कुछ पल भर को रुककर फाँसी के फन्दों से झूलते चारों निष्प्राण शरीरों पर नज़र डालते और औरतें अपनी आँखों को पोंछतीं तेज़-तेज़ क़दमों से चल पड़तीं—वे जल्दी से जल्दी वहाँ से दूर चली जाना चाहती थीं। पुलिस फाँसीवाली जगह को ठीक-ठाक करने में लगी थी। हमेशा की तरह कन्धों पर बन्दूक धारण किये स्टास ने इस्तेमाल में नहीं आये पाँचवें फन्दे के नीचे से लकड़ी के कुन्दे को ठोकर मारकर हटा दिया और दुबारा चिल्लाकर रिबाक से

कुछ कहा। रिबाक को उसकी बात सुनाई तो नहीं दी लेकिन वह समझ गया कि स्टास क्या चाहता है और उसने रिबाक के पैरों तले से कुन्दे को उठाकर बाड़े के पास फेंक दिया। जब वह मुड़ा, सामने स्टास खड़ा था। उसके चेहरे पर हमेशा की तरह दमकती बेहूदी हँसी थी। दाँत मुस्कराने के कारण बाहर निकलकर चमक रहे थे लेकिन चेहरा कपटपूर्ण बना था और आँखें सर्द व चौकस थीं।

"ख़ूब, बहुत ख़ूब, पहुँचे हुए पाजी हो तुम! शाबाश!" व्यंग्य करते हुए उसने रिबाक के कन्धे पर ऐसी ज़ोरदार धौल जमायी कि वह गिरते-गिरते बचा। "मुझे ज़रा मौका दो, फिर मैं तुम्हें ऐसे ही मार डालूँगा," रिबाक ने मन में सोचा। लेकिन उसके सन्तुष्ट, कटाक्षपूर्ण चेहरे की ओर देखते हुए रिबाक सिर्फ़ मुस्कराकर रह गया—उसकी मुस्कान विकृत-सी थी। फिर रिबाक दबी हँसी के साथ उससे बोला: "और नहीं तो क्या, तुम क्या समझते थे!"

"बिलकुल ठीक। इसमें क्या है? क्यों? उस जैसे चोर-डाकू पर दया की कोई ज़रूरत नहीं!"

"एक मिनट, क्या कह रहा था?" बिना समझे हुए रिबाक सोचने लगा। "किसके बारे में कह रहा है, सोत्निकोव के बारे में?" धीरे-धीरे वह उसकी बात समझ गया और तब उसे दिल में एक बार फिर से क़ुसूर-वारी की भावना कचोटने लगी। लेकिन वह मन ही मन में यह मानने से इनकार कर रहा था कि फाँसी की कार्रवाई में उसने भी कोई हाथ बटाया था। इससे उसका क्या मतलब था? उसने तो सिर्फ़ लकड़ी का कुन्दा हटाया और वह भी पुलिस के आदेश पर।

चारों निष्प्राण शरीर लम्बी रस्सियों से बेढब ढंग से झूल रहे थे, उनके सिर एक ओर को मुड़े थे, फन्दे उनकी गर्दनों में धंस गये थे। सिपाहियों में से एक ने छोटी-छोटी तख़्तियों पर रूसी और जर्मन में लिखकर उनके सीनों पर लगा दिया। तख़्तियों के लेख पढ़ने की ज़हमत रिबाक ने नहीं की और न ही उनके शरीर की ओर तनिक भी देखने की कोशिश ही की। पाँचवें ख़ाली फन्दे को देखकर उसे अभी भी कँपकँपी हो उठती थी। उसने सोचा था, शायद कोई उसे वहाँ से खोलकर ले जायेगा लेकिन सिपाहियों में से कोई उसके पास फटका भी नहीं।

सब काम शायद निबटाया जा चुका था। फाँसी की जगह पर एक

सन्तरी तैनात कर दिया गया था: वह लम्बी गर्दनवाला एक नौजवान था। उसने भूरा कोट पहन रखा, कन्धे पर बन्दूक छोड़ रखी थी। दूसरे पंक्ति-बद्ध हो रहे थे और इसलिए रिबाक रास्ते से हटकर बर्फ़ से ढकी सड़क की पटरी पर खड़ा हो आगे की कार्रवाई देखने लगा। उसके विचार भी और उसकी भावनाएँ भी विक्षुब्ध थीं। ज़िन्दा बचने की ख़ुशी भी धूमिल पड़ गयी थी हालाँकि वह इसका कारण समझने में असमर्थ था। एक बार फिर से यह इच्छा नये सिर से दिल में हलचल मचाने लगी थी कि क्यों न भागकर जंगल में क़िस्मत की आज़माइश की जाये। लेकिन उसे अनुकूल अवसर की प्रतीक्षा तो करनी ही थी। अवसर मिला और नौ दौ ग्यारह।

तीन क़दम आगे पुलिसवाले एक क़तार में खड़े हो गये थे। वे लगभग पन्द्रह रहे होंगे, नये सरकारी ओवरकोटों व टोपियों, भेड़-खाल के जैकेटों और लाल सेना के रद्दी कपड़ों में वह एक रंग-बिरंगी भीड़ थी। उनमें से एक ने तो कमर के पास से फटा चमड़े का कोट भी पहन रखा था। सड़क अब लगभग सुनसान हो चुकी थी लेकिन वहाँ से कुछ दूर बग़ीचे में किशोरों का एक झुण्ड मौजूद था और उनमें लाल सेना का हेलमेट पहने एक दुबला-पतला, मुरझाये चेहरेवाला लड़का भी खड़ा था। आधे खुले मुँह से वह हिक़ारत भरी दृष्टि से फाँसी-स्थल की ओर इस तरह देख रहा था मानो वहाँ उसे कोई चीज़ उलझन में डाल रही थी। पल भर बाद उसने अपनी लम्बी आस्तीन से हाथ निकालकर अँगुली से उस ओर इशारा किया और रिबाक अजीब ढंग से लड़खड़ा उठा, वह उसकी दृष्टि से बचने के लिए सिपाहियों के पीछे जा पहुँचा। अपनी चीफ़ की सख़्त आवाज़ में मिले आदेश का इच्छापूर्वक पालन करते हुए सिपाही पंक्तिबद्ध हो मार्च कर चुके थे। उनका चीफ़ आदेश देने के बाद साहबियत की मधुर रसानुभूति का पान करता स्वयं निश्चल खड़ा था—जर्मन ढंग से अपनी कोहनी बाहर निकाले।

"साव-धान!"

सिपाही सावधान की मुद्रा में निश्चल खड़े हो गये। चीफ़ ने जायज़ा लेने के अन्दाज़ में क़तार पर नज़र दौड़ायी तो सड़क की पटरी पर खड़ी एकाकी आकृति दिख गयी।

"ऐ, सुनते हो! खड़े हो जाओ क़तार में!"

पल भर को रिबाक बुझ-सा गया। इस आदेश से वह उत्साहित भी

हुआ और दुविधाग्रस्त भी। बहरहाल, सोचने-विचारने का समय नहीं था और वह सड़क की पटरी से क़तार के पीछे, काले फ़र टोपवाले एक लम्बे से सिपाही के पीछे खड़ा होने के लिए तेज़ी से दौड़ पड़ा। सिपाही ने विद्वेषपूर्वक उसकी ओर देखा।

"तेज़-तेज़, मार्च!"

यह सब एकदम सीधा-सादा और सुपरिचित था और रिबाक दूसरों के साथ सूने मन से क़दम-ब-क़दम मिलाता मार्च करता आगे बढ़ने लगा। अगर उसके हाथ ख़ाली नहीं होते तो वह समझता कि अपने साथियों के बीच यूनिट में वापस लौट आया था।

जिस रास्ते से वे आये थे, उसी से वापस लौट चले। फिर भी इस बार रास्ता उसे कदम भिन्न लग रहा था। निराशा और बेचैनी जा चुकी थी, सब कहीं साहस व आत्म सन्तुष्टि फूट रही थी। इससे उसे कोई हैरानी भी नहीं थी: वह विजेताओं के साथ जो था। छह महीने या शायद एक दिन या एक घण्टे के लिए ही सही लेकिन वे उल्लसित थे। प्रतिशोध लेने की सफलता उन्हें उत्साहित कर रही थी या शायद ड्यूटी पूरी करने की ख़ुशी थी उन्हें। कुछेक धीमी-धीमी आवाज़ों में बातचीत कर रहे थे, हँसी-ठहाकों के साथ मज़ाक भी हो रहे थे और उनमें से किसी ने भी मुड़कर तोरण की ओर नहीं देखा था। लेकिन हर कोई उनकी ओर देख रहा था। फाँसी की कार्रवाई देखने के बाद जीर्ण-शीर्ण दीवारों व टूटे-फूटे बाड़ों के पास से गुज़र रहे लोग उनकी ओर मलामत या भय की नज़रों से देख रहे थे। आँसुओं से लाल हुई औरतों की आँखों में अनछुपी घृणा थी और वे ग़द्दारों की स्थानीय टोली को जाते देख रही थीं। लेकिन पुलिस के सिपाहियों को इससे कोई मतलब न था: वे इसके आदी थे और वे इन निरीह, मूक लोगों की ओर कोई ध्यान नहीं देते थे। लेकिन रिबाक अधकाथक आतंकित होते हुए यहाँ से अपरिहार्य रूप से भाग निकलने की बात सोच रहा था। शायद अगले मोड़ पर वह बाड़ा फलाँगकर भाग निकलने की कोशिश करे। अगर पास में कोई दर्रा या खड्ड या कम से कम कुछेक झाड़ियाँ हों या जंगल हो तो बहुत ही अच्छा रहेगा। या किसी अहाते के आस-पास उसे कोई घोड़ा ही हाथ लग जाये।

सैनिकों से अन्दाज़ में क़दम-ब-क़दम चलते उन लोगों के पैरों तले बर्फ़ चरमरा रही थी, उनका अफ़सर सड़क की पटरी पर उनके साथ-साथ

चला आ रहा था—वह चौड़े कन्धोंवाला एक मोटा-तगड़ा आदमी था। उसने पुलिस का चुस्त बेल्टोंवाला कोट पहन रखा था। पुराने पड़े चमड़े के होल्स्टर में मिलिशियामेन की पिस्तौल उसके कूल्हे पर उसके चलने के साथ-साथ उछल रही थी। पुल के पार अगुआ चल रहे पुलिसवाले रुककर एक ओर मुड़ गये। कोई घुड़सवार उनकी ओर चला आ रहा था और अफ़सर ने धमकाते स्वर में चिल्लाकर उससे कुछ कहा। फिर वे एक झुण्ड में जमा हो गये क्योंकि एक ख़ाली स्लेज लिये एक बूढ़ा-सा आदमी सड़क की पटरी के पासवाले झोंपड़े की खिड़की के क़रीब से चला आ रहा था। सहसा रिबाक के दिमाग़ में एक साफ़-सी तस्वीर उभर आयी: स्लेज पर कूदकर लगाम क़ब्ज़े में ले लेनी चाहिए और घोड़े को कोड़े बरसाते भगा लेना चाहिए—शायद वह बच निकलने में सफल हो जाय। लेकिन उस आदमी के साथ नहीं! अपने जवान, बेक़ाबू घोड़े को रोककर उसने अफ़सर और उसके सिपाहियों की ओर जिन नफ़रत भरी आँखों से देखा था, रिबाक फ़ौरन समझ गया, इस आदमी से नहीं निभ पायेगी लेकिन-फिर किसके साथ निभ सकेगी? और अचानक ही यह स्तब्धकारी विचार उसके दिमाग़ में कौंध उठा कि बच निकलना असम्भव था। फाँसी की इस कार्रवाई के बाद वह कहीं भी नहीं जा सकता था। इस क़तार से बाहर उसके लिए कोई राह न थी। अचानक उत्पन्न हुए अपने इस विचार की दारुणता से वह इस तरह विह्वल हो उठा कि उसके क़दम लड़खड़ा गये और वह बाक़ी सिपाहियों के साथ क़दम मिलाकर चलने में असमर्थ हो गया।

"तुम्हें हुआ क्या है?" उसके साथवाले ने तिरस्कारपूर्वक झिड़कते हुए उससे कहा।

"कुछ भी नहीं, मैं ठीक हूँ।"

"अभी अभ्यास नहीं है न? सीख लोगे!"

रिबाक कुछ भी नहीं बोला। उसके मन में यह अहसास गहरे पैठ रहा था कि अब सचमुच कोई छुटकारा नहीं। फाँसी की कार्रवाई से उन्होंने रिबाक के हाथ-पाँव बुरी तरह बाँध दिये थे। उन्होंने उसे जीवन-दान तो दिया था लेकिन दरअसल उसका भी काम तमाम कर दिया था।

नहीं, अब नहीं लौटा जा सकता था। वह ख़त्म हो चुका था, पूरी तरह उसका काम तमाम कर दिया गया था और बड़े ही अप्रत्याशित ढंग

से। अब वह हर कहीं, हर किसी के लिए दुश्मन था। शायद अपने लिए भी।

सहमा-उलझा रिबाक समझ ही नहीं पा रहा था कि ग़लती कहाँ हुई थी और दोषी कौन था। जर्मन? लड़ाई पुलिस? अपनी ग़लती मानने को वह तैयार नहीं था। सच में, उसका दोष क्या था? आख़िर उसने स्वयं तो यह नियति स्वीकार नहीं की थी। वह तो लगातार संघर्ष करता रहा था–शुरू से आख़िर तक। उस घमण्डी सोत्निकोव से भी कहीं बढ़कर, कहीं अधिक दुर्दमनीय ढंग से। सच कहा जाये तो अगर किसी को इस बदकिस्मती का दोष दिया जा सकता था तो वह सोत्निकोव ही था। अगर वह बीमार नहीं पड़ा होता, अगर उसकी टाँग में गोली नहीं लगी होती और उसने रिबाक को अपनी मुसीबत में घसीट नहीं लिया होता तो रिबाक निश्चय ही कब का जंगल में पहुँच चुका होता। और अब खुद वह तो तोरण से फाँसी के फन्दे पर लटका था-सारी चिन्ताओं से मुक्त लेकिन रिबाक सारी पीड़ाएँ झेलने को ज़िन्दा बचा था।

पूरी तरह से हिम्मत पस्त, दिमाग़ से परेशान रिबाक क़तार के साथ मार्च करता तब तक बढ़ता गया जब तक वे पुलिस मुख्यालय के जाने-पहचाने फाटक तक नहीं पहुँच गये। वे कुशादा अहाते में रुक गये और अफ़सर के आदेश पर सीढ़ियों की ओर मुड़कर खड़े हो गये जहाँ पुलिस का चीफ़, इंस्पेक्टर पोर्तनोव और जर्मन सैनिकों की लिबास में दो आदमी उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। अफ़सर ने ज़ोरदार आवाज़ में अपने आगमन की रिपोर्ट दी और चीफ़ ने परखते अन्दाज़ में क़तार का मुआयना किया।

"आराम लो! डिसमिस! बीस मिनट धूम्रपान के लिए," उसने कहा और रिबाक की ओर देखते हुए आदेश दिया: "तुम मुझसे आकर मिलो।"

"यस, सर!" रिबाक बोल उठा।

उसके पास खड़े सिपाही ने उसकी पसलियों में कोहनी से टहोका लगाया।

"यस नहीं, जी हुज़ूर बोलो! ख़ैर, बाद में आदत पड़ जायेगी।"

"जहन्नुम में जाओ!" रिबाक ने सोचा। "सब भाड़ में चले जायें। सदैव के लिए!"

क़तार डिसमिस हो गयी। क्या करें, क्या न करें, सोचते हुए रिबाक

ने निराशापूर्वक इधर-उधर देखा। उल्लासपूर्वक गालियाँ बकते, सिगरेटें सुलगाते सिपाही इधर-उधर फैल गये और उनकी आवाज़ों का बेमेल शोर मच गया। तम्बाकू के धुएँ की मधुर गन्ध अहाते में तैरने लगी। कुछ अंदर चले गये, कुछ अहाते के कोने में बने दो दरवाज़ोंवाले झोंपड़े में जा घुसे। रिबाक भी उधर ही बढ़ गया।

"ऐ, किधर निकल जाने की सोच रहे हो?"

सन्देहपूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखता स्टास सामने खड़ा था।

"एक मिनट।"

उसे लगा, वह काफ़ी शान्त स्वर में बोला था और भाग निकलने की एक मात्र सम्भावना की कोई भी झलक नहीं आने दी थी। स्टास सन्तुष्ट प्रतीत होता चला गया। भाड़ में जायें सब! सब भाड़ में जायें! रिबाक ने झटके से चरमराते दरवाज़े को खोला और अन्दर जाकर लोहे की चिटकनी बन्द कर दी। छत नीची होने के बावजूद उसके उद्देश्य को पूरा करने में बहुत ऊँची थी। तख़्तियों के नीचे ख़ाली जगहों पर कोलतार लिपटे काले नमदे लगा दिये गये थे और अर्गला के सहारे बेल्ट को नीचे की ओर लटका देना आसान था। दृढ़ निश्चय के साथ उसने अपने कोट के बटन खोल दिये और अचानक ही वह बेहोश होते-होते बचा। उसकी पतलून की बेल्ट कहाँ गयी? फिर उसे फ़ौरन ही याद आ गया कि पिछले दिन पुलिस ने वह बेल्ट निकाल ली थी। उसने कोई अच्छी चीज़ हाथ लगने की उम्मीद से कपड़ों की तलाशी ली लेकिन वहाँ कुछ भी न था।

पार्टिशन के पीछे क़दमों की आहट सुनाई दी और दरवाज़ा ज़ोरों से खड़खड़ कर उठा। भाग्य आज़माने का आख़िरी मौक़ा उसके हाथों से निकला जा रहा था। सिर के बल झपट पड़े? निराशा से वह क्रन्दन कर उठा और किसी कुत्ते की तरह चीत्कारने की अपनी इच्छा पर उसने किसी तरह क़ाबू पा लिया।

लेकिन बाहर से सुनाई देती जानी-पहचानी आवाज़ ने उसे होश में ला दिया।

"ऐ, कितनी देर तुम्हें लगेगी वहाँ?" कुछ दूर से स्टास ने उसे आवाज़ दी।

"आता हूँ?"

"बॉस तुम्हारी प्रतीक्षा में हैं।"

निस्सन्देह, बॉसों को प्रतीक्षारत नहीं रखा जा सकता था, उनके बुलावे पर भागते जाना चाहिए। ख़ास करके जब वे तुम्हें पुलिस की नौकरी दे रहे हों। एक दिन पहले ही वह इसके लिए कितना तरस रहा था! आज जब कि वह सपना पूरा हो रहा था, उसे यह सर्वनाश प्रतीत हो रहा था।

नाक छिड़ककर रिबाक ने अपने कोट के बटन बन्द किये। तो अब कोई निस्तार न था। यही उसकी नियति थी। युद्ध के जाल में फँसी किसी आदमी की निष्ठुर नियति। फ़िलहाल कुछ भी सोच पाने में असमर्थ हो, उसने लोहे की चिटकनी खोल, ख़ुद पर क़ाबू पाने की कोशिश करता वह बाहर निकल आया।

इमारत की दहलीज़ पर बेसब्री से पुलिस-चीफ़ उसकी प्रतीक्षा कर रहा था।

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और डिजाइन के बारे में आपके विचार जानकर अनुगृहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी।

कृपया हमें इस पते पर लिखें:

प्रगति प्रकाशन,
ताशक़न्द-१२९,
नवाई स्ट्रीट, ३०
सोवियत संघ

Progress publishers, Tashkent—129,
Navoi street, 30 Soviet Union

सोलह के खिलाफ छह। एक हवामार तोपखाने की पांच लड़कियां और सार्जेंट-मेजर वास्कोव। प्रत्येक को नाजियों से अपना-अपना हिसाब चुकाना था। अग्रिम सैन्य पंक्ति के इलाके के पार्श्वभाग में तोड़-फोड़ के उद्देश्य से पैराशूट के जरिये दुश्मनों का एक सैनिक दस्ता उतारा गया है। उसका पीछा करने वास्कोव अपने दस्ते के साथ निकल पड़ता है।

बोरिस वसील्येव की "यहां ऊषा नगरी के पायल नहीं खनकते ..." विजयी मानवीय साहस की एक रोमांचक कथा है।